आधा गाँव

© राही मासूम रज़ा

प्रकाशक अक्षर प्रकाशन प्रा० लिमिटेड,
२/३६, अंसारी रोड, दरियागंज,
दिल्ली ६

•

मूल्य रुपये १० ५०

•

प्रथम संस्करण १९६६

•

आवरण हरिपाल त्यागी

•

मुद्रक दुर्गा प्रिंटिंग वर्क्स आगरा ४

•

आवरण मुद्रक परमहंस प्रेस दिल्ली ६

•

पुस्तकबंधक अग्रसिया बाइण्डर्स
आगरा ४

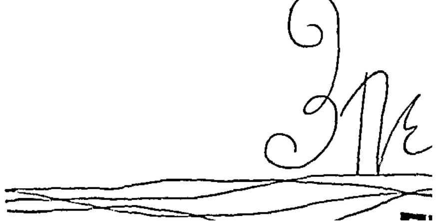

राही मासूम रजा

र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

© राही मासूम रज़ा

प्रकाशक अक्षर प्रकाशन प्रा० लिमिटेड,
२/३६ अंसारी रोड, दरियागंज,
दिल्ली ६

●

मूल्य रुपये १० ५०

●

प्रथम संस्करण १९६६

●

आवरण हरिपाल त्यागी

●

मुद्रक दुर्गा प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा ४

●

आवरण मुद्रक परमहंस प्रेस दिल्ली ६

●

पुस्तकबन्ध अप्रशिया बाइण्डर्स
आगरा ४

राही मासूम रजा

अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

यह 'आधा गाँव' अपने पुराने दोस्त

कुँवरपालसिंह को

भेंट करता हूँ

क्योंकि अगर उनका साथ न होता

तो शायद न यह कहानी लिखी ही

न पाता

प्रकाशकीय वक्तव्य

राही मासूम रज़ा ने कहीं लिखा है कि "साहित्य में मूल प्रश्न वास्तविकता का नहीं होता, बल्कि वास्तविकता की तरफ़ हमारे रवैये या दृष्टिकोण का होता है।"

लेखक का रवैया जितना आवश्यक है उतना ही ज़रूरी है ज़िन्दगी का रवैया। 'आधा गाँव' उपन्यास इसी ज़िन्दगी के रवैये का उपन्यास है। यह उपन्यास भारतीय ज़िन्दगी के एक महत्त्वपूर्ण पहलू की बेहद सशक्त, समग्र और सच्ची तसवीर सामने रखता है।

हिन्दी उपन्यासों की परम्परा में 'आधा गाँव' बहुत-सी नयी अवधारणाओं का स्रोत है। मुख्य बात प्रामाणिक अनुभव की है। यानी ज़िन्दगी के रवैये की। जो इस उपन्यास की ज़िन्दगी के रवैये को नहीं समझ पायेंगे उन्हें इसमें शायद कुछ अशोभन और अशिष्ट भी लगे। अश्लील इसलिए नहीं, क्योंकि अश्लीलता स्थितियों में होती है और स्थितियों की दृष्टि से इस उपन्यास को किसी भी भाषा के समकालीन उपन्यासों के साथ रखा जा सकता है।

पता नहीं जिस बोली का उपयोग हेनरी मिलर ने अपने उपन्यासों (विशेषकर ट्रापिक ऑफ़ कैन्सर) में किया है वह कहाँ बोली जाती है या नहीं, लेकिन हेनरी मिलर की भाषा के मिज़ाज में आपत्तिजनक और स्थितियों के लिहाज़ से अश्लील माना जाता है। परन्तु राही की भाषा का स्तर कतई दूसरा है, क्योंकि वह बोली के स्थान से जुड़ी हुई है। बोली ही भाषा को जनता रची है। भाषा इधर और निखरकर आती है। बोलियों में न जाने कितने मुहावरे, सूक्तियाँ, गालियाँ और शब्द ऐसे चलते हैं जिन्हें भाषा में नहीं लिया जाता।

तथाकथित शिष्ट समाज में जिसे बर्दाश्त नहीं किया जाता है, वही कभी-कभी जिन्दगी के स्वयं का दमन और झेलनेवाले के लिए सही और सच्चा भी होता है। सही बात को कहने के लिए सच्ची भाषा ही इस्तेमाल की जा सकती है। इस दृष्टि से इस उपन्यास की भाषा में जो सच्चाई और खरापन है, वह दिमागी अय्याशी का ही खटक सकता है—जिन्दगी को स्वयं झेलनेवाले को नहीं।

उपन्यास में सीधे साधे खुली गालियों का इस्तेमाल है, जिसे अभिजात जिन्दगी के सन्दर्भ में न तो परम्परानुसार डैश डैश कह कर या बिन्दियाँ लगाकर ध्वनित ही किया जा सकता है और न छोड़ा ही जा सकता है क्योंकि जिस जिन्दगी को इस उपन्यास में उठाया गया है, वह जितनी स्पष्ट, दारुण और बेज़ार है, वह उतनी ही सच्ची और खरी भाषा की माँग भी करती है, और इस माँग को पहली बार एक जिम्मेदार लेखक ने हिन्दी में पूरा किया है।

ऊँघता शहर

गाजीपुर के पुराने किले में अब एक स्कूल है जहाँ गंगा की लहरों की आवाज़ तो आती है, लेकिन इतिहास के गुनगुनाने या ठण्डी साँसें लेने की आवाज़ नहीं आती। किले की दीवारों पर अब कोई पहरेदार नहीं घूमता न ही उन तक कोई विद्यार्थी ही आता है जो डूबते हुए सूरज की रोशनी में चमचमाती हुई गंगा में कुछ कहे या सुने।

गँदले पानी की इस महान धारा को न जाने कितनी कहानियाँ याद होंगी। परन्तु माँएँ तो जिनों, परियों, भूतों और डाकुओं की कहानियों में मगन हैं और गंगा के किनारे ले जाकर बच्चों से मिलते हुए इस शहर को इसका खयाल भी नहीं आता कि गंगा के पाठशाले में बैठकर अपने पुरखों की कहानियाँ सुनें।

यह असम्भव नहीं कि अगर अब भी इस किले की पुरानी दीवार पर कोई आ बैठे और अपनी आँखें बन्द कर ले तो उस पार के गाँव और मकान और खेत घने जंगलों में बदल जायें और तपोवन में ऋषियों की कुटियाँ दिखायी देने लगें। और वह देखे कि अयोध्या के दो राजकुमार कन्धे में कमानें लटकाये तपोवन के पवित्र सन्नाटे की रक्षा कर रहे हैं।

लेकिन इन दीवारों पर कोई बैठता ही नहीं। क्योंकि जब इन पर बैठने की उम्र आती है तो गज़भर की छातियों वाले बेरोज़गारी के कोल्हू में जोत दिये जाते हैं कि वे अपने सपनों का तेल निकालें और इस ज़हर को पीकर चुपचाप मर जायें।

लगा झूलनी का धक्का
बलम कलकत्ता चले गये।

कलकत्ता की चटकलों में इस शहर के सपने सन के ताने बाने में बुनकर विलायत भेज दिये जाते हैं और फिर सिर्फ़ सूनी आँखें रह जाती हैं और वीरान दिल रह जाते हैं और पके हुए बदन रह जाते हैं जो किसी अघोरी की झाड़ू।

मन में रहते हैं जो पगडण्डियों, कच्चे पक्के तालाबों, धान, जौ और मटर के खेतों को याद करते रहते हैं।

कलकत्ता!

कलकत्ता किसी शहर का नाम नहीं है। गाज़ीपुर के बेटे बेटियों के लिए यह भी विरह का एक नाम है। यह शब्द विरह की एक पूरी कहानी है जिसमें न मालूम कितनी आँखों का काजल बहकर सूख चुका है। हर साल हज़ारों हज़ार परदेस जानेवाले मेघदूत द्वारा हज़ारों हज़ार सन्देश भेजते हैं। शायद इसीलिए गाज़ीपुर में टूटकर पानी बरसता है और बरसात में नयी-पुरानी दीवारों, मस्जिदों और मन्दिरों की छतों और स्कूलों की खिड़कियों के दरवाज़ों की दरारों में विरह के अँखुये फूट आते हैं और जुदाई का दर्द जाग उठता है और गाने लगते हैं

बरसन में कौऊ घर में ना निकसे
तुमहि अनूक बिदेस जवैया।

कलकत्ता, बम्बई, कानपुर और ढाका—इस शहर की हदें हैं। दूर तक फैली हुई हदें। यहाँ के रहनेवाले यहाँ से जाकर भी यहीं के रहते हैं। गुब्बारे आकाश में चाहे जितनी दूर निकल जायें परन्तु अपने केन्द्र से उनका सम्बन्ध नहीं टूटता जहाँ किसी बच्चे के हाथ में निकले धागे का एक सिरा होता है।

इधर कुछ दिनों से ऐसा हो गया है कि बहुत-से बच्चों के हाथों से यह डोर टूट गयी है।

यह कहानी सच पूछिए तो उन्हीं गुब्बारों की है या शायद उन बच्चों की जिनके हाथों में मरी हुई डोर का एक सिरा है और जो अपने गुब्बारों को तलाश कर रहे हैं और जिन्हें यह नहीं मालूम कि डोर टूट जाने पर उन गुब्बारों का अंजाम क्या हुआ।

गंगा इस नगर के सिर पर और गालों पर हाथ फेरती रहती है, जैसे कोई माँ अपने बीमार बच्चे को प्यार कर रही हो। परन्तु जब इस प्यार की कोई प्रतिक्रिया नहीं होती तो गंगा बिफर बिलखकर रोने लगती है और यह नगर उसके आँसुओं में डूब जाता है। लोग कहते हैं कि बाढ़ आ गयी।

[illegible] मानते हैं। हिन्दू गंगा पर चढ़ावा चढ़ाने लगते हैं कि रूठी

हर गंगा मैया मान जाय। अपने प्यार की इस हतक पर गंगा झल्ला जाती है और किले की दीवार से अपना सिर टकराने लगती है और उसमें उजले-मटमैले बाल उलझकर दूर-दूर तक फैल जाते हैं। हम उसे झाग कहते हैं। गंगा जब यह देखती है कि उसके दुख को कोई नहीं समझता, तो वह अपने आँसू पोंछ डालती है, तब हम यह कहते हैं कि पानी उतर गया। मुसलमान कहते हैं कि अज़ान का वार कभी खाली नहीं जाता। हिन्दू कहते हैं कि गंगा ने उनकी भेंट स्वीकार कर ली। और कोई यह नहीं कहता कि माँ के आँसुओं ने ज़मीन को और भी उपजाऊ बना दिया है। दूर दूर तक ज़मीन पर गर्म मिट्टी का एक ग़िलाफ़ सा चढ़ जाता है। परन्तु गंगा भी क्या करे, डाँगर बैलों में हल का बोझ उठाने की ताक़त ही नहीं है।

यह शहर इतिहास से बेख़बर है। इसे इतनी फ़ुरसत ही नहीं मिलती कि कभी बरगद की ठण्डी छाँव में लेटकर अपने इतिहास के विषय में सोचे जो रामायण में आगे तक फैला हुआ है। रहा भविष्य, तो उसके विषय में सोचने का इसे साहस ही नहीं है। रुपये के घड़े में एक पतला-सा छेद है जिसमें क्षण क्षण रुपया टपकता रहता है। यह शहर क्षण क्षण जीता है और क्षण क्षण मरता है और फिर जी उठता है।

कौन जाने इसकी यह घोर तपस्या कब ख़त्म हो। ग़ाज़ीपुर ज़िन्दगी में काफ़िलों के रास्ते पर नहीं है। कभी हवा इधर से होकर गुज़रती है तो काफ़िलों की धूल आ जाती है और यह बस्ती उस धूल को इत्र की तरह अपने कपड़ों में और अपने बदन पर मलकर खुश हो लेती है।

यह मेरा शहर है। मैं जब भी अपने शहर की गलियों में गुज़रता हूँ यह मेरे कंधे पर हाथ रख देता है। मेरी छोटी बड़ी कहानियों के रास्ते पर मुझे जगह जगह मिलता है। परन्तु इसकी सम्पूर्ण वास्तविकता अब तक मेरे क़ाबू में नहीं आयी है इसीलिए मैं इसे एक बार फिर देखना चाहता हूँ।

यह उपन्यास वास्तव में मेरा एक सफ़र है। मैं ग़ाज़ीपुर की तलाश में निकला हूँ लेकिन पहले मैं अपनी गंगौली में ठहरूँगा। अगर गंगौली की हक़ीक़त पकड़ में आ गयी तो मैं ग़ाज़ीपुर का एपिक लिखने का साहस करूँगा। यह उपन्यास वास्तव में उस एपिक (महाकाव्य) की भूमिका है।

परन्तु एक बात सुन लीजिए। यह कहानी न कुछ लोगों की है और न कुछ परिवारों की। यह उस गाँव की कहानी भी नहीं है जिसमें इस कहानी के भले-बुरे पात्र अपने को पूर्ण बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। यह कहानी न धार्मिक है न राजनीतिक। क्योंकि समय न धार्मिक होता है न राजनीतिक और यह कहानी है समय ही की। यह गंगौली में गुज़रनेवाले समय की कहानी है। कई बूढ़े मर गये, कई जवान बूढ़े हो गये, कई बच्चे जवान हो गये और कई बच्चे पैदा हो गये। यह कहानी इस हेर-फेर में फँसे हुए सपनों और हौसलों की कहानी है। यह कहानी है उन खण्डहरों की जहाँ कभी मकान थे और यह कहानी है उन मकानों की जो खण्डहरों पर बनाये गये हैं।

और यह कहानी जितनी सच्ची है उतनी ही झूठी भी।

मुझे झूठ में सच और सच में झूठ की मिलावट की कला आती है। इस कहानी में जगह-जगह 'मैं' इसलिए इस्तेमाल कर रहा हूँ कि यह कहानी मुझसे दूर न जा सके कि मैं जब चाहूँ इसे छू लूँ। अपने आपको ढाढ़स देने के लिए ही तो यह कहानी मैं सुना रहा हूँ यह आपको और अपने आपको यह विश्वास दिलाने के लिए कि ऐसी कहानी की तरह मैं सुन भी हूँ। इसलिए यह आपबीती भी है और जगबीती भी।

युग एक बिना जिल्द की किताब की तरह एक सुनसान मकान में पड़ा हुआ है। हवा की हल्की-सी लहर भी इसके पन्ने उलटती-पलटती रहती है। पढ़नेवाले के सामने पन्नों में फ़ासला घटता-बढ़ता रहता है: कभी वह दस पृष्ठ आगे निकल जाता है और कभी दस पृष्ठ पीछे रह जाता है। इसलिए मैं प्रथम पुरुष का प्रयोग कर रहा हूँ कि पन्ने स्वयं न उलट सकें ताकि भ्रम [illegible] और मैं यह कह सकूँ कि क्या था, क्या है और क्या होनेवाला है।

कहते हैं कि आषाढ़ की एक काली रात में सुलतान के एक सरदार सैयद मसूद ग़ाज़ी ने बाढ़ पर आयी गंगा को पार करके गाधिपुरी पर हमला किया, फलतः यह शहर गाधिपुरी से ग़ाज़ीपुर हो गया। रास्ते वही रहे, गलियाँ भी वही रहीं, मकान भी वही रहे, नाम बदल गया—नाम शायद एक ऊपरी खोल होता है जिसे बदला जा सकता है। नाम का व्यक्तित्व से कोई अटूट रिश्ता नहीं होता शायद क्योंकि यदि ऐसा होता तो ग़ाज़ीपुर होकर गाधिपुरी को भी बदल

जाना चाहिए या फिर कम-से-कम इतना होता कि हारनेवाले ठाकुर ब्राह्मण कायस्थ अहीर भर और चमार अपने को गादिपुरी कहते और जीतनेवाले सय्यद, शेख और पठान अपने को ग़ाज़ीपुरी। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। सब ग़ाज़ीपुरी हैं और अगर शहर का नाम न बदला होता तो सब गादिपुरी होते। ये नये नाम हैं बड़े दिलचस्प। अरबी का फ़तह हिंदी के गढ़ में घुलकर एक इकाई बन जाता है। इसीलिए तो पाकिस्तान बन जाने के बाद भी पाकिस्तान की हकीकत मेरी समझ में नहीं आती। अगर जनता को गढ़ से ग़ाज़ी को पुर से और दिलदार को नगर से अलग कर दिया जायगा तो बस्तियाँ वीरान और बेनाम हो जायेंगी और अगर इमाम को बाड़े से निकाल दिया गया तो मोहर्रम कम होगा।

गंगा इस ग़ाज़ीपुर को भी उसी तरह सीने से लगाये हुए है जिस तरह वे गादिपुरी को लगाये हुए थी। इसीलिए नाम गादिपुरी हो या ग़ाज़ीपुर कोई फ़र्क नहीं पड़ता क्योंकि मसूद ग़ाज़ी के चार बच्चों ने दूर पास के देहातों पर ज़रूर कब्ज़ा जमाया होगा। और यूँ दिल्ली से आनेवाला खानदान बड़े ज़मींदार परिवारों में ज़रूर बढ़ता और मैं यह कहानी फिर भी लिखता।

मसूद ग़ाज़ी के एक लड़के नूरुद्दीन शहीद ने (यह शहादत कब और क्यों हुई यह मुझे नहीं मालूम और शायद किसी को नहीं मालूम।) दो नदियाँ पार करके ग़ाज़ीपुर से कोई बारह चौदह मील दूर गंगौली को फ़तह किया। कहते हैं कि इस गाँव के राजा का नाम गंगू था और उसी के नाम पर इस गाँव का नाम गंगौली पड़ा। लेकिन इस सय्यद खानदान के पाँव जमने के बाद भी इस गाँव का नाम नूरपुर या नूरुद्दीन नगर नहीं हुआ—मेरी गंगौली का नाम मेरे ग़ाज़ीपुर से बचा रहा। लेकिन मज़े की बात यह है कि नूरुद्दीन शहीद की समाधि, जो गंगौली से नयी है गंगौली से पुरानी मालूम देती है। ईंटों की इस छोटी-सी इमारत पर कभी एक छत ज़रूर रही होगी। परन्तु मैं तो लगभग [illegible] साल से इसे खण्डहर ही देख रहा हूँ। बस दस मोहर्रम को जब दोनों पट्टियों के जुलूस यहाँ आते हैं तो मजमा-सा लग जाता है और समाधि से अलग हटकर लड़कों के अखाड़ेवाले अपना मजमा लगाकर गतका बनेठी और तलवार के हाथ निकालने लगते हैं और फिर एकदम से कोई आत्मा

नारा लगाता है—बोल मुहम्मदी ! और सारा गाँव जवाब देता है—या हुसैन !!'

इधर कुछ दिनों से गंगौली में गंगौलीवालों की संख्या कम होती जा रही है और सुन्नियों शियों और हिंदुओं की संख्या बढ़ती जा रही है। शायद इसीलिए नूरुद्दीन शहीद की समाधि पर अब उतना बड़ा मजमा नहीं लगता और गंगौली का वातावरण 'बोल मुहम्मदी—या हुसैन' की आवाज़ से उस तरह नहीं गूँजता जिस तरह कभी गूँज उठा करता था। शायद यही कारण है कि समाधि आज उदास उदास नज़र आती है और अपनी अंधी आँखों से इधर उधर देखती रहती है और सोचती रहती है—मेरी गंगौली कहाँ गयी ! लेकिन इस समाधि की जड़ें गंगौली की जमीन में हैं। इसीलिए वह जहाँ की तहाँ खड़ी है—अकेली।

विशाल वृक्ष अपनी जगह से नहीं हटते जब तक कि उन्हें काट न डाला जाय या जब तक कि उनकी जड़ खोखली न हो जायें। अबुल कासिम खाँ, बद्दन, नार, पन्नू भाई, तम्मन, सगर अख्तर और सिग्गा पाकिस्तान में हैं। परन्तु नूरुद्दीन शहीद की समाधि अब भी गंगौली में है और उस कस्टोडियन ने भी नहीं हथियाया है क्योंकि कस्टोडियन को मालूम था कि नूरुद्दीन शहीद की समाधि गंगौली के सैयदों की नहीं है बल्कि गंगौली की है। बरगद के पेड़ की उम्र ज़रा लम्बी होती है और फिर इस समाधि को कई नस्लों ने अपनी-अपनी हड्डियों की खाद दी है।

इस समाधि के अतिरिक्त गंगौली के सैयदों ने एक 'कर्बला'[1] भी बनवाया। यह कर्बला समाधि के दक्षिण में है और यह समाधि गंगौली के पूरब में है। इन लोगों ने एक तालाब भी खुदवाया जो गाँव के पश्चिमी सिरे पर है। यह तालाब नूरुद्दीन शहीद के उत्तराधिकारियों ने ही बनवाया होगा क्योंकि इसके आस पास किसी मन्दिर का निशान नहीं है। तालाब से निकली हुई मिट्टी के टीलों पर आम और जामुन के पेड़ हैं और गाँव के मीर साहिबान दस मुहर्रम को इन्हीं टीलों पर नमाज़ पढ़ने आते हैं। इस तालाब के पश्चिम में पूरा का बना

---

[1] इमाम हुसैन की समाधि की नकल—जहाँ ताज़िये दफ़नाये जाते हैं।

हुआ तीन दरों वाला नील का एक वीरान कारखाना है जिसे हम लोग न मालूम क्या गोदाम कहते हैं। यह जॉन गिलक्राइस्ट की यादगार है यानी एक और ही युग की निशानी है। अब तो यह सिर्फ चरवाहों के काम आता है जो उस पर बैठकर ईख खाते हैं और यह प्रेमियों के काम आता है। यहाँ चाहे हीर का राँझा न मिलता हो, परन्तु बदन को वस्त्र अवश्य मिल जाता है।

एक टूटी फूटी समाधि और एक उजड़ हुए कारखाने के बीच में यह गाँव आबाद है। गगौली के कोनों पर सैयद लोगों के मकान हैं। कुल मिलाकर दस घर होंगे। दक्खिनवाले घर दक्खिनी पट्टी कहलाते हैं और उत्तरवाले उत्तरी पट्टी। बीच में जुलाहों के घर हैं। खुनदा के घर से राछियों की आबादी शुरू हो जाती है और फिर गन्दी, कच्ची गली गगौली के बाजार में दाखिल हो जाती है और नीची दूकानों और खुजली के मारे हुए कुत्तों से दबकर गुजरती हुई नूरुद्दीन शहीद की समाधि के खुले हुए वातावरण में आकर इत्मीनान की साँसें लेती है।

गाँव के आस-पास झोपड़ों और नीलवालों के कई पुरे आबाद हैं। किसी में चमार रहते हैं, किसी में भर और किसी में अहीर। गगौली में तीन बड़े दरवाजे हैं। एक उत्तर पट्टी में है और पक्कड़ तले कहा जाता है। यह लकड़ी का एक बड़ा-सा फाटक है। सामने ही पक्कड़ का एक पेड़ है। चौखट से उतरते ही दाहिनी तरफ कई इमाम चौक हैं जिन पर नौ मोहर्रम को लकड़ी के खूबसूरत ताजिये रखे जाते हैं और फिर एक बड़ा आँगन है। जमींदारी में इन बड़े आँगनों का एक बड़ा सामाजिक महत्त्व है। बिरादरी की बारातें यहीं उतरती हैं मरने जाने का खाना यहीं होता है। आसामियों को सजा यहीं दी जाती है। पट्टीदारी के मामले यहीं उलझाये और सुलझाये जाते हैं और यहाँ पानदारों छिप्पियों और कलबत्तरों का नाच रंग होता है—ये आँगन न हों तो जमींदारियाँ ही न चलें।

तो एक बड़ा फाटक उत्तर पट्टी में भी है और दो दक्खिन पट्टी में। एक जहीर मियाँ के पुरखों का यानी दद्दा के मामूवालों का। इस फाटक का नाम 'बड़का फाटक' है। और दूसरा बड़ा दरवाजा अब्बू दा के बुजुर्गों का है जो अब्बू मियाँ का फाटक कहा जाता है।

इस कहानी तीनों पट्टियों और इनके चारों तरफ़ रहनेवाले सैयद परिवारों में जाती है।

हाँ, एक बात और। यह गंगौली कोई काल्पनिक गाँव नहीं है और इस गाँव में आपको जो घर नज़र आयेंगे वे भी काल्पनिक नहीं हैं। मैंने तो केवल इतना किया है कि इन मकानों को मकानवालों से खाली करवाकर इस उपन्यास के पात्रों को बसा दिया है। ये पात्र ऐसे हैं कि इस वातावरण में अजनबी नहीं मालूम होंगे और शायद आप भी अनुभव करें कि फुन्नन मियाँ, अब्बू मियाँ, झंगटिया-बो, मौलवी बेदार, कोमिला, बबरमुआ, बलराम चमार, हकीम अली कबीर, गया अहीर और अनवारुलहसन राक़ी और दूसरे तमाम लोग भी गंगौली के रहने वाले हैं। लेकिन मैंने इन काल्पनिक पात्रों में कुछ असली पात्रों को भी भर दिया है। ये असली पात्र मेरे घरवाले हैं जिनसे मैंने यथार्थ की पृष्ठभूमि बनाया है और जिनके कारण इस कहानी के काल्पनिक पात्र भी मुझसे बेतकल्लुफ़ हो गये हैं।

आइए अब चलें।

मेरा गाँव, मेरे लोग

मैं गोरी दादी के आँगन में भागता हुआ दक्खिन वाले तीन-दरे में घुस गया। ठोकर लगी, गिर पड़ा। भाई साहब मेरे पीछे-पीछे भाग आ रहे थे। बात यह हुई थी कि बाजी ने घनिया बनाकर बक्स में छुपा रखी थी। हमने देख लिया। घनिया खतम हो गयी। बाजी ने अम्मा से शिकायत की। अम्मा ने हमें दौड़ा लिया—इसलिए हम भाग रहे थे।

भाई साहब ने लपककर मुझे उठाया ही था कि अम्मा का हाथ सिर पर दिखायी दिया। मैं तो ज़िन्दा मछली की तरह तड़पकर उनके हाथों से निकल गया। लेकिन भाई साहब के बाल अम्मा के हाथों में आ गये। मैं चुपचाप वहाँ से सरक लिया। सामने ही नईमा दादी की खलवत का छोटा-सा दरवाजा था, मैं खलवत में घुस गया।

खलवत के छोटे-से आँगन में अमरूद के एक पेड़ के बाद कुछ बचता ही नहीं था। मुश्किल से दो खटोले पड़ जाते थे, उनमें से एक खटोले पर नईमा दादी लेटी हुई तसबीह फेर रही थीं, और उनके सिर के पास से गुज़रनेवाली अलगनी पर दो काले कुरते, दो काले आड़े पाजामे और दो काले दुपट्टे पड़े हुए सूख रहे थे। एक दुपट्टे के कोने से काला रंग बूँद-बूँद टपक रहा था और ज़मीन की गुदली को भिगो रहा था।

मुझे नहीं मालूम कि मँझले दादा को अब्बा की इन नईमा दादी में ऐसी कौन-सी बात नज़र आयी थी कि उन्होंने एक अच्छी-खासी गोरी-चिट्टी दादी थीं। छोड़कर चन्दन मिट्टी की इस पुतली को निकाह में ले लिया और फिर उनके लिए उन्होंने यह खलवत बनवायी क्योंकि नईमा दादी बहरहाल जुलाहिन थीं और सैयदानियों के साथ नहीं रह सकती थीं। पुराने ज़माने के लोग इसका बड़ा ख़याल रखा करते थे कि कौन कहाँ बैठ सकता है और कहाँ नहीं। मेरी समझ में ये बातें नहीं आतीं लेकिन मेरी समझ में तो और बहुत-सी बातें भी नहीं आतीं। मेरी समझ में तो यह भी नहीं आता कि मँझले दादा के दबसोन नट

गुज्जन मियाँ उर्फ़ सय्यद ग़ज़नफ़र हुसैन ज़ैदी यानी छोटे दादा ने एक अच्छी खासी गोरी चिट्टी गोल मटोल, चिकनी चुपड़ी हुसैनी दादी को छोड़कर जमुर्रद नामी एक रण्डी को क्या रख लिया? मैंने जमुर्रद को नहीं देखा है लेकिन हुसैनी दादी को मैंने अपनी आँख खोलने से लेकर उनकी आँख बन्द हो जाने तक देखा है। वह बड़ी कंजूस थीं मगर बड़ी खूबसूरत थीं। जमुर्रद को गंगौली की किसी औरत ने नहीं देखा था मगर सभी का यह ख़याल था कि उसने गुज्जन मियाँ पर कोई टोना टोटका कर दिया है। इसीलिए गंगौली की तमाम औरतों का पक्का ख़याल था कि वह बंगालिन है, हालाँकि वह बागरवी की थी।

लेकिन गंगौली की औरतों को गुज्जन मियाँ से यह शिकायत नहीं थी कि उन्होंने कोई रण्डी डाल ली है। रण्डी डाल लेने में कोई बुराई नहीं, लेकिन हुसैनी-जैसी ख़ूबसूरत बीवी को छोड़ना अलबत्ता गुनाह है। आख़िर अतहर मियाँ ने काली दुल्हन यानी रौशना बीवी से निभायी कि नहीं! जबकि अतहर मियाँ की गिनती ख़ूबसूरतों में होती थी। मगर उन्होंने गुस्से में करवट-करवट जन्नत दे उन्होंने कभी काली दुल्हन का दिल न मैला होने दिया जबकि उन्हीं दिनों उस साहूकारपाटा जिनती नाइन की जवानी ऐसी फटी पड़ रही थी कि मियाँ लोग पागल हुए जा रहे थे और हर ब्याहता को इसका धड़का लगा रहता था कि कब उसके आँगन में एक ख़लवत बन जायगी। लेकिन अतहर मियाँ ने उसकी तरफ़ न देखा कि दुल्हन का दिल मैला होगा—और यह मुई जिनती मरी जा रही थी उन पर।

मगर जिस तरह मेरी समझ में हुसैनी दादी और जमुर्रद का बखेड़ा नहीं आती उसी तरह मेरी समझ में यह भी नहीं आता कि जब रब्बन बी काली थीं और अतहर मियाँ बिलकुल चन्दे आफ़ताब और चन्दे माहताब थे, और जिनती नाइन उन पर थूक भी जा रही थी तो आख़िर उन्होंने अपना दामन क्यों नहीं फैलाया?

दूसरा ब्याह कर लेना या किसी ऐरी-गैरी औरत को घर में डाल लेना बुरा नहीं समझा जाता था। शायद ही मियाँ लोगों का कोई ऐसा ख़ानदान हो जिसमें कलमी लड़के और लड़कियाँ न हों। जिनके घर में गाय का भी नहीं

होता थे भी किसी न किसी तरह कुलमी आमा और कलमी परिवार का शाद्र पूरा कर ही लेते हैं।

बस एक मीर अनहुर हुसन जैदी ने ऐसा नहीं किया। वह पूरा साल अफीम खा-खाकर मोहरम की तैयारियों में सर्फ कर दिया करते थे। उन्होंने अपनी सारी ज़िन्दगी ही मोहरम की तैयारियों में गुज़ार दी।

सच तो यह है कि उन दिनों सारा साल मोहरम के इन्तज़ार ही में कट जाता था। ईद की खुशी अपनी जगह, मगर मोहरम की खुशी भी कुछ कम नहीं हुआ करती थी। बकरीद के बाद ही से मोहरम की तैयारी शुरू हो जाती। दद्दा मरसिये गुनगुनाना शुरू कर देतीं, अम्मा हम सब के लिए काले कपड़े सीने में लग जातीं, और बाजी नौहों की बयाज़ें निकालकर नयी-नयी धुनों की मश्क करने लगतीं। उन दिनों नौहों की धुनों पर फिल्मी म्युज़िक का कब्ज़ा नहीं हुआ था। नौहों की धुनें देहातों, कस्बों और छोटे-मोटे शहरों की लोक धुनों की तरह सादी और साथ ही साथ गम्भीर हुआ करती थीं, और जब बाजी, अम्मा या मामी और खाला या फूफी काले कपड़े पहनकर नौहा पढ़ने बैठती होंगी

मान माने सकीना यह कहती उठी मेंह का सीना नहीं तो सकीना नहीं तो बयाज़ संभालने वाली कलाइयाँ एकदम से बदल जातीं। सुननेवालों को ऐसा मालूम होता जैसे नौहे की आवाज़ पास ही मिस्र के किसी घर से आ रही है और देखनेवाली आँखें देख लेतीं कि एक ज़मींदोज़ कैदखाने में हुसैन की बहन उनके हुसैन की चहेती बेटी सकीना का बहनापे की मालिश कर रही है

लेकिन सादगी दूकानों पर तो मिलती नहीं।

लखनऊ के बारे में तो मैं जानता नहीं—ग़ाज़ीपुर के बारे में भी नहीं जानता, लेकिन यह ज़रूर जानता हूँ कि गंगौली के सैयद खानदानों में मोहरम एक रूहानी ईद से कम नहीं हुआ करता था। नौहों की धुनें इस एहतियात से बनायी जाती थीं कि ईद की सवैयाँ शरमा जायें। भाई साहब एक महीना पहले ही से मातम की प्रैक्टिस शुरू कर देते। मुझे ठीक हाथों से मातम करना नहीं आता। भाई साहब मातम के कलाकार हैं। उन्होंने बहुत ज़ोर मारा कि

मैं सोग न किसी तरह लेकिन मैंने दोनों हाथों से मातम करने की कला सीख कर न दी। मगर हम दक्खिन पट्टीवालों के लिए मातम कोई समस्या नहीं था। उत्तर पट्टीवाले हमारे मुकाबले मातम नहीं कर सकते थे। हमारी पट्टी में लड़कों और जवानों की तादाद ज़्यादा थी। नवीं मोहर्रम के आते-आते तो अब्बू (चाचा) बच्चा बच्चा शब्बर दा, अग्गू दा, हम्माद दा, फुन्नन दा, अच्छू दा, मिच्छू दा, हामिद दा और खुद लो यह है कि गोर दा और गुज्जन दा भी बढ़ चढ़कर मातम के हाथ लगाने लगते थे, और मातम इतना ज़ोरदार हो जाता था कि झाड़ियों और कवलों और फानूसों की ज़िलूगी कलम मातम की गमक से काँप उठा करती थी। और शहनशीन में लगे हुए पर्दों में ज़रा के फर्क पिघलकर आँसू की बूँद बन जाते थे। बस सवाल रह जाता था बेहोश होने का—उत्तर पट्टी में मरहूम भाई को मातम करते करते बेहोश हो जाने की कला आती थी। वह आठवीं और शामे-गरीबाँ की मजलिस में हर साल बेहोश हो जाते थे। हमारी पट्टी में कोई बेहोश होनेवाला नहीं था, इसलिए जब इमाम अली कबीर चाचा या रशीद मियाँ या उत्तर पट्टी का कोई बुजुर्ग यहाँ मरहूम भाई के मुँह पर केवड़ा छिड़कता तो दक्खिन पट्टी के लड़कों और जवानों पर घड़ों पानी पड़ जाता। सब सोचते कि लानत है हम पर!—यानी हम अपनी पट्टी की मजलिस में बेहोश तक नहीं हो सकते। इसलिए बरसों के बाद से ही मैं बेहोश होने की मश्क करने लगता। मगर जब बेहोश होकर गिरता तो बड़ी चोट लगती और मैं भाई साहब के साथ मिल जाकर बेहोश होकर गिरने की तरकीब निकालने में जुट जाता जिससे चोट न आये। दक्खिन पट्टी के लड़कों की एक पूरी टीम यह तरकीब सोचने में सालभर लगी रहा करती थी। मैं और भाई साहब के सिवाय सब भाई मिलन अब्बू फुन्नन दा की लड़की मुमताज और हामिद दा की लड़की इम्मू और उनके भाई फुन्नन और हसन बाकिर दा की लड़की सिद्दू—सभी तरह रिहर्सल में लगे रहते थे। मगर हर साल होता यही कि मरहूम भाई बेहोश हो जाते और हम लोग मुँह देखते रह जाते।

अच्छा, अगर हम लोग मरहूम भाई की तरह बेहोश न होते तो? मैंने भाई साहब से कहा।

"सुनाह हुई!" भाई साहब बोले।

इस बात का मेरे पास कोई जवाब नहीं था, इसलिए मैंने फ़ैसला किया कि चाहे लोग तो ठेंगे से लोग, मगर जवर मैं नौ की सुबह वाली मजलिस में बोलूँगा ज़रूर गैंगा—पट्टी की आबरू तो रह जायगी।

यह फ़ैसला करके मैं बहुत खुश हुआ और मज़ी ने उस दिन का रात स्वप्न देखा जिस दिन लारी आकर फाटक पर खड़ी होगा और बनारस मजलिस की वालिदा गाजीपुर के लिए रवाना होगा।

ख़ुदा-ख़ुदा करके वह तारीख़ आ गयी।

जब सामान लद चुका और सवारियाँ बैठ चुकीं तो चचा ने अम्मा को एक सिलीप देते हुए कहा, 'इस साल तो जरा मासूम के हाथ से भी नौहा पढ़वा लीजिए। ज़ान वाली है।

इस वह परदे के पीछे से मातम के जुलूस में गरजता लगता था। उस वक्त मैं उस समय नहीं पाया था, लेकिन अम्मा समझ गयीं और मुसकराने लगीं। बात यह थी कि उत्तर और दक्खिन पट्टी के सामने से तो हम लोग एक थे, लेकिन खुद दक्खिन पट्टी में सब मसियत नहीं थी, आपस में बड़ा पट्टीदारा चला करता था।

कहते हैं कि अब्दुल्ला के हाथ किसी जाना-पहचाना के मरने के बाद बड़ी दौलत आया। यह मेरे पैदा होने से बहुत पहले की बात है। लेकिन मैंने देखा और कामयाब वाला लड़का देखा और मुसलिम देखा और पुराने दादा से यह सुना है कि जब सानी साहिबा मरीं तो अब्दु दादा ने एक असिल का पट्टा पढ़ाया, उस गाड़ी के से बरामद निकाय—चुनांचे उसके गावर में गज़ाना [illegible] गया। सोने का ढेर और अशर्फ़ियाँ पाताल में छुपाकर महल में निकाली गयीं। यह असिल भी दौलत के ढेर के साथ गाज़ीपुर आया। ज़ाहिर है कि किसी मयख़ाना ने पता नहीं लगाया, बस बात फूट निकली। पुलिस ने इधर-उधर पकड़ना शुरू किया। अब्दु दादा ने भाग भाग अपने रिश्तेदारों के घरों में छुपा दिया। जब मामला ठंडा हुआ तो रिश्तेदारों ने रकम भी दाब ली। मामा बचाए कुछ न बच सके, लेकिन मामा बिलकुल बेकार नहीं हो गये थे, उनके पास फिर भी काफ़ी माल बच रहा था। चुनांचे उन्हें इस पर नवाबी शान लगा और

उन्होंने एक लारी ख़रीद ली। फुन्नन दा उसके कण्डक्टर बनाये गये। थोड़े ही दिनों के बाद लारी ख़राब होकर जो खड़ी हुई तो फिर नहीं चली।

चची ने जो लारी वाली बात कही थी उसमें इस लारी की तरफ़ इशारा छुपा हुआ था इसीलिए अम्मा मुसकरा दी थीं।

हमारे घर और अग्गू दा के घर में यूँ भी कुछ चला करती थी। हमारे यहाँ कुछ बनता तो उनके यहाँ भी वह चीज़ फ़ौरन तैयार हो जाती। वहाँ कोई काम शुरू होता तो हमारे यहाँ भी हाथ लग जाता। इसलिए जब हम लोगों ने लारी पर गंगौली जाना शुरू किया तो उनके घरवाले कैसे न जाते! कई बरस तो वे लोग केवल इसलिए लारी से न जा सके कि जो लारी उन्हें मिलती थी वह हमारी वाली लॉरी से ख़राब होती थी इसलिए चौपला, डोलियों और इक्कों में काम चलता रहा फिर एक नयी लारी मिल ही गयी।

बात यह है कि वे लोग हमसे छोटा समझते थे, क्योंकि अच्छन दा को पीरपुर की रियासत से पढ़ने के लिए पाँच रुपये माहवार का वज़ीफ़ा मिला करता था। इसी वज़ीफ़े के बल पर उन्होंने अपनी पढ़ाई ख़त्म की थी और अग्गू दा को अच्छन दा ने पढ़ाया था और वह हीवेट होस्टल में बड़ी शान से रहा करते थे। अग्गू दा की बीवी मौक़ा निकालकर उस वज़ीफ़े की बात ज़रूर शुरू करती थीं।

इसलिए इन दोनों घरों के मर्दों के सम्बन्ध तो अच्छे थे या कम से कम अच्छे लगते थे मगर औरतों में यह तनाव साफ़ साफ़ दिखायी देता था।

अग्गू दा की बीवी तो फिर भी ज़रा सीधी थीं, मगर अच्छन दा की बीवी आफ़त की परकाला थीं। यह तो ग़नीमत थी कि इस ख़ानदान में सबसे बड़ी थीं अम्मा बिल्कुल बेज़बान पर बहुत ही शरीफ़ थीं, इसलिए बात कभी हदों से न बढ़ सकी। ख़ुद अम्मा और चची में नहीं बनती थी, मगर क्या मजाल जो किसी को पता चल जाय। अम्मा रोज़ एक बार अम्मू के घर जाती थीं और चची एक बार हमारे यहाँ आती थीं और दोनों इस तरह घुल मिलकर बातें करती थीं कि सगी बहनें क्या करेंगी? यह बात तो मुझे अम्मा और चची के मरने के बरसों बाद मालूम हुई। दूसरी चची और बाजी में तकरार हो गयी। चची ने अम्मू से शिकायत की। तब अम्मू ने नसीहत के तौर पर चची

का यह बात बनायी। मैं मौजूद था इसलिए यह बात मुझे मालूम हो गयी। मेरे ख़याल में मेरे दूसरे भाई-बहनों को यह बात शायद आज भी न मालूम हो—मुन्ना और मुरैया को तो शायद पहली चची भी न याद होगी क्योंकि उनके मरने के वक़्त ये दोनों बहुत छोटी थी।

चची बड़ी छोटी-सी थी और बहुत खड़ी उर्दू बोलती थी। हम लोग उर्दू नहीं बोलते थे। अब्बा ने चूँकि फ़ैज़ाबाद और लखनऊ में पढ़ा है इसलिए वह तो उर्दू बोलते हैं। बाजी शादी के बाद लखनऊ की हो गयी इसलिए कभी-कभार वह भी उर्दू बोल लेती हैं, मगर हम लोग आज भी वही ज़बान बोलते हैं जो ज़बान अम्मा बोला करती थी और जो ज़बान नसीबा बुआ बोला करती थी। और जो ज़बान मत्ता बुआ, दद्दू और रऊफ़ की थी। और जो ज़बान गंगौली के मीर साहबान की है—यानी भोजपुरी उर्दू। मेरी छोटी बहन अफ़सरी बारह-पन्द्रह बरस से दिल्ली में रह रही है मगर अब तक उसे उर्दू बोलना नहीं आ सका है। वह आज भी वही अम्मा के दूध के साथ पी हुई भोजपुरी उर्दू बोलती है।

लेकिन मुझे चची की बोली बहुत अच्छी लगा करती थी। मैं उनकी बातें सुनने के लिए घंटों उनके पास बैठा रहा करता था। वह जब तक ज़िन्दा रहीं अपनी खड़ी बोली की वजह से हमारे घर के वातावरण में अजनबी रहीं। चची के अलावा खड़ी उर्दू सुनने का मौक़ा टामी बाई में मिला करता था। टामी अपने ज़माने की मशहूर वेश्या थी। रिटायर होने के बाद शिव भक्त हो गयी और शहर के बाहर एक बाग़ में रहने लगी जो उनकी जवानी के ज़माने में उन्हें एक रईस ने दिया था। उनके लड़के ने उन पर पतिता होने का इलज़ाम लगाया और मुक़दमा क़ायम कर दिया। टामी ने अब्बा को वकील किया। चुनांचे वह मुक़दमे की मिसिल लेकर अक्सर आया करती थी। उनके साथ चाँदी का एक ख़ूबसूरत खासदान हुआ करता था जिसमें सफ़ेद पान की नन्ही-नन्ही गिलौरियाँ हुआ करती थीं। ख़ुद गिलौरी खाने से पहले वह खासदान अब्बा के सामने बढ़ाती। अब्बा इन्कार कर देते तब वह मुँह में एक गिलौरी रखने के बाद मुक़दमे की बात शुरू करती। और मैं अब्बा की घूमनेवाली कुर्सी का पुश्ता पकड़कर खड़ा हो जाता। वे बातें मेरी समझ

म नहीं जाना थी । लेकिन टामी बाई की आवाज़ इतनी अच्छी थी, और उनकी बातों में स्नेह रस हुआ करता था कि मुझ पर जैसे जादू हो जाता था । मुझको यह बात टामी की बातें सुनकर मालूम हुई कि शब्द की कोई हैसियत नहीं होती । शब्दों से परिचित हुए बिना भी बात सुनी और समझी जा सकती है ।

एक दिन मैं उनके पास जा बैठा ।

उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा और कहा 'जीते रहिए !'

मैंने घबराकर उन्हें सलाम किया । वह हँस पड़ीं । उस वक्त वह अपने मुँह में रखने के लिए गिलौरी निकाल चुकी थीं बोलीं 'खायेगा ?'

मैं तो कब से उन गिलौरियों पर जान दिये हुए था फिर भी मैंने इनकार कर दिया । मगर जिसकी ज़िन्दगी नौजवानों और बूढ़ों के इनकार से इकरार निकालने में गुज़री हो उसके सामने छः सात साल के एक बच्चे के इनकार की हैसियत ही क्या हो सकती थी !

उन्होंने मुझे गिलौरी खिला दी । वह गिलौरी अजीब थी—मुँह में आते ही बिल्कुल बिखर गयी । लेकिन टामी बहरहाल रण्डी थी, इसलिए मुझे यह ख़याल सताने लगा कि शायद मैंने उनकी गिलौरी खाकर कोई भूल की है इसलिए मैं वहाँ से भाग खड़ा हुआ ।

अब्बा साहब दीवानख़ाने में उतरे हुए थे । मैं उनके पास बैठ गया ।

'क्या है ?' उन्होंने पूछा ।

'हम टामी का पान खा लिया है ।' मैंने बिसूरकर कहा 'ऊ रण्डी है न !'

'पान खाया ?' अब्बा ने पूछा ।

मैं नाग की तरह अपने आँगन में रेंगकर फुन्नू के द्वार से घर में चला गया ।

दुआर निशाना मारी था । एक पलंग पर पत्नी रहा करती थी । उस वक्त भी एक पलंग पर पड़ी हुई थी और अम्मा या उनके पाँव दाब रही थीं । रानी सभी बगलवाले पलंग पर सर झुकाए बैठी थीं ।

वहाँ भी मुश्किल हो गया था ।

फूफा का हिसाब बड़ा गजब का हुआ करता था। उनके यहाँ दो का मतलब दो सौ भी हो सकता था और दो हजार भी। लेकिन उनका हुक्म टालना आसान नहीं था। वह बड़े गुस्सवर थे।

फूफा यूँ तो गोहना मोहम्मदाबाद के एक मामूली जमींदार थे लेकिन उन्हें फूफी की बहुत बड़ी जायदाद मिल गयी तो वह नवाब साहब कहे जाने लगे—और फिर वह नवाब साहब हो भी गये। उनके छोटे भाई नजमुल मियाँ कभी-कभी आते थे तो फूफा के घर की गरीबी का ठीक पता चल जाता था।

नजमुल मियाँ को अफीम खाने का शौक था। लेकिन अफीम के लिए पैसा उनके पास कभी नहीं हुआ करता था इसलिए वह फसल पर पोस्त के माल खरीद लिया करते थे और सालभर उन्हीं को उबाल उबालकर पिया करते थे। जब उसके लिए भी पैसे न होते तो वह अफीम की कोठी से पैकिंग के टाट खरीद लाते। फिर वे टाट उबाले जाते और उस उबलते हुए पानी में चाय की पत्ती डाली जाती और वह सारा सारा दिन वही चाय पिया करते और बाहर की ड्योढ़ी में फूफा के नौकर करीम के पास एक बैसखट पर पड़े रहा करते।

नजमुल मियाँ नवाब साहब से ज्यादा करीम के भाई मालूम होते थे। मैंने तो उन्हें कभी दस्तरख्वान पर देखा नहीं। जब हुद्दन फुफू खाना निकालने बैठतीं तो पहले फूफा की थाली तैयार होती। चीनी के नफीस बरतनों में कई तरह के सालन निकलते छोटी छोटी प्यालियों में कई तरह की चटनियाँ निकलतीं अचार और मुरब्बा निकलता। एक प्याले में औटा हुआ गाढ़ा गुलाबी दूध होता जिस पर कोई तीन अंगुल मोटी बालाई होती।

फूफा के खाने के बाद दमड़ा और उसकी बीवी का खाना निकलता। दमड़ा इसी घर में पला था। फिर करीम और नजमुल मियाँ का—तामचीनी या तांबे की प्लेट में भात निकाल लिया जाता। फिर उसी भात पर तह करके चपातियों की चार जोड़ियाँ रख दी जातीं यानी आठ चपातियाँ। एक प्याले में दाल और एक में बड़े का कलिया। दमड़ी का एक हाथ में करीम का खाना उठाती और दूसरे में नजमुल मियाँ का। वह खाना लेकर दरवाजे तक जाती

आवाज़ देती, नजमुल मियाँ हाथ बढ़ाकर अपना खाना ले लेते और करीम अपना। इसके बाद दमनी बो बावर्चीखाने में लौट आती और दमड़ी के खाने की सेनी लेकर अपनी खलवत में चली जाती।

दमनी को चूँकि फुफ्फू की अम्मा यानी हमारी छुटकी दद्दा ने पाला था इसलिए हम लोग उसे दमड़ी चा कहा करते थे। और वह अब्बा और अम्मू को भैया कहा करता था। छुटकी दद्दा ने उसे किताबों की एक दूकान रखवा दी थी। एक दिन उस पर एक बोर्ड लगा—नादिरअली ताजिर कुतुब! यह दमड़ी आदमी बड़े रख-रखाव का था। चूड़ीदार पाजामे पर लम्बा अचकन पहना करता था और उसने ईरानी टोपी को छोड़कर ज़िन्दगी भर कोई और टोपी नहीं पहनी। इसलिए वह थोड़े ही दिनों के बाद नादिरअली से एम० नादिरअली बना और फिर सैयद नादिरअली ताजिर कुतुब हो गया।

लेकिन दमनी वो जिस तरह बेनाम आयी थी, उसी तरह बेनाम रह गयी। बेनाम होना तो बहुओं की तक़दीर है। बस बस इतना हो जाता है कि अच्छे घरानों में वो ज़िल्लत से बच जाती है वह या तो बहू कही जाती है या दुल्हन या दुल्हिन। वह अगर मालदार हुई तो उसे खिताब दिये जाते हैं—अज़ीज़ दुल्हन (चाहे सुसराल में उसे कोई मुँह न लगाता हो) और नफ़ीस दुल्हन (चाहे वह निहायत फूहड़ हो) वग़ैरह-वग़ैरह। ग़रज़ कि हमारे समाज में या तो यह होता है कि मैकेवाले जहेज़ देकर बेटी से अपना दिया हुआ नाम छीन लेते हैं या फिर यह कहिए कि सुसरालवाले इसे गवारा नहीं करते कि उनके यहाँ किसी और घर का दिया हुआ नाम चले। बात जो भी हो नतीजा यही निकलता है कि [illegible] साल या सत्रह साल तक रफ़ेआ ख़ातून उर्फ़ रब्बन या कनीज़ फ़ातिमा उर्फ़ फुद्दन रहने वाली लड़कियाँ एकदम से कुनबे में या तो बहू या दुल्हन या दुलहिन बनकर रह जाती हैं—भाभी, चची, ममानी और कभी-कभी ख़ुदा ने चाहा तो दादी और नानी भी बन जाती हैं। मगर नहीं रह जाती तो रफ़ेआ ख़ातून या कनीज़ फ़ातिमा। बेनाम रहना शायद ज़मींदारों और ख़ासकर हवेलियों-मकानों की बन्नियों की तक़दीर है, इसलिए ये बेनाम लड़कियाँ कहानी के पन्नों पर आतीं और ज़िन्दगी के दूसरे मामलों में शरीक होने या न होने की हद पर रह जाती हैं। बस यहाँ एक ऐसा दरवाज़ा है जो

किसी रसनी को नहीं मिलती और शायद इसीलिए ये शरीफ लड़कियाँ अपनी बनामी को झेल जाती हैं।

कभी-कभी तो यह बनामी उन लड़कियों से ऐसी चिपक जाती है कि मरते मरते पिण्ड नहीं छोड़ती। दमड़ी बो के साथ यही हुआ। दमड़ी के मरने के बाद भी वह निहायत काली और बदसूरत दमड़ी बो ही रही। हद तो यह कि उसने दूसरी और फिर तीसरी शादी की मगर वह आज भी हमारे यहाँ कभी याद की जाती है तो दमड़ी बो ही के नाम से। यानी अगर उसकी तीनों ससुरालवाले कहीं इकट्ठा होकर उसी की बातें करें तो उन्हें यह नहीं मालूम हो सकता कि वह एक ही औरत के बारे में बातें कर रहे हैं—पता नहीं दमड़ी बो को खुद भी अपना नाम याद होगा कि नहीं।

तमाम औरतों के बारे में तो मैं नहीं कह सकता लेकिन दमड़ी बो तो सिर्फ दमड़ी बो थी क्योंकि उसका कोई मैका ही नहीं था कि वह कभी वहाँ जाती तो कोई उसे उसके नाम से पुकारता। मसलन अब्बा और अम्मा की शादी हुई तो अम्मा के नाम की रियायत से मेरी ननिहाल में अब्बा नफ़ीस दूल्हा हो गये और ददिहाल में अम्मा दुल्हन। मगर जब मामू मियाँ या मामू साहब आ जाते या वसुहा से कोई बेगारिन कोई चीज़ लेकर आ जाती या वहाँ की कोई चमाइन भगन या अहिरिन गंगा नहाने आ जाती तो अम्मा थोड़ी देर के लिए फिर नफ़ीसा बन जातीं और बनामी के सहरा में दिन गुज़ारने के लिए ताज़ादम हो जातीं। मेरी अम्मा यूँ भी ज़रा खुशनसीब थीं क्योंकि उनके साथ उनकी खिलाई यानी हमारी माई भी ग़ाज़ीपुर आ गयी थीं और वह ज़िन्दगीभर अम्मा को नफ़ीसा और अब्बा को नफ़ीस दूल्हा कहती रहीं। शायद दादा माई से इसीलिए खफ़ा रहती रही हों कि उसने अम्मा के मैके की हद बना दी थी और शायद इसीलिए वह बड़ी बेचैनी से मोहर्रम की राह देखा करती थी कि ससुराल में तो इस मुई कलूटी ज़मुर्रद की आवाज़ दब जायगी।

मुनाके लोगों में बँटते ही दादा ने इत्मीनान की एक साँस ली और सब की आँख बचाकर चोरी से एक कोने में छिप के पूजन के बाद अपनी बड़ी-बड़ी मरमरी उँगलियों से होंठ साफ करके उँगलियों को अपने छोटे छोटे निहायत सफ़ेद रेशमी बालों में पोंछने लगीं।

अफसरी अम्मा की गोद से फिसलकर ठीक उसी जगह लद से गिरी जहाँ दद्दा का पीक थी। अम्मा ने उसे कमयाली में उठाकर फिर अपनी गोद में रख लिया। बात यह है कि उस समय वह मद्दू की पिटाई करने में लगी हुई थीं—मगर उन्होंने जो अपनी बे-कालर वाली कले की हरी कमीज़ पर पीक का दाग पड़ा देखा तो उन्होंने अफसरी की पीठ पर एक धमक्का दिया—हालाँकि उन्हें यह मालूम था कि अफसरी का कोई दोष नहीं है मगर ज़ाहिर है कि वह दद्दा को डाँट तो नहीं सकती थीं ना। मगर अफसरी को इस नज़ाकत का पता नहीं था। इसलिए वह भोयँ भोयँ रोने लगी। उधर बाजी ने मद्दू का एक थप्पड़ जड़ दिया क्योंकि उसने उन्हें दाँत काट लिया था।

"सारी कमीज़ नास हो गयी!" चच्ची ने कहा। यह कहकर वह बड़ी बाजी की तरफ देखने लगीं जो इस्मत में चेहरे की जिल्द को नम और चमकदार बनाने की कोई तरकीब पढ़ रही थीं।

बाजी की बात ने अम्मा को फिर यह याद दिला दिया कि उनकी कमीज़ में पीक का धब्बा पड़ गया है मगर ठीक उसी वक्त लोगी रोने पड़ीं और मरदाने तक अफसरी के रोने की आवाज़ न जा सकी या गयी तो नाना ने उसे सौंरी ही के किसी पुरज़े की चीख-पुकार समझकर सब्र कर लिया। उस सौंरी तक साथ कई रागों में अलाप ले रही थी।

हवा जो लगी तो जाड़े का टोटका के लिए अब्बा मौलवी मुनव्वर को बुलवा या कोई बारीक नुस्खा समझाने लगे। अम्मू अपने दूसरे बच्चे रमज़ को प्यार करने लगे जो पिछली सीढ़ी में हाथ निकाल निकालकर उनकी मारी-सी गुम गरदन को छू रहा था और मैं अम्मू की गोद में बैठा मौलवी मुनव्वर को घूर रहा था कि कब गफ़लत छोड़ें राज इस लँगड़े मौलवी से छुटकारा मिला रहता।

हमारे मौलवी मुनव्वर को पढ़ाने से ज़्यादा पिटाई करने में मज़ा आता था। यह हमारे दर्जे अजाउस की इस्मा भी हम से न लिया करते थे इसलिए हम लोगों का बचपन बड़ी गरीबी में गुज़रा। और शायद यही वजह है कि मज़ाक-हँसाना का कभी न सुन आती है और न भाई साहब को। हम लोग हाथ से बैंगन सब कर लेते के आता है, शायद इसलिए है कि

मौलवी मुनव्वर का डर हमारे दिलों से अभी तक नहीं निकला है शायद हम डरते हैं कि अगर पैसा खर्च न कर दिया गया तो मौलवी साहब चपत लेंगे। शहला (मेरी भाभी) का यही नहीं मालूम, इसीलिए कभी-कभार फिजूलखर्ची पर भाई साहब को डाँटती रहती है।

लेकिन हम लोग मौलवी साहब की आँख बचाकर सालभर में आठ आने तक जरूर बचा लिया करते थे ताकि मोहर्रम की मजलिसों में जब यतीम का हिस्सा नीलाम हो, तो कम से कम एक बार जरूर खरीद सकें।

हर मजलिस के आखिर में अंजुमन हुसैनिया का कोई आदमी रूमाल में मजलिस का हिस्सा (प्रसाद) लेकर नीलाम करता

यतीम का हिस्सा! यतीम का हिस्सा!"

लोग बोली बोलते। तबरुक (प्रसाद) अच्छा होता तो मौलवी बशीर और दिलदार दोनों ही बोली बढ़ाते। किसी मामूली तबरुक पर मैंने कभी इन लोगों को बोली लगाते नहीं देखा।

हर साल ग्यारह मोहर्रम को 'अंजुमन हुसैनिया' के जलसे में एलान किया जाता कि इस मोहर्रम में यतीमों के लिए कितना पैसा इकट्ठा हुआ फिर वह रकम शीया यतीमखाना लखनऊ को भेज दी जाती।

चूँकि मैंने जब में हाथ डालकर उस अठन्नी को टटोला, और जब मुझे इत्मीनान हो गया कि अठन्नी मौजूद है तो लारी के पुरजों और उसके बॉडी की खड़खड़ाहट लोरी गाने लगी और खिड़कियों से आनेवाली तेज हवा ने उसमें बिस्तर लगा दिया और मैं अम्मू की छाती की नर्म गाद का तकिया लगाकर सो गया।

मेरी आँख खुली तो लॉरी ब्लारी के पुल को पार कर रही थी। नदी के किनारे सजा हुआ एक बोसीदा सा मंदिर, जो जगह-जगह से समय चुका था इधर उधर के खेतों की हरियाली को देखकर खुश हो रहा था। पुल के पास ही बने-बुने पुल के मसाले के दालान टूटे से थे। बच्चों के गौर निवासन के दिनों में आस पास की माँयें उन्हें यही मसाला चखाती हैं इसलिए धीरे धीरे ये टूट ताम हान जा रहे हैं। यह मसाला मुगलों के जमाने में माँओं का हाथ बँटाता आ रहा है और कुछ लोग कहते हैं कि मुगलों ने हिन्दुस्तान के लिए

कुछ किया ही नहीं। मुमकिन है कि कार्क साहब का यह खयाल ठीक हो कि सीकरी और ताजमहल बनाने का सेहरा मुगलों के सिर नहीं बाँधा जा सकता, मैं तो यह भी मान लेता हूँ कि लाल किला भी किसी और ने बनवाया है लेकिन गाज़ीपुर की माँओं की कई पीढ़ियाँ जानती हैं कि चौरी के पुल के पास उन्होंने मसाले के कई तूदे ज़रूर छोड़े हैं जो दाँत निकलने में बच्चों की मदद करते हैं।

लारी के हॉर्न की आवाज़ सुनकर आठ सवारियाँ लादे हुए इक्के का मरियल घोड़ा चौंककर रुक गया और सड़क के एक किनारे की तरफ भागने लगा। मगर आदमियों के बोझ की वजह से उससे भागा नहीं जा रहा था, इसलिए इक्केवान को मौका मिल गया। उसने इक्के से कूदकर किसी न किसी तरह घोड़े को सँभाल लिया और उधर से इत्मीनान कर लेने के बाद वह मुड़कर ड्राइवर को गालियाँ देने लगा। यह सिर्फ मेरा खयाल है कि वह गालियाँ दे रहा था क्योंकि वह हाथ उसी अन्दाज़ से नचा रहा था। ड्राइवर ने उसकी आवाज़ नहीं सुनी क्योंकि उस वक्त वह खुद नंगी टाँगों वाले कुछ बच्चों को गालियाँ देने में लगा हुआ था जो अपने लँगोटे खोल उसे दिखा दिखाकर आगे पीछे झूल रहे थे।

"ई सभन के पास पइजामा ना है का?" मैंने अम्मू से पूछा।

"ई हरमज़ादे हैं।" अम्मू ने कहा।

"हरमज़ादा का होता है?" मैंने दूसरा सवाल जड़ दिया।

"भाउज से पूछ लिहा।" यह कहकर अम्मू मेरे बालों से खेलने लगे।

"नाहीं आप बताये।" मैंने ज़िद की।

"ए मासूम, ऊ देखो—बगुला!" पीछे से भाई साहब ने नारा मारा।

मैंने देखा—धान के खेत में बगुलों का एक पूरा लश्कर उतरा हुआ था और एक नन्हा-सा चरवाहा एक भैंस की पीठ पर बैठा खेतों के बीच से गुज़रने वाली पगडण्डी पर चला जा रहा था।

उन दिनों मैं जब भी किसी लड़के या लड़की को भैंस की पीठ पर बैठा देखा करता था तो मचल जाता था और सोचने लगता था कि आखिर अब्बा घोड़े की तरह एक भैंस क्यों नहीं ले लेते!

मुझे अपने घोड़े मानी या उसके सईस मथुरा से कोई शिकायत नहीं थी क्योंकि अक्सर मैं कमर में झाड़ू की सींक की तलवार खोंसकर राजकुमार बनना चाहता। मथुरा मुझे तने से मानी की पीठ पर बिठला देता और मानी कभी एतराज़ न करता। लेकिन घर में कोई दूसरा घोड़ा नहीं था, इसलिए भाई साहब जवाबी राजकुमार न बन पाते, चुनांचे मैं भी उतर आता, और हम लोग दो पैदल राजकुमार बनकर तलवार के हाथ निकालने लगते। लेकिन अस्तबल में लीद और मानी के पेशाब की नमी की वजह से जख्मी होकर गिरने की आसानियाँ नहीं थीं, इसलिए हम लोग फिर या तो आँगन में आ जाते या पीली कोठी में चले जाते जहाँ अकेली गोरी दादी रहा करती थीं। दोपहर में तो कोई पीली कोठी का रुख़ ही नहीं करता था, क्योंकि मशहूर था कि गोरी दादी पर किसी जोगी का साया है। अम्मा और लतीफ़न बुआ ने तो इत्तफ़ाक़ से इस जोगी को देख भी लिया था। वह अधेड़ उम्र का एक दाढ़ी वाला था जो गोरी दादी की पट्टी पर कुहनियाँ टिकाये ज़मीन पर उकड़ूँ बैठा हुआ था। लेकिन हम लोगों ने उसे कभी नहीं देखा।

एक बार ऐसा हुआ कि जख्मी होकर मर जाने की बारी मेरी थी। मैं गिरकर मरा ही था कि बाजी आ गयीं बोलीं 'ए मच्छन तनी लपक के एक पैसे की हरी चुनरी लिआ दो—ऊ बुढ़वा का जनी कहाँ जाके मर गया है।"

मैं चुप लेटा रहा। मैं कैसे बोलता। मैं तो मरा हुआ था।

"ई मर गया है।" भाई साहब ने बाजी को ख़बर दी।

"का!" बाजी घबराकर अम्मा की तरफ़ भागीं। हम दोनों भाई चुपचाप बाहर सरक गये। बाद में पता चला कि बाजी के साथ अम्मा, मत्तो बुआ, माई, बच्चो दद्दा, छुन्नी दद्दा और ईदू की नाइन जो उस वक़्त अम्मा के नाख़ून काट रही थी और मशरिक की कुंजड़न जो तरकारियाँ बेचने आयी थी और लतीफ़न मनहारिन—ग़रज़ कि घबरायी हुई औरतों का एक ग़ोल पीली कोठी में घुस आया। गोरी दादी अपने कमरे में लेटी हुई थीं। गर्मी की सख़्त दोपहर थी और वह चाँद के रंग की घरगोलार पलंग पर पानी छिड़के और पलंग का तार किये बहाल पड़ी थीं। उनके मलमल के कुरते का दामन गरदन पर पड़ा हुआ था और किसी गोल तकिये की तरह फूलती हुई दो मुसकुराती

है

छातियाँ उनके पेट से चिमटी हुई थीं। इतने लोगों को घर में आता देखकर वह घबरा गया और उठ बैठा।

मगर न तो वहाँ भाई साहब थे और न मेरा लाश। इसलिए बाजी पर पहली बार डाँट पड़ी, चूँकि वह इतनी चहेती थीं कि भाई साहब के हिस्से का प्यार भी उन्होंने हड़प कर लिया था इसलिए भाई साहब उन्हें यूँ भी बहुत परेशान किया करते थे। हर वक्त मौके की तलाश में रहा करते थे। बाजी उठते बैठते उनकी शिकायत किया करती थीं और अम्मा उठते-बैठते उन्हें पीटा करती थीं। लेकिन उन्होंने बाजी को परेशान करना न छोड़ा। उन्हें बाजी को परेशान करने से जो रूहानी लज्जत मिला करती थी वह शायद पिटने की तकलीफ से भारी हुआ करती थी इसीलिए बाजी भरसक उनसे दूर बैठा करती थीं।

मातम में भी उन्होंने उनसे दूर जगह बनायी थी मगर भाई साहब पास सरक आये थे और लगातार उनका मुँह चिढ़ा रहे थे। मगर वह उनकी शरारतों और नाक के हिचकोलों से बेखबर आँखें बन्द किये होले होले मातम करती जा रही थीं और कोई नौहा गुनगुनाती जा रही थीं। लेकिन शायद मातम की ताल ठीक नहीं आ रही थी इसलिए वह बार बार मातम के नये टुकड़े लगाने की कोशिश कर रही थीं।

भाई साहब ने उनकी नन्हीं सी चोटी को लोरी की खिड़की की सलाख से बाँध दिया—और फिर जो लोरी ने एक झटका दिया तो बाजी अपनी चोटी के सहारे लटक गयीं और जोर से चीख पड़ीं। अब घरेलू जिन्दगी में जमहूरियत तो होती नहीं कि राय शुमारी हो या छानबीन की जाय और मुलजिम को सफाई का मौका दिया जाय इसलिए अम्मा पूछ-गछ किये बिना वहीं शुरू हो गयीं और भाई साहब सरकन सकाकर बैठ गये। सरकन सुकाकर मार खा लेने का फन उन्हें बहुत अच्छी तरह आ गया था।

"तेरे हाथ टूटें मुहम्मिन नासपिटे!" बाजी ने कोसना शुरू किया। अकेला बस चुप रहा। भाई ने बाजी को डाँटा।

बस एक यही भाई थी जो बार बार भाई साहब की मदद पर आ जाया करती थी। भाई साहब ही उसके बड़े चहेते थे—और चूँकि भाई साहब उस

बहुत चाहते थे इसलिए मैं भी उसे बहुत चाहता था। शहला के सिवाय मैं भाई साहब की हर मोहब्बत में बराबर का शरीक हूँ।

'आवा न कहत्यू कुछ।' बाजी चमकीं।

'ओका का कहें।' माई बोलीं, 'जरा सा बात भई ना कि तोरा टट्टुआ सुना ना बस पेंपें शुरू कर दयु। ई नफासत तुहा कउनो काम जाग न छोटन। आओ बेटा, हमरे पास आओ।' उसने भाई साहब को चुमकारा। वह उसके पास चले गये। वह अपने छोटे छोटे निहायत काले और बूढ़े हाथ उनके सिर पर फेरने लगीं—भाई साहब को नींद आ गयी।

एक जगह तारो रुकी तो मैं बाहर से अन्दर चला गया। दद्दा ने मुझे अपनी गोद में बिठा लिया। दद्दा का रंग इतना सफेद था कि उनकी गोद में बैठने से डर लगता था कि कहीं वह मैला न हो जाय। सुना है कि दादा बड़े बदसूरत थे। दुश्मन के दिल की सियाही तो किसी ने देखी नहीं है मगर दादा के सख्त पक्के रंग को देखने वाले अभी जिन्दा हैं—मुझे नहीं मालूम कि इतनी खूबसूरत दद्दा की शादी इतने बदसूरत दादा से कैसे हो गयी। वह भाई ऐसे अमीर भी नहीं थे और दद्दा राजा मुनीर हसन की बहन थीं। दद्दा कुँवारा था और दादा टुन्नू। अच्छा हुक्का के सिवाय शायद दादा के पास कुछ नहीं था। वह गाजीपुर की कचहरी में कोई फटीचर-सी नौकरी किया करते थे। दद्दा शादी के बाद बस एक बार ससुराल गयीं और फिर जो वहाँ से लौट कर आयीं, तो फिर उस मुए की बस्ती ने ससुराल जाने का नाम न लिया। उनका कहना था कि उनकी ससुराल बदसूरतों का एक घना जंगल है, चुनांचे हम लोग अपनी ददिहालवालों को बिलकुल नहीं जानते और इसीलिए हम लोग अपने आपको गाजीपुर का कहते हैं आज़मगढ़ का नहीं कहते और गंगौली के नाम पर जान देते हैं और टकमा बिजौली का नाम सुनकर हमारे दिलों में कोई गुदगुदी नहीं होती। हम लोग दद्दा के पोते हैं और दद्दा को बिजौली के लोग कभी अच्छे नहीं लगे। मगर जब दादा पागल हो गये और ज़ंजीरों में जकड़कर इमामबाड़े के पूरब वाले कमरे में बन्द कर दिये गये तो सुना है कि छुई मुई-सी अकबरी बीवी ने उनकी बड़ी सेवा की। दद्दा रोज़ एक बार उनके कमरे में जातीं—दादा के बदन की गन्दगी साफ़ करतीं

कमरे को धोती। गंदा या उजला कपड़ा पहनाती। दादा बड़ी खामोशी से उन्हें ये सब काम करने दिया करते थे, मगर वह जैसे ही कमरे से निकलतीं दादा कपड़ों को तार-तार कर डालते—फिर बरसात की एक काली रात में वह न मालूम कैसे निकल भागे और पोखर के पास एक गड्ढे में डूबकर मर गये। उन्हें दफ़न किया गया। हालाँकि दादी से उन्हें कुछ लड़कों और लड़कियों के सिवाय कभी कुछ नहीं मिला था—वाह, कुछ मिला कैसे नहीं था! एक तो सुहाग ही मिला था।

मुसलिम दा, फुन्नन दा, कल्लू ककवा और गया अहीर के सिवाय दादा किसी से डरते हो नहीं थे। जब वह जँगले में खड़े होकर गली से गुज़रने वाली औरतों को अपना कपड़ा दिखाते और गालियाँ बकते तो बेचारी औरतें शरमा कर गुज़र जातीं। अब गाँव के दामाद—बड़े फाटक के पागल दामाद को कोई क्या कह सकता था? मगर जैसे ही कोई मुसलिम दा, फुन्नन दा, कल्लू ककवा या गया अहीर का नाम लेता, दादा को जैसे साँप सूँघ जाता। अपनी सालियों का तो उन्होंने नाक में दम कर रखा था। वे झल्लाकर कहतीं "अकबरी बू को कुछ न कहियो।" इस जुमले में फुन्नन दा, ककवा और गया के नामों से ज़्यादा बल था। यह जुमला सुनकर दादा थोड़ी देर के लिए चुप हो जाते थे। इसीलिए तो गंगौली में मशहूर था कि पागल भी अकबरी बू का आदर करता है—दादी को भी अपनी इस ताक़त का पूरा अहसास था—वह गंगौली के सय्यदवाड़े में सबसे बड़ा था। गंगौली में उनका सिक्का चलता था और वह अम्मा को बार-बार इसका अहसास दिलाती रहती थीं। चुनांचे उन्होंने जो यह देखा कि अम्मा उनकी बातें गौर से नहीं सुन रही हैं तो बिगड़ गयीं, बोलीं, "हई ल्या, न कहिथियूँ दुलहिन"

"ए अम्मा! ई हरमज़ादगी का होता है?" मैंने दादी की बात काटकर अम्मा से सवाल किया।

अम्मा इस ज़ोर से खिलखिलायीं कि टोकना भी भूल गया।

"चुप नासमार्!" दादी ने मेरी पीठ पर धौल मारा, "ई अम्मा से पूछने की बात है?"

"अब्बू तो कहिन रहा कि अम्मा से पूछ ल्या।" मैंने बिसूरकर कहा।

ठीक उसी वक्त लारी मगौली की तरफ मुडी और यह बात खत्म हो गयी। मैं अपना सवाल भूल गया। दद्दा अपना जवाब भूल गयी।

नाले के मोहाने से कटकर पोखरे से बचती हुई एक निहायत कच्ची सडक गाँव की तरफ रेंग रही थी। उस चीज को सडक कहना कहाँ तक ठीक है यह मैं आज तक तय नहीं कर सका हूँ। उस सडक का तो हाल यह था कि एक गड्ढा खत्म होता ही था कि दूसरा शुरू हो जाता था। ड्राइवर गड्ढों से बचने की पूरी कोशिश कर रहा था। लारी कभी दाहिनी तरफ झुक जाती थी और कभी बायीं तरफ। "दद्दा 'या अली' कहने में लग गयी, और इन झटकों के बीच में वह बडबडाती जाती थी, "नऊज, ए हो को बशीर मार कहत रहे कि बडे आराम से पहुँचय्हे। इ है ग्रान्डपीटी लारी है या बला।"

अभी मगौली कोई दो फर्लांग दूर रही होगी कि लड़कों के शोर करते हुए एक गोल ने लारी के आगे पीछे भागना शुरू किया। लारी की रफ्तार इतनी सुस्त थी कि लडके भागते भागते उससे आगे निकल जाते थे। भाई साहब के साथ मैं भी शोर करके लडकों के शोर का जवाब देने की कोशिश करने लगा।

पुन्नू चचा के घर के सामने से लॉरी बायीं तरफ मुडी। सामने ही हामिद दादा और वाजिद दादा अपनी उजली दाढ़ियों पर हाथ फेर रहे थे।

"वाजिद दादा, आदाब!" भाई साहब ने नारा मारा।

"वाजिद दादा, आदाब!" भाई साहब का बाजगश्त बनकर मैंने भी नारा मारा।

वाजिद दादा ने यकीनन दुआ दी होगी, लेकिन हमने वह दुआ नहीं सुनी क्योंकि शोर करते हुए नंग धडंग और कच्चे पक्के लडकों और लडकियों के जुलूस के साथ लारी आगे बढ़ चुकी थी।

बसवाडी की जड से पूरब की तरफ जानेवाली गली के दोनों तरफ जुलाहों के घर हैं। जुलाहे दाढ़ियाँ डाले हुक्का पी रहे थे। एक तरफ दस बारह साल का एक लडका फर्श में मुख्तलिफ रंग के धागों की बड़ी बड़ी रील लगाये जमीन पर थोड़े थोड़े फासले से बांस की सलाखें गाड़ रील के धागों को उनके गिर्द लपेट रहा था। लारी को देखकर वह रुक गया। हुक्का पीनेवाले

चॅमगटा स उठ ग्वड हुए। उन्हान झुककर लारी का सलाम किया। गढई पर बठा कपड धानवाला एक नौजवान लडकी न जल्दी स साग नीची करके अपनी गन्दुमी पिण्डलियाँ छुपा ला—लारी इन तमाम बाता स बेखबर बड फाटक की तरफ रेंग गयी।

लारी क रुकत ही म कूदकर फुन्नन दा क घर की तरफ भागा।

ए मियाँ ओहर मत जाव! गया न कहा।

काह न जायें? मन पूछा।

आ घर माइ न आइल बाडी।

क की माइ?'

मन गया क जवाब की राह नहीं दखा क्योंकि फुन्नन दा क घर अगर गुद गया की माई भी आयी हुई है तो क्या हुआ! एक ता यह कि वह बुढिया पर्दा नहीं करती हागी और अगर पर्दा करती भी हागी ता क्या फक पडता है क्योंकि वह मुझस ता पर्दा कर नहीं सकती।

मैं दादा के घर म घुस गया। दादा घर म नहीं थ। दादी आँगन म बठी साग काट रही थी। उनकी दो बडी बटियाँ दालान म लटी काई नौहा मश्क कर रही थी। दादी मुझे दखकर मुसकरा दी। उनकी बडी बडी काजल भरी सियाह तराशी हुई नुकाली आँखें भी मुसकरा दी और पलभर क लिए उनके चहरे स बुढापे की धूल झड गयी और उनका चहरा निखर आया। उनकी बडी सॉवली और बडी नमकीन शख्सियत पलभर क लिए धुली हुई धूप की तरह आँगन म छिटक गयी।

आदाब दादी! मैंन कहा।

जीयो! कब आया?

अबहीं त आय हैं।

गुडुआ आयी है कि नाही?

आयी हैं।

ए कब्बन!' उन्हाने बडी लडकी का आवाज दी। उसन अपना बडा बडी सियाह और रौशन आँखें मरे चहरे म डाली ता मुझ ऐसा लगा कि जैसे धूप म सिर।

'मुनताज़ कहाँ है ?' मैंने पूछा। बात यह थी कि मैं मुनताज़ को यह बताने के लिए बेचैन था कि इस साल मैं बेहोश होने की मश्क करके आया हूँ और पाँच की मजलिस में ऐसा बेहोश हूँगा कि मशू भाई भी दंग रह जायेंगे। मेरा खयाल था कि लारी की आवाज़ सुनते ही मुनताज़ घर से बाहर आ जायगा और मैं उसे एक तरफ ले जाकर फौरन यह बात बता दूँगा। मगर वह तो घर में भी नहीं था शायद।

'माता निकल आयी हैं बेटा।' दादी ने कहा।

'कहाँ से निकल आयी हैं ?' मैंने पूछा। 'गाँव की माद को न कह रही आप ?'

दादी हँस पड़ीं। 'ऐ भाई, इ मासूम ने एकदम से पागल बना रखा है। चेचक निकल आयी है मुनताज़ के।'

चार दिन से तरकारी खाते-खाते नाक में दम आ गया है।

मैं कोठरी की तरफ चला तो दादी ने मुझे मना किया। मगर मैं नहीं माना। झाँककर देखा—मुनताज़ लेटा हुआ था और फुन्नन दादा नीम की टहनी से मक्खियाँ उड़ा रहे थे।

'भीतर मत जइयो।' दादी ने कहा।

मगर मैं अन्दर चला गया। कैसे न जाता! मुझे मुनताज़ को इतनी बड़ी खबर जो सुनानी थी। मैंने मुनताज़ के कान में वह बात बता दी। मुनताज़ मुसकरा दिया और बोला, 'फुन्नूओ मश्क किहिन है।'

'नहीं।' मैंने कहा, 'बगैर मश्क हम होंगे।'

'नहीं।' मैंने गुस्सा होकर कहा, 'हम फुन्नू के घर में चलकर पास होंगे।'

मैं कमरे से निकल गया।

मैं बहुत गुस्से में था कि यह तो कोई बात न हुई। मश्क करूँ मैं और बेहोश हों फुन्नू। अरे वाह! मैं सीधा हामिद दादा के घर गया। दुलहिनिया आँगन में बैठी रोटी बेल रही थी और हसीना भाभी उसके बगल पर बैठी कोई मरसिया गुनगुना रही थी।

दुलहिनया हामिद दा के बच्चों की माँ है, लेकिन हम लोग उसे दादी नहीं कहते। पूरा सैयदवाड़ा उसे दुलहिनया कहता है। हालाँकि मुसलिम दा और फुन्नन दा के बच्चों की माँ को हम लोग दादी कहते हैं। दुलहिनया को हम लोग आदाब नहीं करते, 'सलाम' करते हैं।

'सलाम!' मैंने कहा।

उसने बेशुमार दुआएँ दे डालीं। और इसी बीच में मैंने हसीना दादी को आदाब कर लिया।

'जीते रहो!'

'फुन्नू कहाँ है?'

'पोखर पर गये हैं,' उन्होंने कहा, 'बैठो।'

मगर मैं नहीं बैठा। मैं पोखरे की तरफ भागा। वहाँ जाकर देखा कि वह अपनी बकरी को नहला रहा है। वह मुझे देखकर खुश हो गया।

'पाँच की मजलिस में हम बेहोश होंगे।' मैंने कहा।

'त हू होलिहो!' फुन्नू ने कहा।

'नहं,' मैंने गरदन झटकी, 'एक गाय वाली हम बेहोश होंगे तें घर गाय होलिहो!'

'अब तमाम लगन बजता बशीर भाई के नौकर ते हैं ना...' फुन्नू उखड़ गया।

मेरे हाथ में एक पत्थर था। मैंने खींच मारा। फुन्नू चीखकर बैठ गया। मैं भाग खड़ा हुआ। मेरा खयाल था कि मैंने फुन्नू को मार डाला है इसलिए अब पुलिस मुझे गिरफ्तार कर लेगी। फिर ले जायेगा। मैंने सोचा कि अब्बू बहुत जालिमों को बचाते रहते हैं तो क्या वह मुझे नहीं बचायेंगे? और क्या शब्बर भाई और अब्बू भाई मेरी वकालत नहीं करेंगे? इसलिए अगर फुन्नू मर गया तो मेरा ठेंगा से। फिर भी घर जाने के खयाल से डर लग रहा था इसलिए मैंने सोचा कि रात में गोदाम में छुप लिया जाय।

मैंने रास्ता बदल दिया।

गोदाम के दरवाज़ा खुला था। मैंने चुप लगा दिया, लेकिन दूसरे दर्जे पर पहुँचा ही था कि एक लड़के के कराहने की आवाज़ आयी।

मुझे काठ मार गया—भूतों की वे तमाम कहानियाँ याद आ गयीं जो गोदाम के बारे में मशहूर थीं। मैंने इधर उधर देखा। दूर-दूर कोई नहीं था। और बहुत दूर—आम के बागों से भी उधर पच्छिम में सूरज डूब रहा था। सहमे हुए बच्चों की तरह मेरे रोंगटे खड़े हो गये और मेरा दिल डाकगाड़ी के इंजिन की तरह धक धक करता हुआ भागने लगा।

फिर एक भारी आवाज़ आयी। मैं बात न सुन सका। लेकिन मैंने आवाज़ पहचान ली। भला मैं तक्कन चा की आवाज़ कैसे न पहचानता। तक्कन चा हर हफ़्ते कोई-न-कोई मुकदमा लेकर अब्बू के पास ज़रूर आते थे। इसीलिए उनकी आवाज़ मुझे ज़बानी याद थी।

"ए तक्कन चा!" मैंने डरते डरते आवाज़ दी क्योंकि हो तो यह भी सकता था कि भूत ने मुझे धोखा देने के लिए तक्कन चा की आवाज़ बना ली हो। इसलिए उन्हें आवाज़ देकर मैं गोदाम से नीचे उतर आया था कि अगर तक्कन चा की जगह किसी भूत ने सिर निकाला तो मैं भाग खड़ा हूँगा। मगर न भूत ने सिर निकाला और न तक्कन चा ने—गोदाम में एकदम से सन्नाटा हो गया।

मैंने सोचा कि भाग ही जाना चाहिए। इसलिए मैं भाग खड़ा हुआ और घबराहट में मैं यह भी भूल गया कि मैंने पुत्तू को क़ैद कर लिया है। लेकिन जब मैंने बड़े दरवाज़े में झाँका और यह देखा कि हाते में पलँग और कपट की नन्ही आरामदेह कुर्सियाँ पड़ी हैं और गाँवभर के मीर साहबान इकट्ठा हैं और सारे का सारा बने बैठे हैं तो मुझे एकदम से याद आ गया कि मैंने पुत्तू को बन्द कर दिया है। मैंने घबराकर इधर उधर देखा। भाई साहब इमामबाड़े के तीनदर में बैठे हुए थे। मुझे देखकर वह मेरे पास आ गये। मैं उन्हें लेकर बाहर निकल गया।

"हम पुत्तू को बन्द कर लिया है।" मैंने कहा।

"का कर लिया है?"

"बन्द।"

"कब?"

"दोपहर से भइ

बाबा पुत्तन त हसीना दादी के साथ घर म बइठे है । भाई साहब न कहा गाली मार अम्मा स शिकायत करती रही कि पुट्टू अपन सिर न इतना निहिन होता त मुग्गा न स्वास्ता पुट्टू को जरूर कुछ हो जाता ।' भाई साहब न हमाना गाली की नकल की ।

मेरा जान म जान आ गयी यानी पुट्टू जिन्दा है ?

हाँ ।

त अब पुलिस हम्म ना पकड़िह ना ?

ना ।

यह सुनकर म दो तरह खुश हुआ कि थोड़ी दूर पर कबड्डा खेलते जुलाहा क लड़का क पास जाकर खड़ा हो गया ।

खेलोगा ' एक लड़के न पूछा ।

हाँ । मैंन कहा ।

म एक गोल म खड़ा हो गया ।

कबड्डी कबड्डी कबड्डी   म कबड्डी कहता हुआ पाले क उधर गया । म कनखियो स लगातार अपन दुश्मनो को देख रहा था लेकिन कभी-कभी मेरी आँख अक्सर उन जुलाहो की तरफ भी चली जाती थी जो मीर साहब क लड़के का यकबी मनाना लगातार इकट्ठा हो गये थे—जैसे कि मीर अनाला हो जाना क्योंकि उस दिन म पहली और आखिरी बार जुलाहा के लड़का क साथ कबड्डी खेला था ।

कबड्डी कबड्डी   मैं बोलता रहा । लड़का न अपना पैर तंग करना शुरू किया । फिर एक लौंडे ने झुककर मेरी टाँग पकड़ ली । मैं गिर पड़ा । तमाम लड़के मुझ पर टूट पड़े । किसी के हाथ म मेरी टाँगें थी किसी के हाथ म सर नाप । मैं कबड्डा बोलता हुआ पाले की तरफ खिसक रहा था मेरी कलाइयाँ छिल गयी थीं कुहनी की खाल उतर गयी थी । गर्दन सलमान का पुरा नार तार हो चुका था मगर मैं कबड्डी बोल रहा था और लगातार पाले की तरफ खिसकता हो जा रहा था ।

फिर लड़को म दो बड़ बड़े गुन्डे हाथो न लड़का को ...

लिया—'अब तुह लोगन अइसन लाट साहब होगइल बाडा की मीर साहब के लड़कन म कचट्टा खेलबा ?" यह आवाज़ गया अहीर की थी। लड़के डरकर भाग गये। मैं मुजरिमों की तरह गरदन झुकाकर खड़ा हो गया। गया ने मेरे कपड़े झाड़े और बदन के रिसते हुए ज़ख्मों में मिट्टी भरकर उसने मुझे गोद में उठा लिया।

'आप मियाँ हुईं आप के ई ना चाही।" उसने मुझे समझाया।

जब गया मुझे लेकर फाटक में दाखिल हुआ तो आँगन में खलबली पड़ गयी। मिट्टी से मेरे ज़ख्म धोये गये। अली कबीर चचा ने फौरन एक नुस्खा लिखा। उस्मान चचा उस नुस्खे को लेकर अपने दवाखाने की तरफ़ लपके गये। पुन्नन दादा जुलाहों के घर तक लपक गये और लाठी बजा बजाकर उन्हें गाली देने लगे। गोर दा ने मुझे अपने पास बुला लिया।

'ये तुम लारी से उतरकर कहाँ गायब हो गये थे ?" उन्होंने पूछा।

गोर दा की आवाज़ बहुत अच्छी थी—इतनी रसीली जैसे मिठुआ आम। वे गोरे थे ही बाकी तरह गोरे थे लेकिन उनसे ज़्यादा खूबसूरत थे। खूब निकलता हुआ क़द, चौड़ी हड्डियाँ, मुसकराती हुई बड़ी बड़ी काली आँखें। उन्हें गाने का इतना शौक था कि जवानी में कलकत्ता भाग गये थे। और सुना है कि वहाँ जाकर न्यू थियेटर्स में भरती हो गये थे। घरवालों को जो मालूम हुआ कि वह थियेटर में भरती हो गये हैं तो घर में कुहराम मच गया। लोग गये और बड़ा मुश्किल से उन्हें बहला-फुसलाकर वापस लाये। राजा सयद मुनीर हसन मामा भाई और थियेटर में काम करें! चुनांचे सरकार ने उन्हें तहसीलदार बना दिया, और उन्हें यह तहसीलदारी ऐसी भायी कि फिर उन्होंने तरक्की के बारे में सोचा ही नहीं। वह ज़िन्दगीभर तहसीलदारी ही करते रह गये। वह बड़े अच्छे शायर थे। तरन्नुम से अपनी ग़ज़लें सुनाते तो समाँ बँध जाता। मुहर्रम मनाने के नाते से मोहर्रम करने गंगौली आ जाते थे। जिस साल वह आते, उस साल गाँव के और तमाम लोग गहना जाते। सबका दाम गिर जाता और सिर्फ़ उन्हीं का दरबार लगा करता था।

इसीलिए जब उन्होंने मुझे अपने पास बुलाया तो मैं फूल गया। लेकिन उनके सवाल का जवाब मैं कम दे सकता था। मैं उन्हें बेहोशी के राज़ में

शरीक करना नहीं चाहता था। मैंने तो सोच रखा था कि जब मैं तड़ से बेहोश हो जाऊँगा तो दक्खिन पट्टी के तमाम लोग खुश हो जायेंगे कि चलो अपनी पट्टी में भी एक ऐसा लड़का निकल ही आया जो मियाँ मश्शू की बेहोशी का जवाब दे सकता है।

"हम पाखर पर गये रहे।" मैंने कहा।

"नहीं! गोरे दादा ने कहा कि मैं पाखरे तक गया था।'

"मैं पाखर तक गया था।" मैंने कहने को कह दिया, मगर ये तमाम अलफ़ाज़ मुझे अजनबी और सख़्त बुरे मालूम हुए।

"अगर आज चाँद हो जाय तो शाम की मजलिस में तुम एक सलाम पढ़ना।" उन्होंने कहा।

"जी अच्छा।" मैंने कहा।

"उर्दू पढ़ लेते हो ना?"

"जी हाँ।"

"किस दर्जे में पढ़ते हो?"

"पाँच में।" मैंने सीना तानकर कहा।

"मुन से मुक़ाबला करोगे?"

मैंने ज़रा मन्नन चचा के लड़के मुन की तरफ़ देखा। वह मेरी तरफ़ देख कर शरारत से मुसकरा दिया। वह पहले ही सूखा हुआ था।

"करोगे मुक़ाबला?" मन्नन चचा ने पूछा।

"उर्दू में?" मैंने सवाल किया।

"नहीं, अंग्रेज़ी में।" मन्नन चचा बोले।

मैं फिर मुन की तरफ़ देखा, मगर उसके चेहरे से मुझे कोई अन्दाज़ा न हो सका कि वह मुझसे कम अंग्रेज़ी जानता है या ज़्यादा। मैंने मौलवी मुनव्वर साहब की तरफ़ देखा, मगर उनका चेहरा तो बिलकुल ही सादा था। वह तो मुझसे भी कम अंग्रेज़ी जानते थे।

"ए सामू! अभी उतार साहब अउर तरवार हुसैन के दलानवा में का किया जाए साहब?" हम्माद ... के पाइद साकिर ... कुरसू था ने सलाम किया। मेरी जान में जान आ गयी कि चलो मुक़ाबला टल

गया। बन्दा मरता क्या न करता। जान पर खेलकर मुक़ाबला तो कर ही डालना। आख़िर उत्तर और दक्खिन पट्टियों का मामला था।

“[illegible] इक़बाल सुहैल तो अहले बैत[1] के सख़्त दुश्मन हैं।” ग़ार दा ने कहा “मगर मेरे ख़याल में मुस्लिम लीग को वोट देने से भी कोई फ़ायदा नहीं।”

मैं वहाँ से चुपचाप सरक गया कि कहीं इस बहस के बाद फिर मुख़ालफ़त वाली बात न उठ खड़ी हो।

मैं वहाँ से उठकर सीधा अन्दर चला गया। वहाँ गाँवभर की बाजियाँ अम्मा से मिलने के लिए आयी हुई थीं। बाजी लड़कियों के एक गोल में बैठी उन्हें 'फ़रेबी दुनिया' फ़िल्म की कहानी सुना रही थीं। लड़कियों ने तमाम बातें तो मान लीं लेकिन उन्होंने यह मानने से साफ़ इन्कार कर दिया कि तसवीरें चलती फिरती और बोलती चालती हैं। गोल गोल का तो ख़ैर कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। मगर बाजी कहाँ माननेवाली थीं। तड़ से बोलीं, अल्ला क़सम बच्चा बाजी! हम अपनी आँख से देखा है।

अब रज्जो बाजी या सल्लन फूफी या अब्बू फू के पास इस अल्ला क़सम का क्या जवाब हो सकता था? अभी वे लड़कियाँ चकरा ही रही थीं कि बाजी ने मुझे देख लिया। मैं सबूत का गवाह बना लिया गया।

“मासूम से पूछ लीजिए।”

मासूम से पूछा गया।

और मैंने उन्हें सब कुछ बताया कि बाजी ठीक कहती हैं तो वे बेचारियाँ बिलकुल बेहाल हो गयीं।

“ई सब सैतान के असार है।”

लेकिन यह बहस यहीं रोक दी गयी, क्योंकि चाँद देखने का शोर होने लगा। पुट्टू ने चाँद देख लिया था और हमीन दादी बिना चाँद देखे पुन्नू की हाँ में हाँ मिलाये जा रही थीं। मुझसे किसी ने कुछ कहा तो था नहीं इसलिए चाँद देखते ही मैं पुन्नू की तरफ़ सरक गया।

[1] अहले बैत = परिवार। शीआ मुसलमानों में मुसलमानों के पैग़म्बर की औलाद को कहते हैं।

"हम बेहोश होंगे!" मैंने चुपके से कहा, "अउर अगर तू भयो बेहोश त हम तोरे पेट में चक्कू घाप देंगे।"

फुन्नू सहमकर हकीमा दादी की तरफ सरक गया।

तमाम औरतें जनाना इमामबाड़े की तरफ बढ़ीं।

इस इमामबाड़े के बारे में अजीब अजीब बातें मशहूर थीं। मशहूर था कि हर जुमे (शुक्रवार) की रात को इसमें जिन्नात मजलिस करते हैं। इसलिए शाम के बाद कोई इधर से गुजरता ही नहीं था। लेकिन मोहर्रम के चाँद के मानी यह होते हैं कि इमाम हुसैन कर्बला से हिंदुस्तान आ गये और इमामबाड़ा जिन्नात के हाथ से निकलकर आदमियों के कब्ज़े में आ गया है। फिर भी मैंने सोचा कि चाँद तो अभी अभी हुआ है। क्या पता कोई भूला भटका जिन्न रह ही गया हो या जिन्नात जल्दी में जाते जाते अपनी कोई चीज़ भूल गये हों और उसे लेने के लिए कोई रास्ते ही से लौट आया हो। इसलिए मैं रुका और अम्मा के पीछे से चलने लगा।

इमामबाड़े में रोशनी हो चुकी थी। बड़े अब्बा सारे पंजे[1] और तुर्रे[2] पर सेहरे[3] चढ़ा रहे थे और छोटी सी सईदा तन्नू भाई के पास पास चढ़ी बैठी उन्हें सारे नौहे सुना रही थी। तन्नू भाई इमामबाड़े के फ़र्श पर लेटे हुए थे। बड़े अब्बा तन्नू भाई और सईदा से बेख़बर अपने काम में मशगूल थे।

कहते हैं कि बड़े अब्बा एम० ए० ओ० कालेज के शोहदों में हुआ करते थे। लेकिन मैंने तो सिर्फ़ उनकी तस्वीर देखी है। वह रामपुर में रहा करते थे। यह बात किसी को नहीं मालूम कि वह करते क्या थे। बस मोहर्रम में यह गंगौली आ जाते थे। उन्हें पाक साफ़ रहने का बड़ा ख़याल रहा करता।

---

[1] बाँस के डंडों में सोने चाँदी के पंजे और सामने पटका लगाकर इमामबाड़े सजाये जाते हैं। यह ताज़ियों के साथ [illegible] [illegible] अलमिया कहा जाता है।

[2] पंजे का फुन्ना है। इमामबाड़ों में तुर्बत की कब्रें भी रखी जाती हैं जो इमाम हुसैन की कब्र का नमूना समझकर ज़ियारत की पूजी जाती हैं।

[3] फूलों की उस माला को कहते हैं जो पंजों और ताज़ियों पर चढ़ायी जाती है।

था कि बच्चों को प्यार करने में भी कतराया करते थे। कभी मुहब्बत बहुत जोश करती तो वह अपने मुँह से अजीब अजीब आवाज़ें निकालने लगते और दो उँगलियों की नोक से उस बच्चे की नाक की नोक को छू लिया करते थे। उनके ख़याल में उनकी अपनी जानमाज़[1] के सिवाय दुनिया की कोई चीज़ पाक थी ही नहीं। वह जाड़ों में भी एक सूती शेरवानी ही पहने रहा करते थे। जब मजलिस पढ़ने के लिए मिम्बर[2] पर बैठते तो जाड़े की वजह से नज़ले की एक बूँद उनके नथुने में झूला करती थी। और मैं यह सोचने लग जाता था कि देखें नज़ले की यह बूँद कब गिरती है। मगर वह बूँद कभी नहीं गिरी। वह जब तक ज़िन्दा रहे अलमों और ताज़ियों और तुरबतों पर सेहरा चढ़ाने का शरफ़ किसी और को नहीं मिला।

चूँकि और सब ख़ानदान ही के थे इसलिए दरद का कोई सवाल नहीं था। वह चुपचाप अपने काम में लगे रहे।

घोंगी के बाद पचीस अलम ज़रदोज़ी के पटके समेत दीवार से टिके हुए थे। उन पर एक रेशमी दुपट्टा पड़ा हुआ था। अलमों के नीचे एक तुरबत थी। उस पर सेहरे[3] का ग़िलाफ़ था। तुरबत के इधर उधर कुछ तसबीहें और सजदागाह (मिट्टी की टिकियाँ जिन पर शीआ मुसलमान सजदा करते हैं) रखी हुई थीं। फिर इमामबाड़े की चौड़ाई भर का एक काला परदा था जो शहनशीन को बाक़ी कमरे से अलग करता था।

इमामबाड़े की दीवारों पर इमाम हुसैन के रौज़े, फ़ुरात नदी और ज़ख़्मी जुलजनाह (इमाम हुसैन का घोड़ा) की मसाला तसवीरों के अलावा क़ुरान की आयतें और मीर अनीस की रुबाइयाँ फ्रेम में जड़ी हुई लटक रही थीं। छत में लटकी हुई शीशे की ख़ूबसूरत हाँडियाँ धूल खा रही थीं। उनमें मोमबत्तियाँ नहीं थीं क्योंकि हमारे इमामबाड़े तक पेट्रोमैक्स का युग आ चुका था। इन

---

1 वह कपड़ा या चटाई जिस पर नमाज़ पढ़ी जाती है।

2 तीन सीढ़ियों का एक [illegible] पड़ा रहता है। एक आदमी इसी पर बैठकर कर्बला की कथा सुनाता है।

3 एक कपड़ा।

हांडियों के इधर-उधर भाभों के बड़े बड़े रंगीन कुमकुमे टँगे हुए थे। इन कुमकुमों में कमरे के लोगों की परछाइयाँ नाचा करती थीं।

यह अन्दाज़ा साहब सज्जन नवाब और मारकन नक्श करने के बाद चले गये। बीवियों ने चूड़ियाँ उढ़ायीं[1]—बाँदी गोरी और साँवली, अधेड़, बूढ़ी और जवान कलाइयाँ नंगी हो गयीं। बाजी ने अपनी नाक से लौंग की तिनकी निकालकर टूटी हुई चूड़ियों के ढेर पर रख दिया।

फिर बाजी बयाज़ लेकर खड़ी हो गयीं। उनकी हमजोलियों और दूसरी घर और औरतें मातम में ताल देने लगीं। रहा पर्दानशीन के तख़्त से खिसककर बैठ गया। तमाम औरतों ने दुपट्टों में मुँह ढँक लिये। बाजी ने नौहा पढ़ना शुरू किया। निहायत पतली और नाज़ुक आवाज़ है मेरी बाजी की, फिर ज़ाहिर यह हो गया कि वह ग़ाज़ीपुर में जिस धुन की ख़बर लेकर आयी थीं उसे भूल गयीं। दो मिसरों के बाद उस जौनपुरी धुन पर ममोली ने अपना टप्पा जमा लिया। बाजी ने बहुत कोशिश की कि वह उस जौनपुरी धुन पर क़ायम रहें मगर फिर उन्हें भी हार मान लेना पड़ी।

दद्दा, एक्की दद्दा, रज्जन दा नम्मा दादा और दूसरा अधेड़ और बूढ़ा आदम सब यहीं पर रहे थे। [illegible] रो रही थीं। जारोक़तार रो रही थीं। और अपना सारा [illegible] बार बार [illegible] अपनी उँगलियों को इमामबाड़े की दीवारों पर [illegible] थी। [illegible] दादा का हलक़ सूख गया, तो उन्होंने बड़ा [illegible] में [illegible] सम्हाला, और [illegible] उँगली [illegible] उन्होंने फिर रोना शुरू कर दिया [illegible] मौला [illegible] के [illegible]

[illegible] भी [illegible] और [illegible] में [illegible] गयी थी, इसलिए [illegible] ही और में [illegible] करता था। [illegible] दूसरा [illegible] कि सब [illegible] आँगन में [illegible] और [illegible] हो आँगन में [illegible] मजबूर हैं [illegible] और उनके [illegible] भी।

[illegible] उँगलियों में [illegible] हैं [illegible]

[illegible] मुँह और अपनी बाबी (सय्यद रसूल [illegible]) का [illegible]

[1] [illegible] के [illegible] की तमाम [illegible] चूड़ियाँ [illegible] है।

रही थी। बाई जनब (हुसन की बहन) का पुरसा दे रही थी। किसी ने सकीना (हुसैन की चार साल की बच्ची) को सीने से लगा रखा था और कोई बनता के बीमार सयद सज्जाद (हुसन के बड़े बेटे) की जजीरें उठाये उनके साथ-साथ चल रही थी न मालूम क्या बात है कि ये सदानियाँ हुसैन की बीवियों को कभी पुरसा नहीं देना।

मैंने जो रहमत नानी की इकलौती आँख से बहते हुए आँसुओं को देखा तो मुझे हँसी आने लगी। अम्मा ने रोते ही रोते मेरी पीठ पर एक धपका मारा, 'मट्टीमिले! निकल बइठ!' इतना कहकर वह फिर रोने लगीं।

मैं मुँह सीधा करके बैठने पर मजबूर हो गया। उनकी आवाज की डोर बीच ही में टूट गयी। बाजी ने उनको उठाया। सल्लन ने अपने मुसकराते हुए काले होंठों पर दुपट्टा रख लिया। अफ़जलुन को हँसी आ गयी। बाजी ने आवाज़ की टूटी हुई डोर की मरम्मत करके उसे सँभाल लिया।

उम्मे सलमा पुकारी ये रोकर
शाम होती है घर आओ असगर

मैंने चौंककर चची की तरफ़ देखा। घर में उन्हीं का नाम उम्मे लैला था। मगर यह अली अकबर कौन हो सकता है जिसके लिए वह इस क़दर परेशान हो सकती है? इमाम हुसैन के बेटे अली अकबर को तो मैं जानता था, मगर चची उन्हें क्या बुलायेंगी भला। इसलिए मैंने सोचा कि इस बात का पता चला ही लेना चाहिए।

"ई अली अकबर कउन हैं चच्ची?" मैंने पूछा।

चची ने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप रोती ही रहीं तो मुझे घबराहट होने लगी। मैंने सोचा कि बाहर चलकर अब्बू से पूछा जाए। इसलिए मैंने धीरे से खिसक लिया और सारी दालान के मकान में शामिल हो गया।

छोटे ख़ाँ याद आ जाईं। यह आवाज़ महरुनिया नाऊन की थी।

कोई ना अइहें मजलिस हो रही। यह आवाज़ गुलमान चा की था।

मैं दालान में था बिल्कुल उनके पास पहुँच गया। मैंने महरुनिया का गुलमान चा की गोद में लहराते देखा। गुलमान चा की आँखों में भी निगाहें जमे रहे थे। मुझे देखते ही उन्होंने महरुनिया को छोड़ दिया। वह भाग गया।

गुलमान चा अम्मू के दूध शरीकी भाई थे। गंगौली ही में रहा करते थे। उन दिनों उनकी उम्र छत्तीस-सैंतीस साल रही होगी। भरा हुआ कसरती बदन था। लम्बा कद, हलका साँवला रंग। बड़ी बड़ी गहरी भूरी आँखें। लोगों का खयाल था कि उन्हें नमाज़, रोज़े और कसरत के सिवाय कोई और शौक ही नहीं है। और औरतों से तो वह दूर भागते हैं। चुनांचे दद्दा के बहुत कहने-सुनने के बाद भी उन्होंने शादी नहीं की। लेकिन चूँकि वह दद्दा का कहना टाल नहीं सकते थे, इसलिए अपनी देख भाल के लिए उन्होंने घर में एक चमाइन रख ली थी। यह चमाइन उनके तीन बच्चों की माँ भी थी। उनका सारा खर्च सरकारी खज़ाने (ज़मींदारी के खज़ाने) से चलता था—यानी सालभर का गल्ला उन्हें ज़हीर चा की ज़मींदारी से मिलता था। उनके कपड़े लत्ते की ज़िम्मेदारी अम्मू के सिर थी। उनका बड़ा लड़का अकबर अली गौसिया कुरबानअली के मदरसे में पढ़ता था और अब्बा उसे पाँच रुपये महीने का वज़ीफ़ा दिया करते थे। उनकी लड़की बच्छन इस घर से उस घर आने जाने में सीना पिरोना सीख रही थी। वह भी सात या आठ ही साल की थी। मुझसे कम दो ही दिन छोटी थी और मुझे बहुत अच्छी लगा करती थी। गरज़ कि सब शरीफ़ थे। बस उनकी चमाइन घर की बीबियों के साथ फ़र्श पर नहीं बैठ सकती थी, मगर उसे मजलिस के फ़र्श पर बैठने की इजाज़त थी। बात यह है कि उसकी आवाज़ बहुत अच्छी थी। गुलमान चा ने उसे दो तीन नौहे याद करवा दिये थे। वह बरसों से मजलिसों में इन्हीं नौहों को पढ़ती आ रही थी। उसकी धुनों पर नौहे धुनों का इतना असर था कि बीबियाँ तो बीबियाँ, मुझ जैसे साहबज़ादे भी मर्दाने इमामबाड़े के बाहर खड़े होकर उसका पढ़ना सुना करते थे और रोया करते थे।

न यह मुसलमान हुई और न ही गुलमान चा ने उसे मुसलमान बनाने की कोई कोशिश ही की। और यह झगटिया की ही कही जाती थी। झगटिया से जब उसका ब्याह हुआ था तो यह अठारह साल की थी और वह चार साल का। फिर ऐसा हुआ कि उसे चेचक निकल आयी और वह बेवा हो गयी—और गुलमान चा ने उसे अपने घर में डाल लिया। कहते हैं कि चमार चढ़ आये थे। और यह भी कहते हैं कि फुसर मियाँ। बस मुखिस ग न हु

समझा-बुझाकर और कुछ दे दिलाकर वापस किया था। सुलेमान चा का कहना था कि मामला पाँच बीसी पर तय हुआ था मगर गया अहीर का कहना था कि चमारों को सिर्फ तीन बीसी मिले थे। बाकी के दो बीसी फुन्नन मियाँ के काम आये थे। किस्सा जो भी हो, चमटिया को सुलेमान चा के घर में आ गयी।

यह झगटिया या थी तो बड़ी काली मगर बला की खूबसूरत सीधी और मीठी थी। बिलकुल ताजा-ताजा गुड़ की तरह जिसमें अभी भाप निकल रही हो। कई मीर साहबान इस चमटिया की मीठाहट पर लट्टू थे। कइयों ने उस मज्जे बाग भी खिलाये, लेकिन वह जो सुलेमान चा की हुई तो उन्हीं की हो गयी।

मगर एक परेशानी भी खड़ी हो गयी। सुलेमान चा मजहबी आदमी थे। इसलिए वह चमटिया की छुई हुई कोई गीली चीज इस्तेमाल नहीं करते थे। इसलिए घर में एक औरत के आ जाने के बाद भी सुलेमान चा को अपना खाना खुद ही पकाना पड़ता था। दाल सालन तो वह फुन्नन दा या वाजिद के यहाँ पकवा लिया करते थे, रहा रोटियाँ तो रोटियाँ वे तुरी डाल लिया करते थे। और खाना खाकर पानी पीने के बाद खुदा का शुक्र अदा कर लिया करते थे।

चमटिया को उन्हें बहुत चाहती थी इसलिए मोहल्लनिया के भाग जाने के बाद वह गड़न-न्खड़ रह गये। उन्हें तो जैसे ठार मार गया था।

आप हाथ में कोटा काट लिहिस रहा। उन्होंने बहुत गौर करने के बाद मुझसे कहा।

मौन। मैं चक्कर में पड़ गया।

'डाइहा रंग। वह बात, आम जहर ना होना।

'अच्छा सुलेमान चा।' मैं अपनी उलझन की तरफ आ गया उसने लेता वे बच्चा का नाम है ना किरा इ बाजी मार उन्हें नला उन्हें लला की पत्नी रहा नहीं मरे? मैंने सुलेमान चा ही से पूछ लिया क्योंकि मुझे तो मदरसनिया और उनके मोंप की अहमियत का बाद पता था नहीं कि मैं उनके बारे में जानता। सुलेमान चा मेरा सवाल सुनकर हँस पड़े। बोले 'उ हमाम हुमन ! बाबो रहा।

त का चच्ची अम्मू से साहेब के बियाह किहिन हैं ?

गुलमान चा खिलखिलाकर हँस पड़े, 'भय्या, इ बात तू वज़ीर से पूछ ल्या ।'

अच्छा । मैं बाहर की तरफ़ चल पड़ा ।

इमामबाड़े में मजलिस की तैयारी हो चुकी थी । सैयद नूरुद्दीन मुहम्मद ज़ैदी, मुख्तार मियाँ, दिलदार मियाँ, मौलवी बशीर, रशीद मियाँ, अली कबीर खाँ, हकीम अली कबीर साहब और फुन्नन मियाँ मिम्बर के सामने थे । फिर उनके पीछे फिर अम्मू, अली मज्जी खाँ, अली हाजी खाँ, अब्बू दादा, शब्बर दादा, हम्माद दादा, मुसलिम दादा और फुम्मू खाँ थे । चच्चा बच्चा मिम्बर से टिककर पसर हुए थे । सय्यद मिम्बर के अन्दर से गिलाफ़ उठाये खड़े रहे थे और भाई साहब कई और लड़कों के साथ मिम्बर के पीछे बैठ गए थे । सफ़ेद धानी और सफ़ेद कुरता पहने गोबरधन मुसलिम दादा को रुई की घटती बढ़ती क़ीमत के बारे में कुछ समझा रहा था । मुसलिम दादा और फ़ाइ उसकी बात सुन रहे थे ।

तीन दर के जिस हिस्से में फ़र्श नहीं था, उसमें कुछ जुलाहे बैठे हुए थे । चमारों और भरों के लड़के प्रसाद के लालच में तीनदर के बाहर ज़मीन पर उकड़ूँ बैठे आपस में लड़ रहे थे ।

शीशे के झाड़ फ़ानूस जल रहे थे । उनकी रोशनी में फ़ानूस, कँवल, हाँडियाँ, गिलास और झाड़ की बिल्लूरी कलमें झिलमिला रही थीं ।

ताज़िये के पास गुसलख़ाने के दरवाज़े से ज़रा हटकर बड़ी सी साइज़ पर हरा सेहरा रखा था और उसकी बड़ी सी गजरा हवा में नाच रहा था । फ़र्श पर छिड़काव किया जा रहा था ।

हकीम अली कबीर साहब अब्बू दादा को बताया, ज़माने के किसी मुहर्रम की बरकतें गिना रहे थे । और अम्मू अली हाजी खाँ के कान में कोई ऐसी बात कह रहे थे जिसे सुनकर उनके लिए हँसी रोकना मुश्किल हो रहा था । मौलवी बशीर साहब सी किसी शहादतनामे[1] के शेर सुना रहे थे । साहब दादा ख़ामोश थे

[1] यह उस तरह की नज़्म होती है जिसमें किसी शहीद का अन्तिम हाल बयान किया जाता है । यह शायरी में भी हो सकता है और कुरान में भी ।

नज़ारा देखकर हैरान थे और घूम-घूमकर तारीफ़ कर रहे थे। पास ही बैठे हुए मिन्नू ना अब्बा से ख़ज़ाना फूफी की निस्बत की बात कर रहे थे। मैं सीधा अम्मू के पास जाकर उनकी गोद में बैठ गया। उन्होंने मेरी गरदन के पिछले हिस्से पर अपनी नाक रगड़ दी। मैं खिलखिलाकर हँस पड़ा। तमाम लोगों ने चौंककर मेरी तरफ़ देखा। मैंने जल्दी से मुँह लटका लिया।

आज नवरतन चाचा गान्मवा पर कउना लफ़्ज़ को मानते रहे। मैंने अम्मू से कहा। अम्मू ने अली होदा चाचा की तरफ़ देखा। वह मुस्करा दिए। वे मार खाता रहा। मैंने अपनी बात पूरी कर ली।

अच्छा, हम उन्हें डाँट देंगे। अली होदा चाचा ने कहा।

बउर की बच्ची की पहली शादी एमाम हुसैन से भई रही? मैंने सवाल किया।

अम्मू और अली होदा चाचा के लिए हँसी रोकना मुश्किल हो गया। दोनों ने बहुत कोशिश की मगर फिर हँस ही पड़े। अगू दा ने भी क़हक़हा लगाया। बच्चा बच्चा और फुम्मू चा दूर थे, मगर उन्होंने जो अपने वज़ीर भाई और होदा भाई और अगू मामू को हँसते देखा, तो समझे कि ज़रूर कोई हँसने की बात है तो उन्होंने भी हँसना शुरू कर दिया। मैं हैरान कि आख़िर क़िस्सा क्या है।

अरे म्याँ वज़ीर क्या बात है? गार.. ने पूछा। अम्मू ने उन्हें बड़ी मुश्किल से बात बनायी। वह मुस्करा दिए फिर उन्होंने मुझे अपने पास आने का इशारा किया। मैं मुजरिमों की तरह उठकर पास गया और गरदन झुका कर बैठ गया।

हज़रत अली अकबर के वालिद का नाम हज़रत उम्म लला था। उन्होंने कहा।

बाक़ी

बाक़ी नहीं। उन्होंने मुझे टोका, 'बाऊ बोलना गँवारों का काम है। सही था मगर बन्ना। तुम्हारे चचा का नाम उन्हीं हज़रत उम्म लला के नाम पर रखा गया है।

चूँकि यह बात गोरे दादा कह रहे थे इसलिए मैं मान गया। मगर यह बात मेरे हलक़ से नहीं उतरी। मैं वहाँ से सरक लेना भी चाहता था क्योंकि भाई साहब मिम्बर के पीछे बैठे गप लड़ा रहे थे और मेरा मुँह चिढ़ा रहे थे। मगर गोरे दादा ने तो जैसे फ़ैसला कर लिया था कि वह मुझे पूरी कर्बला कथा सुनाकर ही दम लेंगे। इसलिए मैं मदीने से मक्के, मक्के से कर्बला, कर्बला से कूफ़े, कूफ़े से दमिश्क और दमिश्क से फिर कर्बला और कर्बला से मदीना आने जाने में थककर बिलकुल चूर हो गया। मुझे नींद आने लगी। मगर भाई साहब अपने हाथों के इशारे से कोई सन्देशा भेज रहे थे। मैंने जो इशारा पहचानकर पीछे देखा तो क्या देखता हूँ कि कल्लू ककरा अफ़ीम की पिनक में हैं। उनका सिर ज़मीन की तरफ़ झुकता चला जा रहा था। उनके खुले हुए मुँह से लार टपक टपककर उनकी मैली सफ़ेद दाढ़ी में जज़्ब हो रही थी। ठीक उसी वक़्त बड़े अब्बा साहब ने इमामबाड़े का हरा नोकदार दरवाज़ा खोल दिया। लोगों ने खड़े होकर अलमों का मुजरा किया। वाजिद दा ने कंधे से अँगोछा उतारकर दाढ़ी पोंछी और रोने के लिए तैयार हो गये। चच्चा बच्चा ने दामन से चश्मा साफ़ किया। गुज्जन दा ने ककरा को टहोका दिया, 'मजलिस शुरू हो रही है।'

'अरे तो हम सो रहे हैं!' यह कहकर ककरा ने हाथों से दाढ़ी साफ़ की। हाथ नम हो गये, तो उन्होंने हाथों को पैरों पर रगड़कर सुखा लिया।

बड़े अब्बा साहब ने लुबानदान में मसाला डाला। खुशबूदार धुआँ लहरा कर उठा—लोबान, लौंग और गंगा जमनी पंजा और गजरा सभी सलामत और पास के दरख़्तों ने धुएँ की चादर में छिपना शुरू किया। दालान में नक़्श का एक मशहूर सात गुम्बज वाला ताज़िया था जिस पर काला मख़मल चढ़ा हुआ था। उसके चारों तरफ़ शान से रखे अलमों की चादरें बँधी हुई थीं। पंजों पर रखी हुई छोटी छोटी सफ़ेद पगड़ियों में जैसे जान पड़ गया था। अलमों और पंजों की पगड़ियों पर पान के पत्तों के तावीज़ जैसे टँके और चन्दन के फूलों के गजरे पड़े हुए थे।

अब्बू दा न सोज़ख्वाना[1] की चौकी से इमामवाडे को एक नजर देखने के बाद अपने दोनो बाजुओं म सुर मिलाने क बाद सलाम पढ़ना शुरू किया। ज़नाने गलियारे म औरतो की आवाजें आने लगी।

"ए धिया, तनी दम क बहिना! मोरा पैरवा कूच दिया। आग लग इ मारामिला अंगरजी जनिन को।" यह आवाज़ हसीना दादी की थी। डाट बाजा पर पड़ी था क्योंकि बाद म उनके भिनभिनाने की आवाज़ भी आयी। 'बाकी हम्माद की बीबी ई कहिन कइम?' यह सवाल किसी न अब्बू का बड़ा बहन सुगन दादा स किया। 'नउज' किसी और बीबी की आवाज़ आयी 'तनी पटावा नाग इयह।'

बात यह था कि अब्बू दा शख्वानी का जब स साज़ख्वाना की दोना बयाजें निकाल चुके थ उन्होंने दोनो बयाजों म निशान लगाने के बाद इधर उधर देखा 'ऐ हम्माद! बइठे का हो, आतया काहे ना!' हम्माद दा आकर उनका दाहिना तरफ बैठ गय। मुश्ताक भाई न बायाँ बाज़ू सँभाल लिया। सुर मिलाये गये। धुन का ठाठ बाँधा गया। अब्बू मियाँ न जागिया म मतला शुरू किया। अभी पहला लाइन भी खत्म नहीं हुई था कि उन्होंने मुश्ताक भाई को और मिलकर बैठने का इशारा किया। वह बिलकुल घुसकर बैठ गय। मगर फिर भी कुछ गड़बड़ रहा। दादा न दूसरी लाइन पढ़ने पढ़ते तमाम लोगों की तरफ देखा और अस्थायी म अन्तर की तरफ जाते जाते उन्होंने मुज्जन दा को बुला लिया। मुज्जन दा आय और अँस्मार मुश्ताक भाई और मिमतार क बीच म बैठ गय।

हुसन अन्ना भी रोना चाहते थ मगर आँसू नहीं निकल रह थ। वह और अम्मू बार बार अपनी छोटी छोटी आँखो को गार रह थ कि व भाग जाय कि हारम म पुस्सू था और अग्गू न फूट फूटकर रोना पर। अम्मू और हुसन ने भी आवाज़ म रोना शुरू कर दिया लेकिन आँसू निकालने म व

---

1 साज़ख्वाना म तीन आदमी मरसिया गाते हैं। बीचवाला गाता है और बाकी दोनों सुर देते हैं। बीचवाला शाह कहा जाता है और इधर उधर वाले बाज़ू।

फिर भी कामयाब न हुए। मैंने भी कई बार ज़ोर-ज़ोर से रोने का इरादा किया मगर न आवाज़ निकली और न आँसू ही आये। बाजिद दा गमछे में मुँह छिपाकर रोने लगे। फुन्नू ने सामनेवाली दीवार में आँखें गड़ा दीं, और जब उसने आँखों को देर तक झपकने नहीं दिया तो पानी आ ही गया। उसने पानी को पोंछने की कोशिश नहीं की। वह आने दिया। लेकिन पानी एक ही आँख में आ सका था, दूसरी आँख बिलकुल सूखी हुई थी।

मरसिये की मंज़िल आते-आते पिट्ठस पड़ गयी। अन्नू दा दमे के मरीज़ थे इसलिए वह पूरा मरसिया न पढ़ सके। सोज़ख़्वानी ख़त्म हो गयी। बड़े अब्बा साहब मिम्बर पर गये। दुरूद पढ़ा गया। बच्चों की आवाज़ सबसे ऊँची थी। बड़े अब्बा साहब ने पहले एक सलाम सुनाया। शायर का नाम उन्होंने नहीं बताया। गंगौली के लोग उनसे किसी का सलाम सुनने के आदी हो चुके थे (मगर बाद में उनके मरने के बाद पता चला कि वह किसी बाके सलाम दरअसल बड़े अब्बा साहब ही के हुआ करते थे)। दो-तीन शेर सुनाते-सुनाते ही उन्हें जोश आ गया। उन्होंने अपने दोनों हाथ सीने पर बाँध लिये और झूम-झूमकर पढ़ने लगे। यह बात मैं अब तक तय नहीं कर सका हूँ कि उनके पढ़ने को तरन्नुम कहा जा सकता है या नहीं। उनकी आवाज़ बहुत ख़राब थी। शक्ल भी अच्छी नहीं थी। और जब उन्हें जोश आ जाता था तो उनका मुँह और फैल जाता था और वह उन पीले दाँतों से बड़े अजीब मालूम होने लगते थे। उनके दाँत देखकर मुझे हमेशा बल्लू रैका की नाद का ख़याल आ जाता था। दाँत ही का क्या रोना चाहिए था और रोना ही की सूरत में एक पीला-पीला-सा मलाल था। लेकिन उनकी कहानी ज़िन्दगी में कोई दिलचस्प नहीं थी। ऐसा लगता था जैसे अल्लाह मियाँ ने उन्हें ख़ूब दुःखी करके भेजा था। और ख़ुदा ने इतना ज़्यादा बढ़ा दे दिया था कि बाक़ी सारी ज़िन्दगी गुज़ारने के बाद भी कभी नहीं टूटा था। यही याद है कि जब वह मजलिस पढ़ते थे तो सुननेवालों पर उनकी शख़्सियत का असर पड़ता था और वे रो पड़ते थे। वह प्रोफ़ेशनल मजलिस पढ़नेवालों की तरह अपना ज़ोर न लगाते थे, न गुल मचाते थे, न गिड़गिड़ाते थे। वह घंटा भर भी नहीं पढ़ते थे। वह तो बस तीन मिनट में दस-पन्द्रह मिनट भर की मजलिस पढ़ा करते

थ। अब वह शीआ मुसलमाना का यह बतान क लिए नाहक घटा क्या बोलत कि अल्लाह एक है। मुहम्मद आखिरी पैग़म्बर और अली पहल खलीफा है क्योंकि उन लोगा का ता यह बात यू भी मालूम है। और औरता म ता काई तक़रीर करन का सवाल ही नही उठता। व ता यँ भी जब किसी बात को मान लता हैं ता मानती चली जाता हैं। एक बार इलाहाबाद के हकीम मुरतुज़ा साहब न अल्लाह क एक हान पर अपनी मशहूर मजलिस पढ़ी। यह मजलिस कोई चार या साढ चार घटा की हुआ करती थी। मर्दाना फर्श पर बठ हुए शीआ मर्दों की ज़बान तक़रीर की तारीफ़ करत-करत सूखी जा रही थी और अन्दर जनाने फर्श पर दर्दा हुक्की ददा स बह रही था कि मुआ मौलवी सठिया गया है का? क्या का हम ई ना मालुम कि अल्लाह एक है? ई त हमर मच्छना का मालुम है। यह इशारा मरी तरफ़ था। उस वक्त मैं तीन या साढ़ तीन साल का था। मैंन यह क़िस्सा अम्मू स सुना जिन्ह यह बात चचा न बताया था। मैं कहना यह चाहता हूँ कि शीआ औरतें मजलिसा म केवल इमाम हुसन और उनके घरवाला की विपदा सुनन आती हैं इसीलिए वह अच्छा साहब औरता म बहुत पापुलर थ और हमारी पट्टी की लगभग तमाम जनाना मजलिसें वही पढ़ा करत थ। और उन मजलिसा म वह ज़ोर शोर का रोना धोना हुआ करता था।

दूसरा शीआ औरता क बार म ता मैं नहीं जानता लेकिन अपन खानदान की औरता क बार म ज़रूर जानता हूँ कि उनक रो पड़न क लिए इमाम हुसन का विस्तृत बयान करन की ज़रूरत नहीं होती। बस इमाम हुसन का नाम लेना काफ़ी हुआ करता था।

एक बार तासरी शाबान[1] की महफ़िल[2] क तौर पर तै किया गया कि वहा बाजा क रूपया का मसरफ़[3] भी हो जाय। गुलाब अपन शहर क नामी का

---

[1] एक अरबी महीने का नाम।

[2] पैदाइश की तारीख पर होनवाल जलस का शीआ म महफ़िल कहत है।

[3] इस बिसमिल्लाह भी कहत है यानी जिस दिन बच्च की पढ़ाई शुरू की जाती है।

बाद किया गया और यह फ़ैसला किया गया कि लखनऊ से खालू मियाँ[1] को बुलवा लिया जाय। खालू मियाँ तैयार हो गये। अब एक तो यह कि महफ़िल हमारे यहाँ हो रही थी, फिर यह कि मौलवी इब्ने हसन नुनहरवी पढ़ने वाले थे इसलिए बड़ा मजमा था। पहले कैस जगीपुरी[2] ने एक क़सीदा पढ़ा। उनके क़सीदे में बड़ा सख़्त तबर्रा[3] था। खालू मियाँ की धुली हुई उर्दू सुनने के लिए शहर से सुन्नी मुसलमान भी आये हुए थे। अब्बा वग़ैरह बहुत परेशान हुए। तमाम पढ़े-लिखे सुन्नी ज़ानू बदलने लगे। मगर खुदा-खुदा करके क़सीदा ख़त्म हुआ। शीआ जुलाहों और नम्बरदारों वालों ने तो हर शेर की उछल उछल कर तारीफ़ की थी इसलिए कैस चचा को यह पता भी न चल सका था कि क्या घपला हो गया था। वह तो 'अल्लाहु मालिक' कहकर मिम्बर से उतर आये, और दोनों हाथों से अपनी हल्की सी दाढ़ी सहलाते हुए खालू मियाँ के पास जा बैठे और दोनों के हल्क़ों में जड़े हुए अक़ीक़, दुर्रे नजफ़ और यशब के नगीनों को देखने लगे जो खुद उन्हीं की तरह मासूम और बेगुनाह थे।

खालू मियाँ उठे। उन्होंने महफ़िल के रंग को भाँप लिया था। वह मिम्बर पर गये। उन्होंने अपनी अचकन के दामन बराबर किये। मिम्बर की दूसरी सीढ़ी पर रखे हुए बिदरी के छोटे से उगालदान में उन्होंने बड़ी एहतियात से अपने मुँह के पान को थूका फिर उन्होंने अपनी जेबी घड़ी में वक़्त देखा और फिर उन्होंने क़ुरान की वह आयत पढ़ी जिसमें शायरों को गुमराह और गुमराह करनेवाला बताया गया है।

इस आयत को सुनते ही सुन्नियों के चेहरे खिल उठे। वे इमामबाड़े से उठ गये। घरवालों ने इत्मीनान की साँस ली और कैस चचा घबराकर खालू मियाँ की तरफ़ देखने लगे कि आख़िर यह बात क्या हुई।

---

[1] मौलाना इब्ने हसन नुनहरवी—एक मशहूर शीआ मौलवी।
[2] एक गुमनाम मगर बड़े अच्छे शायर।
[3] शीआ लोग पहले तीन ख़लीफ़ाओं को नहीं मानते। बहुत से जाहिल शीआ उन तीनों को बुरा भला कहते हैं। आम तौर से इसी को तबर्रा कहते हैं।

शायरा की बुराई हा म कहा इत्तफ़ाक़ स इमाम हुसन का नाम आ गया। जनाने फ़र्श म हाये मारे मौला कहकर रोन की आवाज़ आयी। यह आवाज़ फूफी की था। अब्बा झट स अन्दर गय। फूफी बाक़ायदा मुह ढांपे रो रही थी। अब्बा न कहा "बहन! इमाम हुसन की पदाइश की महफ़िल है।"

"अरे ऊ पदा ना भय हाते त कबला म काहे का शहीद भय हाते ए भया।" फूफी न अपन बन ही म यह टुकड़ा लगा दिया। उनके इस तक ने गाज़ीपुर की अदालत दीवानी क सबस बड़े वकील की ज़बान बन्द कर दी। इसलिए अगर रोन के लिए सिर्फ़ हुसन का नाम काफ़ी है ता इसम क्या ग़रज़ कि मजलिस पढ़नेवाला क्या कह रहा है—जुलाहिनें, चमाइनें और उनकी औलादें अगर शोर करती हैं ता करें, औरतें आपस म बातें करती रहेंगी मगर कान मजलिस पढ़नेवाले की आवाज़ पर लगे रहगे। बस इधर इमाम हुसन का नाम आया और उधर उन्होंने रोना शुरू कर दिया। उन्हें और ज़्यादा रुलाना हो तो मजलिस पढ़नेवाला अपनी आवाज़ ऊंची कर लेता है। और चूंकि बड़े अब्बा साहब मजलिस पढ़त-पढ़त खुद भी कबला पहुँच जाते थे इसलिए अपने आपको वापिस बुलाने के लिए उनकी आवाज़ यूं भी काफ़ी ऊँची हो जाती थी।

चाँद रात की मजलिस बड़े अब्बा के सिवाय कोई और पढ़े तो शायद किसी के आंसू ही न निकलें। क्योंकि उस रात खास मोहर्रम के लिए तैयार नहीं होते। यह मजलिस अब भी होती है मगर चूंकि अब बड़े अब्बा नहीं हैं इसलिए सुना है कि अब यह मजलिस बहुत लुटी मारी होती है। मगर जिस मजलिस की मैं बात कर रहा हूँ उसे बड़े अब्बा ही पढ़ रहे थे और रोने वालों में अम्मू दादा भी शामिल हो गये थे। इसलिए यह पता नहीं चल रहा था कि बड़े अब्बा पढ़ क्या रहे हैं। बस यह दिखायी दे रहा था कि उन्होंने अपने दोनों हाथों को ज़ोर से पकड़ रखा है और वह मिम्बर पर इधर-उधर झूम रहे हैं और कुछ कह रहे हैं।

गंगौली म चाँद रात की मजलिस म नौहा नहीं पढ़ा जाता। दो चार बार 'हुसन! हुसन!' कहकर आहिस्ता आहिस्ता मातम करके सलाम पढ़ लिया

जाना है। मगर जब मैंने देखा कि शम्मू चा लड़कों को दो कतारों में खड़ा कर रहे हैं तो मैं भी लपककर एक कतार में खड़ा हो गया। बड़े-बूढ़ों ने इस बार बच्चों को नहीं देखा। बड़े अब्बा साहब ने सलाम पढ़वाना शुरू ही किया था कि एक पतले दुबले से नौजवान ने नौहा पढ़वाना शुरू कर दिया। उसने बड़ी मोहरी के पाजामे पर डबल ब्रेस्टेड कोट पहन रखा था। बड़े अब्बा ने चौंककर सलाम पढ़वाना बन्द कर दिया। तमाम लोग नौहा पढ़ने वाली अंजुमन को घेरकर खड़े हो गये।

"फूला लाई हूँ ए फ़िज़्ज़ा फूल ला!" उस अजनबी नौजवान ने अन्तरा उठाया।

चूँकि बड़े अब्बा ने भी हुसैन के छः माह बच्चे ही का हाल पढ़ा था, इसलिए उसकी माँ का बैन सुनते ही लोग बिलख बिलखकर रोने लगे। हद तो यह है कि अम्मू और हुसैन अली चा की आँखें भी भीग गयीं। अम्मू दा ने एक एक शेर को कई-कई बार पढ़वाया।

'इ नौहा पढ़े का कउन मौका है!' अली कबीर चा बड़बड़ाय 'अबहीं दू ठो मजलिस अउर होए का है।' लेकिन कतार चा अपने बिना बनियान के सीने पर धीरे धीरे मातम करते रहे जैसे उन्होंने अली कबीर चा की बात सुनी ही न हो।

"ए मस्सू!" अली कबीर चा ने मस्सू भाई का दामन खींचा जो बड़ी देर से गफ़्फ़न की एक तरफ़ नम्बरदार सफ़ में खड़े हुए थे और कभी-कभार मातम साथ पढ़ भी लग जाते थे। यह उनका जाती मसला था। अब तक यह गाँव में अक्सर नौहे पढ़वाया करते थे, इसलिए हर गश्त¹ उन्हीं का था। हर मजलिस पर उनका कब्ज़ा था। अब इस नौजवान की वजह से उनकी अज़मत में बट्टा लग रहा था इसलिए उन्हें तो रोना ही था। मगर जब अली कबीर चा ने दामन खींचा तो उन्हें मुड़ना ही पड़ा, उन्होंने अपना दाहिना कान उनकी तरफ़ झुका दिया। "दरवाज़े पर की मजलिस में बाहर गये बड़ा नौहा नाम सबा।" अली कबीर चा ने कहा।

---

¹ ताज़िया का जुलूस।

'जी !"

"कलकी तू दू टो पन्निया हो।"

यह हुक्म सुनाकर उन्हें इत्मीनान हो गया और शायद वह दूर-पास के किसी मरीज़ के बारे में सोचने लगे।

जिस आदमी ने नौहा पढ़ा था उसका नाम मोहम्मद हुसैन निकला। चावनपुर का रहनेवाला था। कलकत्ता में कोई काम करता था। फुन्नन दा ने फौरन ताड़ लिया। असल में वह इधर बहुत परेशान रहने लगे थे। विलायत खाँ की बीवी से इश्क करना भी ठीक और उनके लिए जेल काटना भी ठीक। उन्हें अपने बच्चों की माँ बनाने में भी कोई नुकसान नहीं। लेकिन लड़कियाँ होंगी तो जवान होंगी और जवान होंगी तो उन्हें ब्याहना पड़ेगा। बिरादरी में शादी होने का सवाल नहीं उठता। इसलिए उन्होंने वहीं मजलिस के फ़र्श पर मोहम्मद हुसैन के बारे में अम्मू से बातचीत शुरू कर दी कि क्यों न रज़िया की शादी इस लड़के से कर दी जाय। अम्मू को भी यह रिश्ता पसन्द आया, और मोहम्मद हुसैन फुन्नन दा के मेहमान हो गये।

सकार पा की मजलिस में मक्कू भाई ने दो नौहे पढ़े। फुन्नन दा और काज़िम दा को ताव आ गया। काज़िम दा ने तो ज़ोर-ज़ोर से अपने गुस्से का एलान भी कर दिया लेकिन फुन्नन दा ने चुपके से मोहम्मद हुसैन के कान में कहा, 'कल सवेरे वाली मजलिस में तीन ठो नौहा पढ़िया—ई उत्तर पट्टी वालन का दिमाग चल गया है।

मैंने सोचा कि इसी तीन नौहा वाली मजलिस में बेहोश हो लिया जाय। मैंने फुन्नू से राय ली। उसने कोई एतराज़ नहीं किया मगर भाई साहब का ख़याल था कि पाँच वाली बड़ी मजलिस ज़्यादा ठीक रहेगी। लेकिन मैंने कहा कि क्यों न पहली ही मजलिस में ऐसा बेहोश हो लिया जाय कि फिर मक्कू भाई बहाना होने के बारे में सोच भी न सकें।

यह बात तय हो गयी।

खाना खाकर तमाम लोग अपने अपने बिस्तर को दस भारे करने लगे, और फिर सार दा की दालान में जलसा शुरू हुआ। अलिमवा हज्जाम ने किस्सा शुरू कर दी। उत्तर-पट्टी से मोमबत्ती बहादुर था अभी हादी था, हुसैन अभी

था और अब्बा मम्नी चा आ गये। हुसन अली चा ने अब्बू दा के कुरते की तनज़ेब की तारीफ़ की। वह उसकी ख़रीदारी का क़िस्सा सुनाने लगे कि किस तरह राजा साहब पीरपुर ने अपने कुरते की तनज़ेब की तारीफ़ की और जब अब्बू दा ने उन्हें अपना कुरता दिखाया, तो वह हैरान हो गये।

का बताइ मीर साहब, जहज़वा डूब न गइल होत त का तनज़ेब आवत रहे, बिल्कुल मलाई समझा। गोवर्धन ने कहा जो एक टीन की कुर्सी पर बैठा हुआ था।

पूरा जहाज़ डूब गया? फुस्सू चा ने पूछा 'तब त बड़ा नुकसान भया साहब?'

अउर का साहब! व्यापार ऐही का नाम बाय।'

मैं चुपचाप आर्ज साहब के साथ कल्लू कक्का की तरफ़ चला गया।

कल्लू कक्का इमामबाड़े के पूर्वी कमरे के पीछे वाली ख़लवत में रहा करते थे। पहले एक बड़ा सा कमरा था जिसके तीन दरवाज़े तो ख़लवत के छोटे से आँगन में खुला करते थे और चौथा दरवाज़ा इमामबाड़े के बगली कमरे में। यह कमरा लकड़ी के बड़े बड़े सन्दूकों से भरा हुआ था। इन्हीं सन्दूकों में मोहर्रम के बाद मोहर्रम का सामान रखा जाता था। आँगन के दक्खिन में एक छोटी-सी कोठरी थी। कक्का उसी कोठरी में रहा करते थे।

हम लोग पहुँचे तो वह चाय बना रहे थे। उनका खटोला आँगन में बिछा हुआ था।

मिट्टी के दो प्यालों में चाय उँडेलकर कक्का ने हमें दी। प्याले ऐसे थे कि ख़ून हों तब भी सान ही दिखायी देते थे। प्याले हमें थमा देने के बाद उन्होंने अल्यूमीनियम के छोटे-छोटे चौड़े मुँह वाले कटोरे से हमारी चाय को पकाकर बालाई हम को। हमने चाय का घूँटा बड़ी मज़ेदार महक थी एक तेज़ भभक से हमारे नथुने भर गये। हमने एक चुसकी ली। बालाई के रेज़े मुँह में आकर चिपकने लगे।

'एक ठो कहानी सुनाओ कक्का!' मैंने कहा।

कक्का ने अमीर हमज़ा का क़िस्सा शुरू कर दिया। मैं जब बाद में

ग   बड़ हो जान पर यह दास्तान पढ़ी तो उसम एसी बहुत सी बातें नहीं मिलीं जिन्हें बक्का ओमिा-न्सी बात का तरह बड यकीन स सुनाया करते थ। लेकिन मुझे बक्का वाली दास्तान ज्यादा अच्छी लगती थी मुमकिन है इसकी वजह यह हो कि वह यह दास्तान लखनऊ का धुली धुलाई उर्दू म नहीं सुनाया करत थे, बल्कि भोजपुरी उर्दू म सुनाया करत थ। और यू भी वह कवल कहानी नहीं सुनाया करते थ साथ साथ एक्टिंग भी करत जात थ। लडाई क तमाम पतर दिखलात, नाच क भाव बनात, यस कभी कभी शोक आ जाती तो नीच की तरफ झुकत चल जात, और जब हम हसन लगत तो हसी का आवाज स उनकी गरदन एक झटक म ऊपर उठ जाती और दास्तान फिर शुरू हो जाती   तो नौशरवाँ का वजीर कहिस कि ए बादशाह! आपन अमीर हमजा स वायदा किया था कि आप अपनी बेटी महरनिगार का बियाह उन्हीं स कीजियगा

मरा तो खयाल है कि वह हमार सो जान क बाद भी कहानी कहत ह थक जात थ, जब तक कि अफीम की पिनक उन्हें सुला न द।

मुझ नहीं मालूम कि म कब सो गया मगर जब मरी आँख खुली तो म हमशा की तरह दादा क बिस्तर पर था—और दादी सुबह की नमाज पढन क बाद लेटी हुई तसबीह (माला) पढ़ रही थी। सारा घर जाग चुका था। अम्मा मुसलिम दा और फुन्नन दा क घरा की मजलिस करक वापस आ चुकी थी और रसोईघर स नाश्त की तयारी की तज महक आ रही थी।

म झटपट नाश्ता करक तयार हो गया क्योंकि अभी कबीर था क दरवाजे की मजलिस म जाना था। और फिर अपन दरवाज का मजलिस म शरीक होना था। लेकिन जब म बाहर निकला तो मन दखा कि अब्बा मज म बठे हुक्का पी रहे हैं। दो चार आसामी जमीन पर उकड बठ हुए थ रजियान क दो-एक लोग भी थ और गाबरधन तो खर था ही। वह चच्चा बच्चा का गद्दे की कोई कहानी सुना रहा था। रजियानवाल अब्बू स किसी मुकदम के बार म बातचीत कर रह थे। य लोग इतन दौलतमन्द है कि जब चाहें गड्‌-गड पूरे गाँव का खरीद लें। लेकिन य कपड़वाली कुर्सी

पर नहीं बठ सकते थ। इन लागा के लिए लकडी या टीन की कुर्सियाँ रखी जाना था।

बड़े घमासान की बहस हो रही थी। अली कबीर चा कह रहे थे, "बाप दादा हीयाँ गड़े चौक इमामबाड़ा हायाँ है इज्जत आबरू हीयाँ है! गंगौली में हम्म मतलब ना हुइहै त का रक्खन का हुइहै! जा लोग कलकत्ते में रुप्या कमाय हम गाव ना न रह सकी

अरे भाई साहब हिजरत करना ता मुसलमाना की तकदीर है। आखिर रसूलल्ला ने भी मक्के से मदीने की तरफ हिजरत की थी कि नहीं।" अम्मू ने बात में जुमला दिया।

बात न किन्तु रहा। कबीर चा ने कहा जरूर रहिन रहा, बाकी हम रसूलल्ला ना न है।'

अरे मीर साहब! यह कांग्रेस हिन्दुओं की पार्टी है! चूंकि मुसलमान जमींदार ज्यादा हैं इसलिए यह जमींदारी जरूर खतम करेगा। तो देहातों में मुसलमान क्या करेंगे? आटे में नमक की तरह तो हैं।' अनवारुलहसन साहब ने कहा।

'नमक ही से दाल में मजा है।' अली कबीर चा ने कहा, 'बनमक की दाल का किन खाया?'

हिन्दुस्तानी मुसलमान की तकदीर में तो रोना लिखा है!' अनवारुल-हसन ने अपनी बात पर जोर दिया।

जब तो हम इन्ने मान रहे कि अपना गंव छोड़ के चल जायें। अ दूसरे के पीना तो हम शीअन की तकदीर है। तू लोग अपनी कर्बला की फिकिर कर ल्या! अली कबीर चा ने फसाना सुना दिया। सब लाजवाब हो गये। मैं चुपचाप उनके पास बैठकर उनकी बात से मजा लेता।

हाँ बरगा थे। उन्हा करवट लेकर कहा।

बस अब मजलिस कर ली जाय। सारे हाँ उठ गये, और स्वार उजाड़ गया।

बबार मा के घर ना। हम गद्दे के पास सवार मा मिल गये।

ई आप गोदामवा पर कउन लटक को मारत रहे ?' मने झट म सवाल कर लिया।

वह बिलकुल घबरा गय। बोले कोई स कहिया मत हम तूह एकन्नी देंगे।' हम अम्मू को बता दिया है। मन कहा, बाकी आप ओको मारन काहे रहे ? ऊ छनुन्दिनवा रहा ना ? मन आखिर उस लड़के की आवाज को पहचान ही लिया।

'हम ओका बहलात रहे ओको चोट लग गयी रही।' यह कहकर तरान चा न मुझे एक दुअन्नी दी और मन सोचा कि चलो अब यतीम का हिस्सा दस आने म शरीक लूगा। चुनांचे मन वह दुअन्नी जेब म रख ली और तरान चा को छोड़कर गड्ढ म ककरा से छिछली मारन लगा। दो एक ककर तो पानी म गिरते ही डूब गय। दो एक तो चार गज तक जाकर डूब। ठीक उसी वक्त जाते हुए जुलाहे क एक लौंडे ने मेरे पास रुककर एक ककर उठाया और छिछली फकी। ककर पानी पर तैरता हुआ उस पार निकल गया। वह लौंडा मेरी तरफ देखकर मुसकराया और बिना कुछ कहे आगे बढ़ गया। मैं बहुत शरमाया कि फाय कलास म पढ़न स क्या फायदा अगर म जुलाहे क इस लौंड की तरह छिछली भी नहीं फक सकता। हाँ, और क्या ? आखिर फायदा ही क्या है अंग्रेजी पढ़न का।

पढ़ाई क इस अहम् सवाल पर विचार करता हुआ मैं कबीर चा क इमामबाड म दाखिल हुआ। मजलिस शुरू हो चुकी थी। हुसन हैदर चा साज पढ़ रहे थ। तमाम लोग अपनी मुकर्रिर जगहों पर बैठ हुए थ। हाँ शुमन दा न मालूम क्या वाजिद खाँ की जगह पर बैठ गय थ। हैदर चा न दूसरा ही सर पढ़ा था कि वाजिद खाँ आ गए। अलमा को मुजरा करन क बाद ही यह बोले 'द का भाई तू हियाँ कहाँ बइठ गया ?

'अरे त कहाँ अउर बइठ जाओ। शुमन दा न कहा।

क्या बैठ जाऊँ म कहाँ और। वाजिद खाँ ठठ उर्दू बोलन लगे।

हद त्या नूँ त सारा उर्दू बोर।

क्या करत हो शुमन! अपनी जगह पर बैठो। सार दा न शुमन दा को डाटा।

फुन्नन दा चुपचाप सरक गये। वाजिद दा आराम से बीचवाले दर में मिम्बर की तरफ़ मुँह करके बैठ गये। हैदर चचा ने पढ़ना शुरू कर दिया। मैं इस फ़िक्र में था कि मजलिस जल्दी ख़त्म हो, कि अपनी मजलिस का नम्बर आये। लेकिन हैदर चचा ने एक लम्बा मरसिया पढ़ दिया, तब सज्जाद चचा ने मिम्बर पर जाकर अनीस का एक मरसिया शुरू किया—'हज़रत से कबलाये मुअल्ला क़रीब है...'[1]

इस मरसिये पर लोग बहुत रोये। फिर मातम शुरू हुआ। मौलवी क़ुरबान अली साहब पर दौरा सा पड़ गया। वह पागलों की तरह मातम करने लगे। इधर उधर के लोगों ने उन्हें रोकना चाहा कि नोहा पढ़ा जाने वाला है मगर वह नहीं माने। उनके हाथ और तेज़ी से चलने लगे। तमाम लोग मातम करने लगे। और फिर लोग ज़ार ज़ार से रोने लगे। भाई साहब खड़े होकर दोनों हाथों से मातम करने लगे। मैं थककर बैठ गया। फिर एक एक करके तमाम लोग थक गये। रोनेवालों की आवाज़ और ऊँची हो गयी। मौलवी क़ुरबान अली के हाथ और तेज़ हो गये—'हुसैन! हुसैन!

हुसैन! हुसैन!
मौला हुसैन!
आक़ा हुसैन!
हुसैन! हुसैन!'

और फिर मौलवी साहब लड़खड़ाकर गिर पड़े। मैंने दिल में कहा—अच्छा बुड्ढ़ा मरने लगे। तो चलो हमारे दरवाज़े की मजलिस में

मगर मौलवी क़ुरबान अली बेहोश नहीं हुए थे, वह मर गये थे।

मैंने हार मान ली। मौलवी क़ुरबान अली ने मरकर मेरी हिम्मत तोड़ दी थी। मैं मरने के लिए तैयार नहीं था क्योंकि मरने के बाद कोई ज़िन्दा नहीं होता।

मौलवी साहब के मरने की ख़बर आग की तरह सारे गाँव में फैल गयी। उत्तर पट्टी के लोग उनके कफ़न-दफ़न की तैयारियाँ करने लगे। हमारे दरवाज़े की मजलिस मातम पर ख़त्म कर दी गयी।

---

१ मीर अनीस के एक मरसिये की पहली लाइन।

मैं अन्दर चला गया।

भाई साहब न इस मौक़े का फायदा उठाकर बाजी के वक्स म धनिये[1] की पाटली उड़ा दी थी। हम दोनों न चटपट अपनी जेब भर ली। हम दोनों न पाखर पर जाकर इत्मीनान से धनिया खाने का प्रोग्राम बनाया ही था कि बाजी आ गयी। उन्होंने अम्मा को आवाज़ दी। अम्मा न हमें पुकारा। हम भाग। अम्मा न हमें दौड़ा लिया।

गोरी भाभी के दक्खिनवाले दालान म भाई साहब पकड़ गये। मैं नईमा दादी की खलवत में घुसकर खटोले के नीचे छुप गया और जल्दी-जल्दी धनिया खाने लगा। अम्मा भाई साहब को मार पीटकर खलवत म आयी। उन्होंने मुझे देख लिया। बाँस के चरखीदार पंखे की डण्डी से उन्होंने मुझे ना शुरू किया। वह जमीन पर उकड़ू बैठ गयी थी। खटोला बहुत नीचा था, मैं बिलकुल फँस गया था।

अब जाने दो। नईमा दादी न कहा।

मैं इस मट्टी मिले को मार डालूँगी आज।

तो मैं मौलवी कुरबान अली की तरह जन्नत में चला जाऊँगा और फिर कभी नहीं आऊँगा मैंने कहा। मैं बाहर से सुन आया था कि मौलवी साहब साथ जन्नत में गये हैं।

ए खुदा न करे, बेटा जन्नत में जाएँ तोरे दुश्मन 'नईमा दादी बोला।

मैंने सोचा कि अगर जन्नत इतनी ही बुरी जगह है, तो मौलवी कुरबान असे बेचारे वहाँ कहाँ जा फँसे। मगर मैं इस सवाल पर ज्यादा न सोच सका, क्योंकि अम्मा न मेरे कान पकड़ लिये थे। वह मुझे घसीटकर बाहर निकालने में कामयाब हो गयी, मगर ठीक उसी वक्त न्हा आ गया, एक कुलाँच भर कर मैं न्हा से लिपट गया।

बीबी आज छोड़ दीजिए इसको। अम्मा न कहा।

मगर मैं मुतमइन था—मैं जानता था कि न्हा मुझे नहीं छोड़ेगा।

---

[1] मोहर्रम म धनिया भूनकर और गरी भूनकर उसमें इलायची मिला ली जाती है। उन दिनों पान नहीं खाया जाता।

उद्गम

आकाश कार्तिक के आसमान की तरह धुला धुला सा था, और सितारों से यों पटा हुआ था जैसे चैत में महुए की सुगन्ध से धरती पट जाती है। जनाने इमामबाड़े के आँगन में लगे हुए कदम्ब की शाखें भी फूलों की अनगिनत गेंदें लिए मुस्करा और हवा में नृत्य कर रही थीं और कच्ची उम्र की सालियों की तरह बहनोई की राह देख रही थीं।

सितारिया को इमामबाड़े के बड़े आँगन में बिलकुल अकेली थी। मोहर्रम का सारा महीना वह यों ही अकेली रह जाया करती थी। क्योंकि सुलेमान का मज़हबीपन इतना जाग उठा करता था कि मोहर्रम के दिनों में वह उस रात में भी नहीं रहा करते थे। वह भी इसका बुरा नहीं माना करती थी। 'आख़िर तो एक दिन अली अकबर के बाबू के आगे अच्छन मियाँ के मुँह दगाय के हाई।' उसने सुसराल में उनके अल्लाह मियाँ के बारे में कुछ-कुछ सुन रखा था। फिर ही दिन में वह अपनी अकबर के बाबू के अल्लाह मियाँ से डरा भी करती थी इसलिए शुरू-शुरू में तो उसने मोहर्रम की तन्हाई का बुरा माना। लेकिन फिर उसने दिल को समझा लिया और फिर यह भी बुरा अच्छा नहीं लगता था कि कबीर मियाँ और सग़ीर मियाँ तो उनके पहलुओं में सोयें और अली अकबर के बाप अपनी मुराद के पास रहें। इसलिए सुलेमान गाज़ीपुर के मोहल्ले के जाने ही मर्दाने में रहने जाते थे। और सकटिया तो जनाने इमामबाड़े के आँगन में उठ आया करती थी। अली अकबर और सकटिया की अकबरा भी अपने पास रख लिया करती थी। अली अकबर अन्दर के सलाम बाहर ही आया करता था और सकटिया अकबरी की पाँव दबाया करता था। और कबीर मियाँ का यही उनकी मसनवी में शहर का मान सुना करता था। और कभी-कभार सग़ीर मियाँ के साथ बिछावन के साथ शायर के बाहर लिए हुए बिना सलियार में या बार पर इमाम के गम गाया करता था। कबीर मियाँ बनता और वह बाबी। और जब एक दिन उसने

पर से एक केंचुआ गिरा तो उसने चुपके से बिक्कन के कान में यह कहा कि उमरा पर गिर गया है।

घर में इस खेल की खबर किसी को नहीं थी। और सगटिया तो खुश थी कि उसकी बहनिया बीबिया के साथ पलंग पर बैठती है और उनके बच्चों के साथ खेलती है। उसे खूब याद था कि जब वह छोटी थी तो इन बातों के लिए कितना तरसा करती थी। और जब सुलेमान ने पहली बार अपने पलंग पर एक तरफ होकर उसे अपने पास लिटा लिया था तो वह कितनी खुश हुई थी।

लेकिन अब के मोहर्रम की तनहाई कुछ अजीब-सी थी। ग़ाज़ीपुर के लोग आये हुए थे। मजलिसें हो रही थीं। लेकिन मोहर्रम पर रंग नहीं आ रहा था। मर्दाने में बशीर मियाँ, बक़ार मियाँ, झब्बर मियाँ और अग्गू मियाँ की कमी थी और इनके अलावा फुन्नन मियाँ, हम्माद मियाँ और अली अकबर के बाबू भी ग़ाज़ीपुर चले गये थे।

उधर अदालत ने दक्खिन पट्टीवालों का मकान सुपुर्द कर लिया था। और डिप्टी बना हादी के बहनोई से मागा मिल जज ने मोहर्रम में तारीखें डाल दी थीं। बड़का फाटक तो दूर नहीं था लेकिन ग़ाज़ीपुर तो बहुत ही दूर था। इतना दूर था कि भरे-पूरे घर और अलमों और ताज़ियों की भीड़-भाड़ में और नौहों मरसियों के मातमी शोर में भी सगटिया को अपने आपको अकेला पा रही थी और इसीलिए ज़िन्दगी में पहली बार उसे यह सोचना पड़ा था कि जिस दुनिया में वह रह रही है वह उसकी अपनी दुनिया नहीं है। 'भगवान ने कर अली अकबर के बाबू के बच्चा ही गइल त हम का करिब!' उसे अली अकबर और बच्चन की ज़रूरत महसूस हो रही थी। वह उन्हें भींच लेना चाहती थी अपने आपको यह यकीन दिलाने के लिए कि वह कोई सयान नहीं है जो गिर जाने के लिए किसी कटी हुई पतंग की तरह हवा में भटक रही हो। वह तो सगटिया बा है। वह अली अकबर के बाबू के लरकन की महतारी है।'

[illegible] सलाम गुनगुनाने की आवाज़ आने लगी। वह आँगन में सलाम गुनगुना रहे थे

जगह माल ली है मज़ारों की ख़ातिर।
ज़मीं पर शहीदों निशाँ सबत हैं।
शबीह इमाम ज़मीं सबत है।

नज्जन की आवाज़ झगटिया वालों की आवाज़ से भी अच्छी थी। वह अक्सर रात गये अपनी दोनों लड़कियों—दिलारा और सितारा के साथ अपने लिए, और आसमान पर टपके हुए महुओं की तरह बिखरे हुए सितारों के लिए, और ज़मीन पर लड़खड़ाती हुई हवाओं और दीवारों से चिपकी हुई परछाइयों के लिए सोज़ख्वानी किया करते थे। और उनकी आवाज़ सुनकर रोती हुई झगटिया वाले जाग उठा करती थी।

नज्जन मीरासी जौनपुर के रहने वाले थे। ग़ाज़ीपुर में तवायफ़ों को गाना सिखाते थे। मरसियों पर उनके साथ संगत किया करते थे। बशीर मियाँ ने उन्हें चार बीघे का [illegible] का लालच दिया तो वह गंगौली आने पर तैयार हो गये। इसलिए [illegible] के मर जाने की वजह से वीरान हो जाने वाली जगह फिर आबाद हो गयी।

नज्जन अपनी बीवी गफ़ूरन और दो बच्चियों दिलारा और सितारा के साथ गंगौली आ गये। दिलारा बिलकुल जवान थी। सितारा उससे कुछ कम जवान थी पर उससे कुछ ज़्यादा खूबसूरत थी। लम्बा नाक नक्शा, नमकीन साँवला रंग, गहरी भूरी आँखें और बड़े घने गहरे सियाह बाल। उसके बाल इतने घने थे कि अगर वह चाहती तो जाड़े में उन्हें ओढ़ सकती थी।

खबिलन पट्टीवालों ने इन मीरासियों को इसलिए आबाद किया था कि [illegible] दिलारा और सितारा की वजह से उनकी मजलिसों की रौनक़ बढ़ जायगी। नज्जन ने अपनी बच्चियों को अपनी आवाज़ का मीठा दर्द भी दे दिया था। [illegible] नज्जन बड़े अच्छे सोज़ख्वान थे और खबिलन-पट्टीवालों को सोज़ख्वानी का [illegible] था। अब्बू मियाँ और मिच्छू मियाँ अच्छे सोज़ख्वान [illegible] और [illegible] मजलिसों का [illegible] उनके बस का न था। फिर उनकी सोज़ख्वानी में [illegible] और [illegible] मियाँ की सोज़ख्वानी वाली बात भी न थी।

मोहर्रम के चाँद में [illegible] मियाँ ने [illegible] की मजलिसों में भी [illegible]

कर साज़ पर ना बन्द कर दिया था। वह रात की मजलिसों में पीलू और दिन की मजलिसों में मालकौंस के ठाठ बाँधने लगे थे और पहली की मजलिस में तो उन्होंने यह हरकत की कि नौ तारीख़ की रात वाली मजलिस का मरसिया पढ़ डाला। इसलिए यह तय किया गया कि दक्खिन-पट्टी की मजलिसों में नज्जन सोज़ख़्वानी किया करेंगे।

नज्जन को यह बात नहीं मालूम थी। वह यूँ ही गुनगुना रहे थे। उनकी आवाज़ में पर्दों की चमक-दमक से ज़्यादा अक़ीदे की गर्मी थी। दिलारा और सितारा बाज़ू बनी हुई थीं, और वे दोनों आवाज़ें ऐसी लग रही थीं जैसे करौंदे की दो चंचल डालियों के बीच में आम का कोई छतनार पेड़ खड़ा हो—उनसे अलग भी और उनके पास भी।

दिलारा तो जोगिया के गहरे सागर में बही चली जा रही थी। सुरों की ऊँची-नीची लहरों के साथ हिचकोले खाती हुई अपने बाबा का साथ दे रही थी। लेकिन सितारा का दिमाग़ उसके बदन ही की तरह चंचल था। वह हम्माद मियाँ के बड़े बेटे अब्बास के बारे में सोच रही थी जो अलीगढ़ में पढ़ता था और सिर्फ़ छुट्टियों में गंगौली आया करता था। और उसके आते ही जैसे मोहर्रम आ जाता था। दक्खिन पट्टी अँगड़ाई लेकर जाग पड़ती। तमाम वीरान गलियारे माँग लेने लगते। पिचके हुए आँगन ठट्ठा मारकर हँसने लगते।

सितारा जानती थी कि अब्बास उसी से मिलने आता है। हालाँकि यह बात अब्बास ने कभी उससे कही नहीं थी। बस होता यह कि अब्बास आता और वह न होती तो वह उदास हो जाता। और जब वह आ जाती तो अब्बास बज़ाहिर तो उससे बेख़बर हो रहता, लेकिन उसकी आवाज़ में एक खनक आ जाती और सितारा की नस-नस में कलियाँ चिटकने लगतीं।

अब्बास ग़फ़ूरन को अलीगढ़ के लतीफ़े सुनाया करता और जिन्ना साहब की राजनीति समझाता। और राजा महमूदाबाद, चौधरी ख़लीक़ुज़्ज़माँ, ग़ज़नफ़र अली, नवाब इस्माइल, नवाब यूसुफ़, सर सुलतान और इसी तरह के न मालूम कितने अजनबी नाम लेता। कहता था कि हिंदुस्तान के दस करोड़ मुसलमान क़ायदे आज़म के पसीने पर अपना ख़ून बहा देंगे। यह बातें न

गफूरन की समझ में आता, न सितारा की। गफूरन कहती 'अब मियाँ आप पढ़े लिखे हैं, ठीक ही कहते होंगे।'

"अरे गफूरन बुआ!" अब्बास कहता, "एक मरतबा पाकिस्तान बन जाने दो। मुसलमान ऐश करेंगे, ऐश!" वह जोश में आ जाता और खान अब्दुल गफ्फार खाँ वगैरह को बुरा भला कहने लगता, 'बुआ, यह लोग तो मुसलमानों को हिन्दुओं के हाथ बेचने पर तुले हुए हैं।'

सितारा को पाकिस्तान के बनने या न बनने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वह तो बस अब्बास की आवाज़ सुना करती थी। तले जाते हुए अंडे की सोंधी महक की तरह अब्बास की आवाज़ सितारा पर छा जाया करती थी। मगर पाकिस्तान का नाम उसे ज़रूर याद हो गया और उसे यह भी यकीन हो गया था कि पाकिस्तान ज़रूर कोई अच्छी चीज़ है। इसीलिए जब मोहर्रम में दक्खिन-पट्टी के इमामबाड़े के फाटक आवाज़ों से छलकने लगते और वही अब्बास वाले तमाम नाम फिर फिरकर ज़बानों पर आते तो कभी-कभार सितारा दरवाज़े की आड़ में खड़ी हो जाती और उसे यह सुनकर बड़ा ताज्जुब होता कि कबीर मियाँ के अलावा दक्खिन पट्टी का कोई आदमी पाकिस्तान को अच्छा नहीं कहता था।

वैसे इमाम हुसैन ने अमर बिन साद[1] से यह कहा था कि मैं बैअत[2] नहीं कर सकता, लेकिन अगर यज़ीद यह समझता है कि मैं बगावत कर रहा हूँ तो वह मुझे हिन्दुस्तान चला जाने दे। इसीलिए हुसैन को माननेवाले हिन्दुस्तान को बुरा नहीं कह सकते। आखिर मौला और आका ने कुछ सोचकर ही तो [illegible] के इस [illegible] को चुना होगा।

और बचपन से सुना हुआ एक बेचारा ब्राह्मण भी कर्बला में इमाम हुसैन के साथ शहीद हुआ था। उस ब्राह्मण के खानदानवाले खुद को हुसैनी ब्राह्मण[3]

१ यज़ीद की उस सेना का सेनापति जो कर्बला में हुसैन से लड़ी थी।

२ धर्म के मामले में जब कोई किसी को अपनी मर्ज़ी का मालिक मान लेता है तो उसे बैअत करना कहते हैं।

३ शिया मुसलमानों में यह ख्याल आम है कि एक कश्मीरी ब्राह्मण कर्बला में शहीद हुआ था। अभी तो इमाम मोहर्रम में यहाँ आते हैं।

कहते हैं। उनकी गर्दन में गुलूबन्द की तरह एक लाल लकीर-सी पड़ी होती है। अगर यकीन न हो तो ग़ाज़ीपुर के डॉक्टर त्रिलोकीनाथ को देख लो। वह [illegible]मना ब्राह्मण हैं और उनकी गर्दन में खून की वह डोरी पड़ी हुई है। हुसैन हिन्दुस्तान नहीं आ सके हम आ गये हैं। तो हम अब यहाँ से नहीं जायेंगे।

इन बातों के साथ ही फिर शीआ पॉलिटिकल कान्फ्रेंस और फख्रे कौम बल्ब मुस्तफा और हुसैन भाई लालजी और न मालूम किस किस की बातें होने लगतीं। सितारा की समझ में ये बातें भी नहीं आती थीं। लेकिन यह बात उसकी समझ में आती थी कि इमाम हुसैन हिन्दुस्तान आना चाहते थे। शायद अब्बास को यह बात नहीं मालूम है। मगर उसे यह बात कैसे बताई जाय यह सितारा की समझ में नहीं आता था। उसे तो अब्बास की तरफ देखने में भी शर्म आ जाया करती थी—और यह मुआ जिन्ना कैसा शीआ है कि हिन्दुस्तान के खिलाफ है। यह बात भी अब्बास से नहीं पूछ सकती थी मगर सरवरी से पूछ लेने में तो कोई नुकसान था नहीं आखिर वह भी तो हर वक्त न मालूम क्या-क्या अट शट पढ़ा करती है।

'बाजी यह पाकिस्तान क्या है?' उसने एक दिन सरवरी से यह पूछ ही डाला।

'मुसलमानों का एक मुल्क बनेगा।' सरवरी ने बड़े विद्वानों की तरह कहा।

'यह मुल्क क्या होता है बाजी?'

सरवरी इस सवाल पर बिलकुल सटपटा गयी क्योंकि यह बात उसे भी नहीं मालूम थी कि मुल्क क्या होता है। उसे यह मालूम था कि पाकिस्तान से मुसलमानों को क्या फायदा होगा। ये बातें उसे अम्मू से मालूम हो चुकी थीं। और मुस्लिम जब अलीगढ़ से आते तो वह भी पाकिस्तान के अलावा कोई और बात न करते। लेकिन सरवरी को यह बात अब तक किसी ने नहीं बताया था कि मुल्क क्या होता है।

ठीक उसी वक्त अब्बास आ गया। 'क्या बात है बाजी?' उसने सवाल किया।

'सितारा पूछ रही थी कि मुल्क क्या होता है?'

अब्बास खिलखिलाकर हँस पड़ा। शायद सरवर के [illegible] के [illegible] भूल गया

कि हम्माद मियाँ फौजदारी में एक मुकदमे में फँसे हुए हैं और उसमें उनको सजा भी हो सकती है।

'यह तो पगला है बाजी!' उसने कहा 'एक रोज गफूरन बुआ से पूछ रहा थी कि जब बीबी के मियाँ लोगन को मियाँ कहा जाता है तो फिर मुनिस, मासूम, मद्दू, किक्कन, बद्दन और दूसरे उन तमाम लड़कों को मियाँ क्या कहा जाता है जबकि उनका ब्याह भी नहीं हुआ है!' अब्बास फिर हँसने लगा। सरवरी भी हँस पड़ी। पास ही लेटकर तसबीह पढ़ती हुई अकबरी बी भी मुसकरा पड़ीं। सितारा लाल पड़ गयी।

'हम ई ना कह रहा बाजी...' उसने सरवरी से कहा।

'बुलाऊँ गफूरन बुआ को?' अब्बास ने धमकाया।

'बुलाइए।' और जब चौंकी तो उसने देखा कि भरे आँगन में वह अब्बास से बातें कर रही है। वह ऐसा शरमाई कि भाग खड़ी हुई...

'अरे बाप रे यह तुम कैसे सुर लगा रही हो!' नज्जन ने उसे टोका।

वह चौंक पड़ी। उसने घबराकर अपने बाबा की तरफ देखा कि कहीं उसकी चोरी तो नहीं पकड़ी गयी। मगर नज्जन तो जोगिया में पंख लगाये बहुत ऊँचे उड़ रहे थे। सम तक आये बिना वह फिर ऊपर उठ गये। बादलों के पास इतना ऊपर कि आसमान में मँडराती हुई चीलें भी न जा सकें...

सितारा फिर जी लगाकर साथ देने लगी।

अपने आँगन में भरी हुई लड़कियों ने भी इस बार को महसूस कर लिया कि सितारा अपनी यात्रा से लौट आयी है। वह यूँ गायब हो जाने का हुनर जानती थी। वह गुम भी कजरी गाते गाते अक्सर यूँ ही गायब हो जाती थी। और अभी अक्सर वह बाबू के बारे में सोचने लगती थी तो कोई सखी उसे टोक दिया करती थी। लेकिन यह सितारा किसके बारे में सोचने लगती है? उसने अपने आप से सवाल किया।

सितारा का सबसे भी बुरा हुआ कि उसकी चोरी पकड़ गयी है। वह तो बावरचीखाने के पास पत्थर सी हो गयी। घबराकर पानी पीने के लिए उठी तो उसने देखा कि उसके बापू गायब ... हैं और उसके डरे हुए सोचने पर ...

हो गये हैं और सितारे नदारा की तरह उसे टकटकी बाँध देख रहे हैं। ग़फ़ूरन ने उसके पाँयचे बराबर कर दिये। सितारा शायद उस वक़्त कोई ख़्वाब देख रहा था अपनी टाँगों पर किसी के हाथों का दबाव महसूस करते ही वह नींद में शरमा गयी। हटिये! क्या करते हैं आप!'' वह करवट लेकर फिर सो गयी। मगर इतनी सी बात ग़फ़ूरन का माथा ठनकाने के लिए बहुत थी। फिर उसे नींद नहीं आयी। उसे मालूम था कि मियाँ लोगों के अलावा रंकिया के छोकरे और कई मनचले जुलाहे भी सितारा और सितारा के दीवाने हैं। उसे गद्दियों और जुलाहों का कोई डर नहीं था। क्योंकि वे तो सोच भी नहीं सकते थे कि बड़े फाटक में रहनेवाली कोई लड़की उनके हत्थे चढ़ सकती है। लेकिन मियाँ लोगों का हाथ कौन पकड़ सकता है। और अब तो इस मौड़िया ने ख़्वाब में किसी को देख-देखकर शरमाना भी शुरू कर दिया है। सबेरे हो-सबेरे उसने नज्जन से कहा कि अब दिलारा और सितारा की शादी कर देना चाहिए।

भला मानस मौन रह गया है शादी ब्याह की बात को।'' नज्जन यह कहकर उत्तर-पट्टी की मजलिस करने चले गये। ग़फ़ूरन भी बटुवा एक कोना मारकर जनाने की तरफ़ चली गयी। वहाँ अभी तक बीवियाँ आँगन में ही था। पलंग धूप में सरका दिये गये थे। गनमर के आराम के बाद तावाज्म मक्खियाँ रह रहकर उस नहीं के गोलतोल बच्चे के मुँह पर छापा मार रही थीं। वह कुनमुना रहा था और मज़ूर का एक पंखिया से मक्खी हटाने वाली अख्तरी की ड्यूटी लगा रखी थी।

ई मारा मिला निर्मोही पगला गया है का? उनका यह सवाल सबने सुना लेकिन किसी ने जवाब देने का कष्ट नहीं उठाया। तमाम बीवियाँ अपने अपने कामों में लगी हुई थीं। ग़फ़ूरन चुपचाप एक पलंग के पायताने बैठ गयी और अख्तरी के हाथ से पंखिया लेकर बच्चे की मक्खियाँ झलने लगी। गुड़िया उस वक़्त नफ़ीसा बाजी की गोद से अफ़सरी को लेने की कोशिश कर रही थी और सितारा अल्लाह को देख-देखकर शरमाया जा रही थी। अल्लाम सितारा की आँखों को अपने बदन पर महसूस कर रहा था। शायद इसीलिए उसका सीना और चौड़ा हो गया था। फिर उसने तनज़ेब के कुरते की

आस्तीन भी उतार ली। उसके भरे-भरे बाजू नंगे हो गये और सितारा की आँखें उसके बाजुओं से चिपककर उस मकड़ी की तरह फड़फड़ाने लगीं, जो गाढ़े शीरे में फँस गयी हो और निकलना भी चाहती हो और निकलने की सकत भी न हो।

नईमा बी ने सितारा की निगाहों का पीछा किया और वह फ़ौरन भाँप गयीं कि उनकी कहानी शायद दुहरायी जाने वाली है। कोई पचपन साल पहले जब वह भी सितारा ही की तरह लगभग जवान थीं और केवल नईमुन थीं तो उनकी निगाहें यूँ ही हम्माद के अब्बा और अब्बास के दादा के बदन से चिपक गयी थीं। नतीजे में वह नईमुन से नईमा बी बन गयीं। सय्यदज़ादे उन्हें नानी और दादी पुकारने लगे। सय्यदज़ादों ने उनके बाप दादा को नाना या दादा कहकर आवाज़ नहीं दी था। यह एक बहुत बड़ा आदर था। तो क्या यह मुई मारासन गफ़ूरनी की नटनी इस आदर के काबिल है? वह कुछ कहना ही चाहती थीं कि आसमान झनझनाने लगा। सबकी आँखें आसमान की तरफ़ उठ गयीं। लोहे की एक चील सी दिखायी दी जो पर हिलाये बिना ही उड़ी चली जा रही थी।

तमाम औरतें एक-दूसरे को हवाई जहाज़ दिखाने लगीं। बच्चों ने आँगन में उछलना-कूदना शुरू कर दिया। कमर तो उसको दिखा-दिखाकर पेशाब करने लगा। सितारा और दिलारा जो उस वक़्त कमर ही की तरफ़ देख रही थीं घबराकर शरमा गयीं।

फिर हवाई जहाज़ एकदम से आँगन पर आ गया तो कुछ परदे वाली बीबियों ने आँगन की ओर पीठ कर ली और कुछ उठीं और साड़ी सँभालती हुई गिरती-पड़ती दालान में भाग गयीं। इन बीबियों का ख़याल यह था कि हवाई जहाज़ वाले झाँकते ज़रूर होंगे।

इस भाग-दौड़ में नईमा बी सितारा को भूल गयीं और किसी को यह ख़याल भी नहीं आया कि सितारा घर में नहीं है और अब्बास भी अपनी मर्गीना बी की बात में फँसकर कहाँ जा चुका है।

बात यह हुई कि अब्बास ने भी आज ज्यों ही सितारा उसी तरफ़ सरकी कि भाग गया। अब्बास जानता था कि वह भुसौरे में गयी होगी।

मगर वह आँगन को पार करके उधर नहीं गया—सच्ची बात तो यह है कि गुलबदन की तरफ जाने के खयाल से निकला भी नहीं था। सितारों के चले जाने के बाद घर में उसका जी न लगा तो वह बाहर चला गया। इमामबाड़े का तीन-दरा वीरान था। शहनशीन का हरा दरवाज़ा बन्द था। गुसलखाने के पास गड़ा हुआ फव्वारा चुपचाप खड़ा हुआ था और उसका पंजा सूरज के सामने चमक रहा था। गूलरिया की फलियों में फूलते हुए पद्मासन बजाते थे। अब्बास को इनमें क्या दिलचस्पी हो सकती थी। वह पक्के तौर पर मजलिस में चला गया होता, लेकिन उसे खयाल आया कि मजलिस खत्म हो रही होगी। और मम्मू भाई नौहा पन्द्रह बार कर रहे होंगे। इसलिए उसने सोचा कि मियाँ लोगों की गैरहाज़िरी का फायदा उठाकर वह अनवारुल हसन नक़वी के लड़के फारूक से क्यों न मिल आये जो अलीगढ़ ही में पढ़ता था और उसका साथी था। और अखिल भारतीय मुस्लिम स्टूडेंट्स फेडरेशन का उपसभापति था। मियाँ लोगों के सामने तो वह उसके यहाँ जा नहीं सकता था। वह जूते पहने... मियाँ अब्बू, तुम इतने बड़े हो गये और तुम्हें यह भी नहीं मालूम कि अशराफ शीया-वाकिया के दरवाज़ों पर नहीं जाते।'

इसलिए उसने सोचा कि फारूक के यहाँ जाने का इससे अच्छा अवसर नहीं मिल सकता। क्योंकि इस वक्त तमाम मियाँ लोग या तो मम्मू भाई के नौहे पर रो रहे होंगे या रोने की कोशिश कर रहे होंगे या रोनेवालों जैसा मुँह बना रहे होंगे। किसी को पता भी नहीं चल सकता कि वह कहाँ गया था—वह तो अपनी इस गंगौली में शाकिर को शाकिर नाई भी नहीं कह सकता था। किसी सय्यद ज़मींदार का लड़का किसी राकी बच्चे को भाई कैसे कह सकता था।

तमाम ऊँच-नीच पर अच्छी तरह सोच-विचार कर लेने के बाद अब्बास फुन्नन मियाँ के घर के सामने से दक्खिन की तरफ जानेवाली गली में मुड़ गया।

'ए बेटा अब्बास, कब आए?' फुन्नन मियाँ की बीवी कुलसुम की आवाज़ आयी।

वह रुक गया। क्योंकि कुलसुम ने ज़िन्दगी में पहली बार उसे आवाज़ दी

थी। बात यह थी कि फुन्नन मियाँ गोनरखा किस्म के सय्यद थे। और हम्माद मियाँ की माँ नईमा जुलाहिन थी। मगर हम्माद मियाँ बड़े फाटक वाले थे और फुन्नन मियाँ एक मामूली से ज़मींदार थे। वह इतने मामूली ज़मींदार थे कि पाजामा नहीं पहनते थे, लुंगी बाँधते थे—वह भी सिली हुई लुंगी नहीं बल्कि कसाइयों की तरह की फटेदार लुंगी। यह सब ठीक, लेकिन सय्यद फिर सय्यद होता है। हम्माद मियाँ फाटक के गरूर में उन्हें मुँह नहीं लगाते थे। इसलिए कोई बीस-बाईस साल से उन दोनों में बोलचाल बन्द थी। और इसीलिए फुन्नन मियाँ की बीवी कुलसुम की आवाज़ सुनकर वह रुक तो गया, लेकिन उसकी समझ में यह नहीं आया कि आखिर उस कुलसुम से किस तरह बोलना चाहिए।

'शाम तक कोई खबर आयगी।' उसने कहा।

सद्दे इ उत्तर पट्टी वाले—जईसा ई सब माहौल को परेशान किहिन हैं हरमजादे।

अब्बास ने सोचा कि अब तो कुलसुम अम्माद मियाँ से बातचीत कर रही हैं इसलिए उससे डरने की अब कोई ज़रूरत नहीं रह गयी है। इसलिए वह आगे बढ़ गया। वह यह सोच सोचकर खुश हो रहा था कि रहियानवाले उसे प्यार करके कितना खुश होंगे।

मुसलमान मुसलमान भाई-भाई होता है। इस्लाम ऊँच-नीच को नहीं मानता। क्या ओन्जरत (रसूल) ने सलमान[1] फारसी को अपने अहले बैत[2] में नहीं लिया था?

उसने दिल ही दिल में एक भाषण तैयार कर डाला कि अगर फुन्नन मियाँ साला को उसकी इस हरकत का पता चल गया तो वह क्या करेगा।

जब वह इस तकरीर को ठीक तैयार कर चुका तो उसे ऐसा लगा कि यह हज़रत की मसनद में बाज़ार खड़ा हो गया है और टाट का परदा सरका हुआ है और सितारों का बदन झलक रहा है।

[1] पैगम्बर साहब के एक साथी।
[2] घरवाला।

वह परदा उठाकर अन्दर चला गया।

सितारा हड़बड़ाकर उठ बैठी। उसने दुपट्टे का तकिया बना रखा था। मगर जब उसने अब्बास की आँखों की आँच से अपने बदन को पिघलता हुआ महसूस किया तो उसे याद आ गया कि उसने दुपट्टा नहीं ओढ़ रखा है। उसने लपाक से दुपट्टा ओढ़ लिया।

'गुस्ल हुआ नहीं है क्या?' अब्बास ने एक बहुत ही बेवकूफी का सवाल किया।

'न... ऊपर आप की तरफ गया है।'

'और नज्जन मियाँ?'

'ऊ मजलिस कर गए हैं।'

'तो तू अकेली है!' वह चारपाई की पाटी पर आ गया।

'जी हाँ!'

'तुम इतनी खूबसूरत क्या हो गईं?'

यह पूछकर वह बाहर चला गया। उसने सितारा को जवाब देने का मौका न देकर अच्छा ही किया। क्योंकि सितारा बेचारी जवाब ही क्या दे सकती थी! वह तो अपनी सोचों की झाड़ियों में उलझ-उलझकर गिरी गिरी पड़ रही थी। अब्बास के जाने के बाद भी उसे देर तक होश नहीं आया। वह मुसकराती रही और शरमाती रही और दुपट्टे को अपने सीने पर रख रखकर मसोस करती रही और फिर उस घूरने की सारी बातें और दरवाज़े और खपरैल पर पड़ी हुई टाट के पर्दे से छन आने लगा।

और उस खाली दालान की तरफ देखते तो वह सिर गया जिस पर बैठे हुए वह अब्बास को घूर रहा था।

उसने दरवाज़े से झाँका। गली दूर-दूर तक सुनसान थी। मरदाने इमामबाड़े की तरफ से मातमी सलाम की आवाज़ आ रही थी—कि नौबत आ जाए मजलिस का अन्त हो गया।

उसने फिर मुड़कर पलंग की तरफ देखा, और फिर वह पहले ही की तरह अपने दुपट्टे का तकिया बनाकर लेट गया। लेकिन सितारा बेचैन करवटें ही उस अन्धेरे पानी की तरह पलंग पर औंधी लेट उस बोरा

के पुल की चढ़ाई पर अड़ गयी थी। इक्के की छतरी का बाँस पकड़कर बैठे हुए चाचा तो छिटककर दूर जा पड़े थे। और अम्मा 'नादे अली'[1] पढ़ने लगी थीं और आपा 'या अली अली!' पुकारने लगी थी, और करामत अपनी घोड़ी को गन्दी घिनौनी गालियाँ देने लगे थे। और नादे अली पढ़ने वाली अम्मा के साथ-साथ या अली कहने वाली आपा भी शरमा गयी थी।

"यह तुम यहाँ क्या कर रही हो?" अब्बास न मालूम कहाँ से आ गया।

सितारा का दिल धक-धक करने लगा।

"मजलिस शुरू होने वाली है।" उसने बड़ी मुश्किल से कहा।

जवाब में अब्बास उसके पास से गुज़रकर पलंग पर बैठ गया। मगर वह सितारा के पास से यूँ गुज़रा कि उसका हाथ सितारा के हाथ से छू गया। सितारा का सारा बदन सितार की तरह झनझना गया और सातों सुर घबरा कर एक दूसरे से चिपट गये।

दरवाज़े पर ताशा बजना बन्द हो गया। अलिमवा हज्जाम ने फ़र्श से हाथ हटा लिए। शब्बू मियाँ ने शह्नशीन का दरवाज़ा खोला। [illegible] ने उठकर अलमों और ताज़ियों को ताज़ीम दी—और तब वह हुआ जिसकी उम्मीद न थी। शब्बू मियाँ ने नज्जन की तरफ़ देखा और कहा, "पढ़ो!"

जब तक नज्जन सोज़ख्वानी की चौकी पर बैठ नहीं गये, तब तक किसी की समझ में यह बात नहीं आयी। मगर तब सवाल यह पैदा हुआ कि नज्जन का बाज़ू कौन बने। क्योंकि सय्यदज़ादा किसी मीरासी का बाज़ू नहीं बन सकता था। और गंगौली में सय्यदों के सिवाय किसी को सोज़ख्वानी का पता आता नहीं था।

नज्जन ने गुनगुनाना शुरू किया:

जिस घर [illegible] वासा न हुआ

और [illegible] मज़ालिम [illegible]

हुसैन अली मियाँ का ख़याल था कि नज्जन पेशख्वानी[2] करेगा। मगर जब

---

[1] [illegible] हज़रत अली [illegible] अरबी भाषा में दुआ [illegible] है।

[2] मर्सिया पढ़ने का वह तरीक़ा जो साधारणतः मजलिस के [illegible] उस पढ़ाई को पेशख्वानी कहते हैं।

उन्होंने मरसिया गुनगुनाना शुरू किया तो हुसैन अली मियाँ की छोटी छोटी मुट्ठियाँ पहले तो कई बार खुलीं और बन्द हुई फिर वह खड़े हो गये। तमाम लोग चौंक पड़े। हुसन अली मियाँ ने गरीबान में पकड़कर नज्जन को तख्त से उतार दिया और माँ बहन की गाली देकर बोले तोहरिया ई मजाल हो गयी के बइठ गयो मातमदारा कर।

दक्खिन-पट्टी के लोगों को बड़ा गुस्सा आया मगर हुसन अली मियाँ डटे रहे।

'ई हमरे पट्टी की मजलिस है।' उन्होंने इमामबाड़े से कहा। फिर वह तख्त पर बैठ गये। नज्जन चुपचाप तख्त के नीचे बैठे। हुसन अली मियाँ ने वही मरसिया गुनगुनाना शुरू किया। मगर अभी उन्होंने पहला ही बन्द (हुक्म) पढ़ा था कि शब्बू मियाँ मातम-हुसन कहकर खड़े हो गये। यह इशारा था कि मरसिया खत्म हुआ और अब नौहा पढ़ा जायगा। तमाम लोग खड़े होकर मातम करने लगे। हुसन अली मियाँ तख्त से उतर आये और सलाम पढ़े बिना ही इमामबाड़े से निकल गये।

जनाने गलियारे में भी औरतें हुसन अली मियाँ को कोसनी हुई सरकने लगीं। गफूरन जब अपनी मलकिन के दरवाजे पर पहुँची तो उसे दरवाजा अन्दर से बन्द मिला। उसने सितारा को पुकारा। दरवाजा खुला मगर दो चार पल देर से खुला। गफूरन सितारा को देखकर चौंक पड़ी क्योंकि उसके बदन से तो पकी हुई जामुन की तरह रस चुआ पड़ रहा था। वह उससे कुछ कहे बिना अन्दर चली गयी। पलंग पर अब्बास का रूमाल था—गफूरन ने सितारा से कुछ नहीं कहा। हाँ जब नज्जन आये तो उसने उनसे यह जरूर कहा कि अब उन लोगों की गलीनी में रहना ठीक नहीं है। उत्तर और दक्खिन पट्टी के पाटों के बीच में वह क्यों आये? नज्जन ने उसे समझाना चाहा मगर वह नहीं मानी। और जब वह नहीं मानी तो नज्जन को मान जाना पड़ा। आखिर हसवा के बहन से आन्दम ने जन्नत छोड़ दी थी, यह तो फिर एक गाँव था।

शाम तक गफूरन ने सबसे विदा ले ली। तमाम औरतों ने गफूरन और तमाम मर्दों ने नज्जन को समझाया। मगर गफूरन टस से मस न हुई। आखिर इक्का पर सामान लद गया।

जब इक्का नीम के गाछ के सामने से गुजर रहा था तो नज्जन ने देखा

कि शकूरा चमार तेज़ी से साइकिल पर चला आ रहा है। मज्जन ने उसे आवाज़ दी, मगर शकूरा ने उनकी आवाज़ नहीं सुनी। इक्का मस्जिद की तरफ़ बढ़ गया और साइकिल गंगौली की तरफ़ चली गयी।

'मियाँ लोगन की सज़ा हो गइल।' शकूरा ने बड़े फाटक में घुसते ही कहा।

बड़ा फाटक सन्नाटे में आ गया। किसी को यक़ीन नहीं आया। लेकिन शकूरा ने बताया कि दारोगाजी ने सारा ज़ोर फुन्नन मियाँ पर लगा दिया था, अगर फुन्नन मियाँ मुक़दमे में मासूम न रहे होते तो सज़ा न होती। लेकिन एक फुन्नन मियाँ के कारण सबकी सज़ा हो गयी।

यह ख़बर जब अन्दर गयी तो सकटिया ने ज़नाने इमामबाड़े के अलमों को ताककर बड़ी शिकायतभरी नज़रों से कहा, 'ऐ इमाम साहिब! आपके होते ना चाहे रहिन!'

फिर वह इमामबाड़े के चबूतरे में लिपटकर रोने लगी। लेकिन नईमा बी ने फुन्नन मियाँ को कोसना शुरू कर दिया कि उन्हीं मिट्टी मिले की वजह से हम्माद की सज़ा हो गया है।

यह ख़बर जब फुन्नन मियाँ की बीवी कुलसुम को मिली कि नईमा बी उनके मियाँ को कोस रही हैं तो उन्होंने दोनों हाथ उठा-उठाकर नईमा बी और हम्माद मियाँ को कोसना शुरू कर दिया।

इस हंगामे में भला यह कौन सोचता कि सल्लू के खानदान में बसाया जाने वाला परिवार कहाँ गया और क्या गया। अब्बास! उन्हें दो-चार दिन ज़रूर याद किया, मगर फिर उसे भी भूल गया। उसे एक जुलाहिन भा गयी। गरज़ कि वह गंगौली को भूल गया। बात यह है कि वह सितारा की माँ थी। उसने शहर में सितारा का ब्याह किया कि इसके सिवाय कोई चारा न था। उसके यहाँ सतमासा बच्चा हुआ। एक दम तन्दुरुस्त बच्चा। इस बच्चे को सितारा के ससुरालवालों ने शक से देखा। सितारा के मियाँ ने उसे तलाक़ दे दिया। वह गाज़ीपुर वापस आ गया।

और उसने अपने बच्चे का नाम अब्बास रखा।

मियाँ लोग

मोहरम क बाद गगोला वीरान हो जाती थी। बस अधिक लोग नहा जाते
थ लकिन जिन थोड म लोगो क आ जान स गगोली आबाद हो जाया
करता था वह लोग चल जाया करत थ। उत्तर पट्टी स सयद अली हादी
उर्फ चल जान और अली मद्दी मिया चल जात तो अली कदार मिया और
अली बाकर मियाँ और हैदर मिया और उस्ताद और सज्जाद मिया और
मौलवी सयद बाकर हुसन उर्फ सदरुलफाजिल[1] क रहन क बाद भी उत्तर
पट्टी म धूल उड़न लगती। क्योंकि उत्तर पट्टी नाम था एक इमामबाड़ का, और
जब दस मोहर्रम क बाद इमाम हुसन हिंदुस्तान स कबला वापस चल जात[2]
तो इमामबाड भाय भाय करन लगत। इमाम चौक लकड़ी क खूबसूरत और
मजबूत ताजियों क ठाठ की शान म लगाय किसी अकला की तरह दुबककर
बठ जात और गद ताजिया क व चौगद लावारिस मालूम होन लगत।
इमामबाड़ के मिम्बर का गिलाफ उतर जाता और उसकी जगह कमर म चारपाइयाँ पड़ जाती और वह एकदम स
एक मामूली कमरा बन जाता। कमर का फश उठा दिया
किया एक पर हराम सयद अली कबीर उलट हुए बिस्तर का तकिया लगा
कर पड़ जात और मुनफा पीन लगत। जमादारी क पगड़ा-लफ्टा और हकीमा
म जो कुछ बचता उस वह गाँव क लड़कों को गालिया दन और अपन इकलौत
लड़क महदन उफ सयद मआस्सुम हसनन जुल्म की जवानी क ख्वाब दखन म
गुजार दत।

गगौली क अन्तम नागा न रल नहीं दखा था। क्योंकि स्टशन गगाला

[1] लखनऊ क शीआ धार्मिक कालज 'सुलतानुल मदारिस' की आखिरी
डिग्री।

[2] शीआ मुसलमानों का इमान है कि इमाम हुसन मोहर्रम क दिनों म हिंदुस्तान
आ जात हैं और मोहर्रम क बाद फिर कबला वापस चल जात हैं।

से कोई दस मील पर है। और गाज़ीपुर बारह मील दूर है। इसलिए लोग ज़्यादातर इक्कों से सफ़र किया करते थे। और चूँकि मियाँ लोगों के ख़याल में दुनिया ग़ाज़ीपुर की कचहरी के बाद ख़त्म हो जाती थी, इसलिए भी उन्हें नहीं मालूम था कि दुनिया में क्या हो रहा है और क्या नहीं हो रहा है।

रेलगाड़ी पर सबसे पहले हकीम सय्यद अली कबीर ज़ैदी ने सफ़र किया। वह भी इसलिए कि एक साल शाह मियाँ उर्फ़ सय्यद इर्तिज़ा हुसैन आब्दी ने उत्तर-पट्टी के आठ के गश्त[1] पर यह कहकर चोट की कि जुलूस[2] तो लखनऊ में धूप नाज़िये के उठता है। हकीम साहब के दिल में यह बात तीर की तरह तराज़ू हो गया क्योंकि उन्हें आठ के जुलूस पर बड़ा नाज़ था। इस जुलूस में आस-पास के कई देहातों की अंजुमनें नौहा पढ़ने आया करती थीं। उत्तर पट्टी के बड़े आँगन में एक तरफ़ दरी बिछ जाया करती थी और अलिमवा हज्जाम बड़ी मेहनत से मज़ेदार चाय बनाया करता था। ग़ाज़ीपुर तक के किसी जुलूस में कोई बाहरी अंजुमन भाग नहीं लेती थी। इसलिए हकीम साहब यह कैसे मान लेते कि लखनऊ का कोई जुलूस आठवें के जुलूस से बड़ा या अच्छा हो सकता है। इसलिए एक साल हिम्मत करके वह निकल पड़े और उन्हें ग़ाज़ीपुर से रेल में सफ़र करना पड़ा।

वह बरसों बरस तक रेल और उसके डिब्बों और इंजिन की सीटी और गाड़ी की धकधकाहट की बातें किया करते थे—और गाँव के लोग मुँह खोले उनकी बातें सुना किये। बस, रय्यतों के लोगों को कोई अचम्भा नहीं हुआ, क्योंकि ये लोग व्यापारी थे और बहुत पहले से रेल में सफ़र कर रहे थे।

मगर हकीम साहब एक बार रेल पर क्या बैठे कि रेल उनके दिमाग़ पर सवार हो गया। हद तो यह थी कि जब वह सद्दन के बारे में ख़्वाब देखना शुरू करते कि यह पढ़कर क्या करेगा तो पहले यह तय करते कि यह थानेदार हो जायेगा क्योंकि थानेदारी में रुपये की सरकारी से ऊपर की आमदनी ख़ूब होती है। और फिर वह यह तय करते कि जब काफ़ी आमदनी

[1] [2] मातम और ताज़िया का जुलूस निकलता है जिसमें लोग मातम की ताल पर नौहा पढ़ते हैं।

होने लगेगी तो एक रेलगाड़ी खरीद ली जायेगी। लेकिन यह सपना बहुत दिनों न चल सका क्योंकि रेल के अस्तबल के लिए बीघों जमीन की ज़रूरत पड़ेगी। इसलिए अपने सपनों के लिए उन्होंने एक मोटर पर सब्र कर लिया। मोटर भी उन्होंने पहली बार लखनऊ ही में देखी थी।

अब आज जिनती की जवानी की तरह फटी पड़ती हैं सब। उन्होंने यह बात वाजिद मियाँ और मौलवी बशीर को बड़ी राज़दारी से बतायी थी कि मोटरें सड़कों पर जिन्नों की तरह ऐंठती फिरती हैं और ठण्डी साँसें भरने वालों की तरफ मुड़कर भी नहीं देखतीं। और चूँकि इन मोटरों को बड़े अस्तबल की ज़रूरत भी नहीं होती इसलिए वह मोटरों के ख्वाब देखने लगे कि दरवाज़े पर एक चमचमाती हुई मोटर खड़ी है और लोग कह रहे हैं कि काम साहब के फाटक पर तो अंग्रेज़ी लाट का हाथी झूम रहा है जो गन्ने नहीं खाता बल्कि तेज़ महक वाला अंग्रेज़ी मिट्टी का तेल पीता है जिसका भला सा नाम है।

इन ख्वाबों में गोला छोड़ने की बात कभी नहीं आती थी। वह यह कभी नहीं सोचते थे कि उन्होंने छतर मंज़िल के सामने एक और छतर मंज़िल बना ली है। उत्तर पट्टी का यह बड़ा फाटक इतना बड़ा था कि उसमें रहीम सय्यद अली कबीर के सारे ख्वाब न सिर्फ़ यहीं समा जाते थे बल्कि कुछ जगह बच भी रहती थी। और मोहर्रम के बाद जब अली हादी मियाँ का कमरा बन्द हो जाता तो इन सपनों के लिए ज़रूरत से ज़्यादा जगह निकल आया करता था।

उत्तर पट्टी में कोई चीज़ इमामबाड़े की रौनक की बराबरी करने वाली थी तो यहाँ किसी अली हादी का कमरा था—उसमें पक्के सकरे के खूबसूरत ताज़िये, शीशगरी और तहनशीन बक्से[1], हाँडियाँ, कँवल, ऊद-दानों और गुलाबपाशों की कतारें अपनी जगह लेकिन डिप्टी अली हादी के कमरे की तराशी-तराशाई भाँति भाँति की कुर्सियाँ आरामकुर्सियाँ और

---

1 मुहर्रम के बस्तों की तरह यह भी होता है। फ़र्क यह है कि इसमें मरसिये होते हैं।

किताबों की शान भी निराली थी। एक अलमारी में सजी हुई अंग्रेजी किताबें जिनमें से कोई बहुत पुरानी थी, मरसिया को मुंह लगाने पर तैयार नहीं था। उन्नाबी पर तरह-तरह के सिगरेट केस चुपके चुपके मुसकराया करते थे।

हकीम साहब अब्बू हादी मियाँ के बड़े भाई थे। वह अली हादी को बहुत चाहते थे। लेकिन उन्हें उस कमरे से नफरत थी क्योंकि मोहर्रम में अली हादी मियाँ के आते ही जब कमरा खुल जाता था, तो इसमें [illegible] दरबार में इमाम हसन के दरबार से ज्यादा चहल-पहल हुआ करती थी। उत्तर और पश्चिम-पट्टियों के तमाम जवान लोग इस कमरे में भरे रहा करते थे। और चूंकि इसका एक दरवाजा इमामबाड़े में भी खुलता था इसलिए इस कमरे से सिगरेट का धुआँ इठलाकर इमामबाड़े में जाता और वहाँ सुलगने वाले लोबान के धुएं का पीछा करता। कभी कभी तो सातवीं और आठवीं तारीख को भी अब्बू मियाँ, बजार मियाँ, मंजूर मियाँ और खुद अली हादी मियाँ के कहकहों की आवाज दरवाजे का पर्दा उठाकर बेधड़क इमामबाड़े में घुस आया करती थी और बच्चों की तरह फर्श पर लोटने लगती थी।

हकीम साहब इस दरवाजे को बन्द भी नहीं करवा सकते थे क्योंकि यह दरवाजा उनके दादा मीर नजफ अली ही ने खुलवाया था। किस्सा यह हुआ कि उन पर फालिज गिरा और वह हिलने-डुलने के काबिल न रह गये। बस इसी कमरे में पड़े रहा करते थे। जब मोहर्रम आया तो वह बहुत रोये और गिड़गिड़ाकर दुआ मांगने लगे।

मौला गाजी जिन्दा इमामबाड़े [illegible] ना [illegible] बराबर करने में [illegible] अब क्या करें! मशहूर है कि यह दुआ मांगते मांगते उनकी आँख लग गयी और उन्होंने देखा कि [illegible] आया है और कह रहा है [illegible] दरवाजा [illegible] और [illegible] की आग [illegible] और दूसरे ही दिन [illegible] दरवाजा फोड़ लिया गया। यह उस दिन की बात है जब [illegible] मोहर्रम की सातवीं तारीख को [illegible] लगाया करते थे। [illegible] अपना और उनका [illegible] फौरन [illegible] हुए।

अंग्रेज़ी तालीम और इस रिवाज के टकराव ने एक आरज़ू को भी जन्म दिया।

लखनऊ के उसी यादगार सफ़र में हकीम साहब हुसैनाबाद और आसफ़ुद्दौला के इमामबाड़ों से भी प्रभावित हुए थे। इसलिए वह चाहते थे कि सद्दन जल्दी से जवान होकर थानेदार हो जायें तो वह भी आसफ़ुद्दौला की तरह एक लम्बा-चौड़ा इमामबाड़ा बनवाएँ जिस पर शाह नजफ़ जैसा ख़ूबसूरत गुम्बद हो। ये तो ख़ैर के अलम भी हरे किये जायेंगे। तमाम पंजे गंगा-जमनी होंगे और जो कलाबत्तू की डोर से अपने अपने नेज़ों (छड़) में बँधे होंगे। पटके तमाम ज़री के होंगे और फरहरे तमामी[1] के। ताज़िया की कलगियाँ सुनहरी होंगी और कलसों पर जवाहिर की पच्चीकारी होगी। इमामबाड़े का फ़र्श क़ालीन का होगा और मिम्बर संदल का—और आठवीं के जुलूस में रास्ता पर दोनों तरफ़ सर्व चिराग़ाँ[2] होंगे और उसमें दूर-दूर की अंजुमनें नौहा मातम करने आयेंगी। तब देखें मियाँ इत्तनिजा तुमने कम कहते हैं कि जुलूस तो चुग ताज़िये का होना है।

उनकी झोली में एक छोटी सी ख़्वाहिश और थी। दक्खिन पट्टी का ताज़िया बड़ा ताज़िया कहा जाता था। वह नौ की रात में सजाया जाता था और फिर दक्खिपान में वह चौक पर बैठ जाता था—बिलकुल किसी रुस्तम की तरह। दक्खियारे के लोग उसकी मुसाहिबत किया करते थे। चूँकि दक्खिन पट्टी वाले गंगौली के पुराने ज़मींदार थे इसलिए वे अपने ताज़िये ख़ुद नहीं सजाया करते थे। बड़ा ताज़िया राकी सजाते थे। कोई ताज़िया जुलाहों के इन्तज़ाम में था और कोई हज्जामों के।

इस मोहर्रम का तीसरे पहर उन ताज़ियों का दरबार लगा करता था। नरका के सारों ताज़िये अपने अपने चौकों से गाजगाना की नक़ीबों[3] में आने

१ एक प्रकार का कपड़ा।

२ यह एक तरह की टट्टियाँ होती हैं जिनमें चिराग़ जलते हैं।

३ पहले बादशाहों के आगे आगे चोबदार आवाज़ लगाते थे ताकि लोगों को मालूम हो जाय कि किसकी सवारी आ रही है उनको नक़ीब कहते थे।

और वह ताज़िये के इधर उधर ज़मीन पर बैठ जाते—आसामियों की तरह। फिर आठ कहारों के कंधों पर बड़े ताज़िये की सवारी चलती। पीछे-पीछे दूसरे ताज़िये भी चल पड़ते। लकड़ी के ताज़ियों के पीछे कागज़ के मन्नती ताज़ियों का एक पूरा लश्कर होता।

बड़े ताज़िये के आगे आगे अब्बू मियाँ कमर में पटका बाँधे हाथ में चाँदी की मूठवाला एक छड़ा लिये राजग्वाली करते। फुन्नन मियाँ, बशीर मियाँ और हम्माद मियाँ उनके बाज़ू होते। ये लोग हर दो कदम के बाद सलाम के दो शेर पढ़ते चलते। पीछे हज़ार पाँचसौ आदमियों की भीड़ होती। औरतें बच्चों को बड़े ताज़िये के नीचे से निकालतीं। मन्नतें मानतीं। ज़ारी[1] पढ़तीं और शरबत चढ़ातीं। ये औरतें सय्यदानियाँ नहीं हुआ करती थीं। क्योंकि सय्यदानियाँ तो डोली बिना घर से निकल ही नहीं सकती थीं। ये तो गाँव की रारिन जुलाहिनें अहीरनें और चमाइनें होती थीं। बड़ा ताज़िया उनकी उसकी मन्नतों और ज़ारी की दर्दभरी धुन से बेपरवाह किसी गजगामिनी या किसी सम्राट की तरह आगे बढ़ता चला जाता।

ताज़ियों के आगे छट्ठन अहीरों का एक गोल होता। यह ताज़िया इतना बड़ा हुआ करता था कि गाँव की गलियों से नहीं निकल सकता था। टट्टियाँ गिरानी पड़तीं। छट्ठन अहीरों का गोल टट्टियाँ गिराने ही के लिए बड़े ताज़िये के आगे आगे चला करता था।

इन छट्ठन अहीरों के आगे लाठी के अखाड़े होते और उनके आगे *गुरहा मरसिये गाते और ताशा बजानेवाले।*

जुलूस इसी आन बान से नूरुद्दीन शहीद के मज़ार तक जाता। फिर बड़ा ताज़िया लकड़ी के तमाम ताज़ियों के साथ कर्बला से लौट आता और जुलूस कागज़ के ताज़ियों को दफ़न करके खेतों के बीच से जानेवाली पगडण्डी पर चलता हुआ कसबे की तरफ़ चला जाता।

[1] भोजपुरी में कर्बला की कहानी गाना। इसे औरतें रो-रो के मिला जुलाकर गाया करती थीं।

लखनऊ के ताज़िया के साथ हम्माद मियाँ भी लौट आते और गाँववालों का सरकारी खज़ाने से उलनिया की मरम्मत के लिए पैसे देते।

एक साल तो ऐसा हुआ कि एक बूढ़ी ब्राह्मणी की उलनी मज़दूरों की भूल से ज़रा कम निकली हुई थी। बड़ा ताज़िया उसे गिराये बिना गुज़र गया। वह बूढ़ी फूट फूटकर रोने लगी कि इमाम साहब उससे रूठ गये हैं। इसलिए उस पर कोई मुसीबत आनेवाली है नहीं तो भला ऐसा हो सकता था कि बड़ा ताज़िया उसकी उलनी गिराये बिना चला जाता। वह अपने दो बेटों को लेकर नूरुद्दीन शहीद के मज़ार पर गयी। उसने बच्चों को बड़े ताज़िये के सामने खड़ा कर दिया फिर उसने ताज़िये की अनदेखी आत्मा में आँखें डाल दीं और बोली 'ए इमाम साहिब! हमार लइकन के कछऊ हो गइल ना त ठीक ना होई।' फिर उसने हम्माद मियाँ को घेरा 'चलिए मीर साहिब! हमार उलनिया गिरवाय लई।'

हम्माद मियाँ ने सोचा कि शायद उसे पैसा की ज़रूरत है इसलिए उन्होंने पूछ लिया 'तोके पइसवा न चाही? चलल दुआर पर आके ले लव।'

'नाहीं रे सरकार!' वह बिलबिला उठी 'पइसा ना चाही। लइकनवन की जान चाही। उलनिया गिरवाय लइ। हम अपके पाँव पड़त बाड़ी।'

मगर किसी ने उसकी फरियाद नहीं सुनी। और फिर ऐसा हुआ कि उसके बड़े बेटे को सज़ा हो गयी जो एक कत्ल के मुकदमे में फँसा हुआ था। अग्गू मियाँ शब्बर मियाँ और वज़ीर मियाँ ने बड़ा ज़ोर मारा मगर फाँसी की सज़ा हो ही गया। उस बुढ़िया ने हम्माद मियाँ का घेर लिया और कुसुमन मिटाने के लिए उसने अपनी उँगली की दो मुँदरियाँ उतारकर वह आँगन में रखे हुए बड़े ताज़िये के सिर पर फन की तरह चढ़ा दीं और दरख्वास्त करके बोली 'हे इमाम साहिब! बस करी। अब हमार कसूर माफ किया जाय।'

सरकार का मुकदमा कुछ कमज़ोर था। हाकिम ने उसके लड़के को छोड़ दिया। अग्गू मियाँ ने वकालत का नज़राना तलब किया। बुढ़िया ने टका सा जवाब दे दिया क्योंकि उसके ख्याल में तो उसके बेटे को इमाम साहिब ने छुड़ाया था। नहीं तो इन लोगों की वकालत तो उसे फाँसी दिलवा ही चुकी थी।

बड़े ताज़िये के इस कौतुक के बाद उसकी पॉपुलैरिटी बहुत बढ़ गयी। गाज़ीपुर में लोग मन्नतें मानने आने लगे। और उस दिन तो हकीम अली कबीर की परेशानी का कोई ठिकाना न रह गया जिस दिन लखनऊ का मोहर्रम [illegible] की तीन बीवियाँ ख़ास इसलिए गंगौली आयीं कि नौ की रात को बड़े ताज़िये पर मातम करके मन्नत मानेंगी।

[illegible] डर कर छिप गये। चौक के इर्द-गिर्द की सारी ज़मीन कनातों से घेर दी गयी कि औरतें जी खोलकर मातम भी कर लें और उनकी बेपर्दगी भी न हो।

लेकिन कनातों की वजह से [illegible] की ख़ूबसूरत मस्जिद का दरवाज़ा भी बन्द हो गया और मजबूरन शाम की नमाज़ पढ़ने के लिए [illegible] को एक दूसरी मस्जिद में जाना पड़ा।

दक्खिनी औरतों का यूँ बड़े ताज़िये पर मातम करना दक्खिन पट्टीवालों की बड़ी हार थी। क्या हुआ जो आठ के जुलूस में चाचापुर, जहूराबाद [illegible] और [illegible] की अंजुमनें आती हैं। अली कबीर मियाँ उन्हें [illegible] का दिखावा देते हैं। [illegible]-पुलाव खिलवाते हैं और उनके नाज़ उठाते हैं। किसी ताज़िये का बड़ा होना इसमें है कि लखनऊ की मोहतरम [illegible] औरत गंगौली आकर ताज़िये के दर्शन करे। और आने जाने का पैसा अपनी जेब से ख़र्च करे। [illegible] औरतों ने तो अपना खाना खाने पर भी [illegible] नहीं था मगर दक्खिन पट्टीवालों ने उनकी यह बात मानने से इनकार कर दिया। यह बात मेहमानदारी के [illegible] के ख़िलाफ़ थी।

लखनऊ की औरतों के इस [illegible] ने एक बात बिल्कुल साबित कर दी कि इमाम हुसैन जो मोहर्रम में [illegible] हिन्दुस्तान आते हैं तो नौ की रात वह गंगौली की दक्खिन पट्टी में बड़े ताज़िये के चौक पर इन्तज़ार करते हैं। उत्तर पट्टीवाले इस बयान को हज़म कर गये थे।

इस दिन हकीम साहब को बड़ा अरमान था कि किसी तरह उनके चौक पर भी कोई मोजज़ा हो और कि दक्खिन पट्टीवालों का ग़ुरूर टूट जाय।

यह बिल्कुल इत्तफ़ाक़ है कि इन दिनों एक मसला हकीम साहब को परेशान कर रहा था। उन्हीं दिनों [illegible] के एक गाँव [illegible] में एक [illegible]

हो गया। हकीम साहब ने थाना कासिमाबाद के थानेदार से कह सुनकर अपने एक खास आदमी कौमिला चमार को नामजद करवा दिया। चूंकि हकीम साहब जिला अली हाजी के भाई और इलाके के बड़े जमादार थे, उनसे थानेदार के बड़ा काम निकलते थे, इसलिए उन्होंने सिर्फ एक सौ एक रुपया लेकर कौमिला को नामजद करवा दिया। तय यह हुआ था कि उसके खिलाफ मुकदमा इतना कमजोर बनाया जायगा कि वह जजी ही में छूट जाय। थानेदार ने अपना कानिस्टेबल से ग्यारह सौ रुपये अलग लिये कि कौमिला की रिहाई से मुकदमा बिलकुल बेजान हो जायगा। इसलिए वे लोग खामख्वाह छूट जायेंगे।

कौमिला गिरफ्तार हो गया। उसकी माँ बबुरमा बो (बाबूराम की धर्म पत्नी) भागी भागी हकीम साहब के पास आयी। हकीम साहब ने थानेदार को बुलवाया। थानेदार ने वादा कर लिया कि वह कौमिला को बचाने की कोशिश करेंगे। फिर उसने हेड कांस्टेबिल के जरिये बबुरमा बो से सौ रुपये इस काम के लिये लिये कि वह कौमिला के खिलाफ बने हुए मुकदमे को कमजोर कर देगा। हकीम साहब ने कौमिला की माँ को समझा-बुझाकर रुखसत कर दिया। इत्तफाक से उस दरवाजे पर गुलाम हुसेन खां मिल गये। यह गुलाम हुसेन खां हकीम साहब के खानदान के पुश्तैनी नौकर थे। उन्होंने बबुरमा बो को दरवाजे के इमाम चौक की करामातें बतलायीं कि किस तरह एक बार उनकी बीबी को साँप ने काट लिया था और किस तरह उन्होंने इस मामले के बाद इमाम चौक पर मन्नत मानी थी और किस तरह मन्नत के मानते ही साँप का जहर गट् बन्धु उतर गया था। यह कहानी सुनाते वक्त उन्हें यह याद नहीं रह गया कि अब से कोई तीन साल पहले उनकी पहली बीबी साँप के काटे से ही मर गयी थी और दूसरी बीबी को कभी साँप ने काटा ही नहीं था। बबुरमा बो को यह बात मालूम थी, लेकिन उसका लड़का कत्ल के मुकदमे में नामजद था इसलिए उस वक्त उसे यह बात याद ही न आयी, और उसने बड़ी श्रद्धा से इमाम चौक पर मन्नत मान ली। फिर यह बात धीरे धीरे गाँव में फैलायी गयी कि बबुरमा बो ने कौमिला के लिए उत्तर-पट्टी के इमाम चौक पर मन्नत मानी है। गंगौली के बाहर रहनेवाले रिश्तेदारों को ...

के क़ब्ज़े में आ गयी। मगर ये कि गाँव पट्टीवार के। यह न मालूम हो सका कि
गाँव क्या गज़ट में दर्ज किया गया है।

धीरे धीरे यह बात आस पास की बस्तियों में फैल गया और उत्तर पट्टी
वालों ने इत्मीनान की साँस ली।

दक्खिन पट्टी वालों का माथा ठनक गया। बस तो उन लोगों ने फ़ौरन
फ़ैसला कर लिया कि हर मुहर्रम चाहे उनके ताज़िये का चौक नहीं हो
सकता। लेकिन मिला में एक चौक भी बढ़ गया था—अगर कोशिश करके
गया तो यह ताज़िये की बड़ी किरकिरी होगी और दक्खिन पट्टी की नाक कट
जायगी। इसलिए हुआ यह कि जिस तरह थानेदार क़ासिमाबाद को उत्तर-पट्टी
के मोहर्रम के बजट में एक सौ एक रुपये दिये गये थे उसी तरह दक्खिन पट्टी
की ताज़ियादारी के बजट में थानेदार क़ासिमाबाद को तीन सौ रुपये दिये गये कि
क़ासिम की पोती वाला न हो। लेकिन मज़ा नहीं हो जाय। थानेदार ठाकुर
हरनारायनप्रसाद सिंह ने सोचा कि स्साला आख़िर उनका क्या नुक़सान है।
लिहाज़ा यह बात भी तय हो गयी।

अब यह एक बिलकुल इत्तफ़ाक़ की बात है कि चमरटोली के एक पनी
चमार पगान का क़ासिम के मकान से पुराना रिश्ता चला आ रही थी।
मुहर्रमवा का बड़ा बेटा गाज़ीपुर में कलक्टर का माली था और छोटा बेटा
कोचवान। गाँव भर में बात चाल नहीं था मगर इस मौके पर मुहर्रमवा
ने छोटे बेटे को बुलाया और फिर मुहर्रम आने में यह तय किया कि बाद
राम दास क़ासिम के बाग में उसका ताज़ा का भी मौक़ा है। इसलिए मुहर्रमवा
ने आम के पेड़ पर और पान कच्चा उतार दिया। उसका अच्छी था।
इत्तफ़ाक़ किसी उन इत्तफ़ाक़ रहा कि रहा है कि मुहर्रमवा कलक्टर साहब
का माली था। चतुर मुहर्रमवा का दो सौ मिले। उसने उसने इन्तज़ाम
मज़ार में कर और बड़े के पहले ख़बर दिये। तो भी क़ासिम इधर न लाया।
इस सिलसिले में वो ही पता था हाकिम का पहला पहर क़ासिमाबाद गया।
ठाकुर साहब को जब मालूम हुआ कि कलक्टर साहब बहादुर का माली आया
हुआ है तो उनके मन में बात निकल आये। क्योंकि उन दिनों वह अपनी इन्हीं
इन्सपेक्टर के साथ आराम करने का (उन मुहर्रमवा वहीं पहुँच मुहर्रमवान

थी। ठाकुर साहब के कमरे से जाकर वह फौरन नहाती थी और अल्लाह मियाँ से माफी माँगती थी कि पेट की वजह से उसे एक काफिर के साथ सोना पड़ता है)।

बंकिराम ने ठाकुर साहब की खिदमत में बड़ी थैली पेश की और फिर तरह अपने दिल की बात बतायी। ठाकुर साहब ने हिसाब लगाया। वह इस नतीजे पर पहुँचे कि आदमी सौ एक रुपये बहुत होते हैं। इसलिए उन्होंने बंकिराम से भी वायदा कर लिया कि वह भला कलक्टर साहब बहादुर के साथी की बात कैसे टाल सकते हैं? उसी वक्त कामिला के गले में फाँसी का फन्दा पड़ गया।

मुकदमा आरम्भ हुआ। बड़े बहुत अच्छे गवाह निकल आये। हद तो यह है कि एक चश्मदीद गवाह तक मिल गया। कामिला को फाँसी की सजा का हुक्म सुना दिया गया। जब हकीम साहब ने शिकायत की तो ठाकुर साहब ने कहा कि उन्होंने तो बहुत कोशिश की लेकिन जबरदस्त गवाह थे, उसका तो वह क्या करें?'

सविगन पट्टी वालों ने फैसला सुनकर इत्मीनान की साँस ली और एक और समाइन ने बहुतों से कहा कि इस बड़े ताजिये पर मन्नत माननी लाजिम थी कि उसी ताजिये ने पहलवान के लड़के को बचाया था। कामिला की सजा ने बड़े ताजिये की धाक और जमा दी।

हकीम साहब के लिए इस हार को हजम करना बहुत मुश्किल हो गया। लेकिन वह बेबस थे। कर ही क्या सकते थे! फिर तो जिन्दा रहने के लिए जिल्लत का यह जहर पीना आसान नहीं था। इसलिए उन्होंने सविगन पट्टी के इस मुहर्रम वाले शानदार जुलूस को जवाब देने की एक सूरत निकाली।

बड़े पाण्डे से कोई दस बीस कदम पश्चिम की तरफ बढ़कर जो रास्ता उत्तर बस्ती की तरफ मुड़ता है उस पर हकीम साहब के एक आसामी कल्लू शाह का मकान है। इन कल्लू शाह के माँ-बाप ने तो बड़े प्यार से इनका नाम कमरुद्दीन रखा था, लेकिन गाँव के सीधे-सादे लोगों को कमरुद्दीन कहने में जबान को बहुत तोड़ना मरोड़ना पड़ता था इसलिए उन्होंने कमरुद्दीन का कल्लू कर लिया (कब कमरुद्दीन से जो नाम की दुर्गत की

तरह थी। (जैसे सुरसुर और काले)। लेकिन मैंने गलत कहा, बलीउद्दीन और बन्नी के बीच में कई सदियाँ हैं। बलीउद्दीन बली हुआ। गँवारों ने बली का बन्नी बना लिया और बन्नी को बल्ली बनने में कितनी देर लगती है। गँवारों की देखा-देखी मियाँ लोग भी उन्हें बल्ली साह कहने लगे। शेख कमालुद्दीन सिद्दीकी ने भी बल्ली साह होना कबूल कर लिया कि यह नाम आसान भी था और जबानों पर चढ़ भी चुका था।

गुलाम हुसैन खाँ के मकान में बल्ली साह ने एक सपना देखा कि आसमान में एक खिड़की खुली। उस खिड़की में रोशनी की एक सीढ़ी निकली, जो जमीन तक आ गयी। उस सीढ़ी से एक महापुरुष उतरे और उन्होंने बल्ली साह से कहा, "कर्बलावाले ताजियादारी कर, मौत करीब है।" बल्ली साह की आँखें खुल गयीं। मोहर्रम की दस तारीख थी। उन्होंने झपाझप दरवाजे पर मिट्टी का एक चौक बनाकर उस पर खपच्ची का एक कागजी ताजिया रख दिया और उसके चारों तरफ अगरबत्तियाँ सुलगाकर वह खुद वहीं ताजिये के पास जमीन पर जाकर बैठ गये।

दक्खिन पट्टी का जुलूस जब उस मोड़ पर पहुँचा तो उस कागजी ताजिये को देखकर चौंक पड़ा। कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगुवा तेली! सबकी का एक मिसकीन बेचारा सा ताजिया सफ्फों के पासंग खूबसूरत ताजिये के जुलूस को ललकार रहा था। चार पग के इस ताजिये के सामने शाहबादी के गिलाफ और रेशम का जरिया और सुनहरे पन्नोंवाले ताजिये अपना आन का बड़प्पन खो रहे थे क्योंकि जब तक वह ताजिया चौक से उठ नहीं जाता यह जुलूस आगे नहीं बढ़ सकता था। ताजिया चाहे मिट्टी का हो चाहे कागज का ताजिया ही होता है। दक्खिन-पट्टी के लोग जमादारी के नशे में ताजिये की तौहीन तो नहीं कर सकते थे, लेकिन बल्ली साह की तौहीन करने से उन्हें कौन रोक सकता था। और एक आदमी बढ़कर उनके ... को झोंकना कर रहा था। नतीजा फुन्नन मियाँ का हाथ छूट गया। वह ... दूर जा गिरे। उत्तर-पट्टी वाले इसी की ताक में बैठे थे।

हुसैन अली मियाँ के खानदान में पहले से ताजिये उठते थे। वे रिश्ते

आये। लट्टुवा अहीर, चमारों और भरों के गोल ने जय बजरंगबली! जय हनुमान साहब! बोलकर धावा कर दिया। नकटी के अखाड़ेवालों ने या हुसैन! का नारा मारकर उनकी लाठियों को अपनी लाठियों पर रोका और फिर वह ताज़िये के आगे आगे चलनेवाले अहीर लट्टुवा जो आगे बढ़ गये थे लौट आये। घमासान लड़ाई होने लगी। अगनू मियाँ यह भूल गये कि वह मदहे अहले असगर जैसी शख्सियत हैं। अच्छू मियाँ यह भूल गये कि फौजदारी करना उनकी शान के खिलाफ़ है। वज़ीर मियाँ ने फौजदारी के कानूनों को उठाकर ताक में रख दिया। दोनों पट्टियों के लोग भी ढेल-चौस करने लगे। मुन्नाज़[1] का एक ढेला उछलकर मियाँ मरसियाख्वाँ[2] की नाक पर बैठ गया। वह बिलबिला उठे। मुन्नाज़ उनकी बिलबिलाहट देखकर हँस पड़ा। गया अहीर की लाठी मौलवी मदह उत्तर हुसैन मदहनशाज़िल के कंधे पर पड़ी। मौलाना एक छड़ी से फौजदारी कर रहे थे और ठेठ अरबी लब्ज़ में शिकन-पट्टीवालों को गालियाँ दे जा रहे थे। गया ने जो बजरंगबली की जय बोलकर एक हाथ दिया तो मौलाना घबरा गये। बोले अबे हरामज़ादे! न हम मरब। मगर शोर इतना हो रहा था कि गया के कानों तक मौलाना की आवाज़ नहीं गयी। मौलाना घबराकर भागे मगर लाठी उनके कंधे को छू गयी। मौलाना के लिए यही काफ़ी था। वह ढेर हो गये।

मियाँ लोगों में बस एक फुन्नन मियाँ बाकायदा लड़ते चले रहे थे। उन्होंने अपने तहबन्द का काछा बाँध लिया था। अँगोछे को सिर में लपेट लिया था और उनकी तेल पिलायी हुई नौ हाथ की लाठी किसी बदज़बान औरत की ज़बान की तरह चल रही थी।

कहारों ने घबराहट में ताज़िये को मोड़ना चाहा तो फुन्नन मियाँ तीर की तरह उनके पास पहुँच गये। उन्होंने अगले कहार को धक्का मारा और

---

1 असल शब्द मुमताज़ है। मगर वह मुन्नाज़ ही पुकारा जाता था इसलिए मैं मुन्नाज़ ही लिख रहा हूँ।

2 मरसिया पढ़कर सुनानेवाला।

गरह सीर करें खुरदुरे और काले)। लेकिन मैंने गलत कहा, बलीउद्दीन और बल्ली के बीच में कई सीढ़ियाँ हैं। बलीउद्दीन बनी हुआ। गँवारों ने वली को वल्ली बना लिया और बल्ली को बल्ली बनने में कितनी देर लगती है। गँवारों की देखा-देखी मियाँ लोग भी उन्हें बल्ली साइ कहने लगे। शेख बलीउद्दीन सिद्दीकी ने भी बल्ली साइ होना कुबूल कर लिया कि यह नाम आसान भी था और जबानों पर चढ़ भी चुका था।

पुनाम हुसैन खां के समधान से बल्ली साइ ने एक सपना देखा कि आसमान में एक खिड़की खुली। उस खिड़की में रोशनी की एक सीढ़ी निकली, जो जमीन तक आ गयी। उस सीढ़ी से एक महापुरुष उतरे और उन्होंने बल्ली साइ से कहा, "बदनसीब ताजियेदारी कर। मौत करीब है।" बल्ली साइ की आँखें खुल गयीं। मोहरम की दस तारीख थी। उन्होंने झपाझप दरवाजे पर मिट्टी का एक चौक बनाकर उस पर चवन्नी का एक कागजी ताजिया रख दिया और उसके चारों तरफ अगरबत्तियाँ सुलगाकर वह खुद वहीं ताजिये के पास जमीन पर उकड़ू बैठ गये।

दक्खिन पट्टी का जुलूस जब उस मोड़ पर पहुँचा तो उस कागजी ताजिये को देखकर चौंक पड़ा। कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगुवा तेली! चवन्नी का एक बिलकुल बेचारा सा ताजिया लकड़ी के पचासों खूबसूरत ताजियों के जुलूस को ललकार रहा था। चार पैसे के एक ताजिये के सामने कारचोबी के गिलाफ और रेशम की डोरियाँ और सुनहरे पंजोंवाले ताजिये अपने आप को बेबस पा रहे थे क्योंकि जब तक वह ताजिया चौक से उठ नहीं जाता, यह जुलूस आगे नहीं बढ़ सकता था। ताजिया चाहे सोने-चाँदी का हो चाहे पलंगा कागज का ताजिया ही होता है। दक्खिन पट्टी के लोग जमींदारी के नशे में ताजिये की तौहीन तो नहीं कर सकते थे लेकिन बल्ली साइ की तौहीन करने से उन्हें कौन रोक सकता था। तीन टके का आदमी बड़े फाटक में आग लगाने का हौसला कर रहा था। चुनांचे फुन्नन मियाँ का हाथ छूट गया। बल्ली साइ लुढ़कइयाँ खाकर दूर जा गिरे। उत्तर पट्टी वाले इसी की राह देख रहे थे।

हुसैन अली मियाँ के फाटक में पहले में नट्ठरन (?) बैठे थे। वे निकल

आये। लट्ठबन्द अहीरों, चमारों और भरों के गोल ने "जय बजरंगबली! जय हनुमान साहब!" कहकर धावा कर दिया। तक़ी के अखाड़ेवालों ने "या हुसैन!" का नारा मारकर उनकी लाठियों को अपनी लाठियों पर रोका और फिर वह ताज़िये के आगे आगे चलनेवाले अहीर लट्ठबन्द जो आगे बढ़ गये थे लौट आये। घमासान लड़ाई होने लगी। अग्गू मियाँ यह भूल गये कि वह सय्यद अली असग़र ज़ैदी एडवोकेट हैं। अब्बू मियाँ यह भूल गये कि फौजदारी करना उनकी शान के ख़िलाफ़ है। वज़ीर मियाँ ने फौजदारी के क़ानूनों को उठाकर ताक़ में रख दिया। दोनों पट्टियों के लड़के भी ढेले नोस फेंकने लगे। मुन्नाज़[1] का एक ढेला उछलकर मियाँ मरसियागो[2] की नाक पर बैठ गया। वह बिलबिला उठे। मुन्नाज़ उनकी बिलबिलाहट देखकर हँस पड़ा। गया अहीर की लाश मौलवी सय्यद नसीर हुसैन मुस्तनसाबिल के कन्धे पर पड़ी। मौलाना एक छड़ी से फौजदारी कर रहे थे और ठेठ अरबी लफ़्ज़ में अहिरान-पट्टीवालों को गालियाँ दिये जा रहे थे। गया ने जो "बजरंगबली की जय" कहकर एक हाथ दिया तो मौलाना धड़ाम गये। बोले, "अबे हरामज़ा—!" न कह सके। मगर शोर इतना हो रहा था कि गया के कानों तक मौलाना की आवाज़ नहीं गयी। मौलाना घबराकर झुके मगर लाठी उनके कन्धे को छू गयी। मौलाना के लिए यही काफ़ी था। वह ढेर हो गये।

मियाँ लोगों में बस एक फ़ुन्नन मियाँ बाक़ायदा लट्ठ चला रहे थे। उन्होंने अपने तहबन्द का काछा बाँध लिया था। अँगोछे को सिर में लपेट लिया था और उनकी तेल पिलायी हुई नौ हाथ की लाठी किसी बदज़बान औरत की ज़बान की तरह चल रही थी।

कहारों ने घबराहट में ताज़िये को लौटाना चाहा तो फ़ुन्नन मियाँ तीर की तरह उनके पास पहुँच गये। उन्होंने अगले कहार को थप्पड़ मारा और

---

1 असल नाम मुमताज़ है। मगर वह मुन्नाज़ ही पुकारा जाता था इसलिए मैं मुन्नाज़ ही लिख रहा हूँ।

2 मरसिया पढ़कर गुज़ारनेवाले।

बोले 'साले! त ई तजियवा कहाँ ले जा रहा? का तो का ई ना मालूम मादरचोद कि वक्त लौट जाय त लौट जाय बाकी ई ताजिया ना लौटी।"

कहारों ने ताजिया फिर उठा लिया।

दोनों पट्टियों की औरतें अपने अपने इमामबाड़ों में फरयादी मातम करने लगीं। ऐ कुल के मददगार मदद करने को आओ। आफत से बचाओ!

मगर कुल का मददगार मदद करने को नहीं आया। वह किसकी मदद करता। दोनों तरफ तो सयदानियाँ ही थीं।

फिर पुलिस आ गयी।

लेकिन पुलिस के आने की खबर पुलिस से कुछ पहले आ गयी। दोनों पट्टियों के अक्लमन्दों ने सोचा कि इस मामले में पुलिस को डालना ठीक नहीं है। यह एक घरेलू मामला है। इसलिए जख्मी फौरन हटा दिये गये। अब्बू मियाँ ने मातमख्वानी शुरू कर दी :

आज शब्बीर पे क्या आलमे तनहाई है!

दूसरी तरफ से हकीम साहब सोजख्वानी करते हुए आये और कल्लू साहब का ताजिया उठवा ले गये। पुलिस आयी तो जुलूस कल्लू साहब के दरवाजे से बढ़कर मस्जिद में जाकर लिपट चुका था। जमीन पर खून के धब्बे थे तो मगर उनसे क्या पता चलता है। गाँव के किसी एक आदमी ने यह नहीं कहा कि फौजदारी हुई है। क्योंकि सारा गाँव उत्तर और दक्खिन पट्टी में तकसीम हो चुका था। खून मसवा खोल रहा था लेकिन इस मजहबी और घरेलू मामले में कोई पुलिस को नहीं डालना चाहता था।

अनवारुलहसन राकी वहाबी था और मोहर्रम के खिलाफ था, मगर वह भी इस पट्टीदारी से न बच सका। यह तो ठीक है कि ताजिया एक तरह की बुतपरस्ती है लेकिन पट्टी का मामला फिर पट्टी का मामला है। इसलिए वह थानेदार हरनारायन प्रसाद और दीवानजी समीउद्दीन खाँ को अपने घर ले गया। रास्ते के बीच में उसने थानेदार को पाँच सौ रुपये दिये कि कम-से-कम मीर फ़य्याद और मौलवी बेदार पर फौजदारी का मुकदमा जरूर कायम कर लिया जाय।

मगर थानेदार ठाकुर हरनारायन प्रसाद को इसका पता था कि उन्हें

कोई गवाह नहीं मिल रहा था। मगर पाँच सौ की रकम ऐसी मामूली भी नहीं होती कि कोई थानेदार उसे यूँ ही हाथ से निकल जाने दे। इसलिए ठाकुर साहब ने अनवारुलहसन से वायदा करके रुपया ले लिया। अनवारुल हसन ने कहा कि वह खुद भी गवाह तैयार करने की कोशिश करेंगे।

कोठे से उतरकर ठाकुर साहब समसुद्दीन खाँ के साथ जुलूस की खोज में निकले तो मालूम हुआ कि जुलूस रहमान साहब के दरवाजे पर टिक गया है। बड़े जोर का मातम हो रहा था। लट्ठबन्द अहीरों ने लाठियाँ ताजिये पर रख दी थीं और सब मातम कर रहे थे। सिर्फ चन्द लट्ठबन्द जो ताजिये के सामने सीना सिपर थे कि अगर उत्तर-पट्टी वाले कोई गड़बड़ करें तो उनका सिर तोड़ दिया जाय। उन्हीं चार-पाँच अहीरों के साथ गुलमान मियाँ खड़े थे। एक गमछा उनकी कमर में पटके की तरह बँधा हुआ था। वह अपने [illegible] था जो [illegible] लाठी पर टेक लगाए खड़े थे। उनका लड़का अकबर अली पटेवालों में मिला हुआ तलवार के हाथ निकाल रहा था।

नक्कारेवालों का अखाड़ा तो जुलूस से काफी आगे चला करता था मगर ताजियों की हिफाजत के ख्याल से नक्कारेवाले ताजिये से मिल गए चल रहे थे। उनके ढोल [illegible] के नारों में अब्दू मियाँ का मातमखाना का आवाज रह-रहकर गुम हो रहा था।

गुलमान मियाँ अकबर अली के पैंतरों की सफाई देख-देखकर खुश हो रहे थे। उनकी आँखें बचपन का [illegible] अकबर अली की जवानी का तमाशा देख रही थीं।

ठाकुर साहब समसुद्दीन खाँ के साथ उन्हीं के पास आकर खड़े हो गए।

"[illegible] आज तो आप [illegible] न।" ठाकुर साहब ने कहा।

"अरे दारोगाजी न आ गए"... गुलमान मियाँ ने जो देखा कि वे दारोगाजी ही से बातें कर रहे हैं तो वे चुप हो गए और फिर अकबर अली का पैंतरा देखने लगे।

"तुम को [illegible] तो सुनाई है", थानेदार की आवाज़ उनके कान में

बहुत दूर स आन लगी, " मैं मुकद्दमा जरूर कायम करूँगा लेकिन सरकारी गवाहा का सज़ा नही दी जाती

"ऐ सुलमान !" फुन्नन मियाँ न सुलमान मिया को आवाज दी।

वह ठाकुर साहब से कुछ कह विना फुन्नन मिया की तरफ बढ गये। ठाकुर साहब जो समीउद्दीन खा स कुछ कहने के लिए मुडे ता उन्होने देखा कि समीउद्दीन खा लापता ह। उन्होने घबराकर इधर उधर देखा तो क्या दिखायी दिया कि समीउद्दीन खाँ वरदी पेटी समत फुन्नन मिया के दामाद मोहम्मद हुसैन के साथ खडे मातम कर रहे थ। यह समीउद्दीन खाँ जौनपुर के शीआ म थे। मातम की आवाज सुनकर उन्हें दिल पर काबू न रह गया। ठाकुर साहब मुसकरा दिये। वह अपने इस दीवान का बहुत पसन्द करते थे।

समीउद्दीन खा बहुत कट्टर किस्म के मुसलमान थ। वह लगभग उतने ही कट्टर मुसलमान थे जितने कट्टर हिन्दू खुद ठाकुर साहब थ। समीउद्दीन खा हिन्दुओ का छुआ नही खाते थे और ठाकुर साहब मुसलमाना की छुई हुई किसी चीज को हाथ नही लगाते थे। लकिन समीउद्दीन खा होशियार आदमी थे। उनके आने के बाद से थाने की आमदनी बहुत बढ गयी थी। इसलिए वह थानदार की नाक का बाल बने हुए थे। ठाकुर साहब जब उनके साथ अकेले होते ता खूब इस्लाम का मजाक उडाते कि वाह यह भी कोई मजहब हुआ कि खुद तो पैगम्बर साहब ने नौ नौ ब्याह कर डाले और बाकी मुसलमानो को चार शादियो पर टरका दिया। समीउद्दीन तड से जवाब देते ठाकुर साहब यह तो कमर के बूते की बात है। जो हजरत[१] ने एसी बसी हरकतो म अपनी ताकत हमारी तरह लुटायी होती तो वह भी चार से ज्यादा शादियाँ न करते। अरे साहब आजकल तो एक का सँभालना मुश्किल हो गया है। लेकिन पाँच भाइयो म एक बीवी स हमारा काम अब भी नहीं चल सकता। यह भी कोई कमर हुई? उनसे अच्छे तो हमी ह। चार भाइयो म कुल मिलाकर सात बीवियाँ हैं। एक मेरी तीन भाई साहब की और तीन मँझले भाई की,

---

१ मुसलमान रसूल का नाम नही लेते। उनकी बात करनी हो तो 'जो हजरत' यानी वह जनाब' कहते हैं।

चौथा भाई अभी कुँवारा है। दो चार बीवियाँ वह भी रखेगा ही। ऊपर की आमदनी अलग

लकिन इन खुश गप्पियों का मौका जरा कम मिलता था। कासिमाबाद हल्के के लोग थे भी बड़े उजड्ड। कभी कोई कत्ल हो गया कभी कहीं डकैती पड़ गयी। यहाँ लाठी चल गयी वहाँ बन्दूक निकल आयी। तमाम छोटे जमींदार गिरोहबन्द थे। रात को लोग डकैत थे और दिन को मुकदमेबाज थे। कभी इस बदमाश ने किया और कभी उस ने। इसी दूर पर में सौ पचास मर हो जाते थे। कभी उसे खेत दिलवा दिया। मिट्टी पानी पत्थर हो मानो उगलने लगती थी। करइल का इलाका था। काली धरती बहुत था और लोग थे बीहड़। क़ानून अपनी जगह लेकिन अगर कोई बात शान के खिलाफ हो गया तो थाना फुँक गया। अभी कोई सात आठ बरस पहले थानेदार शरीफउद्दीन ने फुन्नन मियाँ को गाली दे दी थी तो फुन्नन मियाँ ने रात को कोई दो-सौ आदमियों के साथ थाने पर छापा मारकर थानेदार शरीफउद्दीन को अगवा कर लिया था। फिर उन्हें एक पेड़ से बाँधकर उनकी पकी मूँछों का एक-एक बाल उखाड़ लिया था। शरीफउद्दीन दूसरे ही दिन थाना छोड़ गये। उनकी जगह शिवधनीसिंह आये। शिवधनीसिंह के बड़े चर्चे थे। एस० पी० साहब ने उन्हें खास तौर पर हुक्म दिया था कि फुन्नन मियाँ को सजा मिलना चाहिए नहीं तो पुलिस का रौब खतम हो जायेगा। क्योंकि शरीफउद्दीन थाकड़ थानेदारों में गिने जाते थे और दूर-दूर तक उनकी मूँछों की शोहरत थी। उनकी मूँछ ब्रिटिश सरकार की मूँछ था।

सरकार का खयाल था कि फुन्नन मियाँ कांग्रेसी हैं लेकिन उनके खिलाफ शरीफउद्दीन की इज्जत का मुकदमा इसलिए न चलाया जा सका कि उसमें सरकार की बदनामी होती। थानेदार को किसी थाने से उठा लिया जाना बड़ी बदनामी की बात है। इसलिए शिवधनीसिंह ने फुन्नन मियाँ के खिलाफ डकैती का मुकदमा उठाया। वहाँ आते ही उन्होंने दावात की रात का पहला छापा मारा। फुन्नन मियाँ हमेशा की तरह जुआ खेल रहे थे और हमेशा की तरह शगुन के लिए लक्ष्मी की उस मूर्ति के नीचे बैठे थे, जो ननमुन्ने कलवार की दुकान में दीवार पर लगी हुई गणेश की मूर्ति की तरफ देखा करती

था। यह जुआ बरसातपुर में हो रहा था। शिवधनीसिंह मुजरिमों को गिरफ्तार करके जब रवाना हुए तो यह भूल गये कि गाँव को जानेवाला रास्ता भरटोली से होकर जाता है। उनकी इस भूल का नतीजा यह निकला कि वह अपने तीन कांस्टेबिलों के साथ घिर गये। भरों ने मुजरिमों को छुड़ा लिया। शिवधनीसिंह की वर्दी पेटी छीन ली गयी। उन्होंने गिड़गिड़ाना शुरू किया, तब फुन्नन मियाँ को उन पर रहम आ गया। बोले, थूक के चाटो!'

जब शिवधनीसिंह ने इस हुक्म की तामील की तो उनकी वर्दी पेटी लौटा दी गयी। शिवधनीसिंह उसी दिन गुर्दे के दर्द में तड़पे और दूसरे ही दिन उन्हें दवा दारू करवाने के लिए छुट्टी लेनी पड़ी। फिर वह लौटकर गंगौली नहीं आये। जाते जाते उन्होंने सिपाहियों को दस दस रुपये इनाम के दिये कि वह इस बात को मुँह से न निकालें। सिपाहियों ने तो यह बात मुँह से न निकाली मगर दूसरे ही दिन यह बात आस-पास के तमाम गाँवों में फैल गयी। तब थाना कासिमाबाद पर ठाकुर साहब का 'तनाना' हुए। ठाकुर साहब दो साल से फुन्नन मियाँ की फिक्र में थे। लेकिन वह उन्हें अपने पुट्ठे पर हाथ नहीं धरने देते थे। जो आदमी अपने पड़ोसी की बीवी को निकाल लाये और फिर रोज उसी पड़ोसी के घर जाकर हुक्का पिये, उस पर हाथ डालना खिलवाड़ नहीं है।

यह किस्सा ठाकुर साहब के कासिमाबाद आने से कोई बीस साल पहले का है लेकिन हर थानेदार अपने जगह आनेवाले थानेदार को यह किस्सा जरूर सुनाता था। किस्सा यह था कि फुन्नन मियाँ के पड़ोसी करामत अली खाँ (जो हकीम सय्यद अली कबीर के पुराने मुलाजिम गुलाम हसन खाँ के छोटे भाई थे) ताजपुर से कुलसुम को ब्याह लाये। यह कुलसुम बला की खूबसूरत थी। एक दिन फुन्नन मियाँ ने उसे देख लिया और उस दिन से वह उस पर एक जान छोड़ हजार जान से आशिक हो गये। जब हकीम साहब के छोटे भाई मिट्टा सय्यद अली गाजी की बरात पार के लिए इक्कों, हाथियों, पालकियों, खड़खड़ियों वगैरह पर रवाना हुई और दोनों पट्टियों में सन्नाटा हो गया तो फुन्नन मियाँ करामत अली खाँ के दरवाजे पर गये। करामत अली खाँ की माँ भी बरात के साथ गयी हुई थीं। कुलसुम इसलिए नहीं गयी थी कि

वह पटने से थीं। फुन्नन मियाँ उसे ज़बरदस्ती उठा लाये। बरात की वापसी के बाद बड़ा हंगामा हुआ। फौजदारी हुई। फुन्नन मियाँ गिरफ्तार हुए, लेकिन उन्होंने कुलसुम को अदालत में हाज़िर नहीं किया। पूरी दक्खिन पट्टी उनके साथ थी। उनको सज़ा हो गयी। वह जेल काट आये। मगर मुकदमे के बीच ही में उनकी मरहूमा ने कुलसुम का दिल जीत लिया। और जब वह छूटे तो वह दूसरी के घर में उठ आयी। उसकी गोद में करामत अली का एक बच्चा था। फिर धीरे-धीरे करामत अली इस सिलसिले में आगे हो गये, और फुन्नन मियाँ हमेशा की तरह उनके दरवाज़े पर जाकर हुक्का पीने लगे।

ऐसे ज़िद्दी और सिरफिरे आदमी पर हाथ डालना कोई ठट्ठा खिलवाड़ नहीं था।

इसीलिए ठाकुर साहब समाउद्दीन खाँ से मशवरा करना चाहते थे। उनका ख़याल था कि अगर इस वक्त उत्तर-पट्टीवालों को कुलसुम की याद दिलायी जाय जो अब भी फुन्नन मियाँ के घर में है और उनके दस बच्चा-बच्चियों की माँ है तो शायद करामत अली का मुँह देखकर हकीम अली कबीर दक्खिन-पट्टीवालों पर बलवे का मुकदमा कायम करवाने पर तैयार हो जायें।

मगर समाउद्दीन खाँ तो मातम कर रहे थे।

'आपके हकीम साहब बुलावत बाटेन।'' चमार के एक लड़के ने ठाकुर साहब से कहा।

अच्छा।

ठाकुर साहब जैसे ही फाटक में घुसे हकीम साहब और डिप्टी अली
[illegible] मियाँ ने यह शोर किया कि क्या अगर दक्खिन-पट्टी
न दें तो ये लोग अपने घर में बन्द रहें? इसलिए या तो
या फिर उत्तर-पट्टी के नाज़िर साहब के ज़ोर पर रास्ता बना

ठाकुर साहब ने उन लोगों को बड़ी मुश्किल से ठण्डा
[illegible] उन्होंने अपना [illegible] भी तो हकीम साहब खुश
[illegible] तो इन्शाअल्लाह ऐसा ही होगा। कुछ

आपको गवाहों की कमी नहीं पड़ेगी। इतनी उद् बोलकर वह अपनी जबान पर उतर आये, हे गुलाम हुसन, तनी उ'जान' को बुलइया।

'फुन्नन मियाँ को पकड़ने के लिए तो सरकार बहुत दिनों से बेचैन है। ठाकुर साहब ने डिप्टी अली हादी के कान में कहा।

सरकार की बेकरारी की खबर सुनकर डिप्टी अली हादी खुद बेकरार हो गये। बोले वह हरामजादा तो लाठिया चलाने में सबसे आगे था।'

'सारी हम अब्बू बशीर और वजीरो को ना छोड़ेंगे। हकीम साहब ने कहा।

ये बो असर लोग हैं इन्हें सजा दिलवाना आसान नहीं है।' ठाकुर साहब ने कहा।

मगर हकीम साहब बिफर गये। उन्हें अली हादी मियाँ ने बड़ी मुश्किल से काबू में किया। चुनाँचे रपट लिखवा दी गयी कि बल्ली माई के दरवाजे पर नियाज हो रही थी कि फुन्नन मियाँ ने सुलेमान और हम्माद मियाँ के साथ बल्ली माई पर लाठियों से हमला किया। हम मुद्दई जब बल्ली माई को छुड़ाने और बीच बचाव करवाने पहुँचे तो मुलजिमों ने हम मुद्दइयों पर भी हमला किया और गया अहीर रघुनाथ भर और उसके दो बेटा—दीना और घनशाम—ने भी हम पर लाठियों से हमला किया। मुलजिमों में उन तमाम लोगों के नाम लिखवाये गये जो अहीर टोली भर टोली और चमटोली के मुस्टंड लोगों में थे। और जिनके बूते पर फुन्नन मियाँ जैसे मामूली जमादार की गर्मोली में हुकूमत थी। रपट लिखवानेवालों में मौलवी बेदार मीर उस्ताद हुसन और हुसन अली मियाँ के अलावा कई भर और अहीर भी थे।

यह खबर अब्बू मियाँ को उसी वक्त मालूम हो गयी। क्योंकि उस वक्त हकीम साहब के दरवाजे पर शकरा चमार भी मौजूद था जो हकीम साहब के कैम्प में अब्बू मियाँ का जासूस था।

अब्बू मियाँ ने मरसिये की बयाज तुरन्त जेब में रख ली। मशवरा होने लगा। जुलूस आगे उठा दिया गया। तमाम नामजद मुलजिमों को रूपोश होने का हुक्म सुना दिया गया। तय यह पाया कि मुलजिमान तो कई दिनों

में गाज़ीपुर और मुहम्मदाबाद के अस्पतालों में दाख़िल हैं। और फुन्नन मियाँ अपनी बेटी रज़िया के पास कलकत्ता गये हुए हैं।'

ठाकुर साहब ने जब मुलज़िमों को गिरफ्तार करने के लिए शाम को पाँव बढ़ाया, तो मालूम हुआ कि कोई मुलज़िम गंगौली में मौजूद ही नहीं है। वह बेचारे उन्हें पकड़ने के लिए चलकर बड़े दरवाज़े तक आये थे। अब्बू मियाँ ने ठाकुर साहब की बात सुनते ही तमाम मुलज़िमों के घर आदमी दौड़ाये।

'मगर मेरे ख़याल में तो आपको ग़लत ख़बर मिली है।' आदमी दौड़ाने के बाद अब्बू मियाँ ने ठाकुर साहब से कहा। 'उनमें से कोई आज गंगौली में है ही नहीं।'

'फुन्नन तो शायद कलकत्ते गये हैं क्या मुहम्मद?' अब्बू मियाँ ने फुन्नन मियाँ के दामाद से पूछा।

'जी हाँ।'

'और गुलमान तो कोई छः दिन से सदर अस्पताल में दाख़िल है।' वज़ीर मियाँ ने कहा। 'बेचारा सख़्त तकलीफ़ में है मामूँ।'

'हाँ भाई अब क्या कहा जाय, मौसम अजब आ गया है।' अब्बू मियाँ ने कहा। 'मैं उसे देखने अस्पताल गया था। मुझे देखते ही बेचारा सिविल सर्जन गद्गद हो गया और बोला, सैयद साहब आपने क्या तकलीफ़ की? मैंने कहा, भई माथुर साहब तकलीफ़ कैसे न करता। यह मेरा ख़ास आदमी है। तो उसने कहा साहब ऐसा केस तो मैंने आज तक नहीं देखा। यह सरासर अन्धेर हो चुका है मगर बाई गॉड मुझे अब तक यह न मालूम हो सका कि दंगा हुआ क्या था?

और हम्माद बेचारे पर तो चाँद गाँव में आफ़त आया है। कोठे पर से गिर गये। दाहिना हाथ टूट गया। मुहम्मदाबाद के अस्पताल में पड़े हैं।' ग़फ़्फ़ार मियाँ बोले और फिर दाहिने हाथ में नट का बुनाव पोंछने लगे। हालाँकि हम्माद मियाँ का हाथ कामता चमार के बड़े भाई घुरआ की लाठी से टूटा था।

पहिले मानामान बुलाये गये। उन्होंने ठाकुर साहब के लिए शरबत

बनाया। तमाशी उनके लिए पान लाया। और गुड़ बेचू हलवाई एक दोने में गुड़ के ताजा लखटे लाया। ठाकुर साहब ने सोचा कि अब तो मुलजिमीन हाथ से निकल ही चुके हैं इसलिए नाश्ता करने में क्या नुकसान है। उन्होंने समीउद्दीन खाँ की तरफ देखा। वह उस बँसखट के पायती बैठे हुए थे, जिस पर फुन्नन मियाँ लेटे हुए हुक्का पी रहे थे। समीउद्दीन खाँ के एक हाथ में चाय की प्याली थी और दूसरे में तश्तरी। वह तश्तरी में उँडेली हुई चाय को फूँक रहे थे। ठाकुर साहब ने दाँत पर दाँत जमा लिये कि अब यह कमबख्त सुड़का मारेगा। उस सुड़के की आवाज से ठाकुर साहब के दाँत किरकिरा जाते थे और पूरा बदन झनझना जाता था। वह इस बात पर समीउद्दीन को डाँट भी चुके थे। लेकिन वह समीउद्दीन ही क्यों होगा जो बदल जाय। चुनांचे ठाकुर साहब हाथ में शरबत का गिलास लिये उस सुड़के का इन्तजार करने लगे। इत्तफाक से समीउद्दीन ने उन्हें इस हालत में देख लिया। वह बिना सुड़का लगाये चाय पी गये और जेब से बीड़ा निकालने लगे।

अरे पी के खतम करो खाँ साहब अपनी साली चाय को।'' ठाकुर साहब ने झल्लाकर कहा।

तमाम लोग चौंक पड़े। क्योंकि समीउद्दीन की प्याली अपनी तश्तरी पर औंधी रखी हुई थी और तश्तरी बँसखट के पाये के पास थी जिसके इधर-उधर और ऊपर-नीचे चींटियों का एक गोल अपने काम में जुटा हुआ था। ठाकुर साहब झेंप गये और ठीक उसी वक्त अब्बू मियाँ के भेजे हुए सिपाही लौट आये।

क्या हुआ? ठाकुर साहब ने पूछा।

लेकिन वे सिपाही ब्रिटिश सरकार के सिपाही नहीं थे। उन्होंने ठाकुर साहब के सवाल का जवाब नहीं दिया। वे अपने अपने जमींदारों से मुखातिब हो गये। खबर एक ही थी। कोई मुलजिम गाँव में मौजूद नहीं था।

मीर साहब! ठाकुर साहब ने अब्बू मियाँ को मुखातिब किया, मौलवी बशीर की हालत नाजुक है। यह मामला दब नहीं सकता। मैं दो हजार गवाह पेश करूँगा कि ये लोग वारदात की जगह पर मौजूद थे

'ज़रूर पता कीजिए ठाकुर साहब।' अब्दू मियाँ ने कहा, 'हम आपका यह शराफ़तें बताने में कम रह सकते हैं?'

'हम इसका ख़याल रखिएगा,' वज़ीर मियाँ बोले, 'कि इन गवाहों में से कोई उत्तर पट्टीवालों का आसामी न हो। मैं यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि जिरह करने को मैं ही मस्त हूँगा।'

ठाकुर साहब जानते थे कि यह एक चैलेंज है और वह ऐसे कई थानेदारों को जानते थे जिनसे वज़ीर मियाँ ने जिरह की थी। उन्हें पसीना आने लगा। लेकिन उन्होंने अपनी बिखरी हुई ताक़त को इकट्ठा किया और कहा, "मुख़्तार साहब, हमारा काम बस इतना है कि मुक़दमा अदालत के सामने पेश कर दें।" वह खड़े हो गये। "अच्छा अब इजाज़त दीजिए। आप लोग भी दिन भर के थके हारे हैं।"

ठाकुर साहब कासिमाबाद चले गये जहाँ गुलाबीजान उनकी राह देख रही थी। उनके जाने के बाद तो अब्दू मियाँ भी उठ खड़े हुए।

"चलो भाई, शाम-ग़रीबाँ की मजलिस कर ली जाय।"

किसी ने उनसे यह नहीं कहा कि इतनी सख़्त फ़ौजदारी के बाद उत्तर पट्टी की किसी मजलिस में जाने का क्या तुक है, क्योंकि इमामबाड़ा इमाम हुसैन का होता है और मजलिस भी उन्हीं की होती है। ख़ुद उत्तर-पट्टी में भी किसी ने यह नहीं सोचा था कि मजलिस मुल्तवी कर दी जाय।

रात को नमाज़ के बाद लोग इमामबाड़े में इकट्ठा हुए। हकीम अली कबीर [illegible] मियाँ की जगह पर जा बैठे। लेकिन वहाँ बैठना उन्हें कुछ अजीब लगने लगा। इसलिए वह [illegible] उठकर अपनी पुरानी जगह पर आ गये। चूँकि वह बड़े थे इसलिए सभी उनका मुँह देख रहे थे कि वह आख़िर [illegible] का हुक्म क्यों नहीं दे रहे हैं।¹ ख़ुद हकीम साहब हैरान थे कि आख़िर वह रोशनियाँ गुल करने का हुक्म क्यों नहीं दे रहे हैं। क़िस्सा यह था कि इमामबाड़े के फ़र्श पर दक्खिन-पट्टीवालों की ख़ाली जगह

¹ इस मोहर्रम की रात को जो मजलिस होती है वह शाम-ग़रीबाँ की मजलिस कही जाती है और यह मजलिस अँधेरे में होती है।

उन्हें परेशान कर रही थी। वह सोच ही रहे थे कि अलिमवा हज्जाम को दक्खिन पट्टी भेजें कि अब्बू मियाँ के पीछे-पीछे दक्खिन पट्टी का पूरा गिरोह बच्चों-बच्चों समेत फाटक में दाखिल हुआ।

ये लोग किसी से कुछ कहे सुने बिना अपनी-अपनी जगहों पर बैठ गये। दोनों पट्टियों के बच्चे मिम्बर के पीछे बैठकर गप लड़ाने लगे। हकीम साहब ने रोशनियाँ हटाने का हुक्म दिया, मगर अब सवाल यह था कि मजलिस पढ़े कौन? अब तक तो इस शब्बू मियाँ पढ़ा करते थे। रोशनियाँ के हट जाने के बाद अँधेरे में हकीम साहब की आवाज़ गूँजा करती थी, 'हैं शब्बू पढ़ो भाई!'

लेकिन क्या आज भी वह ऐसा कह सकते हैं? यह सवाल उनको परेशान कर रहा था। अँधेरे में थोड़ी देर सन्नाटा रहा, फिर हमेशा की तरह उनकी आवाज़ गूँजी 'हे शब्बू पढ़ो भाई!

ताना-बाना

थानेदार ठाकुर हरनारायण प्रसाद को हम्माद मियाँ वगैरह को सजा दिलवाने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। उन्हें तो केवल पुत्तन मियाँ में दिलचस्पी थी। उनसे भी उनकी कोई जाती अदावत नहीं थी और उन्हें यह भी मालूम था कि फौजदारी में ज्यादती उत्तर-पट्टीवालों ही की थी फिर भी उन्होंने एकतरफा तफतीश की। वह इस काम में सफल भी हुए और पुत्तन मियाँ के साथ-साथ दक्खिन पट्टी के और कई लोगों को भी सजा हो गयी। इनाम में उन्हें सर्विस बुक में चार इन्दराजात मिल गये।

वे उसी वक्त घोड़ा कसवाकर कासिमाबाद की तरफ चल पड़े।

गुलाबीजान उनके क्वार्टर में उनकी राह देख रही थी। ठाकुर साहब का हरगाश बरगाश चेहरा देखकर उसे ध्यान हो गया कि वह मियाँ लोगों को सजा दिलवाने में सफल हो गये। उसने उसी वक्त दुर्गीराम कान्स्टेबल हवलदार समाउद्दीन खाँ को बुलवाया। कासिमाबाद थाने में उनके सिवा कोई और मुसलमान नहीं था। उन्हें काम बताकर गुलाबीजान ने बहादुरगंज चलता किया कि वह हशमतुल्ला हलवाई की दुकान से मिठाई लायें कि ठाकुर साहब की जान की खुशी में खाना नियाज दिलवाया जा सके। गुलाबीजान ने पुत्तन शाह और चन्दन शहीद के मजारों पर भी चादरें मान रखी थी गरज कि गुलाबीजान ने अपनी तरफ से पूरा जोर लगा रखा था।

मगर गुलाबीजान को भी ठाकुर साहब ही की तरह पुत्तन मियाँ से कोई जाती अदावत नहीं थी। उसने तो पुत्तन मियाँ को केवल एक बार देखा था। बहादुरगंज के बड़े खाँ साहब की छोटी बच्ची की शादी के नाच में। पुत्तन मियाँ बराती थे। बारातवालों ने गुलाबीजान के साथ-साथ गाजीपुर की प्रसिद्ध चम्पाबाई को भी बुलाया था।

उन दिनों चम्पाबाई के बड़े शोहरे थे। वह बड़े ठस्से से आयी। गुलाबीजान ट्रेनिंग में आ चुकी थी। चम्पाबाई उसे हिकारत से देखकर एक तरफ बैठ

गयी। इन दानों से थोड़ी ही दूर पर चमारों का एक नमकीन सा लौंडा होंठों पर पान का लाखा जमाये बैठा इन दोनों पर हिकारत से मुसकरा रहा था और अपने हर तरफ बैठे हुए लोगों की गन्दी जुमलेबाजी का तड़ातड़ जवाब दे रहा था और इठला रहा था। उसकी इठलाहट देखकर गुलाबीजान को खयाल आया कि नाज नखरे के सबक उन्होंने बेकार ही लिये थे। उस लौंडे के पास बैठनेवालों की आँखों में वासना के चिराग जल रहे थे। गुलाबीजान और चन्दाबाई के पास बैठनेवालों की आँखों में भी इन्हीं चिरागों की जोत जाग रही थी परन्तु उन चिरागों की लव इतनी ऊँची न थी।

यह छः या सात साल पहले की बात है। उन दिनों गुलाबीजान कोई चौदह पन्द्रह मार की थी, और उसकी उतरी हुई नथ अभी बिलकुल ताजा थी। फुन्नन मियाँ इज्जत की जगह, यानी दूल्हा के पास बैठे थे। पहले गुलाबीजान का मुजरा हुआ। गुलाबीजान मियाँ लोगों की महफिलों को जानती थी। दो-तीन पूरबी गीत गाने के बाद उसने गालिब की एक गजल छेड़ी। चन्दाबाई गरदन टेढ़ा किये बैठी अपने दाहिने पर से ताल देती रही मगर वह लौंडा अपने चारों तरफ बैठे हुए लोगों से ठठोल करता, हँसता और लोगों को हँसाता रहा। उसके पास बैठनेवालों की आवाजों में वासना की नमी बढ़ती ही चली गयी। यहाँ तक कि गुलाबीजान ने यह महसूस किया कि वासना की इस बाढ़ में शायद वह अपनी आवाज समेत डूब जानेवाली है। उसने उस्तादजी की तरफ कनखियों से देखा मगर वह बेचारे कर ही क्या सकते थे। वह लौंडा जगाव करीब के मशहूर नचय्यों में था। और मशहूर था कि सनीमपुर के जमींदार अशरफुल्ला खाँ अशरफ अपने दादा के रतमी[1] दीवान की तरह उस लौंडे का भी रखे हुए थे। और फुरसत में इन दोनों ही के पान उल्टा-पल्टा करते थे। उन्होंने तो उसका नाचना भी बन्द करवा दिया था। उसे बस खास खास मौकों पर नाचने की इजाजत थी मगर जाहिर है कि इन खास मौकों पर भी वह उनके पास तो बैठ नहीं सकता था। बहादुरगंज के खान साहब से उनका याराना था इसीलिए उनके बेटे के ब्याह की महफिल में

[1] हाथ के लिखे हुए।

उनका लौंडा नाचने तो आ गया था मगर उनसे दूर बैठा हुआ लोगों में चुहलें कर रहा था। आग़ा फ़न्ना भी मसनद पर थे और फुन्नन मियाँ से अपने दादा की शायरी की बातें कर रहे थे। वह लौंडा उनसे दूर फ़र्श पर था। खान साहब उन गन्दे घिनौने जुमलों को सुन रहे थे जो गुच्छे उस लौंडे के चारों ओर मक्खियों की तरह भिनभिना रहे थे और बार-बार उस पर बैठ जाना चाहते थे। खान साहब बेचारे उस वक्त तो कुछ कर नहीं सकते थे मगर उन्होंने यह तय कर लिया था कि इस जश्न के बाद बहादुरगंज और मनीमपुर के बीच में पड़नेवाले जंगल में वह उस लौंडे को काटकर डाल देंगे। उनसे यह हतक झेला नहीं जा रहा था। खान साहब का गुस्सा सदा नाक पर धरा रहता था, मगर शरीफ़ आदमी थे और हर जगह गुस्से में बरस नहीं सकते थे। वरना उनके बारे में तो यह मशहूर था कि जब गुलाबीजान ने नथ पहनी और यह खबर खान साहब को इस दुमछल्ले के साथ मिली कि नगरामऊ के ठाकुर साहब गुलाबीजान की नथ उतारने की तमन्ना कर चुके हैं तो खान साहब को ताव आ गया। बोले, वह क्या खाकर गुलाबीजान की नथ उतारेगा। भाई साहब मरहूम ने उसकी बड़ी बहन की नथ उतारी थी। बाबा मरहूम ने उसकी खाला की नथ उतारी थी। इसलिए गुलाबीजान की नथ मैं उतारूँगा।

नतीजे में गुलाबीजान का दाम चढ़ गया। उसकी नथ एक सौ एक नक़द और पाँच बाग़ की माफ़ी पर उतरी। ठाकुर साहब हिम्मत हार गये। मगर संयोग कुछ ऐसा हुआ कि पाला पड़ने लगा। अब गुलाबीजान भला कैसे पानी में घुस आती! खान साहब पहले तो पहलू बदलते रहे फिर कमरे में टहलने लगे। जब पाला किसी तरह न थमा तो वह अपना दुशाला लेकर बाहर निकल आये। उन्होंने आसमान की तरफ़ हाथ उठाकर गालियाँ सुनायीं। वह अल्लाह मियाँ से ख़फ़ा हो गये थे। फिर ख़ुदा ही का करना ऐसा हुआ कि पाला रुक गया। गुलाबीजान आयी और उसकी नथ उतर गयी। उसी दिन से यह बात मशहूर हो गयी कि मनीमपुर के खान साहब से तो अल्लाह मियाँ तक डरते हैं।

अब भला ऐसे में कौन न डरता। मगर उस लौंडे को अपने नवाब पर नाज़ था। वह यह कह सकता था कि मनीमपुर के खान साहब ने चार पाँच दाँव

हैं, और उसके तलवों से आँखें मलकर रोये हैं। अगर वह कभी किसी की तरफ देखकर मुसकरा दिया है तो वह जल जल गये हैं, और उन्होंने उसे औरतों की तरह कोसने दिये हैं। बार बार कहा है, 'आज सता ले, जानिम ! जब मर जाऊँगा तो याद करेगा।"

और शायद यही वजह है कि वह लौंडा खान साहब की परवाह किये बिना लोगों से ठठोल कर रहा था और जोर जोर से हँस रहा था। इस हंगामे में गुलाबीजान बार बार सुर ले रही थी और बार बार सुर की डोर टूट रही थी। चन्दाबाई हिकारत से मुसकराकर अपने उस्तादजी से कानाफूसी कर रही थी।

फुन्नन मियाँ एकदम से खड़े हो गये। वह उस लौंडे की तरफ बढ़े। वह उनकी तरफ देखकर बड़ी निलज्जता से मुसकराया। फुन्नन मियाँ ने उसे एक ऐसा तमाचा मारा कि उस्तादजी के बायें की गमक दब गयी। महफिल में सन्नाटा छा गया। फुन्नन मियाँ फिर अपनी जगह लौट आये। सारी महफिल की निगाहें खान साहब पर जमी हुई थीं।

'वह गालिब की गजल गा रही थी, भई।' फुन्नन मियाँ ने कहा। बस वह अनिफ थे नहीं जानते थे मगर अनीस और वहीद के मर्सिया ही की तरह उन्हें मामिन गालिब और दाग के अनगिनत शेर याद थे। वह गालिब की हतक बर्दाश्त नहीं कर सकते थे। खान साहब की समझ में भी यह बात आ गयी। उन्होंने फिर कुछ नहीं कहा। बाद में थानेदार शिवधनी सिंह और उत्तर-पट्टी के जमादार ने खान साहब को चढ़ाने की पूरी कोशिश की कि फुन्नन मियाँ का थप्पड़ उस चमार के लौंडे के मुँह पर नहीं पड़ा था, बल्कि उनके मुँह पर पड़ा था। मगर खान साहब ने उन लोगों की बात मानने से इनकार कर दिया।

कहते हैं कि उस लौंडे का मुँह इतना सूज गया लेकिन सूजन न गयी। जब वह अच्छा हुआ तो खान साहब ने उसे बड़ी भयानक सजा दी। उन्होंने उसे किसी काम से खलवत में भेजा। उस खलवत में सिराजुद्दीन खाँ पहलवान और उनके आठ पट्ठे पहले से मौजूद थे। वे उसी की राह देख रहे थे। दूसरे

दिन खान साहब ने उस लौंडे को उसकी टोली समेत गाँव से निकाल दिया और फिर वह करीब-करीब के किसी गाँव में भी नहीं देखा गया।

लेकिन ये बातें तो और लोगों के साथ गुलाबीजान ने बाद में सुनी। उस दिन तो बस इतना हुआ कि तमाचा खाकर लौंडा सन्न खींच गया। वह सोच भी नहीं सकता था कि फुन्नन मियाँ जैसा मामूली ज़मींदार भरी महफ़िल में उस पर हाथ भी उठा सकता है। मगर जो बात उस लौंडे को नहीं मालूम थी वह यह थी कि फुन्नन मियाँ लाख छोटे ज़मींदार सही मगर सैयद थे और खान साहब के पुरखे सैयद नूरुद्दीन शहीद के साथ आये थे। लेकिन यह बात न फुन्नन मियाँ भूले थे और न अशरफुल्ला खाँ अशरफ—जो नूह नारवी के शागिर्द थे। इसलिए जब फुन्नन मियाँ ने खान साहब को यह बताया कि गुलाबीजान ग़ालिब की ग़ज़ल गा रही थी तो फिर कहने या सुनने के लिए कुछ रह ही नहीं गया था।

गुलाबीजान देर तक गाती रही। फिर एक ठाठ नाचकर वह बैठ गयी और चम्पाबाई इठी-नची की लहर की तरह हवा की डोर पर चढ़ गयी और अपनी ही मुस्कराहटों के नन्हे-नन्हे गुलाबी फूलों से लद गयी। पहले वह एक ठाठ नाची। गुलाबीजान को यह मानना पड़ा कि चम्पाबाई उससे अच्छा नाचती है। ठाठ नाचकर वह दरबारी गाने लगी। उसकी आवाज़ भी अच्छी थी—हरसिंगार के फूलों की तरह कोमल और पानी की सुगन्ध की तरह दूर जानेवाली। लेकिन अभी वह अनाड़ी भी रही थी कि फुन्नन मियाँ बोले लगता तो अच्छा था कि उस लौंडे को ताल आ जाता।

चम्पाबाई घबराकर चुप हो गयी तो फुन्नन मियाँ उसकी तरफ देखकर बोले, तुम्हारी आवाज़ अच्छी है मगर कच्ची है।

फुन्नन मियाँ संगीतज्ञ नहीं थे। उन्हें तो यह भी नहीं मालूम था कि गिनाकर सुर कितने होते हैं। मगर खानदानी की परम्परा ने उन्हें आवाज़ के उतार-चढ़ाव और तारतम्य से परिचित करा दिया था। वह असिर के नाम से नहीं जानते थे मगर अन्दू मियाँ और हुसैन अली मियाँ के बच्चों के सारे मरसिये उन्हें ज़बानी याद थे। चुनांचे जब वह आम दिनों में मिर- बनने तो मरसिया पढ़नेवालों से बस इतना पूछ सकते कि यह कौन सा

पढने जा रहा है। दस माहरम का जब वह कबला जाते तो कागज का एक मन्नती ताजिया लेकर अपने बुजुर्गों की हर कब्र पर जाते। मुमताज और फुटटू को अपना बाजू बनाकर वह उन कब्रों में सोती हुई आत्माओं को मरसिया सुनाते। लेकिन साजखानी की परम्परा का ध्यान रखते हुए वह अपने हाथों में कोई न कोई मरसिया जरूर रखते—चाहे वह मरसिया वह पढ रहे हों, चाहे न पढ रहे हों। एक साल फुटटू बीमार पड गया तो उन्होंने शम्मू को बाजू बना लिया। शम्मू ने वह पढना शुरू कर दिया जो लिखा हुआ था। उन्होंने शम्मू को कोहनी मारी, 'ऊ मत पढो जउन लिक्खा है। तउन पढो जउन हम पढ रहे'

बात इलम से ज्यादा परम्परा की थी। इसीलिए उन्होंने गाजीपुर की मशहूर तवायफ चन्दाबाई को टोक दिया और वह दस जहर को पी भी गयी। क्योंकि गाजीपुर के दौलतमन्द जुलाहे, बनिया या कुजडा को यह तमीज तो थी नहीं कि आवाज का पक्कापन किस चीज का नाम है और कच्चापन क्या होता है—उनके लिए तो चन्दाबाई के बदन का कच्चापन ही बहुत था।

चन्दाबाई की इस जिल्लत पर गुलाबीजान दिल ही दिल में बहुत खुश हुई और उसने फुन्नन मियाँ को चुपचाप हजारों दुआएँ दे डालीं।

लेकिन जब वह ठाकुर हरनारायन प्रसाद थानेदार की धोती में धब्बे की तरह पड गयी तो उसे ठाकुर साहब की वजह से फुन्नन मियाँ का बुरा चाहना पडा। ठाकुर साहब के साथ उसकी खूब गुजर रही थी इसलिए वह यह नहीं चाहती थी कि फुन्नन मियाँ कबाब का हड्डी बन जायें। इसीलिए उसे फुन्नन मियाँ की सजा के लिए मन्नतें मागनी पडीं। ये मन्नतें ठाकुर साहब से छिपाकर नहीं मांगी गयी थीं। इन मन्नतों से उनके मरदाना गौरव की एक तसकीन भी होती थी। वह जब शहर जाते तो पुलिस लाइन में ठहरे हुए थानेदारों से कहते भई हमारी हमारी रण्डियाँ बवफा मेरी गुलाबीजान तो वफा की पुतली है। हर जुमेरात को मजार की सन्ध्या उतारती है। और फुन्नन मियाँ की सजा के लिए तो उसने मन्नतें मान रखी है

और मजे की बात यह है कि फुन्नन मियाँ के बच्चों की माँ कुलसुम ने भी उन्हीं मजारों पर फुन्नन मियाँ के बेदाग छूट जाने की मन्नत मान रखी थी।

उसने तो बड़े ताज़िये के चौक पर मन्नत मान डाली थी। लेकिन जब फुन्नन मियाँ की सज़ा हो गयी तो इससे उसके विश्वास को ठेस नहीं लगी। उसने सोचा कि शायद मौला इम्तहान ले रहे हों या शायद दमड़िया भर ने ठीक से मन्नत ही न मानी हो या फुन्नन शाह और चन्दन शहीद उस वक्त अपनी कब्रों में रहे ही न हों और बाद में रहमत के फरिश्ते उन्हें यह बताना भूल गये हों कि दमड़िया भर के ज़रिये गंगौली की कुलसुम बी ने कोई मन्नत मानी है।

कुलसुम बी को यह नहीं मालूम था कि फुन्नन शाह या चन्दन शहीद ने गुलाबोजान की मन्नत पूरी कर दी है। अगर कुलसुम को यह मालूम होता तब भी शायद उसका दिल बुरा न होता। मन्नतें तो मन्नतों से टकराती ही रहती हैं। किसी-न-किसी की मन्नत पूरी होती ही रहती है और इसीलिए विश्वासों की दुनिया में कोई तूफ़ान नहीं आता। जिसकी मन्नत पूरी नहीं होती वह यह सोचकर चुप हो जाता है कि खुदा उसका इम्तहान ले रहा है।

समीउद्दीन खाँ जब हशमतुल्ला हलवाई की दुकान पर पहुँचे तो इत्तिफ़ाक से वहीं हकीम अली कबीर के पुराने नौकर गुलाम हुसैन खाँ भी आये हुए थे। अलैक-सलैक के बाद गुलाम हुसैन खाँ ने पूछा, 'किसके वास्ते मिठाई खरीद रहे हो खाँ साहब?'

समीउद्दीन खाँ ने कहा, 'गुलाबोजान के वास्ते।'

गुलाम हुसैन खाँ मुसकराये, 'क्यों भाई, दरोगाजी के साथ-साथ गुलाबोजान की मिठाई आप खाने लगे?'

"नहीं जी!" समीउद्दीन खाँ ने कहा, "माँ ने फुन्नन मियाँ की सज़ा के लिए मन्नत मानी थी। अब दोनों नियाज़ देंगी और फुन्नन शाह और चन्दन शहीद पर चादर चढ़ायेंगी।"

अपने दिल में समीउद्दीन खाँ इस खबर से खुश नहीं थे। ऐसा नहीं था कि उन्हें दक्खिन-पट्टीवालों से हमदर्दी रही हो। मगर उनका खयाल यह था कि इस झगड़े में शरारत उत्तर-पट्टीवालों की थी। लेकिन उनका यह खयाल उन्हें झूठे गवाह तैयार करने से न रोक सका, यह एक बिलकुल ही दूसरी बात है। वह तो झूठे गवाह तैयार करने की तनख्वाह ही पाते थे।

'बाकी आप हिया कइसे दिखाई द रहे ?" समीउद्दीन खाँ ने पूछा।

'ओही सजा की खुशी मे आज हमरी ओर पचमेल बने वाली है। उहै लेवे आये है।

समीउद्दीन खाँ मिठाई लेकर कासिमाबाद चले गये। गुलाम हुसैन ने मिठाई का टोकरा बेगार के सिर पर लदवाकर उसे गगौली की तरफ चलता किया। फिर हशमतुल्ला के यहा एक चिलम पीकर वह भी चल पड़े। अभी वह कोई दो ही मील आये होगे कि गगौली से आनेवाले शरफुआ ने उन्हें धर लिया। इस शरफुआ का नाम नमतुल्ला था लेकिन उत्तर पट्टी म वह शरफुआ ही कहा जाता था। बात यह है कि डिप्टी अली हाजी के यहा एक नौकर था। उसका नाम शरफुद्दीन था—इसलिए वह आसानी के लिए शरफुआ कहा जाने लगा। कोइ दो बरस काम करने के बाद वह कलकत्ता भाग गया तो डिप्टी साहब के चपरासी ने एक और लौडा ढूँढ निकाला। उसका नाम रशीद था। वह रशिदवा हो गया होता मगर डिप्टी साहब के एक चचा का नाम रशीद था इसलिए वह भी शरफुआ कहा जाने लगा। कुछ दिनो तक तो बडी गडबडी रही फिर रशीद को याद हो गया कि इस घर और इस गाँव मे उसका नाम शरफुआ है। फिर वह भी भागकर कानपुर चला गया तो डिप्टी साहब के यहाँ एक और लौडा रखा गया। उसका नाम नमतुल्ला था। चूंकि घर वाले शरफुआ को पुकारने के आदी हो गये थे इसलिए नेमतुल्ला का नाम भी शरफुआ पड गया।

गुलाम हुसन खाँ को बहादुरगज भेजने के बाद हकीम साहब को खयाल आया कि थानेदार कासिमाबाद ठाकुर हरनारायन प्रसाद के यहा भी मिठाई का जाना जरूरी है। इसलिए उन्होने शरफुआ से कहा कि वह लपक जाये और प्रसाद की मिठाई लेकर गगौली आ जाये और गुलाम हुसन खाँ से कह दे कि वह थानेदार साहब की मिठाई लेकर कासिमाबाद चले जायें।

गुलाम हुसन खाँ वहा से लौट पडे। चूँकि मुसलमान हलवाई की शर्त नहीं थी इसलिए उन्होंने झिंगुरी हलवाई के यहाँ से ताजा-ताजा इमरतियों की एक टोकरी भरवायी। इस टोकरी को एक बेगार के सिर पर लदवाकर वह कासिमाबाद की तरफ चल पडे।

ठाकुर साहब ताज़ा ताज़ा खुशरंग और रसीली इमरतिया को देखकर बहुत खुश हुए। झिंगुरी ने जब यह सुना था कि मिठाई दरोगाजी के लिए जा रही है तो उसने इमरतिया को टोकरी में सजाने के बाद उन पर गुलाबपाश से गुलाबजल भी छिड़क दिया था इसलिए टोकरी में भीनी भीनी महक भी आ रही थी।

गुलाम हुसैन खाँ दुनिया देखे हुए थे। इसलिए उन्होंने ठाकुर साहब को बातों ही बातों में यह बता दिया कि मिठाई झिंगुरी के यहाँ की है। झिंगुरी के मज़ीर की तारीफ करते करते उन्होंने यह भी बता दिया कि इमरतिया को टोकरी में खुद झिंगुरी ही ने सजाया है। यानी खुद उन्होंने या किसी और मुसलमान ने मिठाई को हाथ भी नहीं लगाया है और ठाकुर साहब बेधड़क खा सकते हैं। ठाकुर साहब ने भी खाँ साहब के इशारे को पा लिया। उन्होंने खास तौर पर समीउद्दीन खाँ को आवाज़ दी कि वह गुलाम हुसैन खाँ के खाने-पीने का प्रबन्ध करें। गुलाम हुसैन खाँ का टट्टू खास ठाकुर साहब के अस्तबल में भेज दिया गया। उनके मुश्की घोड़े ने उसे बड़ी हिकारत से देखने के बाद अपना दाहिना अगला पैर ज़मीन पर मारना शुरू कर दिया।

गुलाम हुसैन खाँ ने थाने के कुएँ पर नहाने धोने के बाद समीउद्दीन खाँ के क्वार्टर के सामनेवाले नीम के नीचे एक चारपाई पर अपना बदन सूखने के लिए फैला दिया। समीउद्दीन खाँ भी आ गये। उनका बेटा बदरुद्दीन उर्फ बदरुआ हुक्का भर लाया जिसकी नै से कलाबत्तू उधड़ चुकी थी और सिर्फ मलगोरा लाल कपड़ा रह गया था। चिलम के सुलग जाने तक तो समीउद्दीन खाँ कश लेते रहे फिर नट्टा दबाकर उन्होंने हुक्का गुलाम हुसैन खाँ की तरफ मोड़ दिया। गुलाम हुसैन खाँ जौनपुरी खमीर की महक से यूँ ही बेचैन हो रहे थे। समीउद्दीन खाँ बतन-चवन के लिए थोड़ा सा खमीरा रखते थे। वरना रोज़ाना के लिए तो वह अठमर में काम चला लिया करते थे।

गुलाम हुसैन खाँ ने दो-तीन छोटे-छोटे कश लेने के बाद एक बड़ा-सा कश लिया। जब कुछ सुरूर छँटा तो वह सोचने लगे कि अगर समीउद्दीन खाँ के घर के मुर्तुज़ा खाँ से उनकी बेटी बसरन का रिश्ता हो जाय तो कितना अच्छा हो। लड़का माशाअल्लाह से फौज में भरती है—पिछले साल मोहर्रम

म आ गया था, तो समीउद्दीन उस बड़के फाटक की पाचवाली मजलिस म लाये थे। हाथ पर का भी अच्छा है। नौहा पढने म तो उसने फुन्नन मियां के दामाद मुहम्मद हुसैन को भी मात कर दिया था। इसी रिश्ते को ध्यान म रखकर वह सालभर समीउद्दीन को तरह-तरह की चीजें यह कह कहकर खिलाते रहे कि ये चीजें खास उनकी बेटी बदरुन न पकायी है और यह कि बदरुन की शादी के बाद तो उनका बावर्चीखाना बिलकुल ही वीरान हो जायेगा। ऐसा नही था कि बदरुन को पकाना ही न आता रहा हो। भला कौन ऐसा घर होगा जिसकी लडकी को पकाना न आता हो लेकिन एहतियातन वह समीउद्दीन खा को बदरुन की पकायी हुई चीजें नही खिलाते थ। मसलन चने का हलवा वह फुम्मू मियाँ की अम्मा यानी रब्बन बी से पकवाया करते थे जो चने के हलवे के लिए दूर दूर तक मशहूर थी। गलाम हुसन खाँ उत्तर और दक्खिन पट्टी के झगड़े को भूलकर फुस्सू मियाँ के घर जाते, दरवाजे से आवाज़ देते और जब रब्बन बी दरवाज़े पर आ जाती तो वह कहते बदरुन की होनेवाली सुसराल के लिए थोड़ा सा हलवा चाहिए। अब जहाँ मामला बेटी का हो वहा पट्टीदारी का सवाल कहा उठ सकता है। और पट्टीदारी थी तो हकीम साहब से और अली हादी और हुसन अली से, न कि गुलाम हुसैन खा से। इसीलिए रब्बन बी जो गाँवभर म बूबू कही जाती थी हलवा बना देती। ज़ाहिर है कि वह गुलाम हुसन खाँ से उसके पैसे भी नही लेती थी। और फिर खर्च ही क्या होता था। सेर आधा सेर चने की दाल सेर आधा सेर ही घी सेर आधा सेर चीनी और कुछ मेवा। रहा हाथ का जस और मजा तो उसका दाम भला कौन लगा सकता है दही बड़े वह तमाम झगड़े और ज़िल्लतों को भूलकर फुन्नन मियाँ की गर कानूनी बीवी से बनवा लेते। फुम्मन मियाँ के घर फुस्सू मियाँ के घर की तरह दूध घी की नहरें तो नही बहती थी मगर कुलसुम भी दही बड़ा के नाम नही ले सकती थी। एक तो यह जमींदारी की परम्परा के खिलाफ था दूसरे यह कि बदरुन बहरहाल उनके जेठ की बेटी थी। तीसरे यह कि गुलाम हुसन खाँ हकीम साहब के नौकर थे और नौकर की बात कोई कैसे टाली जा सकती है भला। इसलिए दही बड़े उन्हें कुलसुम से मिल जाते। मांस की मीठी फुलकियां पकाने म

मे बस्ती की दूर-दूर तक कोई जवाब नहीं था—गरज कि बस्ती के हाल चाल समझने को खुश करने में सारी मगौली लगी हुई थी। हर आदमी समाउद्दीन खाँ का खयाल रखता था। समाउद्दीन खाँ भी कोई घामड नहीं थे। उन्होंने भी भाँप लिया कि क़िस्सा क्या है इसलिए उन्होंने एक दिन एक मनगाणिन को गुलाम हुसन खाँ के घर भेजा। वह यह खबर लाया कि लड़का भगवान की दया से नाक-नक्शे का अच्छा है और सुघड़ भी है। अभी यह खबर आयी ही थी कि गुलाम हुसन खाँ ने बशीर मियाँ वकील की बड़ी सरवरी की बादी हुई पसन्द की एक चादर तकिये के गिलाफ़ के साथ समीउद्दीन खाँ को यह कहकर दिये कि कढ़ाई का काम खास बस्ती ने किया है। वह तो खुरियत यह हुई कि समाउद्दीन खाँ की बीबी बजजर ज़्हातिन थी वरना मारा खेल बिगड़ गया होता क्योंकि सरवरी ने मकान में कढ़ाई की थी। बहरहाल समाउद्दीन खाँ को भी यह रिश्ता पसन्द आया। गुलाम हुसन खाँ की अपनी तो कोई हैसियत नहीं थी मगर हराम साहब का फाटक बड़ा था और फिर ऊँची हाशी मियाँ हिला थे। वह तो सिफारिश करके मुईनुद्दीन को थानेदार बनवा सकते थे। आखिर उसने उनके तक अग्रजी पढ़ रखी थी। यही सब सोचन विचारने के बाद उन्होंने यह तय कर लिया था कि नौ रबी-उल अव्वल[1] को ख्वाजाजी में हकीम साहब तक इस रिश्ते की बात भिजवायेंगे मगर समाउद्दीन खाँ के दिन को यह बात गुलाम हुसन खाँ को तो मालूम नहीं थी इसलिए जानपुरा बमार की कश लगाते हुए वह यह सोचने भी जा रहे थे कि जब समाउद्दीन मनहाणिन भेजकर लड़के को देख भी चुके हैं तो फिर निस्बत क्यों नहीं भेजते। उनके बाबा ने तो मनहाणिन की बात गाहिर भी की थी। यह तो उस दिन ही मालूम हो गया था कि वह सीने बचन नहीं आया है क्योंकि पहले तो शमिमाबाद में चलकर सौदा बचन गरीबी आना समझ में नहीं आता, और अगर वह इसलिए आयी थी तो उसे

---

[1] दस दस बरस महीने का नाम है। शाओ मुसलमान वाई महीने को मोहर्रम मनाते हैं। उनका मोहर्रम आठ रबी उल-अव्वल को खतम होता है। मोहर्रम के वाई महीनों में वे शुभ काम नहीं करते।

या तो वडके फाटक जाना चाहिए था या फिर पक्कड तल। वह ग्न दाना वड फाटका और लखपति राकिया के घरो को छोडती छाडती जब सीधी गुलाम हुसैन के घर आयी तो यह बात बिलकुल साफ हो गयी कि वह किसी और काम स आयी है। तो कासिमाबाद की मनहारिन किस काम से आ सकती थी ? इसलिए काम बेकाम बदरन की माँ न बन्रन का मनहारिन क सामन से कई बार तेजी और आहिस्ता से गुज़रवाया, ताकि वह देख ले कि बदरन लँगडी नही है। बन्रुन ने चट से मा की सूई म तागा डाल दिया, ताकि मनहारिन का मालूम हो जाय कि उसकी आख देखने ही म बन्ी नहा है बल्कि ठाक ठाक भी है। और जब खरीदारी हा गयी (पठानी न आठ आन का सामान भी खरीदा) और मनहारिन जान लगी तो पठानी ने उस एक रुपया पान खान के लिए भी दिया। असल मे परशानी यह आ पडी थी कि गुलाम हुसन खाँ की हड्डी जरा दागी थी, कोई चार पीढी ऊपर उन लोगा का रगा म उत्तर पट्टी के पक्कड तले का खून मिल गया था। करीब करीब के देहातो म यह बात सबका मालूम थी। यही वजह थी कि चार पीढ़िया स अडास पडोस मे उनका कोई रिश्ता नही हुआ था। व लोग जिला पार स नाता जाडा करत थे। रिश्ता हो जान क बाद समधियानवाला को मालूम होना ता वे बचारे अपनी शराफत की मार खाकर चुप हो जाते थ। बस गुलाम हुसन खा का फूफी की सुसरालवाला न इस बात को पी पिलाकर खत्म नही किया। उन्होने तड स तलाक दिलवा दी। फूफी बचारी मायके लौट आयी। इस तलाक के बाद स अब तक इस घराने म किसी लडका क ब्याह का सवाल नहा उठा था। बदरन पहली लडकी थी जो जवान हुई थी। इसीलिए गुलाम हुसैन खाँ का दिल धडक रहा था। और इसीलिए उन्होन समीउद्दीन की हड्डी की छान-बीन करवायी और उन्हे यह जानकर बडा इत्मीनान हुआ कि उनकी हड्डी म भा बजयान का एक पुट है।

मगर सिलसिला तो निकल वह लडकीवाल थ, मुह फाडकर रिश्ता भा ना नहा माँग सकत थ।

उस दिन भा वह बात न कर पाय बस नाम क नाचे दटे हुक्का गुडगुडात रह। समीउद्दीन खाँ म पुलिसवाला की नयी और पुरानी कहानियाँ सुनन रह

और मेरे उन्हें उत्तर और दक्खिन पट्टी के मयदा की पट्टीदारी की कहानियाँ सुनाते रहे, बचपन के ब्याह के बारे में सोचते रहे, और समीउद्दीन खाँ की बीवी के हाथों की बनायी हुई गिलौरियाँ खाते रहे जो सिगरेट की पन्नी की चाँदियों में आती थीं। मुहरवा (समीउद्दीन का बेटा) खासदान समीउद्दीन को देता। समीउद्दीन उसका ढक्कन उतारकर उसकी तश्तरी गुलाम हुसैन खाँ की तरफ़ बढ़ाते। वह एक गिलौरी कल्ले में दाब लेते तब समीउद्दीन खाँ ढक्कन के ऊपरी हिस्से में बने हुए तम्बाकूदान का ढक्कन खोलते और अहमद हुसैन ठिकेदार हुसैन के कारखाने की सियाह चमकदार तम्बाकू की सुर्ख चारखाने पर चादर की तरह पड़ जाता। गुलाम हुसैन खाँ एक चुटकी तम्बाकू मुँह में डालते और उँगलियों में लगी रह जानेवाली तम्बाकू को चारखाने की पट्टी पर रगड़कर अपनी चुटकी को साफ़ कर लेते। फिर समीउद्दीन एक गिलौरी खाते और कोई नयी कहानी शुरू हो जाती।

जब ज़रा दिन ढला और ठाकुर साहब नंगे बदन केवल धानी की लुंगी की तरह बाँधे हुए रूख के नीचे पड़ी हुई आरामकुर्सी पर विराजमान हो गये और हज्जाम का लौंडा उनके पाँव दबाने लगा तो गुलाम हुसैन खाँ ने उनसे आज्ञा माँगी। थानेदार ठाकुर हरनारायन प्रसाद ने उन्हें जाने की इजाज़त दी और कहा 'सारे माहौल में वह ताज़गी है कि इस मिठाई की कोई ज़रूरत नहीं था। मैं तो इसलिए खुश हूँ कि कामिला की फाँसी का लगाया हुआ बकरा आज छूट गया।'

'अब आप क्या फ़रमाते हैं ठाकुर साहब?' गुलाम हुसैन खाँ ने टुकड़ा लगाया। 'क़ानून तो क़ानून होता है। अंग्रेज़ कलक्टर साहब बहादुर नाइन्साफ़ी तो कर नहीं सकते। वह ज़रूर क़ातिल रहा होगा।'

यह सुनकर ठाकुर साहब मुस्करा दिये क्योंकि यह बात उन्हें और गुलाम हुसैन खाँ दोनों को ही मालूम थी कि कामिला को फाँसी की सज़ा कलक्टर साहब बहादुर ने नहीं बल्कि हिन्दुस्तानी गिरधारीलाल श्रीवास्तव जज ने दी थी और फिर हाईकोर्ट के जस्टिस मिश्रा ने दी थी। मगर राज्य अंग्रेज़ का था। कलक्टर अंग्रेज़ था इसलिए श्रीवास्तव साहब या मिश्रा साहब का भला क्या ज़िक्र हो सकता था कि सारे मामले में कुछ बिना किसी सबब अपनी हानी

जदी, बी०ए० एल एल० बी० ने किसी आसामी को फासी की ऐसी सजा देने, जो प्रीवी कौसिल से भी बहाल रहती।

वसे गुलाम हुसैन या को यह भी मालूम था कि ठाकुर साहब न कलक्टर साहब के माली स रिश्वत खायी है और इसके बाद उन्हाने कामिला के खिलाफ झूठी गवाहियाँ गढा ! लेकिन जाहिर है कि यह कहने की बातें नही हाती। यह बात हकीम अली कबीर और डिप्टी अली हादी को भी मालूम थी। लेकिन उन लोगा ने भी ठाकुर साहब से कुछ नही कहा। क्याकि कहने म अपनी ही हेटी हाती है। और दक्खिन पट्टीवालो को पता चल जाय तो व अलग ले उडें। लेकिन हकीम साहब ने ठाकुर साहब को माफ नही किया था, इसीलिए उन्ह गुलाम हुसन खा का वहा इतनी देर रुक जाना कुछ अच्छा नही लगा। ग्यारह तारीख का सद्दन वापस जानेवाले है और चार हा चुकी है और अब तक काई तयारी नही हुई है। सद्दन ने कहा भी "आप तो खामखाह घबरान लगते है। एक तो यह कि अभी मेरे जान म सात दिन है और फिर तयारी ही क्या करनी है ?'

आप क्या जान ! यह कहकर हकीम साहब एक मरीज की नब्ज दखन लगे। फिर उन्हाने बठे ही बठ उस्ताद मिया को आवाज दी जा इमाम बाडे म अगे रात की मजलिस क लिए मरसिया छाँट रह थे, हे उस्ताद ! हइ नुसखवा बाध दथा। फिर वह मरीज की तरफ मुडे। पहले उन्हान उसकी बहन को गाली दी और तब कहा अब जउन तू कुछ अट शट खात्या न त ट हा जाय म कउनो कसर ना रह जय्यहा। उन्होन एक कागज पर कुछ दवाएँ लिखकर वह कागज मरीज के मुह पर फेंक दिया। मरीज दवा खान की तरफ चला गया। हकीम साहब हौज क किनारे बैठकर उस हाथ को माफ करने लग जिस हाथ म उन्हाने एक काफिर—और वह भी नीची जात के एक काफिर का हाथ छुआ था। और तब उन्ह यह याद आया कि सद्दन न कुछ कहा था। इसलिए वह फिर वहीं से शुरू हा गये, द काँगरेस वाले न आसामियन का दिमाग इवन्नम म खराब कर दिहिन हैं भाई गुला समवे ई गांधी म हकीम साहब न दर तक गाँधी और नेहरू वगरह को बददुआएँ दी अब ई ससुरवा मारा कलक्टर साहब का माली है अउर

अपने दरवाज़े की शामवाला मजलिस पा सक्ते हैं। मगर अशरफुल्ला ख़ाँ 'अशरफ' की मजलिस रात की नमाज़ के बाद शुरू हुई। लेकिन वहाँ एक बार पहुँच जाने के बाद यह भी मुमकिन नहीं था कि गुलाम हुसैन ख़ा मजलिस किये बिना लौट जाते। मगर मग़रिब की नमाज़ से पहले उन्होंने एक बार बड़ा हिम्मत करके ख़ाँ साहब से पूछ ही लिया, 'सरकार की मजलिस तो ज़ुहर के बाद शुरू हो जाया करती है।

ज़ुहर के बाद का तो ऐलान करता हूँ," अशरफुल्ला ख़ा ने कहा, "क्योंकि अगर दशा बाद का ऐलान करूँ तो लोग सुबह की नमाज़ के वक्त आयेंगे। इस गाँव में तो कोई मेरे सिवाय मुसलमान है नहीं। भादों चावनपुर, गुसाँईंपुर समडी के लोग अपनी अपनी मजलिस करके चलते हैं। तीन-तीन, चार चार मील से चलकर आते हैं बिचारे, इसलिए इशा तक इकट्ठा हो पाते है।"

यह सुनकर गुलाम हुसैन ख़ाँ हुक्का पीने लगे कि इसके सिवाय वह कर भी क्या सक्ते थे! तम्बाकू घर का बना हुआ था और अननास का ख़मीरा बहुत अच्छा था। मगर उसे दो रसा बनाने में कड़वाहट ज़रा ज़्यादा हो गयी थी। इसलिए हुक्के को एक तरफ सरकाकर उन्होंने जेब से रफी अहमद बीड़ी का बण्डल निकाला। पहले उन्होंने वह बण्डल ख़ान साहब सलीमपुर के सामने पेश किया। ख़ान साहब ने जब उन्हें बीड़ी पीने की इजाज़त दे दी तब उन्होंने अपने लिए एक बीड़ी सुलगायी और फिर वही उत्तर पट्टी और दक्खिन पट्टी की कथा शुरू हो गयी। यह बात छुपी ढकी नहीं थी कि सलीमपुर के ख़ान साहब दक्खिन पट्टीवालों के दोस्त थे इसलिए बोले गुलाम हुसैन मैं था नहीं वरना ख़ुदा की क़सम उत्तर पट्टी पर गधे का हल चलवा चुका होता।

उत्तर पट्टी की ज़मीन ज़रा सख़्त है सरकार! गुलाम हुसैन ख़ाँ ने कहा।

अशरफुल्ला ख़ाँ अशरफ इस कदर ज़ोर से हँसे कि सामने चारा काटने वाले का हाथ रुक गया। वाले पठान हो ना! बात बरदाश्त नहीं कर सकते।

यह बात नहीं है सरकार!'

'भई तुम ता जानते हा हो कि मैं सिर से ताज़ियदारी हो के खिलाफ हूँ। लेकिन बाप-दादा इसे करते आये हैं, इसलिए हर साल यह गुनाह करता हूँ कि उनकी रूहों को तकलीफ न हो और लोग यह न कहें कि गोरी बाटनी पड़ता था इसलिए खान साहब पिचक गये। दस मजलिसें कर लेता हूँ कि दुनिया की ज़बान बन्द रहे। रोज़ कोई दो हज़ार रोटियाँ बाटनी पड़ती हैं। इसका को अब्बा मरहूम के ज़माने तक सिवाय के दस दग उतरते थे। मैंने शौक और बढ़ा लिया कि ना साला, ताज़ा और समय लो कि मुझे अपने बाप-दादा का नाम अपने ईमान से ज़्यादा प्यारा है। लेकिन पट्टीवाला म हमारी पुरानी रस्म है और भई हम ठहरे पठान लोग। हमारे यहाँ तो दोस्ती और दुश्मनी के अलावा कोई और पैमाना ही नहीं होता। दागली हरकतें करना शर्मा और नीच जानवरों का काम है। फुनन मियाँ से तो मेरा पुराना याराना है वह भी अब्बा मरहूम म अपनी गज़ल ठाक करवाते थे। मैंने भी उनके अब्बा मरहूम मार अमजद हुसन म कुश्ती और तलवार और नक़्श या फन सीखा था, इसलिए गुलाम हुसन। लाठिया तो एक नार और बनेगा और जिसम मन न छूट, वह मर्द है '

इन्हीं बातों में रात की नमाज़ का वक़्त आ गया। अशरफुल्ला खाँ न नामनवाली मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़ी। उनके खानदानवाले सफ़ बाँध कर नमाज़ पढ़ने के लिए खड़े हो गये। लेना हुसन नमाज़ पढ़ाने के लिए आगे खड़ा हुआ। वह जुलाहा था। मगर उम्र म सबसे बड़ा था इसलिए घर के नौकर होने के बावजूद भी अपनी उम्र की वजह से नमाज़ वही पढ़ाता था, और मालूम पठानों के इस खानदान को दिन में पाँच बार उसके पीछे हाथ बाँधकर खड़ा होना पड़ता था।

गुलाम हुसन सबसे भाखा थे इसलिए वुज़ू करके उन्होंने वहीं आँगन म पड़े हुए एक मुसल्ले पर नमाज़ पढ़ी। नमाज़ के बाद लोग इकट्ठा होने लगे। शहर के हिंदू मुसलमान सभी आये। मलीमगढ़ी का लम्बा-चौड़ा आँगन खचाखच भर गया। अली हुसन ने नहानेवाला पलंग। मलीमगढ़ी की मजलिसों में बकरा क्या बात का कोई महत्त्व नहीं था। असली चीज़ तो रौशनी लगा थी। क्योंकि मजलिस की रोशनी का बनाई का हंगामा शुरू हुआ

और कोई तीन घंटा तक रोटी बँटती रही। तब गुलाम हुसैन खाँ को हकीम साहब के घरभर का हिस्सा दिया गया और वह अपने टट्टू पर सवार होकर गंगौली की तरफ चल पड़े। दक्खिन पट्टी के दोनों दरवाजों के लिए हिस्सा बँधवाकर दो बेगारों के सिर पर रखवा दिया गया। वे दोनों भी गुलाम हुसन के टट्टू के साथ हो लिये।

नया चाँद निकलकर डूब चुका था। गहरी अँधेरी रात थी। इसलिए गुलाम हुसन खाँ ने भी उन दोनों चमारों के साथ को गनीमत जाना। उन्होंने अपने टट्टू की बाग ढीली छोड़ दी—वह टट्टू की पीठ पर बैठकर पैदल ही चलने लगे।

अब यह बिलकुल एक इत्तिफाक है कि भग्टोली का एक गिरोह जो अपने 'धन्धे' पर निकला हुआ था उधर ही से गुजरा। चिरौंजी ने गुलाम हुसन खाँ को पहचान लिया। उसके तमाम रोंगटे खड़े हो गये। बात यह है कि वह फुन्नन मियाँ का चहेता शागिर्द था और उनके बाद अखाड़े का खलीफा भी होने वाला था। उसने गुलाम हुसैन खाँ को ललकारा "हमारे मियाँ के सजा दिलवा के केहर जान बाड़ा हो खान साहिब!'

गुलाम हुसैन खाँ ने यह आवाज पहचान ली। वह सन्नाटे में आ गये। कोई यह बात नहीं थी कि वह कायर रहे हों मगर वह बूढ़े हो चुके थे और चिरौंजी की लाठी दूर-दूर तक मशहूर थी। सबसे बड़ी बात यह थी कि वह अकेले थे और चिरौंजी के साथ एक गोल था। कहने को तो खाँ साहब के साथ भी दो आदमी थे लेकिन वे दोनों सलीमपुर के बेगार थे और चिरौंजी से उनकी बात ठीक कही थी। फुन्नन मियाँ की सजा गुलाम हुसन खाँ की गवाही पर ही हुई थी।

सलीमपुर के दोनों चमार चुपचाप खड़े रहे। चिरौंजी के साथियों ने गुलाम हुसैन खाँ को घेर लिया। लेकिन जब चिरौंजी ने गुलाम हुसन खाँ के टट्टू की लगाम पर हाथ डाला तो उन दोनों चमारों ने गौगनी रोटियों के टोकर जमीन पर रखकर लाठियाँ सँभाल लीं।

'ए चिरौंजी भैया! ई ना होई!

चिरौंजी ने उन्हें बहुत समझाया कि व बात म क्या पड़त हैं वे सलीमपुर के हैं और सलीमपुर के खान साहब से फुन्नन मियाँ का याराना है मगर

वे दोनों नहीं माने। उनका कहना यह था कि अभी तो गुलाम हुसैन खाँ उनके साथ हैं और अगर उन्होंने उन्हें फिर जाने दिया तो उनके 'खान साहिब' उनकी चमड़ी उधेड़ डालेंगे। और फिर यह तो बड़ी कायरता की बात है कि एक 'बूढ़ पुरनिया' को इस मुस्टण्डा ने घेर रखा है।

या यह सुनी चिरौंजी नया कि खैरियत चाहन वाले त हुई लगाम्या छोड़ देइँ।

मगर चिरौंजी खैरियत चाहनेवालों में नहीं था। उसने लगाम तो नहीं छोड़ी मगर हाथ छोड़ दिया। बाईस-तेईस बरस का चमचमाता हुआ छोकरा एक तरफ लुढ़क गया। फिर चिरौंजी और उसके साथियों ने उन्हें लाठियों पर धर लिया। रोगनी गगरियाँ बिखर गयीं, और फिर कुचल-कुचला गया और मिट्टी में मिल गयीं। टोकरे टूट गये। गुलाम हुसैन खाँ का टट्टू बोतल होकर गोली की तरफ भागा। खान साहब के हाथ में जो दो हाथ की छली थी वह उसी में विनोद के हाथ निकालने लगे। गनीमपुर के दोनों चमार भी बड़ी जिगर से लड़ रहे थे मगर चिरौंजी फिर फुन्नन मियाँ का पट्ठा था वह चमारों पर हमला नहीं कर रहा था वह सिर्फ उनके वार बचा रहा था और उन्हें समझा रहा था, पगला गइल बाड़ा लोग। एक ठो हुसैन के पर देखऽ न निचियावन चले जयहा लोग

चिरौंजी के खानदानों ने गुलाम हुसैन खाँ का घर रखा था। चिरौंजी जानता था कि जब तक गुलाम हुसैन खाँ की साँस नहीं टूटती वह चार नहीं गा सकता। यह बात उसके खानदान भी जानते थे इसलिए वे गुलाम हुसैन खाँ का बोझ लग गए का तरह घेरा रहे थे। कोई आधा पेट की भिड़ी हुई लड़ाई के बाद गनीमपुर के चमारों की हिम्मत टूटने लगी। खाँ साहब की हिम्मत भी जवाब दे रही थी। चेहरे का तेज का साँस उखड़ रही थी। बस करीब था कि वे ठीगा मार खा जायें कि बारिमपुर के ठाकुरों का पुत्तर आ गया। हुआ यह कि गुलाम हुसैन खाँ का टट्टू जो गगौना की तरफ भागा उस गाँव में बारिमपुर के चौधरी ने पहचान लिया। चौधरी हकीम साहब के मित्र थे। फौरन समझ गये कि गुलाम हुसैन खाँ फिर फँसे। बस वह अपने मान बेटा और अगरहद मजारा का लेकर दौड़ पड़े। चौधरी और फुन्नन मियाँ एक

ही गुरु के चेले थे। यानी चौधरी न भी फुन्नन मिया के बाप ही से लकड़ी चलाने की कला सीखी थी। इसलिए चिरौंजी यू भी उन पर हाथ नहीं उठा सकता था। चौधरी को देखते ही उसन अपना हाथ रोक लिया। चाधरी बोले, तू त बड मरद निकल्ला, चिरौंजी ! एमा बूढ पुरनिया के अकेल पा गइला त सूरमा बन गइल बाड़ा—तनी अब चलावा लकडी हमहूँ त देखी कि फुन्नन का का सिखलउले बाड़ें !

दोना चमार और गुलाम हुसन खा अपन बदन का खून पोछन लग। चिरौंजी न चौधरी की बात का कोई जवाब नही दिया तो चौधरी ने उसे फिर ललकारा। तब चिरौंजी का बोलना पड़ा "दुइये बरस की त बात बाय ठाकुर साहिब ! तनी मिया के छुट्टे के आ जाय देई फेर सिहल जाइ "

उसका ठाकुर साहब के जवाब का इन्तजार नही किया। वह अपने आदमिया को लेकर चला गया। चौधरी साहब चाहत तो उसे घेर लेते, मगर फुन्नन मिया के किसी चेले पर हाथ उठाना उन्हान अपनी शान के खिलाफ जाना। चौधरी न सोचा कि अगर इस जगह उन्हाने चिरौंजी को घेर लिया तो कल फुन्नन मिया के सामन आँख नीची हो जायगी इसलिए चौधरी ने उन्हे चला जाने दिया।

गुलाम हुसन खाँ चौधरी के साथ बाकिरपुर चल गये। दोना चमार गगौली लौट गये। उन्हाने उसी वक्त गढी म खबर भिजवायी। खान साहब अभी साथ नहीं थे निकल आये। अपन असामियो का घायल देखकर वह आगबबूला हो गये। बोले आस पास म एसा दिलेर कौन पैदा हो गया है जिसन हमारे आदमिया पर हाथ उठाया !

चमारो म स एक न मारा कथा सुना डाली। वह यह बताना नहीं भूला कि चिरौंजी न भरसक उन्ह नही मारा। खान साहब न उन दोना को अपनी खास जेब मे एक रुपया इनाम दिया और शकूर को यह हुक्म देकर वह अन्दर चले गये कि दोना चमारो को आधा आधा पाव तम्बाकू दे दी जाय।

अन्दर जाकर वह फिर लेट गये और दो बाँदियाँ चम्पी करने लगी। बगल वाली मसहरी पर उनकी बेगम सय्यदानी उफ मुन्नन गाय की बच्ची का दूध

पिला रही थीं। उनकी गहरे गेहुँए रंग की छातियाँ दिखायी दे रही थीं। लेकिन वह गहरी नींद में थीं। बच्ची रोयी तो उन्होंने नींद ही में अपनी छाती उसके मुँह में दे दी थी। बच्ची चुप हो गयी। उनका दाहिना हाथ थोड़ी देर तक उसे थपकता रहा। फिर वह भी नींद के बोझ से एक तरफ़ गिर पड़ा।

यह महदन ख़ान साहेब से कोई पाँच बरस बड़ी थीं। बहुत ही बदसूरत थीं। लेकिन सगी चचेरी बहन थीं और अपने बाप की इकलौती थीं। आठ आने जमींदारी का मामला था। इसलिए अशरफ़ुल्ला ख़ाँ के पिता ने महदिन्निसा उर्फ़ महदन के पिता से राय बात की और अशरफ़ुल्ला ख़ाँ महदन से ब्याह दिये गये। उन्होंने कोई एतराज़ इसलिए नहीं किया कि उन्हें तो शौक़ ही और था। लेकिन उन्होंने सिर्फ़ बतन में कंजूसी नहीं दिखायी। महदन के पेट से नायह-नाइ अठारह बच्चे पैदा हुए। सबसे छोटा बच्चा सवा साल का था और सबसे बड़ी बच्ची इनाम बेगम थी और जो ख़ुद माशाअल्लाह से आठ बच्चों की माँ थी। उसका बेटा बड़ा लगभग बाईस बरस का था और फ़ौज में नौकर था। उस लड़के का नाम नानी के नाम पर सरदार रखा गया। लेकिन वह सद्दू पुकारा गया। यह सरदीन बड़ा ही मनमानग था। शक्ल-सूरत और हाथ-पाँव का भी अच्छा था। ख़ान साहेब उसे बहुत चाहते थे। जब से वह फ़ौज में भरती हुआ था तब से तो वह उसे और भी चाहने लगे थे। इसलिए वह परेशान थे। क्योंकि उत्तर और पश्चिम-सरहद के मुहाज़ का हंगामा सुनने जो वह शहर गये तो बशीर मियाँ ने उन्हें पहली ख़बर यह सुनायी कि जरमन ने जावा ले लिया है। सिंगापुर तो ख़त्म भी हो चुका है। अब सरकार बरतानिया से ठनी हुई है और सरकार बरतानिया का हाल पतला है। सरदीन सरकार बरतानिया की ही फ़ौज में था। इसलिए ख़ान साहेब परेशान थे और परेशान होना भी चाहिए था। वैसे सारे ख़ानदान में बड़ा भी एक लड़का था। ख़ुद ख़ान साहब के दसों सग्गी बच्चियाँ हुईं और जो लड़का हुआ भी, वह अभी किसी गिनती शुमार में नहीं था। मगर चाहे पाँच माँ का दूध पी रहा था। वे अपनी दो बच्चियों का ब्याह कर चुके थे। कुल मिलाकर सौतेली नवासियाँ हुईं और एक नवासा। इसलिए ज़ाहिर है कि सरदार उनकी आँखों का तारा था। उसकी तमाम शरारतें माफ़ थीं

थी कि उन्हीं की किसी बेटी से उसका ब्याह हो जाय। इस सवाल पर खालाओं में कई बार तकरार भी हो चुकी थी।

सलीमपुर के खान साहब नौकरी के खिलाफ थे। कहीं शरीफों के लड़के भी नौकरी करते हैं। उत्तर पट्टीवालों को जो वह अच्छी निगाह से नहीं देखते थे उसकी एक वजह यह भी थी कि वहाँ के सैयदों में एक जमाने से नौकरी की परम्परा चली आ रही थी। डिप्टिआयी हो या कलट्टरी, नौकरी फिर नौकरी होती है। मगर सरुद्दीन के ददिहाल में फौजी नौकरी की परम्परा सदियों से चली आ रही थी। उन लोगों का कहना था कि पठानों को फौज से लगे रहना चाहिए। क्योंकि पठान मौत के सिवाय और किसी चीज़ से नहीं खेलता। यही वजह है कि अशरफुल्ला खाँ सरुद्दीन की नौकरी का विरोध न कर सके। उनके बड़े समधियान के लोग बड़े जमींदार थे लेकिन रोटी में फौज की तनख्वाह के पैसे मिलाना गौरव की बात मानते थे। गुलज़ार खाँ तोखी यानी सरू के परदादा सन् सत्तावन की क्रांति में लगे हुए लोगों में से थे। उन्होंने मौलवी अहमदुल्ला के साथ लखनऊ पर धावा किया था। उनकी गर्दन पर गदहे का हल इसलिए नहीं चला कि उनकी ससुरालवालों ने अंग्रेज़ों का साथ दिया था। उनकी सिफारिश पर गुलदार खाँ की जान भी बची और जायदाद भी। लेकिन गुलज़ार खाँ ने अपनी ससुरालवालों को कभी माफ नहीं किया। वह अपनी ससुराल तवारकपुर की तरफ मुँह करके सोते भी नहीं थे और न हो किसी को इसकी इजाजत थी कि वह उनके घर में तवारकपुर का नाम ले। सरू की परदादी आयशा खानम अपने मायकेवालों को एक नज़र देखने के लिए तड़प-तड़पकर मर गयी। गुलज़ार खाँ तोखी के बड़े बेटे हिजब्र अली खाँ तोखी अंग्रेज़ी फौज में कर्नल होकर मरे और उनके पोते गज़नफर अली खाँ तोखी सन् चौदह की लड़ाई में काम आये और उन्हें विक्टोरिया क्रास भी मिला। फारूक के एक चचा समसाम अली खाँ तोखी मेजर जनरल थे और खुद फारूक लफ्टिनेंट और बशीर मियाँ कहा करते थे कि सरकार बरतानिया का हाल पतला है

लड़ाई की खबर सुनकर गुलज़ार खाँ तोखी ने तो अपनी सफेद पैबन्दी मूँछों पर ताव दिया। उनकी छाती तन गयी। लेकिन अशरफुल्ला खाँ अशरफ

को इस खबर ने परेशान कर दिया। फखरू ननिहाल ही में था। वह भी इस खबर को सुनकर खुश हुआ और बोला नाना मियाँ। अब एक विक्टोरिया क्रास मैं लूँगा।

अशरफुल्ला खाँ ने तो कोई जवाब नहीं दिया, वह बाहर चले गये। हाँ नाना ने फखरू को बहुत समझाया। थोड़ी देर तक तो फखरू बहस करता रहा फिर उकताकर वह भी बाहर चला गया। पठानी झट-से मस्जिद में गयी और रतजगा मान आयी। इसमें तसकीन न हुई तो आँख बचाकर लकड़ी के उस ताज़िये के पास गयी जो अभी सजाया नहीं गया था। और इधर-उधर देखकर चुपके-से बोली, "हे इमाम साहब! फखरू के नाना से मत कहिएगा कि हम आपसे कुछ कह आये हैं। बाकी फखरू को लाम पर जाये से रोक दीजिए। परसाल हम आप पर नया कपड़ा चढ़ा देंगे।"

ताज़िये पर चुपके से मन्नत मानकर वह घर में भाग गया। मगर अभी उन्हें पूरा इत्मीनान नहीं हुआ था। उन्होंने अपनी पुरानी नौकरानी नसीबा को सवा रुपया देकर बाबा के मठ पर भेजा कि वह वहाँ उनकी तरफ से मिठाई चढ़ा आये।

मगर अशरफुल्ला खाँ ये मन्नतें नहीं मान सकते थे क्योंकि वह वहाबी मुसलमान थे और उनके खयाल में मन्नत मानना गुनाह था। लेकिन इशा की नमाज़ में दुआ उन्होंने भी माँगी, "बारे खुदाया! अगर फखरू लड़ाई से ज़िन्दा सलामत लौट आया तो अब की बकरीद पर तीन गायें काटूँगा और दो ग़रीब मुसलमानों को हज करवाऊँगा और ताज़ियेदारों का गुनाह वर कर दूँगा।"

वह लेटे हुए यही सोच रहे थे कि मन्नत कहाँ हल्की तो नहीं रह गयी और पाँव दबानेवाली दोनों लौंडियाँ उनके सिरहाने से बेखबर उकतायी उकतायी-सी उनके पाँव दबाये चली जा रही थीं। क्योंकि उनमें से एक को पिछवाड़ेवाली बागान मस्जिद में फखरू से मिलना था और दूसरी उसकी राज़दार थी और पिछली रात उसी मस्जिद में फखरू से मिल चुकी थी।

नमक

सुलैमान एक छतनार दरख्त की तरह थे, जिसके साये में बच्छन को बढ़ने का मौका नहीं मिलता था। लेकिन सुलैमान मियाँ जो सालभर के लिए जेल गये तो बच्छन तड़ से जवान हो गयी। उसे बाप के रंग के साथ साथ माँ का नमक भी मिल गया था। वह काजल नहीं लगाती थी लेकिन ऐसा मालूम होता था जैसे सुबह उठते ही थपटिया बो ने उसकी आँखों में बड़े प्यार से काजल डाला है। उसने कद भी खूब निकाला था। उसकी कमर इतनी पतली थी कि ख्वामख़ाह हाथ में लेने को जी चाहने लगे और कमर के नीचे चौड़े कूल्हों के खम यूँ लगते थे जैसे प्याज के कोरे कूँडे हों। उसका सीना तो दुपट्टे के काबू ही में नहीं आता था। दसहरी के कोशों की तरह भरे भरे तरोताज़ा होंठों से होकर जो आवाज़ निकलती थी वह इतनी रसीली होती थी कि रस अब टपका और तब टपका और उसका जूड़ा इतना बड़ा होता था कि नईमा बी का सिर छोटा मालूम होने लगता था।

नईमा बी उससे बहुत जलती थीं और थपटिया बो तो उसके हुस्न से डरने लगी थीं। गाँवभर में बच्छन के टक्कर की एक भी लड़की न थी। वह इतनी ख़ूबसूरत निकली थी कि मौलवी सय्यद बेदार हुसन ज़ैदी सदरुल्फ़ाज़िल के बदन में भी गुदगुदी होने लगती थी और वह यह सोचने लगे थे कि हदीस की फ़िक्र में अपनी ज़िन्दगी ज़ाया करने में कोई फ़ायदा नहीं। एक रोज़ उन्होंने हकीम साहब से कहा, "बुढ़ौती आ गयी भाई, कबीर इतना बड़ा घर रखने को दौड़ता है।" हकीम साहब ने बड़ी जवाब दिया जो मुनासिब था, "बारे मैं तो कहता हूँ सुना कर लो।"

"यही मैं भी सोचता हूँ। सुलैमान की लड़की बच्छनिया कैसी रहेगी?"

हकीम साहब को यह रिश्ता पसन्द नहीं आया। क्योंकि वह यह नहीं चाहते थे कि उत्तर-पट्टी की एक जायदाद का कोई हिस्सा दक्खिन-पट्टीवालों के हाथ आये। लेकिन जब उम्र ज़ाया करने के बाद मौलवी बेदार हुसन

सर्फ़-फ़ाज़िल को शादी का ख़याल आया था, तो वह बदनी से पट्टीदारी के मामलात नहीं छोड़ सकते थे।

बात यह थी कि मौलवी बशीर कोई बीस साल से अपने घर में तनहा रहते थे। चालीस साल पहले उनकी भावज का इन्तकाल हुआ था। एक भतीजी थी आसिया। उसकी भी शादी हो गयी थी मुनहरा के अली अकबर मियाँ से। उसकी शादी के कुछ ही दिनों बाद मौलाना के बड़े भाई का भी इन्तकाल हो गया और मौलाना घर में बिलकुल अकेले रह गये। यह कोई बीस साल पहले की बात है।

मौलाना ने शादी इसलिए नहीं की कि उनके वालिद क़िबलाओ-काबा हान की [illegible] तक मौलाना थे। वह नसाब भी थे। उन्होंने जो हिन्दुस्तान के ऐसे ख़ानदानों के नसबनामों को खँगाला तो मालूम हुआ कि अब कोई बचा ऐसा घराना है ही नहीं कि जिससे वह दूसरी बहू लाएँ। चुनाँचे मौलवी बशीर हुसैन सर्फ़-फ़ाज़िल एक बड़े-से मकान में ज़िन्दगी को भुगतने के लिए तनहा रह गये। दिन तो ज्यों-त्यों गुज़र जाते लेकिन रातें परेशान करतीं। बाहरी मकान में तो उनके चरवाहे और दो नौकर सोते। लेकिन वह रस्म-रिवाज के मुताबिक़ ज़नानख़ाने में सोया करते थे—एक ऐसे ज़नानख़ाने में जो बराएनाम ज़नानख़ाना था। चुनाँचे मेहराबों के ख़म गयी रात तक उनका मुँह चिढ़ाया करते थे।

मौलाना के मकान का ज़नाना हिस्सा ख़ासा लम्बा-चौड़ा था। क्योंकि जब मौलाना के मूरिसे-आला ने यह मकान बनवाया था तो उन्हें इसका ख़याल भी नहीं आया था कि एक ज़माने में मर्दों का ऐसा अकाल पड़ेगा कि बशीर को कोई लड़का नहीं मिलेगा। और मौलवी बशीर इसी वीरान ज़नानख़ाने में ख़ैर-तनहाई के दिन गुज़ार रहे थे। गया अहीर की लाठी खाने के बाद तनहाई का यह दर्द इस क़दर बढ़ गया था कि दुलरिया भंगिन उनकी निगाहों की हरारत में पिघल-पिघल जाती थी। लेकिन मौलाना से देखते रहने के सिवाय जब और कुछ न हो सका तो दुलरिया भी उनसे नफ़रत करने लगी। दुलरिया का मियाँ महाबीर उससे बारह साल छोटा था। दुलरिया बाईस-तेईस साल की कमा-धमाई नहीं था। कोई चार साल पहले जब वह ब्याहकर आयी थी

तभी से उसने गंगौली में छोटी मोटी हजारों नहीं सैकड़ों और सैकड़ों नहीं तो पचासों रवायतों की बुनियाद जरूर डाली थी। वह जिधर से टोकरा लेकर गुजर जाती उधर गन्नों की शाखों में आँखों की हजार कलियाँ खिल जातीं, दरवाज़े बाँह बन जाते और बँसखटों में नब्ज़ धड़कने लगती। हद तो यह कि इससे काम करवाने के लिए कई राकियों और जुलाहों ने अपने अपने मकानों में पाखाने बनवा डाले। वरना सैयदानियों के अलावा तमाम औरतें गोल बनाकर लोटे लेकर खेतों में जाती थीं और वहाँ पास पास बैठकर सासों की शिकायत करती थीं या सरगोशियों में अपने ख़ाविंदों और महरमियों की बातें करती थीं। कभी कभी कोई लड़की अँधेरे में जरा दूर सरक जाती थी तो कोई नयी बेजबान कहानी बन जाती थी। सिर्फ सैयदानियों के पैरों में इन कहानियों की जंजीरें नहीं थीं क्योंकि वे खेत नहीं जाती थीं बल्कि उनके लिए घरों में गंदे मढ़े हुए संडास थे। लेकिन ऐसा नहीं था कि सैयदानियों के हिस्से में कहानियाँ ही न आयी हों। फलाँ मियाँ की बीवी अपने भतीजे से फँसी है। फलाँ को उनके देवर ने रख छोड़ा है। लेकिन इसमें शक नहीं कि इन कहानियों में भी हड्डी का खयाल रखा जाता था। यानी यह कभी नहीं हो सकता कि फलाँ की बीवी फलाँ राकी या जुलाहे से फँसी हुई है।

मौलवी बेदार हुसन मदरुलफाज़िल के हिस्से में कोई कहानी इसलिए नहीं आयी कि उनके जनानख़ाने में कोई औरत ही नहीं थी। आसिया की माँ का इंतकाल चूँकि बचपन ही में हो गया था इसलिए उसकी परवरिश उसके ननिहाल ही में हुई थी। जिस घर में कोई औरत ही न हो उस घर में कोई औरत किस बहाने में जाये। चुनांचे जब दुलरिया आयी भी तो मौलवी बेदार बेचारे की समझ में न आया कि वह उसे देखते रहने के सिवाय और क्या करें।

इसलिए दुलरिया इनसे नफ़रत करने लगी और किसी न किसी तरह उसने मौलाना के घर अपनी बेवा ननद को लगा दिया जो कोई पचास साल की निहायत ही बदसूरत औरत थी।

मौलाना साहब बेचारे बिलकुल ही मायूस हो गये थे कि एक रोज़ उन्होंने फुन्नन मियाँ के घर से झाँकती हुई बच्चन को देख लिया, जो सामने हो कबड्डी खेलनेवाले लड़कों को देख रही थी। ज़ाहिर है कि मौलाना उस मुड मुडार

नहा रख सकत थ, इसलिए वह बन्द चल गय । लकिन फिर लगातार कई दिनों तक बछनिया का ख्याल लाल चींटिया का तरह उनक बदन मे लिपटा रहा ।

हकीम साहब को यह तफ़सीलात नहा मालूम थी लकिन उन्होंने अपने बाल धूप म नहा सफेद किय थ । उन्होंने जब यह देखा कि पचास बरस क मौलाना एक ग़ैर-सैयद और हरामी लड़की क बार म बातें कर रह हैं तो उन्होंने जान लिया कि दाल म कुछ काला ज़रूर है । इसलिए उन्होंने मौलवी बशीर क सवाल का फ़ौरन कोई जवाब नहा दिया ।

'मगर वह तो हरामी है ।' आख़िर उन्होंने एतराज़ का एक पहलू निकाल लिया ।

'इसमें उसका कौन कुसूर है ?' मौलवी बशीर ने कहा ।

'लोका कसूर तो माँ का है बाकी लोग का कहिए ।'

'हदीस में लिखा है कि हरामी लड़का म निकाह नाजायज़ है

आख़िर हमारे मुसलमान मआशिरे म कोई तो न पाता है । हुआ कुराने-हदीस न पढ़त रह ।

'न को कहा ई ना लिखा है कि हरामियन म वियाह ना कर को ,'

हकीम साहब को यह मालूम था कि यह कहीं नहा लिखा है कि हरामियों से शादी न की जाय । फिर भी उन्होंने सवाल किया क्योंकि लिखा हो या न लिखा हो लेकिन यह बात कुछ अच्छी नहीं मालूम होती कि कोई सैयद ख़ानदान का किसी हरामी लड़की से शादी करे और हरामी भी कैसी कि जिसकी माँ धमाइन हो और बाप भी मकिरान-गर्दा की चमाइन हो । चूँकि हकीम साहब ये बातें नहा कह सकते थ इसलिए मौलवी बशीर हुसन सदर फ़ाज़िल ने उन्हें ख़ामोश कर दिया । तब पाया कि मुसलमान की ननिहालवालों के ज़रिये बात पक्की हो जाय । चुनांचे रजब अली मियाँ की मजलिस में शिरकत करने के लिए जब हकीम साहब पहुँच गये तो उन्होंने मौक़ा निकालकर ख़ानदान के मामू अली मुन्तुज़ा मीर से यह ज़िक्र निकाला कि बदर मियाँ की उम्र ज़्यादा है या क्या हुआ । इतना बड़ा आदमी है और फिर यह कि अपने बिरादरी के लिए कोई शरीफ़ लड़की तो मिल नहीं सकता । चुनांचे जब एक

जुम को अली मुरतुजा खाँ सुलेमान से मिलने जिला जेल गये तो उन्होंने इस रिश्ते का जिक्र किया। सुलेमान ने कहा कि वह भैया यानी वजीर मियाँ और मँझले भैया यानी बशीर मियाँ की राय के बिना कुछ नहीं कर सकते, तो अली मुरतुजा खाँ ने वजीर मियाँ से जिक्र किया। वजीर मियाँ ने कहा कि चौदह हजार सिक्के रायजुल्वक्त पर निकाह हो तो उन्हें कोई एतराज नहीं। अली मुरतुजा खाँ ने यह जवाब गंगौली जाकर मौलवी बेदार को सुना दिया और हकीम साहब की मुखालिफत के बावजूद मौलवी बेदार ने यह बात मान ली। तय यह हुआ कि चन्द महीनों बाद जब सुलेमान जेल से छूटकर आ जाएँगे तो निकाह हो जाएगा। यह खबर छिपी रहनेवाली तो थी नहीं, पर लगाकर उड़ी और आसिया की ससुराल की खपरैलों पर बैठकर बाँग देने लगी। आसिया ने यह सुनते ही डोली मँगवायी।

आसिया की डोली दक्खिन पट्टी के बड़े फाटक में उतरी। वहाँ नईमा बी और उनकी बहन कुबरा के सिवाय और कोई न था। ज़ाहिर है कि आसिया जैसी खरी सदानी इन पवंदियों की महमान नहीं हो सकती थी। चुनांचे वह अगू मियाँ के खाली घर से होती हुई मजूर मियाँ के घर चली गयी।

सुबह का वक्त था। रब्बन बी धूप में बैठी तामचीनी के एक बड़े प्याले में चाय पी रही थीं। और मजूर की बीवी सकीना बी बावर्चीखाने में चुपचाप बैठी अपने मायके की याद कर रही थीं और उनकी बड़ी बेटी सलमा चपातियाँ बेल रही थी।

पुफ्फू आदाब! आसिया ने रब्बन बी को सलाम किया।

जीती रहो!" रब्बन ने प्याले को पलंग पर रखकर कहा, ए धाया तू त सहरवालन को एकदम्म से भूल गयू।

का बताएँ पुफ्फू कभी हुइ बीमार है तो कभी हुऊ बीमार है। आ फिर हियाँ के-के पास आव! आसिया बोली एक ठो बच्चा है, त सुना रह कि ऊ बछनिया से बियाह कर रहे।

नऊज! ' रब्बन ने नाक पर उँगली रखी इ बदार सठिया गय है का!

"आ त ऊ बेचार अब का धरवा में का करें ? सकीना ने बावर्चीखाने से टुकड़ा लगाया अब बेचारे बुढ़ापा है। उन्न और दिन दुरुस्त हाल्ह!'

हम मजाक ना कर रहे हैं आज। आमिया न कहा न मच्चद विवाह हा गया ना बिरादरावार का करि ।'

न बिरादरावार आके उनका बदन दबावें। उनके साथ पिये का खयाल करें। अउग तूने उनका वडी फ़िक्र है त तु ल जाक रक्खन उन्हें।' सकीना न हुक्का-हूक्र और पाना-का पानी कर लिया, इ कद का साचिया कि अब व विवाह कीजिन और मक्का-वाला हा गया ता जमीदरिया चली जइहै। आमिया तिलमिलाया।

ज का ज़िम्मादारी हाइह उन्ह ना फ़िक्र करि।

ग बहिनी हमने कौन भिखमगिन क घर स ना आय रह "

सकीना न साचा कि मामला ज्यादा है इसलिए वह बावर्चीखान स उठकर आंगन म आ गया। लकिन रक्खन की न मुदाखलत की। बहुत दिना के बाद खामोशी का ठहरा हुआ ज़िन्दगी म काइ तूफ़ान आया था। फ़ौजदारियां ता गाना हा रहना है। मद हैं ता नाक भाक भा करेंग, रखनियां भी रखें। आखिर भार मियां न याकूत का रखा और जहार मियां न पुखराज का। फुनन कगमन अना की बावी का निकाह लाय लकिन अब तक किसा मदद न किया रखना का लड़की का पयाम नहा दिया था। एन मौजू ता कइ ज़िन्दगिया बाद मिलत है। चुनांचे रक्खन का न अपनी बहू का घुड़क दिया, ग रहन द त कौना लड़ का बात ना है।

सकीना दिन-दा दिल म रक्खन का कोसना हुट बावर्चीखान म चली गयी कर रक्खन का न सब्र नफ़रत करता था। बुढ़िया मरन का नाम ही नहीं ल रहा था। कनिया सभान बटा हुई था और सकीना का एक-एक पस का मुंह दखना पड़ता था। रक्खन का न जा पहना दिया पहनना पड़ा जा मिला लिया खाना पड़ा। मसूर इसलिए उस मार रहत थ कि जायदाद रक्खन का की हा था जिसक बल-बूत पर वह रईस बन ठाठा पीत थ और आसामिया का रोती रत थ। बस मसूर भा मकाना म बहुत खुश नहा थ। उन्हें सकीना का खूबसूरता म काई दिलचस्पी नहीं था। बाबियों क लिए खूबसूरत हाना बिलकुल ज़रूरा नहीं है। खूबसूरता ता रंडिया क लिए ज़रूरी है। उन्हें शिकायत यह थी कि सकीना क यहां तावड़तोड़ सात लड़कियां हा चुकी थीं और मसूर मियां

एक बेटे के अरमान म मरे जा रहे थे। जब बच्चा पैदा होनी ता मजूर मन्नतें वानते मानकर और गण्डे तावीज म जकड जकडकर फिर कोशिश म लग जाते। यहा तक कि सकीना को मतली होने लगती और वह कोर बरतन म खाने लगती। ये दिन मजूर बडी बेचनी मे गुजारते। यहा तक कि फिर लडकी हो जाती और मजूर का मुह लटक जाता और रब्बन बी हाथ उठा उठाकर सकीना को कोसने लगती।

'लडकी ये लडकी पदा त किये जा रही हौ—बाकी ई घर मे रोकड ना धरा है।'

सकीना इन कोसना का पी जाती। तनहा होती तो रोती और अपने को बददुआ देती। खुद उसने भी अनगिनत मन्नतें मान रखी थी। साधुआ फकीरा पर न मालूम कितने पसे खच कर चुकी थी। रब्बन बी को यह मालूम नही था मगर सकीना ने अपना उतराज खिचवाकर एक आमिल स छल्ला लिखवाया था। इसके नतीजे मे तीसरी लडकी हुई थी। और तब दुआ-तावीज पर से सकीना का एतकाद उठ गया था। उसने नमाज पढना भी छोड दिया था कि दो लडकिया और हुइ और उसने सोचा कि लडकी या लडका होने का अल्लाह मियाँ के कारखाने से कोइ ताल्लुक नही है। इस खयाल ने उसकी अजायदी जिन्दगी म फिर सुकून पैदा कर दिया और वह आठवा लडका के लिए जेहनी तौर पर तयार हो गयी। चुनाचे वह तो फिर बावर्चीखाने मे चली गयी और वहा बठकर सलमा को देखने लगी जो चपातिया बना रही थी और सोचने लगी कि सलमा और बछनिया म आठ ही दिन की तो छुटाई बडाई है।

यह बात रब्बन और मजूर को भी मालूम थी। मजूर भी रिश्ते की फिक्र म थे और रब्बन बी जेहन दौडा रही थी। मगर इन दिनो रिश्ता करने म जा डरना था। खुदा गारत कर मुए जमना को जिन्होने लडाइ छेड रखी थी। फौज म भरती हो रही थी। गुरगमौली म हकीम अली कबीर के दरवाजे पर भरती का दफ्तर खुल गया था। धडाधड लोग फौज म भरती हो रहे थे।

इ दिम्मन अपनी अपनी लडकियन को छाती से लगा के बैठे बा है। ए बहिनी का पता कब कौन लाम पर चला जाय।

यह बात उन्होंने अग्गू मियाँ की बाबा से कही थी जब वह सलमा के लिए क़ासिम का पयाम लाया था। और यह बात अग्गू मियाँ की बाबा के दिल में तीर की तरह तराज़ू हो गयी थी क्योंकि क़ासिम इनका पहलौठी का लड़का था और अग्गू मियाँ की मुख़ालिफ़त के बावजूद फौज में भरती हो गया था। 'नाहीं बहिना, मत बियाहो' अन्नू मियाँ की बीवी ने कहा था, "सैंइन के संग अपनी बिटियन का।'

और रब्बन बी ने अपनी लड़कियों का वास्ते 'सैंइन के' रख लिया। कई बार इस बात पर बहू से तकरार भी हो गया क्योंकि सकीना का ख़याल था कि ब्याह माँ-बाप का काम है। आगे लड़कियाँ जानें और उनकी तक़दीर जाने और कौन जाने ई लगाई बझाई ख़तम होइहै की नाहीं। हर चीज़ में तो आग लग गयी है। नाक का दुपट्टा ओढ़े-आढ़े कंधा दुखने लगा। नज़र-न्याज़ को चीनी ना मिले। पसमान एक ठो मरन उतार को रहा तो अलम पर चढ़ाव का कपड़ा ना मिला। ई तो लड़ाई ख़तम होने के लच्छन ना हैं।"

ईहे त माँग कहे रहिउ। रब्बन बोली, का लड़कियाँ को ईहे टाट का कपड़ा दइ बिदा करिहै।

रब्बन बी की इस दलील ने सकीना को लाजवाब कर दिया था। लेकिन जब वह सलमा की तरफ़ देखती तो घबरा जाती कि ज़माने के पास कुछ हो या न हो लेकिन जवान गज़ भर की है। अगर किसी ने लड़कियों को कुछ कह दिया तो ग़ज़ब हो जायगा। चुनांचे वह सारा का गुस्सा सलमा पर उतारती था। सारी लड़ाई जर्मन ने नहीं शुरू की थी बल्कि ख़ास सलमा ने शुरू की थी। इसलिए जब वह बावर्चीख़ाने में पहुँची तो उस वक़्त शामत की मारी सलमा सबसे छोटी बहन के लिए आटे की गुड़िया बना रही थी। बस सकीना उबल पड़ी।

ई तू काहे बना रहिउ!

बनाता रहा।

ना काहे कम सकीना बिलकुल आपे से बाहर हो गयी लहंगाभर

मरहिबन के वास्ते चिड़िया बनाये और उ मनभर आगे चहिए।

सलमा ने चिड़िया में और आटा मिलाकर चौंतरा बनाना शुरू कर दिया।

मगर सकीना का जी बावर्चीख़ाने में नहीं लग रहा था इसलिए वह फिर निकल आयी और खटोले पर बैठकर पान बनाने लगी। उसने यह फ़ैसला कर लिया था कि वह रब्बन और आसिया की बातचीत में बिलकुल हिस्सा नहीं लेगी।

'अउर ऊ भला हमरी बात सुनिहैं!' आसिया कह रही थी "आपे तनी झगटिया बा का समझाइए न।'

'सुन रहिउ दुलहिन!" रब्बन ने सकीना को मुख़ातिब किया, 'ऊ दिमाग मारे समझाए से मनिहैं?'

इत्तिफ़ाक़ से ऐन उसी वक़्त झगटिया बा आ गयी। रब्बन, सकीना और आसिया को सलाम करके वह ज़मीन पर बैठ गयी। उसे चार आने पैसे की ज़रूरत थी। वह बराबर रब्बन बी से छोटे मोटे क़र्ज़ लिया करती थी। एक बार तो मोहर्रम के कपड़े बनवाने के लिए बिलकुल पैसे नहीं थे, तो उसने रब्बन बी के यहाँ चाँदी की पहुँची रखकर रुपये लिये थे। रब्बन बी के पास लकड़ी का एक छोटा सा सन्दूकचा था जिसमें उनका क़लमदान रहता था। उसी में तहफ़्तुलअवाम और पंज सूरह और नादेअली के जुज़ भी रखे रहते थे और एक सुर्ख़ कपड़े की थैली थी जिसमें नक़दी रहती थी। रब्बन बी को लिखना पढ़ना नहीं आता था। लेकिन उनके मियाँ मीर अज़हर हुसैन ने उन्हें इमलेलाही सिखला दी थी। वह इमलेलाही में ख़तो किताबत भी करती थीं और याददाश्तें भी लिखती थीं।

'काहे र!' उन्होंने झगटिया बा से पूछा।

अइसे ही सोचनी कि तनी बीबी को सलाम कर लें। झगटिया बा ने कहा।

पान खइहै? सकीना ने पूछा।

झगटिया बा ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने अपना हाथ फैला दिया और सकीना ने फैले हुए हाथ पर तह किया हुआ पान का एक बीड़ा ऊपर से छोड़ दिया जो उसकी हथेली पर गिरकर खुल गया। झगटिया ने सलाम करके वह पान खा लिया और सकीना आसिया के लिए गिलौरी बनाने लगी।

अब तोहरो अइसा दिन लग गये हैं कि दिन बछनिया का बियाह चहता है कहे र! आसिया ने हमला किया।

झगटिया बो न रब्बन की तरफ दखा। रब्बन बी की आख म इस वक्त ग़ब का चमक थी।

"ग बत्नी, आप त नाहके न बिगड रहती हैं हम त ना न गइल रहली न्मा नर ? उमन सवाल किया।

मवाल माकूल था। आमिया सटपटा गयी और फिर वह पजे चाडकर झगड़िया वा क पीछ पड गयी। झगटिया बो चुपचाप सुनती रही। लकिन दर आमिया न अला बलबर और बच्छन का याद करके सुलमान का कोसना गड किया ता झगटिया ना की अजली खामाशी की जजीर टूट गयी।

"ग बीबा बस रह द।' वह वाली कुछ कह न्दब त सब जनी कह नगिहें। बाकी हम ताहार दिया ना न खात वाडीं। भगवान वज़ीर मिया नउर बसीर मियाँ क बनाय रक्खें। वात क दवें हम।

आमिया सन्नाट म आ गयी। उमन साचा भी नहीं था कि झगटिया वो रावर म जवाब दगी।

ऊ रण्डा हमरे घर म नियाह क अइह।'

ऊ न रण्डा ना है। बाकी हमहूँ बिबयन म रहीना। कछु कह न्देब त श्राप चिचियावन मुनन्रा तक चल जन्ह।

रब्बन न सोचा कि बात हद से बढ़ी जा रही है। वह दिन ही दिन म ना मन था कि झगड़िया वा न अच्छी खबर ली। लकिन बिरादरी म न बनना नहा चाहना थी। आखिर तो बीवियाँ कहगी कि रब्बन बी दमनी र और चमादन न अपना जूती म आमिया की नाक काट नी।

अच्छा बग। उन्हान झगटिया वा को देखा, देर मन चढ़।

द मनकर झगड़िया वो अपन आपको कोसती हुई चली गयी। उस दरजान जिन्दगी म पहली बार सुलमान पर गुस्सा आया था। क्या चम्पा क्या नैना बच्छा मौलवी बेदार क लिए पाली-पोसी गयी थी। उनम अब गया क्या होगा। फिर आखिर सुलमान न हाँ क्यों कर दी। यह सोचकर ज्याह रस्म का ताग सुलमान का तरफ मुड गयी और वह सुलमान क उठ मान पर पहला बार पछताया। वरना बछनिया का ब्याह तो चौधरी के तरह म होता।

बछनिया को तो इस तूफान की खबर थी नहीं। वह एक पलंग पर लेटी कोई नौहा गुनगुना रही थी। क्योंकि मोहर्रम सिर पर आ गया था। वह बहुत खुश थी कि सग्वरी बाजी इस धुन को सुनकर फड़क उठेंगी। फिर सरवरी बाजी का ख्याल मासूम का खयाल बन गया और वह सोचने लगी कि मासूम वह मोतियावाला हार लायेगा या नहीं। पता नहीं छ साल पहले किया हुआ वायदा उसे याद होगा कि नहीं। बशीर मियाँ और वजीर मियाँ के तमाम लड़कों में उसे मासूम सबसे अच्छा लगता था। लेकिन वहाँ उसके लिए सबसे कम वक्त निकालता था। इन दोनों घरों के लड़के उसे यू० भी गाँव के दूसरे लड़कों से जरा अलग नजर आते थे। वे अपने हलके में इस कदर खोये रहते थे कि उन्हें शायद इसकी खबर ही नहीं थी कि बच्छन जवान हो गयी है। मूनिस मियाँ सरवरी बाजी की गुड़िया की टाँग चीरने और दुल्हन (बशीर मियाँ की बीवी) से मार खाने में मसरूफ रहते थे और मासूम को मूनिस का दुमछल्ला बनकर घूमने के सिवाय कोई और काम ही नहीं रह गया था। पाँच साल की बीमारी से वह उठा तो उसकी एक टाँग खराब हो गयी। मगर खराब क्या हुई खाक! खपरल गपरल घूमता फिरता है और उसकी बीवी (अकबरी बीवी—बशीर मियाँ की माँ) पीछे पीछे भागती रहती हैं उसे कोसती रहती है और उसके लिए दुआएँ माँगती रहती हैं। इस मजर के बारे में सोचने ही बच्छन मुसकरा दी कि देखें यह लँगड़ा मासूम कैसा लगता है। अब उसे क्या मालूम था कि ऐन उसी वक्त लगटिया बो आ जायगी।

तू मुस्त्रियात बाड़! झगरिया बा न एक लहथ्थड़ मारा "हई हो नक्खा बात के फरक न्दर समझ लू।'

बच्छन की समझ में इस गुस्से की वजह बिलकुल नहीं आयी।

ई त ना हाई कि तनी घरवा के थान पाल के चिक्कन कर देई। जाँगर ना चाही। ई ना सपरी। हुई दिन में बाबा अइह। मेल्हत लू। तना अली अकबर के बाबा के आ लवे नेह। तोहार त हम तौन दुरगत बनाइब कि मुस्त्रियावल भूल जइहा!

बछनिया चुपचाप मार खाती रही। जब वह छोटी थी तो भाग जाती थी। मगर जवानी और खूबसूरती का बोझ बहुत भारी होता है।

झगटिया बी उस दर तक पहुँची रहीं। फिर वह चला गया तो रोने लगीं और अपने आपको कोसने लगीं। अली अकबर को याद करने लगीं जिसको वज़ीर मियाँ अपने साथ गाज़ीपुर ले गये थे, जो वहाँ रहकर दो माँ के बच्चों के साथ खेलता था और ऊपर का काम काज किया करता था।

नईमा बी को आता देख उसने आँसू पोंछ डाले। नईमा बी यों तो जुलाहिन लेकिन झगटिया बी के सामने वह पक्की सैयदानी बन जाती थीं और रियायत या जो सुलूक दूसरी सैयदानियाँ उनके साथ किया करती थीं उसका इन्तक़ाम वह झगटिया बी से लिया करती थीं। वह बहरहाल झगटिया बी से अफ़ज़ल थीं क्योंकि अव्वल तो वह जुलाहिन थीं चमाइन नहीं थीं और दूसरे यह कि हम्माद के अब्बा ने उन्हें घर ही पर से नहीं डाल लिया था बल्कि मौलवी बदरू से उनका मौलवी हिसाब से बाक़ायदा निकाह पढ़ा था। झगटिया बी का लड़का अली अकबर भी नहीं हो सकता था। लेकिन उनका बेटा हम्माद बाक़ायदा सैयद हम्माद हुसैन था। इसीलिए उन्हें इसका अफ़सोस नहीं था कि वह जेल में है? मौला के लिए तो वह अपना सिर कटा सकती थीं। वह भी दूसरी शीआ औरतों की तरह यह अरमान किया करती थीं कि न हुईं वह कर्बला में वरना वह भी हम्माद को मौला पर निसार कर देतीं। ये शीआ औरतें अपने बच्चों को निसार करने को तैयार रहा करती हैं। लेकिन बच्चों को निसार करने के बाद रोना काम उम्र भर का हो जाता है। (उन्हें यह ख़याल नहीं आता कि फिर उनको उम्मे कुलसुम के साथ कूफ़े के बाज़ार में भी घूमना पड़ेगा)। उन्हें तो इसका अफ़सोस था।

तो ईद शाद बना रहे। उन्होंने घर की ढलान में भरी हुई एक दुनिया झगटिया बी की तरफ़ बढ़ा दी। सोच रही हैं कि घर की इज़्ज़त बना सकी थोड़ा सा। हुई हम्माद की माँ की सी गिनती शहर भर।

झगटिया बी ने गलियों में सो था। नईमा बी फिर अपना ग़िलाफ़ की तरफ़ चली गयीं और झगटिया बी सोचने लगीं कि सच तो है उस में अली अकबर के बाबू को गोद के लिए मरा क्या मिलना होगा। उसको दो सब बच्चों के सिलसिले में जेल काट चुका था। उसे मालूम था कि जेल में खाने को क्या मिलता है—मिट्टी की रोटियाँ कंकर की दाल। अली अकबर

के वास्ते मुख्तर नाडी हो गये होंगे। उसके दिल में दर्द की ऐसी लहर उठी कि वह बेचैन हो गयी। उसकी बड़ी बड़ी गहरी सियाह आँखें फिर भर आयीं क्योंकि वह अली अकबर के वास्ते कुछ पका नहीं सकती थी। अव्वल तो उसे इन चीजों के पकाने का तरीका ही नहीं मालूम था जो चीजें सैयदबाड़े में पकती थीं। अगर उसे मालूम होता भी तो क्या फर्क पड़ता। मुसलमान उसके हाथ की चीज खाते जो नहीं थे।

'त ना पकब रे कुछ !' उसने बच्छन से कहा क्योंकि बच्छन को वे तमाम चीजें पकाने का तरीका मालूम था जो चीजें रब्बन बी और अग्गू मियाँ के घरों और बड़के फाटक में पकती थीं। लेकिन यह कहकर उसे खयाल आया कि वह रब्बन बी के यहाँ चवन्नी माँगने गयी थी।

'तनी रब्बन बी के घरवा तक चल जा अउर ऊ गो चवन्नी ले आवा।' इच्छा से यह कहकर वह दाल पीसने लगी।

बच्छन रब्बन बी के घर जाने से कभी नहीं कतराती थी, क्योंकि उनके घर में पले मफिरवा उर्फ मफीर मुहम्मद का मुस्कराना उसे बहुत अच्छा लगता था। और शायद मफिरवा को यह बात मालूम थी क्योंकि वह बच्छन को देखते ही मुसकराने लगता था। एक रोज तो उसने रब्बन बी और अग्गू मियाँ के मकानों के बीचवाले जनाने गलियारे में बच्छन का हाथ भी पकड़ लिया था। हुआ यूँ कि कोई तारीखी मजलिस थी। रब्बन बी सकीना और सलमा—गरज कि पूरा घर हो बड़के फाटक में था। बच्छन कुछ धान कूट रहा था। इसलिए वह पिछड़ गयी और अकेली पड़ गया। धान कूटकर जब वह मजलिस के लिए निकली तो अग्गू मियाँ के घर की तरफ से आता हुआ सफिरवा मिल गया। उसका बदन बड़ा ही खूबसूरत था। फुन्नन मियाँ का खयाल था कि झगोटा की तरह सफिरवा भी उनके अगवारे का नाम ऊँचा करेगा। अपने से ड्योढ़े पट्ठे को तो वह अब भी गेंद की तरह उछाल देता था। तो भला बच्छन की क्या हैसियत थी! जो कुछ हुआ उसके लिए बच्छन तैयार नहीं थी। उसका अंग अंग लपन लगा। यह कोई चार महीने पहले की बात है। तभी से सफिरवा की मुसकराहट जानलेवा हो गयी थी। वह कामचराम गगटिया या के पास आने लगा था। उसका आना जाना

इस क़दर बढ़ गया था कि एक दिन नग़मा बी ने अपनी बहू से कह दिया : दस लिए दुलहिन ई झगड़िया ता एक दिन मखिरवा के साथ निकल जाय।

झगड़िया कहाँ तो नहीं निकली लेकिन जब उस रोज़ बछनिया गलियार में पहुँचा तो अचानक मखिरवा मिल गया। उसने उसका हाथ पकड़ लिया। हमेशा की तरह बछनिया का जी सनसना गया। मखिरवा उसे बागान जनानख़ाने में घसीट ले गया। वह कहता रहा कि वह ... नाम से रतन बी के पास जा रही है लेकिन मखिरवा नहीं माना ... मालूम है तोरा बियाह मोलवी के घर में हो रहा है। जवाब में बछनिया ने मखिरवा को एक ऐसी बात बताई कि उसका रोयाँ रोयाँ नाच उठा। ... और चौड़ी हो गयी। उसकी आँखें बछनिया के बदन पर जम गयीं। उसकी छाती कुछ गयी। और मखिरवा को ये सरमायी हुई बछनिया उस बछनिया से भी ज़्यादा ख़ूबसूरत मालूम हुई जिसे उसने कई बार मखाने पहने बलखाते जनानख़ाने गलियार में पकड़ा था।

"... भाई के मालूम है?" उसने पूछा।

"... ई बात ना छिपी। अउर अब हियाँ हम नाहीं गुज़र न होई। चल कलकत्ता भाग चलल जात।"

लेकिन बछनिया भागने के लिए तैयार नहीं हुई। मखिरवा की सारी ... धरी-की-धरी रह गयी। वह बछनिया से रूठकर चला गया। बछनिया उसी मियाँ के ज़मीन ... वीरान जनानख़ाने में अकेला रह गया।

हसनात मियाँ का बीधा हुआ किसी काम से ... बछनिया का सहर ... पुकार पड़े हुए ... बात में ... हुआ तो उन्होंने बताया कि उनकी माया तो उसी रोज़ टाला था हालाँकि उस रोज़ उनकी माया बाया हरगिज़ नहीं टलता था।

"... यहीं का घर रही?" उन्होंने पूछा।

"हुए ना।"

... यह ... गयी कि यह रतन बी के यहाँ एक बखरा माँगने जा रहा

थी। इसलिए वह अपने घर की तरफ चली गयी। कुबरा रब्बन बी की तरफ चली गयी। रब्बन बी पलंग पर बैठी आसिया के साथ नाश्ता कर रही थीं। घी नमक की टिकिया और अण्डे के खागीने की खुश्बू दरवाज़े तक कुबरा को लेने आयी। आसिया से ख़ैरसल्ला करके कुबरा एक ओर पलंग पर बैठ गयी। रब्बन ने उसे नाश्ते में शरीक होने की दावत दी लेकिन उसने इनकार कर दिया। सलमा उसके लिए पान लगाने लगी।

हमने सुना कि बाजी आयी हैं तो सोचा कि सलाम कर लें।' कुबरा ने कहा।

बस बात चल पड़ी कि ज़माने में तो बिलकुल आग लग गयी है। कोई चीज मिलती ही नहीं। अब यह ख़ुदा का ग़ज़ब नहीं तो और क्या है कि गेहूँ चार सेर का मिल रहा है। कफ़न के लिए परमिट लेना पड़ता है और परमिट के लिए रिश्वत देनी पड़ती है। ये बातें तो रब्बन, सकीना और कुबरा को भी मालूम थीं। लेकिन आसिया ने एक अचम्भे की बात बतायी कि सुखरमवा चमार का लड़का परसरमवा खद्दर की टोपी पहिन ऐसी ऐसी तकरीर कर रहा कि मौलवी इब्न हसन का करिहैं।'

ख़ुदा गारत करे इ मट्टीमिले कांगरसिया का जिन्होंने चमारों और भंगियों का रतबा बढ़ा दिया है।

ऊ सब अब अछूत ना हैं। हरिजन हो गये हैं। उन्होंने मुर्दा खाना भी छोड़ दिया है और कोई महीनाभर पहले चमारों का एक गोल परसरमवा की लीडरी में पंडितान के कुएँ पर चढ़ गया और पानी भर लाया।'

ये बातें सुनकर रब्बन बी की इकलौती आँख हैरत से चढ़ गयी। उनके ख़याल में यह सब ज़माने का कुसूर था, वरना चमारों की यह हौसला नहीं हो सकता था। रब्बन बी के ख़याल में तो जंगलबाड़ी के सारे थान लाम पर भेजे जा रहे थे। उनका मसला तो सिर्फ़ इतना था कि उन्हें ओढ़ने के लिए बारीक दुपट्टे नहीं मिल रहे थे और चाय के लिए शक्कर मिलने में दिक़्क़त हो रही थी। पिछली शबरात में साग का हलुवा नज़र करना पड़ा था। सालभर मक़्नून रहा कि ख़ुदा जाने मुर्दों ने खाँड़ का हलुवा न देखकर क़ुबूल भी किया कि नहीं। मगर जब साल ख़ैरियत के साथ गुज़र गया तब उनकी

जान में जान आयी। मगर वे पसरमवा वाली बात तो खैर के हलुवे में भी ज्यादा मजेदार थी।

"सुन रहा कि कुछ गड़बड़ होए वाला है।" आसिया ने गिलोरी को कल्ले में दबाकर कहा।

"ए बहिनी, अब अउर का गड़बड़ होइहै!" बोली। "कल्लन चच्चा खबर कहीं न भेजिहें।" और फिर घूम फिरकर मौलवी बशीर की शादी तक आ गयी।

"भाड़ में जायें चच्चा, भाड़ में जाय उनका बियाह!" आसिया बोली "मैं अब बड़निया कलमुँही का चच्ची पुकारे गयी ना जइहौं!"

थोड़ी देर बाद आसिया चली गयी।

मौलवी बशीर को मालूम हो गया था कि आसिया आयी हुई है। वह बहुत परेशान थे। हकीम अली कबीर से अपनी शादी के मसले पर बात करना और बात थी और आसिया का सामना करना और बात थी। अभी वह कोई फैसला करने भी न पाये थे कि आसिया की डोली आ गयी।

"आदाब!"

"जीते रहो। कब आयीं?"

"कल आ रहिउ। सोचा कि आप अपने बियाह का इन्तजाम करत करिहौ। यह बात सुनि के कहिउ चच्चा कि आप का बिलकुल सठिया गये हैं! अब हमरे दिया का ई ख्याल हो गया कि आप आपन दरवाजे पर बरात ले जायें!"

इस्लाम चार बहू को नहीं मानता।

"आप कहे रहें हैं तो ना मानता होइहै।" आसिया ने कहा "बाकी चार बहू का परदा मजहब आपसे बादशाह... ना रहे। लाला मियाँ भी त मुबारिक कहे की ना। मानी इस्लाम से काम न चलता दुनिया कौनो बात है कि ना?"

मौलवी बशीर को मालूम था कि दुनिया बड़ी पाजी है। वह सिर्फ ज़माने के हारे, तो किसी का घर में झाँकना है। लेकिन वे मौलवी भी थे। इन्हें मालूम था कि कबीर ने निकाह की जो शर्त लगायी है और पौने हज़ार तीन महर

तय किया है वह सिर्फ उत्तर पट्टीवाला को जलील करने के लिए किया है कि सय्यदानिया का ब्याह इससे कम दीन महर पर नहीं होता। लेकिन वह दिल के हाथों मजबूर थे। वह यह जिल्लत गवारा करके भी बछनिया को हासिल करना चाहते थे।

'म शादी कर को ना मना कर रहिउँ आप ई सोचे लगा कि मोका ई जमींदारी का लालच है। शौक से करिए शादी। एक छोड़ चार करिए। मै कउन रोकवाली। बाकी म वगटिया वो की लड़की को चच्ची ना पुकरिहा।'

मगर बटा

मोको समझाए की जरूरत ना है।

आसिया ने मुँह ढाँपकर रोना शुरू कर दिया। उसके बैन की आवाज हकीम अली कबीर के जनानखाने तक गयी। उनकी बीवी ने चट से डोली मँगवायी। धीरे धीरे उत्तर-पट्टी की तमाम औरतें मौलवी बशीर के घर में जमा हो गयीं। उन सबकी हमदर्दियाँ आसिया के साथ थीं। वे सब मौलवी बदार को बुरा भला कह रही थीं। कई बवा सैयदानिया दिल मसोसकर रह गयी कि क्या वे बछनिया से भी गयी गुजरी हैं? हुसन अली मियाँ की बहन उम्मुल हबीबा तो कोई तीस साल से सफेद कपड़े पहन रही थी। शादी के तीसरे दिन वह बेवा हो गयी थी। उसकी और आसिया की शादी में तीन दिन का हेर फेर था। अब आसिया माशाअल्लाह से छः बच्चों की माँ थी। और उम्मुल हबीबा शादी-ब्याह के मौकों पर अछूत हो जाती थी। कँडूरी के फर्श पर उसकी परछाई नहीं पड़ सकती थी। दुल्हन के कपड़ों को वह छू नहीं सकती थी। यहाँ तक कि दूसरों की शादी के गीत सुनते सुनते उसके बाल कब के सफेद हो गये। हुसन अली मियाँ उसका बहुत खयाल रखते थे। आखिर भाई हैं। वह घर में जिल्लत तो नहीं दे सकता। भाभी ने भी उसे परेशान नहीं किया। लेकिन जब उनकी किसी बच्चे का कनछेदन होता या किसी बच्चे का मकतब होता तो उम्मुल हबीबा तिलमिला उठती। जाहिर है कि इन मौकों पर वह आ नहीं सकती थी। लेकिन जब हुसन अली की पहली लड़की

बमरा का बहूरा का फ़र्श बिछा और सकीना ने उसे वहाँ से हटा दिया तो वह रो पड़ा और पहली बार भाभी की आवाज़ तेज़ हुई।

"न करना गए का बड़न ना है उम्मुन।"

उम्मुन ने इस बात का बुरा नहीं माना। दरअसल उस वक़्त तक किसी ने यह बताया नहीं था कि बेवा को क्या-क्या नहीं करना चाहिए। फिर धीरे-धीरे वह बरसों की आदी हो गयी और धीरे धीरे उसे यह भी मालूम हो गया कि बेवा के फ़रायज़ क्या हैं।

बस एक बात के सिलसिले में उसका ज़ेहन साफ़ नहीं था। जब भी दुल्हन ने पहली बार एक राँड-बेवा से की तो क्या ये अशराफ़ और हज़रत में बड़े कि बेवा से शादी नहीं करते। लेकिन वह यह सवाल करती किससे? और अब तो मौलवी बेकार को भी शादी की सूझी तो उन्हें भी बच्चियाँ पसन्द आयीं।

आनेवाली औरतों में से इक्की-दुक्की ही को मौलवी बेकार से पर्दा था। इसलिए वह भाग भी नहीं सकते थे। पर्दा करने वालियाँ चेहरे पर आँचल को ओढ़ लिये बग़ैर पर्दा-पर्दा बात करती थीं। उनके ख़याल में मौलवी बेकार का पढ़ना लिखना सब बेकार हुआ, अगर उन्हें यह भी नहीं मालूम कि एक घमासान का हरामी बगैर निकाह किसी भी तरह ठीक हो ही नहीं सकता।

ग़रज़ कि उत्तर पट्टी की बीवियों ने मौलवी बेकार के ख़िलाफ़ एक मोर्चा बना लिया। उनमें सबसे आगे हुस्न अली मियाँ की बहन उम्मुल थी, जो आमिना की हमउम्र थी। लेकिन आमिना छः बच्चों की माँ बनने के बावजूद बिलकुल ताज़ी लगी हुई थी। और उम्मुन बिलकुल बूढ़ी हो गयी थी क्योंकि वह माँ नहीं बन पाती थी। उसकी छातियाँ बच्चे का इन्तज़ार करते-करते सूख गया था। आँगन की इस तनहाई की तेज़ धूप में आप उनका उड़ गया था। उसकी मुस्कराहट गहरे में जैसे एक सूराख़ हो गया था कि आवाज़ की आग दिमाग़ पकड़ा-जागकर बह गया था। इसीलिए वह मौलवी बेकार शादी के ख़िलाफ़ थी और दिन रात बच्चों का ख़्वाब देखा करती थी।

आख़िर मानसार की ख़्वाहिश भी कोई चीज़ होती है कि नहीं। मौलवी

बेदार बहरे तो ये नहीं कि इन बातों को न सुनते । लेकिन वह आदमी जिद्दी थे । अपनी बात पर डटे रहे ।

कुछ-कुछ कमजोर तो वह हो चले थे । समधियान के लोगों ने दबाव डाला कि बस मौलवी बेचारे उबल पड़े । उन्होंने आसिया से कह दिया, बेटा, यह घर तुम्हारा है जब चाहो आओ और जब तक चाहो रहो । लेकिन तुम्हें अपने बुजुर्गों के मामलात में दखल नहीं देना चाहिए । मैंने तो कभी तुम्हारे ससुर को इस बात पर नहीं टोका कि उन्होंने गाजीपुर में एक रण्डी क्या रख छोड़ी है । और न ही मैंने उनसे यह पूछा कि जमतुन से उनके क्या ताल्लुकात हैं । मैं तो फिर निकाह करने जा रहा हूँ ।

यह सुनकर आसिया बहुत रोयी और फिर डोली मँगवाकर गुनहरा चली गयी । आसिया के चले जाने के बाद मौलवी बेदार का जनानखाना फिर वीरान हो गया । और सैयदबाड़े में लोगों ने इस बात को मान लिया कि बात अनहोनी जरूर है मगर जब हो रहा है तो क्या किया जाय । जाहिर है बछनिया को जमींदारों के फर्श पर जगह नहीं मिलेगी । मौलवी साहब उनसे मुता करें या निकाह, गंगौली वाले बछनिया को बहरहाल उनकी रखनी ही मानेंगे और मौलवी बेदार उसके लिए तैयार थे ।

मगर सफिरवा तैयार नहीं था । उसे जिस दिन से यह मालूम हुआ था कि बछनिया उसके बच्चे की माँ बननेवाली है वह उसी दिन से बदल गया था । उसका खिलण्डरापन खत्म हो गया था । वह अक्सर न जाने क्या क्या सोचता था । कभी रजिया बी या सकीना उसे टोकतीं तो चौंक पड़ता । फुम्मन मियाँ की छोटी लड़कियाँ जो उससे हिली हुई थीं शिकायत करती थीं । लेकिन वह क्या करता ? उसका सारा ध्यान तो बछनिया के पेट में पैंकर जल्लियार करनेवाले में था । उसकी शक्ल कैसी होगी । नाम क्या होगा । यह सोचते-सोचते उसे मौलवी बेदार का खयाल आ जाता । और वह सोचता कि क्या उसका बच्चा मौलवी बेदार के घर में पैदा होगा । कई लोगों से वह सुन चुका था कि कलकत्ते में तो खूब काम मिलता है लेकिन बछनिया भागने पर तैयार ही नहीं हुई ।

लेकिन गर्मियों के आने में कई दिन पहले सगटिया वालों की निगाह

बन्छन म हानवाला तन्नीली पर पट हा गयी। वह मझार म आ गयी। उसका मन गीतन लगा। वछनिया का चाटा पकडकर उसन दा-तीन तमाचे मार और बाला मरकानौनी। आपन बाबू क का इ ह पट न्व। बाल इ बरर हाद ?

बन्छन बहुत हैरान हुइ कि उमका पर किसी और का वस हा मकता है। हमरा है अऊर क का है।

तोहार हा। घगटिया का न उस दा-तीन तमाचे मार।

हम ताहार बाबू क का मुह दखाइव र। का कहर उनम मारामिली ?'

बछनिया न चपचाप मार खा ला। लकिन उसन मफिरवा का नाम नहीं बताया। हाँ जब रात हा गया ता वह बनकर लेट रही। घगटिया का भा उम कामन-कागन थककर मा रही। तब वह उटी चुपक-चुपक जनान इमामवाड क पास म हाना हुआ अग्गू मियाँ क घर म दाखिल हा गया। उस एक बार भी पर ख्याल नहीं आया कि इमामवाड पर जिन्नाता का कब्जा है। मफिरवा अग्गू मियाँ क जनानखान हो म माता था। उसन चुपक-म उमका शाना हिलाया मफिरवा उछलकर पलग स दूर गया और लाठी लकर पलटा। फिर बन्छन का दखकर हस पडा।

न स हस्म डरा दिया रहा। उसन लाठी जमान पर रख दी जा घरट। उसा उमका हाथ पकडकर अपन पलग पर बिठा लिया। बछनिया रान लगा। मफिरवा का राना हुआ बच्चियों का बहलान का फन ना आता था मकिन राना हुइ जवान लडकी का बहलान का तरीका उम नहीं मालूम था। पर न मालूम क्या-क्या कहता रहा। आखिर बन्छन न अपर अफ्गकर गव चुप हना लिया।

न ए म परसान हान का कउन बात है,' चल कलकत्ता।

बन्छन मयार हा गया। मफिरवा का ख्याल था कि अगर वह अभी गुरगुर क लिए रवाना हा जाय ता तहरवाली माकर मिल जायगा।

सुबह का जब रहन वा न अपना गहकचा खाला ता उमम गुलगुल अधाम मौजूद था। पखमूरा भा था। हर चाज था। बस एक चीज नहीं थी। माम वराई खाना बन धनी नहीं थी जिमम वन रखी रखना थी।

वो का भागना तो किसी तरह समझ ही में नहीं आता था। सवाल यह था कि वह भागी किसके साथ। गाँव का हर आदमी मौजूद था। चुनाँचे सारी गंगौली साँस रोककर सुलेमान की वापसी का इंतज़ार करने लगी।

सुलेमान शाम को आया। मज़ूर मियाँ सबसे पहले उसे मिले। सुलेमान ने उन्हें सलाम किया, मगर वह आँखें चुरा गये गोया कि उसे देखे बिना अन्दर चले गये। हामिद मियाँ ने उसके सामने आने का भी इंतज़ार न किया। वह भी अन्दर चले गये। तमाम जुलाहों ने आँखें चुरा लीं, मगर एक बच्चा सिर्फ़ एक कुरता पहने हुए भागा भागा आया और बोला, 'बछिनिया भाग गयी और झगटिया भाग गयी!' इतना कहकर वह लौंडा तीर की तरह भाग गया। बात सुलेमान की समझ में नहीं आयी, मगर उनका दिल धड़कने लगा। वह बड़े फाटक में दाखिल हुए। मज़दूर खपरैल की मरम्मत कर रहे थे और दीवारों पर सफ़ेदी की जा रही थी, क्योंकि मोहर्रम सिर पर आ गया था। बेगार उन्हें देखकर जल्दी-जल्दी काम करने लगे।

'हम्माद मियाँ कब अईहैं?' गया अहीर के लड़के ने पूछा जो गया की अनुपस्थिति में काम की देखभाल कर रहा था। वह दरअसल गया के बारे में पूछना चाहता था।

'काहे।' सुलेमान ने कहा, 'गयवा ना आ गइल बाय?'

'त हम तनी घरे हो आयें।'

'जा।'

वह गया। मज़दूर फिर अपने काम में लग गये। सुलेमान अन्दर चले गये। अन्दर सन्नाटा था।

'बच्छन!' उन्होंने आवाज़ दी।

कोई जवाब नहीं आया। कुबरा ने अलबत्ता अपनी सलवन में गरदन निकाली।

'हे भावज! इ बछिनिया की माई कहाँ चली गयी है?'

'का मालूम?' कुबरा ने कहा, 'ऊ त कल्हे से लापता है।'

'लापता है?'

'हाँ! बछिनिया त सफिरवा के साथ निकल गयी ना।'

'ई आप क्या कह रही ?'

'इन कमीनों को पड़ोस की आग ऐसा परेशान किए है कि मत पूछो।' नईमा बी ने कहा, 'बाजी अब सब्र करने के सिवा चारा क्या है।'

नईमा बी ने जो मशवरा दिया उन्हें वही देना चाहिए था। बस वह एक तरह से खुश भी था क्योंकि एक बात तो तय थी कि मौलवी कस्सार शादी करना चाहते थे और अगर वह बछनिया जैसी हरामजादी से शादी करने पर तैयार हो गये तो खुद उनकी पोती उम्म हबीबा में क्या खराबी है ? माना कि वह रण्डियों की तरह खूबसूरत नहीं है लेकिन सुघड़ है। इसलिए अगर ढंग से बातचीत चलायी जाय तो यह रिश्ता हो सकता है। लेकिन इसके बावजूद उनका फ़र्ज़ था कि वह सुलेमान से हमदर्दी करें सो उन्होंने अपना फ़र्ज़ पूरा कर लिया। लेकिन ज़ाहिर है कि सुलेमान उनके मशवरों पर अमल नहीं कर सकते थे। वह गरदन लटकाये हुए नानी बी के सहन से होते हुए बड़े आँगन में चले गये।

दालान में तीन पलंग थे। तीनों पर तीन बिस्तर लपेटकर रखे हुए थे। सुलेमान इन बिस्तरों को पहचानते थे। एक बिस्तर बछनिया का था एक झगड़िया बी का और एक खुद उनका। झगड़िया बी झाड़-पोंछकर उनका बिस्तर भी रख गयी थी। उनकी आँखें भर आयीं। बिस्तर के नीचे एक पोटली थी। झगड़िया बी एक-एक छल्ला उतारकर रख गयी थी। बस एक पहुँची नहीं थी। सुलेमान को मालूम था कि वह पहुँची रुखन बी के पास है।

सुलेमान को ऐसा लगा जैसे वह बिलकुल बूढ़े हो गये हैं। वह थककर लेट गये। मजलिस से कुबरा की नौहख्वानी की आवाज़ आ रही थी

शर्माना उदू से अम्बाना हुए दाखिल
पर फ़ातिमा का हो गया बाज़ार में रसना

गया गम का उन्हें मुँह हाथ धोने का ख़याल आया। वह जनाने हम्माम के बाहर के आँगनवाले कुएँ पर डोल रखा। उधर गये। डोल किसी चीज़ में फँसा था। उन्होंने अन्दर झाँका। मगर कुआँ यूँ ही बहुत गहरा था और फिर रात था। कुछ नज़र न आया तो उन्होंने काँटा डाला। काँटा किसी भारी

चीज मे फँसा। नईमा बी की ग्लवत पर दस्तक देकर उन्होंने हम्माद मियाँ की गच मागी। मगर उसकी वटरी ग्रत्म हो चुकी थी तो कमर म लालटन बाधकर वह कुए म उतर गय। उनका बयान सही निकला। काँटा बगटिया वा की लाश म फसा हुआ था।

न हिया छिपी है र।"

इस घटना के बाद सुलेमान काफी दिन जिये मगर वह हमशा एक ही बात कहत रह। वडे वूढा म भी और बच्चो स भी और दरो दीवार स भी।

'हम जानत रहे कि ऊ भागी न है! डर के मारे लुका गयी है। वाकी साली पगला गयी रही का हम ऊको मारते ?' फिर एक रात वह बगटिया बो को ढूढ़ता ढूढ़ता उसी कुए म खुद गुम हो गया और इस घटना क काई तीन दिन बाद कुलसुम को रजिय का एक खत मिला। उसन लिखा था कि वह सिनमा देखन गयी थी तो इत्तिफाक से बछनिया स मुलाकात हो गयी। वह बहुत खुश है सफिरवा चटकल का काम कर रहा है लकिन बछनिया कहती है कि माहरम शुरू होनेवाला है कलकत्ता मे इमाम हुसन ता भला क्या आते होग। यहाँ आठवें का हलवा और दस की चाय तो क्या मिलगी। शब्बू चा की मजलिम का जिक्र करत करते वह रो पडी लेकिन सुलमान के डर म माहरम में गगौली आने की उसकी हिम्मत नही हो रही है

रजिय ने उस यह नही बताया कि अब डर की कोई जरूरत नहा है क्योंकि रजिय अपन दुख रोन म लग गयी थी कि जरगाम की तबीयत खराब है और दबीर का इम्तहान होनेवाला है इसलिए वह पाँच से पहले नही आ सकती। मगर इन चार दिना म उसका बदन तो कलकत्ता म जरूर रहगा लकिन उसकी जान गगौली म लगी रहगी।

पाँच की सुबह का जब बस यूसुफपुर म उतरी तो अभी सूरज नही निकला था। अप्रल की सुनक सुबह थी। हवा न उस देखकर लिपटा लिया। मुम्मन हमेश न जल्दी से इक्के पर परदा बँधवाया। वह पाँच की मजलिम को छोडना नही चाहता था क्योंकि अबके वह एक ऐसा नौहा तयार करके आया था कि सग्गू मियाँ मुह देखत रह जायेंगे।

फिर भी जब वह रजिया को उतारकर इमामबाड़े में आया तो फ़र्श से टुकड़ा हटाया जा चुका था और हुसन अली मियाँ सोज़ख्वानी के तख्त पर बैठ चुके थे और शहनशीन का मेज़ तारदार दरवाज़ा खोला जा चुका था। वह अलमों की ताज़ीम करके एक कोने में बैठ गया लेकिन हुसन मियाँ ने उसे देख लिया। वह शायद उसे अपने पास बुलाते लेकिन उन्होंने इसी वक्त सोज़ख्वानी शुरू कर दी।

बच्चे खामोश हो गये। मासूम ने देखा कि मानिस, मद्दू, ताने गगा, हमशा और इस गिरोह के दूसरे तमाम लड़के जो अभी कल तक मिम्बर के अन्दर या पास बैठा करते थे अब फ़र्श पर बैठे हुए हैं। बुज़ुर्गों के ज़ानुओं से लगे हुए और उनकी जगह लेने के लिए दूसरे बच्चे आ गये हैं। न किसी ने इन बच्चों से कहा कि अब उन्हें मिम्बर के पीछे नहीं बैठना चाहिए और न किसी ने उन बच्चों को मशवरा दिया कि वे मिम्बर में घुस जायें। यह तब्दीली चुपके-चुपके हो गयी थी।

मासूम कोई छः साल के बाद आया था लेकिन इस बीच में कुछ भी तो नहीं बदला था। हुसन अली मियाँ वही मरसिया पढ़ रहे थे। उनके बाद बज़ार मियाँ यकीनन मिम्बर से वही मरसिया सुनायेंगे जो आज की तारीख को इस मजलिस में बरसों से पढ़ा जा रहा है। दीवार पर जुलजिनाह की आसूदा तसवीर उसी जगह पर थी। अनीस की रुबाई भी अपनी जगह पर थी, कुरान का आसमानी भी उन्हीं जगहों पर था जहाँ पाँच साल पहले—या शायद पचास साल पहले थी। शहनशीन में अलमों की तरतीब वही थी। अलमों पर पड़ा हुआ दुपट्टा वही था। मिम्बर का गिलाफ़ वही था। मजलिस का फ़र्श वही था। पान रंग की ज़मीन स्याह रंग के फूल और फ़र्श पर बैठनेवाले वही थे और उन्हीं जगहों पर बैठे हुए थे जहाँ वह पाँच साल या बीस साल पहले से बैठते चले आ रहे थे। फ़र्क हुआ था तो बस इतना कि मिम्बर के अन्दर और मिम्बर के पास बैठनेवाले बदल गये थे—और कुछ जगहें खाली हो गयी थीं—शाहद मियाँ और सैयद मोहम्मद मियाँ और सरदार मुख्तार की जगहें खाली थीं। खाली रहा थीं बल्कि खाली रह गयी थीं क्योंकि अगर ये जगहें खाली न होतीं तो इसका मतलब यह होता कि वे मौत किसी वक्त में न आ सके

है। वे जगहें भरी हुई थीं लेकिन जो लोग वहाँ बैठे थे वे अनकुस मालूम हो रहे थे क्योंकि वे उनकी जगहें नहीं थीं। यानी इन जगहोंवाले अब कभी नहीं आयेंगे। इस फर्श को देखकर मासूम को यकीन हो गया कि गोरे दादा, अब्बू मुहम्मद खाँ और रशीद मियाँ का इन्तकाल हो चुका है। अब्बू मोहम्मद मियाँ की जगह अब्बू मियाँ बैठे थे। गोरे मियाँ की जगह शब्बू मियाँ और रशीद मियाँ की जगह डिप्टी अली हादी क्योंकि हकीम अली कबीर ने किसी मुर्दे की जगह पर बैठने से इन्कार कर दिया था। फिर इन लोगों की खाली जगहों को और नीचेवालों ने पूरा किया। यहाँ तक कि पूरे फर्श पर इन्कलाबी तब्दीलियाँ हो गयीं। लेकिन फर्श बुनियादी तौर पर वही रहा।

सोजख्वानी के बाद वजीर मियाँ ने मरसिया पढ़ा—

ऐ कलम दामने कागज पे गुहर रेज हो न फिर

यह मरसिया पुश्तों से सुनते सुनते लोगों को याद हो गया था। वजीर मियाँ को पूरा मिसरा नहीं पढ़ना पड़ता था। आधा मिसरा वह पढ़ते तो आधा मिसरा सामुईन (सुननेवाले) पढ़ देते। यही हाल तकरीबन तमाम मरसियों का था। ये मरसिये उन फुन्नन मियाँ को भी याद थे जो निपट अनपढ़ थे और अग्गू मियाँ को भी याद थे जिन्होंने यूनिवर्सिटी में तालीम पायी थी। उदास और तनहा लमहों में ये दोनों ही इन्हीं मरसियों को गुनगुनाते थे। इन्हीं मरसियों के लफ्जों से फर्श पर गंगौली के सैयद साहिबान ने मरना जीना हँसना रोना मोहब्बत करना और नफरत करना सीखा था। सारी जिन्दगी का सारा निजाम कर्बला के कागज पर खुशखत लिखे हुए इन्हीं मरसियों पर कायम था।

हुसैन अली मियाँ ने रुखसत पर रोना चाहा। लेकिन वह कामयाब न हुए मगर शहादत की मंजिल आते आते वह अपनी आँखों को नम कर लेने में कामयाब हो गये। मजूर मुँह खोले खोले भाँय भाँय रो रहे थे और मिम्बर के पास बैठे हुए लद्दन उन्हें यूँ बच्चे की तरह रोता देखकर हँस रहे थे।

मरसिये के बाद वजीर मियाँ रूमाल से चेहरे का पसीना साफ करते हुए मिम्बर से उतर आये।

"माशाअल्लाह!" अब्बू मियाँ ने कहा।

'भई खूब पढ़ा !' छिप्टा अली हादी बोले।

वाह ! हसन अली मियाँ ने शनवाला के गले में कहा और फिर वह अपनी भीगी हुई आँखों को कुरते के दामन से पोंछने लगे।

बज़ार मियाँ ने सबको शुक्र करके सलाम किया। इस बीच में साहबज़ादे हसन ने अपने कोट की जेब से बयाज़ निकाली और मुनिस ने लपका को गर्द में गड़ा कर लिया।

'हसन ! हसन !' सारे दस्त उठा कर साथ कहा और स्यामयाने मातम की धमक से लरज़ उठा। शामा की कलम हिलने लगी।

हसन ! हसन ! बुजुर्गों ने भी धीमे सुरों में आवाज़ मिलायी।

'हसन ! हसन !' मुनिस की आवाज़ ज़रा बुलन्द हुई।

हसन ! हसन ! सारे दस्त की आवाज़ बुलन्द हो गयी।

मातम का रंग गाढ़ा होता गया। मगर मासूम ने महसूस किया कि मजलिस-मंडी का मातम कमज़ोर हो गया है। उसने स्टेज पर निगाह डाली। जाना-पहचाना आना-जाना कहीं नज़र नहीं आया। अबुल बाक़िर नहीं थे, अली अहमद नहीं थे, अमजदवा नहीं था, बकरीदवा नहीं था, शम्सू नहीं थे। जवानों का मातम आधा हो गया था।

"ये सब लोग कहाँ गये हैं ?" मजलिस के बाद उसने फुन्नन से पूछा।

"पाकिस्तान में भरती हो गये हैं।" फुन्नन ने कहा। "फिर वह अलगरज़ियाबाद में शामिल हो गये।" "फिर कहा जाता है। ऐसा कहने का इरादा इनका था है।"

अल्लाहहू अकबर सब शुरू किये।

मजलिस का हिस्सा अहमद हुसैनिया के ज्वाइंट सेक्रेटरी बशीर मियाँ ने बेचना शुरू किया। चूँकि इस मजलिस में बाकुराज़िदी मजलिस होती थी इसलिए इस हिस्सा मौलवी बेनाम हसन सज्जादहुसैन शरीफ़ थे। बशीर मियाँ ने हुसैनिया का मकान रखा था और कभी मुश्किल से शक्कर का परमिट हासिल करके पकवान बनवाया था। इसलिए जब बन्नू मियाँ की आवाज़ गूँजी तो उन्होंने मुस्कराकर मौलवी बशीर की तरफ़ देखा मगर मौलवी बशीर ने बोली नहीं लगायी।

यह क्या भाई बेदार ! क्या आप आज हिस्सा नहीं खरीदेंगे ?" बशीर मियां से न रहा गया तो उन्होंने मौलवी बेदार से पूछ ही लिया।

आजकल इनका मंदा सराब है !" फुन्नन मियां ने कहा।

तमाम लोग हँस पड़े। शब्बू मियां को लोगों का हँसना अच्छा नहीं लगा। वह चुपचाप बगलवाले कमरे में चले गये।

दू आना !' मजूर ने ताली लगायी।

'च च च ! इतना दाम लगा दिया !' डिप्टी अली हादी ने कहा, यह तो सोचो कि आजकल शक्कर नहीं मिलती और भाई बशीर ने मुश्किल से यह मिठाई बनवायी होगी। मैंने तो इसी खयाल से सप्लाई आफिसर से कह रखा था उस बेचारे ने शकर की तीन बोरियां चाँद रात भिजवा दी थी।

दू रुपिया !' डिप्टी अली हादी के लड़के ने दाम लगाया। अली हादी मियां ने उसे घूरा तो वह सिटपिटा गया, क्योंकि उसने तो सोचा था कि वह उसके हौसले की दाद देंगे और बशीर चा भी खुश होंगे कि चलो किसी ने तो इसका खयाल किया कि जंग के जमाने में शक्कर नहीं मिलती।

'घूरते क्यों हैं ?' वजीर मियां ने कहा चार बालूशाहियाँ और रखवा दूंगा ए नाना !' उन्होंने हामिद मियां को मुखातिब किया जो तकुर्रुफ तक्सीम कर रहे थे अली हादी भाई का लड़का बाली गालिब है। यतीम के हिस्से में चार ठो बालूशाही और बढ़ा दीजिये।'

दरअसल वजीर मियां ने अली हादी मियां को सप्लाई आफसर की भिजवायी हुई शक्कर की तीन बोरियों का जवाब दिया था।

'चुप रह ये ! हकीम अली कबीर ने अली हादी मियां के लड़के को डाँटा इन्नी बाली मत बोल कि बेदार भूतन के चुप हो जायें।'

आप त ऐसा कह रहे जस बेदार भाई यतीमन को दू ठो रुपया ना दे सकते ! छम्मन अली मियां ने कहा।

हम खुदै यतीम हैं।' मौलवी बेदार ने कहा।

यतीम का हिस्सा दू रुपिया ! मशू ने नारा लगाया।

तन्नू तुम फौज में क्यों नहीं चले जाते ! डिप्टी अली हादी ने शब्बू

मियाँ ने बड़े सहज से कहा, जो एफ०ए० का इम्तिहान देकर सीधा गढ़ौली आया था, "कमीशन दिलवा दूँगा।"

'मद्दन को क्यों नहीं भेजते?' फुन्नन मियाँ बोले, 'मेरे बारात हमरे ही सदर रह गये हैं!'

'तू और हाल हो मद्दन का बड़ा भजनवान!' हकीम साहब खिसिया-से हो गये।

हमने सोचा कि उन्हीं बातों का नाम जिन्दगी है ना, और उनका हाथ-पाँव तन्नू से अच्छा है।

मद्दन ने अपनी तारीफ सुनकर तन्नू की तरफ देखा। उसे अपने कद-बदन पर काफ़ी नाज़ था। वह नीचे से एक मुजस्सम की तरह चमकदार और कड़ा था। इसके मुकाबले में तन्नू दुबला-पतला-सा नौजवान था। तन्नू का दूसरा सबसे अफ़सोस था क्योंकि सफ़ूरिया ने मद्दन के मुकाबले में उसे रद्द कर दिया था।

जनता की यह नवाबी और महरूमियों की जंग एक ज़ब्त की निशानी थी।

तन्नू इस घर दो बरस पहले आशिक हुआ था। हुआ यह कि वह गरमियों में आम खाने गढ़ौली आया था। बड़े फाटक में तो कोई था नहीं, इसलिए वह मजूर मियाँ के घर ठहरा। गढ़ौली में मजूर मियाँ अपने आमों के लिए मशहूर भी थे। उनके बागों में गाज़ीपुर के लँगड़ा के अलावा मलीहाबाद के दशहरी और खास रामपुर से समर बहिश्त और बम्बई के अल्फांसो की कलम भी थी। बीजू आमों का तो कोई शुमार ही नहीं था। पर के सबसे बड़े समर में मजूर मियाँ अपना रग-रग में पाल डलवाते थे। फिर जब आम तैयार हो जाते, तो वह एक टोकरा बशीर और कबीर मियाँ के लिए और एक टोकरा अब्बू और अब्दू मियाँ के लिए रवाना करते और फिर सहसा चौपाल पर आम खाने में जुट जाते।

तन्नू ने सफ़ूरिया की जवानी को आम के ग्वालियर कमरे में देखा था। वह भूरी हुई तैयार आमों को अलग कर रही थी। उसका दुपट्टा ढलका हुआ था और सारा कुरता पसीने की वजह से शुरुआत जिस्म से चिपक गया था।

...ग्वालियर पर अधगा महसूस करके वह बोला। उसका सवाल था

शायद मजूर मियाँ आ गये हों क्योंकि वह इधर कोई महीनेभर से देख रही थी कि मजूर मियाँ की आँखों से जैसे राल टपक रही है। यह सोचते ही उसे घिन आने लगी। मजूर मियाँ को देखकर उसे चिपचिपाहट का अहसास होता था लेकिन वह कुछ कर नहीं सकती थी, क्योंकि

वह उस साये को देखकर घबरा गयी, क्योंकि उसे मालूम था कि रब्बन बी और सकीना बी घर में नहीं हैं। सलमा छोटी बहनों के साथ सलवत में है और इस कमरे का सिर्फ एक ही दरवाजा है। ऐसी हालत में वह इस कमरे में हरगिज न आती लेकिन उसे तो सफ्रिया ने यह बताया था कि मजूर मियाँ यूसुफपुर गये हैं। वह सफ्रिया से बहुत खफा थी। वह हरामी का जना उसकी तरफ देखता ही नहीं था और देखता भी था तो मियाँ का नाम लगाकर मजाक करता था।

मगर तन्नू को देखकर उसकी जान में जान आ गयी क्योंकि सारे गाँव में मशहूर था कि झंगू मियाँ और बशीर मियाँ के लड़के तो नामखाह जवान हो गये हैं, बिलकुल बुद्धू हैं। लड़कियों को देखकर उन्हें मुसकराना भी नहीं आता। तो भला तन्नू को देखकर दुपट्टा ओढ़ने या चिपके हुए कुरते को अलग करने की क्या जरूरत थी। वह फिर झुककर आम चुनने लगी। खुद तन्नू इसे देखकर गिटपिटा गया। मगर लंगड़े आमों की तरह तैयार छातियाँ बारीक कुरते के अन्दर चोली से निकली पड़ रही थीं और सब्ज सूसी के पाजामे का सुर्ख नेफा और नेफे से ऊपर का सारा धड़ नजर आ रहा था। तन्नू का हलक खुश्क हो गया।

"नाजिए!" उसने दो आम तन्नू के हाथ पर रख दिये। तन्नू घबराकर पीछे हट गया। फुन्निया खिलखिलाकर हँस पड़ी "आप तो लड़कियन को भी मात किये हैं तन्नू भैया!"

तन्नू के बदन का सारा लहू खिंचकर कानों की लवों में आ गया।

"हम जा रहे!" वह इतना कहकर भाग खड़ा हुआ। फुन्निया देर तक तन्नू की बुजदिली पर मुसकराती रही। फिर चन्द दिनों के बाद हकीम साहब के यहाँ पाल ही के कमरे में मदन आया। मगर मदन यह कहकर नहीं भागा कि "हम जा रहे हैं!" वह अन्दर आ गया। उसने उस वक्त सिर्फ एक तहमद बाँध

रहा था। सफुनिया उसकी चौड़ी छाती को देखती रह गयी। यहाँ तक कि वह छाती इस कदर करीब आ गयी कि सफुनिया के लिए देखना नामुमकिन हो गया। जहाँ तक उसकी आँखें जा सकती थीं वहाँ तक सद्दन की चकला छाती फैली हुई थी।

सद्दन ने इस बात का ज़िक्र अपने हमजोलियों से किया। ज़ाहिर है कि तन्नू भी इसका हमजोली था। चुनांचे फिर वह सफुनिया से आँखें न मिला सका। सफुनिया को देखते ही उसके कान की लवें सुर्ख पड़ जातीं और उसका हलक खुश्क हो जाता और उसकी पूरी आँखें इधर-उधर देखने लगतीं। सफुनिया ने भी उसकी इस कमजोरी को नोट किया था। इसलिए वह उसे छेड़ा करती थी। फिर बछनियाँ और गुलशन और उम्मे हबीबा और सितारा और बिल्लो—गरज कि शकिंगन पट्टी की तमाम जवान और नौजवान लड़कियाँ उसे छेड़ने लगीं। हद तो यह है कि सकीना और कुबरा और कभी-कभी नदमा बी भी जुमले फेंकने से बाज़ नहीं आती थीं। और यह बात सफुनिया ने सद्दन को बता दी। चुनांचे सद्दन ने भी उसे छेड़ना शुरू कर दिया था।

इसीलिए जब मजलिस के फ़र्श पर सद्दन उसकी तरफ़ देखकर मुसकराया तो तन्नू के बदन में एक तनाव आ गया। वह उसी शाम मुजफ्फरपुर भाग गया और अपनी उम्र एक साल ज़्यादा बनाकर फ़ौज में भरती हो गया। यह ख़बर गंगौली में आठ मोहर्रम को आयी जब आठ के गश्त में मातम करने के लिए मुजफ्फरपुर के शिया मातमियों का एक दस्ता आया।

यह बात सफुनिया को भी नहीं मालूम थी कि तन्नू किस उम्र की वजह से फ़ौज में भरती हुआ है।

अब्बासी बीबी ने आठ की मजलिस में मनाया कि अगर तन्नू ख़ैरियत के साथ वापिस आ गया तो वह मजलिस करेंगी। और दद्दू मियाँ ने नवीं की जनानी मजलिस में अली अकबर की शहादत का हाल कुछ इस तरह बयान किया कि औरतें देर तक सीना पीट-पीटकर रोती रहीं। रहमान बी ने अपने करीब की शाखार को दूर तक जमा कर लिया और नर्गिस ने जो मुहर्रम मांग ली उससे सुर्ख गया और फिर दूर तक पीर फैल गयी।

मैं मरिया गयी हो का! अब्बासी बी ने नर्गिस का पुन्दा।

'कोनू मैं जान के गिराये हूँ।'' नइमा बी ने कहा।

''अर मौला तू जवान विटवा की लशिया कस उठइए! अक्बरी बी न बैन करना शुरू कर दिया।

शब्बू मियाँ मजलिस खत्म करके चले गये, लेकिन औरतें देर तक रोती रहीं। यहाँ तक कि कुबरा के दाल लग गये और फिर जो मातम हुआ वह गंगौली में यादगार बन गया। मजलिस के बाद लड़कियाँ तनहा गोशों में जा जाकर कुरते उलट उलटकर अपनी अपनी छातियाँ देखने लगीं, जिन पर खून जम जाने से स्याह धब्बे पड़ गये थे।

अन्नी की बेटी बनू फातमा की शुजाअत का मजाहिरा कर रही थी। ओना मोहम्मद को पास बिठाये समझा रही थी कि देखो बेटा, तुम जाफर और अली मुर्तजा की यादगार हो। कल जिहाद में सबक्त करना और अगर तुमने दुश्मन की तरफ देख भी लिया तो मैं दूध नहीं बख्शूंगी

अग्गू मियाँ की हमीसखानी की आवाज़ से इमामबाड़ा गूँज रहा था। गंगौली आँख बन गया था और ऐसा मालूम होता था कि पूरी दक्खिन-पट्टी आँसुओं के सैलाब में बह जायगी। दरवाज़े के पास खड़ी हुई हर औरत थोड़ी देर के लिए ज़नब बन गयी थी। सब कर्बला में थीं और अपने-अपने बेटों को हुसैन पर कुरबान होने का मशवरा दे रही थीं।

अरे मौला! मैं न रहिया हुआँ नहीं त हूँ अपन अब्बास का कुरबान करतियू! कुबरा बैन कर रही थी, मगर उसकी शख्सीयत का एक हिस्सा डर रहा था कि कहीं अब्बास भी तन्नू की तरह भागकर फौज में भरती न हो जाय।

गया अहीर मजलिस के इस हंगामे से जरा हटकर गुसलखाने के दरवाज़े पर बैठा लाठी की गरिया गरियाकर चुप करवा रहा था। बड़ा सफेद फरहरा हवा में लहरा रहा था। फरहरा कई जगह से फट गया था और गया सोच रहा था कि इस जग ने तो मोहर्रम की रौनक छीन ली है। वरना भला बड़के फाटक पर फटा हुआ फरहरा लग सकता था!

वापस जाते हुए मौलवी बेदार को देखकर यह खड़ा हो गया। जेल से

आने के बाद मौलवी बख्तार से पहली बार उसका सामना हो रहा था। फौजदारी की बात और थी। अगर फौजदारी फिर होगी, तो वह फिर मौलवी साहब पर वार करने में नहीं चूकेगा, मगर मौलवी साहब आखिर जमादार थे। गया ने झुक झुककर आगे माथे पर हाथ ले जाकर सलाम किया।

"क्या है रे?" मौलवी साहब ने पूछा।

गया ने दाँत निकाल दिए, "टाट बाट मार साहब!"

मौलवी साहब फाटक से बाहर निकल आये। अन्दर नवरुख की नरसीम का हंगामा मचा हुआ था। वाजिद मियाँ नौहा का पर्दे से माँ बहन की गंदी-गंदी गालियाँ और एक एक हिस्सा तकसीम कर रहे थे।

रात अच्छी-खासी सर्द थी। मौलवी बदार ने दुशाला को अच्छी तरह लपेट लिया। रात काली थी। आवारा कुत्ते भी कहीं दुबककर बैठ गये थे। जुलाहों के मकानों के दरवाज़े बन्द हो चुके थे और गहरा अंधेरा था। मौलवी साहब ने सोचा कि फुन्नन मियाँ के पिछवाड़े से निकल जायें। लेकिन इधर की ज़मीन ज़रा ऊबड़-खाबड़ थी। ठोकर खायी और गिर पड़े। इत्तिफाक से सफूनिया सीनी में हिस्सा लिए हुए अली मियाँ के यहाँ से फुन्नन मियाँ की तरफ जा रही थी। उसने सीनी को ज़मीन पर रखकर मौलवी साहब को सहारा दिया। रात इत्तिफाक इतनी गरम हो गयी कि मौलवी साहब को पसीना आ गया। मौ के इन्तकाल के बाद से तो कई साल लगे मगर आमिना के बेवा हो जाने के बाद से मौलवी साहब ने पहली बार एक औरत के बदन की हरारत महसूस की थी। और औरत भी कौन—सफूनिया! जो एक दहकती हुई अँगारी से कम नहीं थी। उसका बदन काँपने लगा।

"हम पर लौटा न!" मौलवी बदार ने कहा।

सफूनिया को भला क्या एतराज़ हो सकता था क्योंकि गाँव की औरतें मौलवी साहब का शुमार मर्दों में करती ही नहीं थीं। उसने सीनी को सिर पर रख लिया और दूसरे हाथ से उन्हें सहारा दिया। कुलसुम ने जब देखा तो मौलवी साहब का हाथ सफूनिया के कन्धे पर था और वे सिटपिटाए हुए से अपने घर में दाखिल हो रहे थे।

ए ! कुलसुम चमकी, 'बेदार भया ! आप सठिया गय है का ! इहू ना मोचन कि आज शत्र आशूर है।

मौलाना पर घडा पानी पड गया और सफ्निया की समझ म भी यह बा। आ गयी कि बात का बतगन्ड कस बनता है। उसन मौलाना का इस झटके मे छाडा कि वह लडखडा गये। लेकिन वह उनकी तरफ दखे बिना कूल्ह मटकाती सीनी सभाले फुन्नन मियाँ के घर की तरफ चल पडी।

कुलसुम न उससे कुछ नही कहा क्योंकि दूसरी जवान लडकी स्वय्य मौजूद थी। सफनिया न सफाई दनी चाही थी लेकिन कुलसुम न उस घुडक दिया। वह सर मारी का पावभर चावल लेकर चली गयी और कुलसुम फुन्नन की राह दखन लगी। मगर फुन्नन मिया का ता खबर ही नही थी कि किस्सा क्या है। वह अशरफुल्लाह खाँ क साथ बात करते हुए सलीमपुर की तरफ चल गये। असल म खा साहब उनम कुछ खास बात करना चाहत थे। किस्सा यह था कि उनके नवासे मरह क जान क बाद तीन महीन क बाद पता चला कि इनकी एक नौकरानी गुलजहरी हामला है। उसन मरह का नाम लिया तो खाँ साहब न उसे मार पीटकर निकाल दिया। इसकी खबर हकीम अली कबीर का मिली ता उन्होंने बारिखपुर क ठाकुर साहब स कहकर उसका उनक एक कारिंदे क घर म डलवा दिया और अब उस हरामजादी न नाना नुफ्क का दावा किया था। वह कहती है कि मरह न उसस निकाह किया था और जाहिर है कि हकीम अली कबीर का भला क्या मालूम कि क्या हो रहा है।

और ठाकुर हरनारायन प्रसाद भी इसी का साथ द रह है। खा साहब न कहा।

ई ता कोई हैरान हाए की बात ना है। फुन्नन मियाँ न कहा ठाकुर हरनारायन प्रसाद साहब स तऽम्मम भी समझे का है। और सुना है कि बारिख पुर वाल ठाकुर कुवरपालसिह बहुत बहादुर हो गय है। झिंगुरिया हमरा मुँह दखकर चुप हो गया नहा तो डण्डा कर दता।

मगर इस मामल म क्या किया जाय ? लडका तो मरह ही का है।

अर ता ऊ म का हाना है ! लडका है ना हुआ कर। आप फिक्र मन करिए। न रहिए बाँस न बजिए बाँसुरी।

फुन्नन जब वापस आये तो उन्हें यह देखकर हैरत हुई कि कुलसुम जाग रही है और कुलसुम से मशकूनिया और मौलवी बशीर की बात सुनकर वह सन्नाटे में आ गये।

"ये कौन काफ़िला है कि मशकूनिये को घर में ले जाये?"

"अब ई सब हम का जानें।" कुलसुम बोली, "वाको हम उन्हें देखा है। वाको हम जौन देखा तौन बता दिया।"

"अच्छा! ए मुमताज़!!" फुन्नन मियाँ ने बड़े लड़के को पुकारा, जो गन्दा नाद गा रहा था। दो आवाज़ों के बाद वह जागा। तब फुन्नन मियाँ ने कहा, "तनी रहीमवा को बुला लियाओ।"

मुमताज़ कसमसाता हुआ उठा। निहाफ़ हटाते ही सर्दी की लहर से वह कपकपा गया। "ए हो बखत जाय।" वह मिनमिनाया।

"ठिठुर मुँह से नहाइन किरिया और नता बाद काम हाय ते एहा बखत, उही बखत कर सकिहा।" कुलसुम बोली।

मुमताज़ ने सिपाहियोंवाला एक पुराना ओवरकोट कन्धे पर डाल लिया जो शायद ऐसे मौक़ों के लिए घर में न जाने कब से रखा हुआ था। यह बात फुन्नन मियाँ के सिवाय किसी को मालूम नहीं थी कि वह कोट कहाँ से आया था। शादी के एक जुलूस में उन्होंने वह कोट एक हवलदार से छीना था।

रहीम हज्जाम के आने तक फुन्नन मियाँ टहलते रहे। —— सवाल भी लगा था कि इक्किन-दुट्टावालों में इन्तज़ाम मन की सूरत कैसी जल्द निकल आयेगा। बल्कि मोहर्रम के बाद ही हज्जामों का पंचायत बैठ गया।

रहीम खड़ा हुआ।

"हम पहले भी बारी ये दो बात पूछ रहे भये हैं कि आख़िर हमनी का काना इस्तेमाल काहे ना होत।" उसने सारा राम-कथा सुना डाली। पंच लोग गन्दा नहाय सुना रहे। सबका ज़रा पचीस था। क्योंकि पंच लोगों को यह बात मालूम था कि हमनी का काना इज्जत ना होत। इज्जत तो सिर्फ़ ज़मींदार की होती है और ये माद बात होता है। लेकिन ज़ाहिर है कि पंच लोग यह बात नहीं कहते थे और अब रहीमवा के नाटे पर यह सवाल उठ गया था तो पंच लोगों का चौधरी-नीताई घमसा होना ही था।

करनी। रहीम बिरादरी का मुह देखता रह गया, क्योंकि पचायत के इतिहास म यह पहली घटना थी जो फसला किये बिना उठ गयी थी। वह अब्दुल अलीम को लकर घर चला गया। सफुनिया भात पसा रही थी। उसकी माँ चूल्हे के पास बैठी आग ताप रही थी।

पच लोग का कहिन ?' सफुनिया की मा ने पूछा।

पच लोग कुछ ना कहिन " रहीम न कहा, 'ई हरामजादी के कारन हम वहा मुह दिखाय लायक ना रह गये।

उसन सफुनिया को पीटना शुरू किया। मा न बीच बचाव करना चाहा तो रहीम उसे भी मारने लगा। दोनो औरतें उसे गालिया देने लगी। जितनी देर वह उन्हे मारता रहा उतनी देर मे बीसा बार तो उसका जनाज़ा निकला। बीसा बार उसके बदन म कीडे पडे गरज कि उसकी दुगत बन गयी। मगर वह उन दोनो को पीटता रहा। अब्दुल अलीम ने दो एक बार बीच म कुछ कहना चाहा लेकिन रहीम न उसे बोलने न दिया। इसलिए वह तो कच्ची की एक सिगरट सुलगाकर दालान म पडे हुए बँसखट पर बठकर सफुनिया की तरफ देखने लगा जिसका कुरता तार तार हो चुका था

रहीम जब सफुनिया और उसकी मा को मारते मारते थक गया तो उन्हें मोटी मोटी गालियाँ देता हुआ घर स निकल गया। उसके जाने क काफी दर बाद तक सफुनिया अपने बाप की सात पीढिया को गाली देती रही। जब गालियो का खजाना खत्म हो गया या दुहराने तिहराने की वजह स रूखा सँगा हो गया तो उसन अब्दुल अलीम की निगाहो की चुभन महसूस की। उसन तुरन्त ही अपना बदन समेट लिया। अब्दुल अलीम दूसरी तरफ देखने लगा। सफुनिया कोठरी म चली गयी। उसकी माँ अब्दुल अलीम को अपनी गाम और ननद की आवारगी का मनगढन्त कहानियाँ सुनाने लगी।

अउर अब ऊ हरामी का जना ईहाँ माथा फुन्नन मियाँ की हाँ गया हाइहै। हमहूँ ई न मालुम ना होईहै का ऊ फुन्नन मियाँ का लरका है।' सफुनिया की माँ ने यहाँ तारकर तान तोडी।

लेकिन उसकी यान मिल लगती नहा था। क्योंकि फुन्नन मियाँ उम्र म रहीम स कवल छ या सात ही साल बड़े थ।

ख़ैर वह रहीम के पास रहे हों या न रहे हों, मफ़लिया की माँ का यह ख़याल ठीक था कि रहीम फुन्नन मियाँ के घर ही गया होगा। वह यह बताना चाहता था कि उसके सम्मान ने सब गड़बड़ कर दिया। मगर फुन्नन मियाँ उसे घर पर मिले ही नहीं। मुमताज़ ने उसे बताया कि वह कहीं गये हुए हैं।

रात बहुत ठण्डी थी इसलिए फुन्नन मियाँ ने जाड़े में जाना हुआ गरम कोट पहन रखा था जिसके भीतर के अस्तर का उन्होंने गले तक बन्द कर रखा था। उनके साथ झिंगुरिया और उसके बारह आदमी थे। फुन्नन मियाँ कासिमपुर के शाहरुखान कारान शिव मन्दिर में रुक गये। झिंगुरिया अपने आदमियों को लेकर आगे बढ़ गया।

कासिमपुर में हर तरफ़ श्मशान की रात का गहरा सन्नाटा और अंधेरा था। झिंगुरिया और उसके आदमी गली-गली के एक साफ़-सुथरे मकान के सामने रुक गये। आस पास का कोई आदमी झिंगुरिया जैसा सेंध नहीं मार सकता था। उसने थोड़ी देर में एक साफ़-सुथरी सेंध लगा ली। उसका एक आदमी सेंध से मकान में घुसा। तभी एक कुत्ता चीख पड़ा। लेकिन उसकी चीख बीच ही में टूट गयी। मकान का दरवाज़ा खुल गया। झिंगुरिया अपने आदमियों समेत मकान में दाख़िल हो गया।

ठाकुर कुबेरनारायणसिंह का कारिन्दा शेर मोहम्मद बराबर सो रहा था। सो आदमी उसकी चारपाई के चारों तरफ़ खड़े हो गये। झिंगुरिया ने उस नौकरानी की तलाश शुरू की जिसका नाक-नक्शा फुन्नन मियाँ ने बयान किया था और फिर उसके पास तो एक छोटा बच्चा भी होगा इसलिए झिंगुरिया ने नाक-नक्शे पर कोई ध्यान नहीं दिया। एक जवान औरत के साथ एक मुन्ना सो रहा था।

झिंगुरिया ने उस औरत को इस सफ़ाई से काबू में किया कि वह बात भी न कर सकी। लेकिन जब वह अपने आदमियों के साथ उस औरत को लेकर निकल रहा था बच्चा जाग पड़ा। जब किसी ने उसका गला नहीं घोंटा तो वह चीखने लगा, पाँव पटक कर रोने लगा। एक और औरत जो वह बच्चे के पास गया। उसने बच्चे को गोद में ले लिया मगर जब वह दरवाज़े पर आ कर

नही हुआ तो वह उसी पलग पर बठकर उसे अपनी छाती का दूध पिलाने लगी

तीसरे दिन जब एक कुएँ से एक औरत की लाश निकली तो बारिखपुर म शोर हो गया। ठाकुर हरनारायन प्रसाद गुलाबीजान को छोड़कर झट अपने घोडे पर चढ़कर बारिखपुर पहुँच गये। पीछे पीछे समीउद्दीन खा भी आये। शेर मोहम्मद ने लाश की शिनाख्त की कि लाश उसकी गुमशुदा बहन की है। लाश को देखकर शेर मोहम्मद की जान म जान आ गयी। क्योंकि गाँव म तो यह मशहूर हो गया था कि वह किसी के साथ निकल गयी है।

फुन्नन मिया इस खबर को सुनकर सन्नाटे म आ गये। उन्हें इसका अफसोस नही था कि उस नौकरानी के धोखे म खामख्वाह शेर मोहम्मद की बहन मारी गयी। उन्हें इसका अफसोस था कि उनका वार खाली गया और अब मुकदमे की तारीख सिर पर आ चुकी है।

अब क्या होगा ? अशरफुल्लाह खा ने कहा।

"ईह त हमहूँ सोच रहे। फुन्नन मिया ने कहा, 'लिखिए आप ऐसा करिए कि जाइए बेदार की हा और उनसे कहिए कि अली कबीर मे कहि के ई मुकदमा उठवा लें नाहीं त सफनियू मुकदमा कर दिहिए।

म उनके दरवाजे पर नही जा सकता।

आप से कौन कहि रहा जाये को !' फुन्नन मियाँ ने कहा, 'हम जायँगे हमहूँ को त अपना निमाव चुकाये का है।'

अशरफुल्लाह खाँ बोले भाई अब आप जानिए और आपका काम जाने। अगर यह मामला न दबा तो हम समधियानवालो को मुह दिखलाने के काबिल ना रह जायँगे।

'च च आपकी बात ! फुन्नन मियाँ ने हुक्के की नै को एक तरफ करते हुए कहा ई मामला दबहू वाले नहीं और हाँ भाई ऊ लपना चमार कल आया रहा। ऊ कुएवाली जिमिनिया ऊ को काहे न दे दते आप। पान से नजराना के रहा।

यह साला बड़ा हरामी है। ठाकुर कुवरपालसिंह स मुकदमा लड रहा। वह हारकर रह गये कि बदमाशी करवा न। मैंने कटवाने गये तो चमार भी

गड्ढे लेकर आ गये। इन कांग्रेसवालों ने नाक में दम कर दिया है। अब नीच जातवाले भी आँख उठाकर बात करना चाहते हैं। उनको ज़मानत क्या लिखवानी है?

'आठ सौ करवा दें?' फुन्नन मियाँ ने कहा।

'मैं तो सोच रहा कि इसे बराड़ पर दे दूँ।'

'का भाई, ई ज़माना आ गया कि सलीमपुर के खाँ साहब बराड़ पर गेन जाने लगे।' फुन्नन मियाँ ने मूँछों पर ताव देकर कहा, 'एक हज़ार तक पर मामला हो सकता है।'

असरफुल्लाह खाँ तैयार हो गये क्योंकि एक हज़ार की रकम कम नहीं होती। फुन्नन मियाँ फिर भी दो सौ के नफ़े में रहे क्योंकि उन्होंने मामला बारह सौ पर तय किया था।

'सुना है झिंगुरिया गिरफ़्तार हो गया।'

'हाँ,' फुन्नन मियाँ ने कहा, 'बाकी ऊ का का होता है। ऊ तो घुमुरपुर के हवालात में रहा। दूसरे दिन छोटे और ठाकुर साहब ऊ का गिरफ़्तार कर लिहिन।

मगर...

"भाई, हम आपसे कहा न था। छोटी-छोटी बात का करें। घुमुरपुर के थानेदार असदुल्लाह खाँ का हम तीन सौ गिनवा दिया। बस काम बन गया।

'लेकिन यह रुपया आप क्या देंगे!'

'का हमरा और आपका रुपया दो है?'

असरफुल्लाह खाँ ने बहुत कहा लेकिन फुन्नन मियाँ वह रुपया लेने पर तैयार नहीं हुए। खाँ साहब बेचारे चुप हो गये। एक चिलम पीकर फुन्नन मियाँ ने इजाज़त चाही क्योंकि उनका घोड़ा खाँ के घर पर बँधा आये थे और जब घर पर पहुँचे तो सामने देखा अपने दरवाज़े पर बस हो ठाकुर बैठा हुआ मिला जैसे कल उस रोज़ आये थे।

'सलाम मीर साहब!' वह खड़ा हो गया।

'हमार काम न हो सकत। बाकी खाँ साहब दस सौ से एक पाई कम करे पर तैयार ना है।'

'चलें, ऊहे सही। जैमन बारह सौ, तसन पन्द्रह सौ। त फिर अब हम चलत वाड़ें। कल वल रकम हियन पहुँचा देव!

'हाँ!"

लखना चमार चला गया।

फुन्नन मियाँ ने अन्दर जाकर कुलसुम को आवाज दी, "खाना निकाल्ह त हम तनी मिया वेदार के हा जाय।

वह एक पलँग पर सिरहाने की तरफ आलथी पालथी मारकर बैठ गये। रुक्या ने पलंग पर ही दस्तरख्वान लगा दिया। पीले रंग के कपड़ेपर सियाह रंग से फारसी के कुछ शेर छपे हुए थे। फुन्नन मियाँ इन हरूफों की तरफ देखने लगे जो एक दूसरे से मिलकर बामानी हो जाते हैं, लेकिन जो फुन्नन मियाँ के लिये सारी जिन्दगी के साथ के बावजूद अजनबी थे। वह इन लफ्जों को घूर ही रहे थे कि आठ नौ साल की तीसरी बेटी मगफिए सीनी में खाना लायी। एक प्याले में गाय के गोश्त का कलिया था। एक में बघरी हुई अरहर की पतली दाल जिसमें लहसुन की एक फाँक तैर रही थी। एक प्लेट में लाल रंग का चावल था और एक तरफ चपातियों की चार जोड़ियाँ थीं। रुक्या ने ताँबे के एक कटोरे में पानी रख दिया।

खाना खत्म करके हाथ मुँह धोने के बाद फुन्नन मियाँ अपने गमछे से बड़ी बड़ी मूँछों को खुश्क कर ही रहे थे कि दरवाजे से समीउद्दीन खाँ की आवाज़ आयी। मगफिए दरवाजे की आड़ में जाकर खड़ी हो गयी।

फुन्नन मियाँ है? समीउद्दीन खाँ ने पूछा।

हैं।

कह दिजिये कि दरोगाजी बुलाइन हैं हकीम साहब के दरवाज़ पर।

ए अब्बा! आपको दरोगाजी हकीम साहब के द्वार बुला रहे।' मगफिया ने वहीं से हाँक लगायी।

कहि दियो दरोगाजी से कि हमरे पास एक ठो दरवाज़ा है।" फुन्नन मियाँ ने कहा।

ई कहि दें जाके?' समीउद्दीन खाँ ने पूछा।

हाँ हाँ इहे कहि दियो जाय। हम तार दरोगाजी का दिया ना खात।'

"नाहक में बात बढ़ाने से का फ़ायदा मीर साहब!"

'बात अभइ कहाँ बढ़ा है!' फुन्नन मियाँ ने जाम का गिलास ख़ाली करते हुए कहा, "पान लाने जाओ। ए रजिया की माँ, मीर साहब का पान भेज दो।"

कुलसुम पान लगाने लगी।

'हम ई कहि रहे मीर साहब कि

कुछ कहे की ज़रूरत न है।' फुन्नन मियाँ ने समाउद्दीन खाँ की बात काट दी। "हमें मिले का हो त हम उनके पास जावेंगे। उन्हें मिले का है त ऊ हमरे पास आवें।"

समाउद्दीन खाँ ने कलजिया के उस हाथ से पान ले लिया जो दरवाज़े की ओर से बाहर निकला था। पान मुँह में रखकर और फुन्नन मियाँ को दो आवाज़ें बुलन्द सलाम करके वह वापस चले गये। अपने लड़के मुईनुद्दीन की निस्बत गुलाम हुसैन खाँ की लड़की से लगाने के बाद हो से कासिमाबाद के मुईनुद्दीन खाँ की हमशीरा ख़तम हो चुकी थी। यह तय हो चुका था कि लड़ाई के ख़त्म होते ही यह शादी हो जायगी। अगर बीच में कोई छुट्टी मिल गयी और मुईनुद्दीन आया तो तभी निकाह कर लिया जायगा।

गुलाम हुसैन खाँ ने तो शादी की तैयारियाँ शुरू कर दी थीं। उनका कहना था कि कोई ठीक थोड़ा ही है कि आज जो चीज़ किसी दाम पर मिल रही है वह कल उसी दाम पर ही मिल सकेगी। इसलिए आहिस्ता आहिस्ता तैयारी शुरू कर देनी चाहिए। घर में कोई दौलत का ख़ज़ाना तो नहीं कि पास होते ही सब तैयार कर ली जायगा। चुनांचे पाँच जोड़े कपड़े तो वह तैयार करवा चुके थे जो टक-टँकाकर बक्स में रख दिये गये थे। तीन पान सोने के ज़ेवर और पाँच पान चाँदी के ज़ेवर भी बन चुके थे। नौशेरवान के मुताबिक़ भी शरीक हो चुके थे। बाक़ी अल्लाह मालिक है।

यह गाँव के विचार बड़े बाहर थे और आनेवाले ज़माने से बेख़बर थे।

ठाकुर हरनारायन प्रसाद एक कुर्सी पर बैठे हुए थे जो शायद उनके बाप से विरासत में मिली थी और गाँव के तमाम

दौलतमन्द लोग हस्बे हैसियत ज़मीन, तिपाई और लोहे की कुर्सियों पर बैठे हुए थे। हकीम साहब उलटे हुए बिस्तर की टेक लगाये हुक्का पी रहे थे। उनकी बेटी के नाती लड़के आँगन में निशान खींचे 'इक्कट दुक्कट' खेलने में मसरूफ़ थे। बीवियाँ दरवाज़ों की ओट से झाँक रही थीं। सफ़ुनिया कमर पर हाथ रखे दरवाज़े के बाहर खड़ी अनवारुलहसन राक़ी के लड़के फ़ारुख़ को देख रही थी जो अपने दादा की मौत पर आया हुआ था और बाप के साथ दरोग़ाजी को सलाम करने आया था। दो एक बार फ़ारुख़ ने भी उसको देखा और मुस्लिम लीग का सारा प्रोग्राम उसके ज़ेहन से निकल गया।

ठाकुर साहब की निगाह भी सफ़ुनिया पर पड़ गयी। उन्होंने अपनी मूँछों को ताव देकर सीना चौड़ा कर लिया। उनके ज़ेहन में एक ख़याल उस केंचुए की तरह तड़पकर ख़ामोश हो गया जिस पर खेल ही-खेल में किसी लड़की ने पान की पीक गिरा दी हो। उन्होंने सोचा कि गुलाबीजान में अब कुछ रह नहीं गया है।

'माई बाप! इतना त हम ना दे सकी ला।' गोवरधन बनिये ने एक कदम आगे सरकाते हुए कहा। वह दरोगाजी के पास ही ज़मीन पर उकड़ूँ बैठा हुआ था।

यह गोवरधन बड़ा मालदार था। मशहूर था कि इसने चूल्हे में कई हँड़िया गाड़ रखी है। लेकिन एक बार जब झिंगुरिया ने नकब काटकर चूल्हा खोदा तो उसे कुछ नहीं मिला फिर भी यह शोहरत कम नहीं हुई। झिंगुरिया ने सात बार हमला किया। मगर हर बार वह ख़ाली हाथ लौटा और हर बार गाँववालों को यह यक़ीन हो गया कि गोवरधन बड़ा दौलतमन्द है लेकिन बड़ा चालाक है। उसने रुपया कहीं ऐसी जगह छुपा रखा है कि झिंगुरिया जैसे को भी पता नहीं चलता। यह सुनकर झिंगुरिया की ग़ैरत को ठेस लगी। इसलिए आठवीं बार उसने गोवरधन को बाँधकर बड़ी ठुकाई की। मगर गोवरधन ने बिलकुल पता नहीं दिया। झिंगुरिया को फिर ख़ाली हाथ लौटना पड़ा।

यह गोवरधन गंगौली का रहनेवाला नहीं था। गंगौली में इसकी ससुराल थी। यह जवाईं था। लेकिन इकलौती बेटी का शौहर था। इसलिए घर में

उसका बड़ा लाड़ होता था। वह सिल्क का कुरता पहना करता था और अनवारुलहसन के दरवाज़े पर बैठकर लोगों की बात किया करता था कि फलां चीज़ का भाव गिर रहा है लेकिन क्यों न दस हज़ार लगा दिया जाय। फिर अनवारुलहसन वग़ैरह की मुख़ालिफ़त के बावजूद वह रुपया लगा देता और दो चार दिन होने के बाद दस बीस हज़ार के घाटे या मुनाफ़े की बात करने लगता। मगर घर में एक पैसा नज़र न आता तो एक दिन उसके ससुर ने कुरेदकर उससे बही ली। बुड्ढे की आँखें हैरत में फट गयीं। गोवर्धन का कारोबार लाखों में फैला हुआ था। बम्बई कलकत्ता चटगाँव रंगून, हांगकांग और न मालूम कहाँ-कहाँ गोवर्धन ने अपना जाल फैला रखा था। उसने सोचा कि जँवाई लन्दन में ही निपट्टू है। चुनांचे उसकी आवक और बढ़ गयी। और वह गाँव में छाती तानकर घूमने लगा। ख़िदमत-पेशा लोग उससे निजी मामलात में मशवरा लेने लगे। और इसमें शक नहीं कि उसका निशाना सही ठीक बैठता था। इसलिए उसकी धाक बढ़ती गयी। ससुर के मरने के बाद ससुर का सारा कारोबार भी उसे मिल गया और वह भी गगौनी का एक बुर्ज बन गया। वह सिर्दा लोगों के यहाँ आता तो ऊँची जगह पाता। यह एक ऐसा एजाज़ था जो गगौना में किसी ग़ैर को अब तक नहीं मिला था। जब वह गगौनी आया था तो बिलकुल जवान था। अब बूढ़ा हो चला था। लेकिन उसकी आँखों की चमक वैसी ही थी। उसके छः लड़कों में से चार सरकारी फ़ौज में भरती हो गये थे और एक इलाहाबाद में पढ़ रहा था। गोवर्धन लिखाई-पढ़ाई का शुरू से क़ायल था। वह लक्ष्मी-पूजा के साथ साथ सरस्वती-पूजा भी किया करता था। चुनांचे उसने लोगों की कहा-सुनी के बावजूद अपने सभी लड़कों को तालीम दी थी। छोटे लड़के को तो सरकार ने विलायत भेज दिया था पढ़ने के लिए। और मशहूर था कि उसने वहाँ किसी मेम से शादी कर ली थी। गोवर्धन ने इसको सुन लिया था कि उस लड़के के लिए अब इस घर में कोई गुंजाइश नहीं है। बल्कि लोगों ने तो उस सिलसिले में भी महसूस कर लिया था।

मुख़्तसर यह कि ज़िन्दगी बड़े आराम से गुज़र रही थी कि ठाकुर साहब ने एक लाख रुपया सहारे का फ़ण्ड जमा करने का दम लगा लिया और अब

वह गोवरधन स दस हज़ार रुपया माग रहे थे। इस रकम का नाम सुनत ही गोवरधन उछल पडा और हकीम साहब के पाइँती से उचक्कर दरोगाजी के पास जमीन पर उकडू बैठ गया। मगर दरोगाजी उस वक्त सफुनिया को दख रहे थे। फिर भी गोवरधन के इन्कार की आवाज उनके कानो स टकरा ही गयी

कसी बात करत हैं आप, सेठजी ?" ठाकुर हरनारायन प्रसाद न कहा 'आपका कारोबार मुल्का मुल्का फला हुआ है। आप करोडो नही तो लाखो के आदमी है। क्या साहब ? उन्होने हाजी बुलाकी का मुखातिब किया, जिनसे वह एक हज़ार एक वसूल कर चुके थ 'अगर म गलत कह रहा हूँ तो कह दीजिए।

ए म का शक है साहब इनक एसा दौलतमन्द त दो चार शहर म शायद से मिले। हाजी बुलाकी न कहा।

'दखो सेठ लडाइ हो रही है। तुम्हार चार लडके सरकारी फौज म हैं। म तुम्हारा नाम काग्रेसिया म लिखना नही चाहता।

अरे राम राम करें साहब! गोवरधन बिलकुल घबरा गया 'हम आंग्रेज-काग्रेस मा ना है। च च का कहत बाड सरकार आप ?

जो लडाई का चन्दा नही दगा वह गाधी का कोइ भगत ही होगा।

एसन ना कह सरकार।'

कैस न कह! अब भला बताइए हकीम साहब! दरोगाजी हकीम साहब स मुखातिब हो गय, सठ गोवरधन के लिए दस हजार की क्या हैसियत है ?

अरे द के खतम कर।

कहाँ स दिह, मीर साहब ?

अरे अभइ कल्लह त कहत रहिया कि कानी काह म ताहा आठ हज़ार का फायदा भवा है। गुलाम हुसन खाँ बोल।

दखो गोवरधन! मैं आखिरी बार अभी वह यही तक कह पाय थ कि समीउद्दीन खाँ आ गय क्या कहा फुन्नन मियाँ न ?

समीउद्दीन खाँ न फुन्नन मियाँ क जवाब का बा आवाज बुलन्द कहना

मुनासिब न जाना, इसलिए उन्होंने उनका जवाब दरोगाजी के कान में कहा। ठाकुर साहब का चेहरा सुर्ख पड़ गया और हाथ बेसाख्ता मूँछों तक चला गया।

'रस्सी जल गयी पर बल नहीं गया। चार साल चक्की न पिसवाई तो नाम बदल दूँगा।'

'तो हमरे बाबू का हुकुम बाए?' गोबरधन ने डरते डरते पूछा।

'सात दिन में कुल रकम थाने पर आ जाय।'

जो चमक गोबरधन की आँखों में साठ साल से थी वह एकाएक खत्म हो गयी।

अपनी बैठक में दाखिल होते ही उसने गणेशजी, लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्तियों को प्रणाम किया और फिर एक बूढ़े दरख्त की तरह अपनी गद्दी पर गिर गया। जब शाम हुई और उसकी बहू चिराग जलाने आयी तब वह चौंका। दीये को प्रणाम करके वह फिर बैठ गया।

बहू ने यह खबर अन्दर दूसरी बहुओं को पहुँचायी। बड़ी बहू घूँघट निकाले आयी।

गोबरधन से पूरी कहानी सुनकर उसने तो यही सोचा कि दस हजार की क्या हकीकत है। गोबरधन तिलमिलाकर रह गया। दस हजार की यह हैसियत है कि उसकी बड़ी बड़ी रकमें जब डूबी होने लगीं तो डूबकर मर गया। यह है दस हजार की हैसियत। उसने बहू को चुप कर दिया और फिर चुपचाप बैठ गया। बहू ने खाने को पूछा तो उसने इनकार कर दिया। आखिर जब एक घंटा दुश्वार हो गया तो बैठक की कुण्डी चढ़ाकर वह फिर हकीम साहब के घर की तरफ चल पड़ा। मगर उसके कदम अपनी बही के खातों में दूर जा रहे थे।

ठाकुर साहब ने मसौदा में दो रात गुजारने का फैसला किया था। उन्होंने बारहगाँव में पाँच हजार रुपये और आठ हजार के रसीदी पत्र इकट्ठा किया था। रसीदी पत्र तो उन्होंने सरकार रवाना कर दिया था और वे रुपये सन्दूकची में उनके साथ पास रखा गया था।

ठाकुर साहब एक आरामकुर्सी पर बठे सिगरेट पी रहे थे। वह वर्दी उतार चुके थे। लुगी बाधे कम्बल ओढ बठे हुए हकीम साहब से हालात हाजरा पर बहस कर रहे थे। हकीम साहब का शिकायत यह थी कि सारे नौजवान जो जबरदस्ती लाम पर भेजे जा रहे है, तो खेती कौन करगा और जिन काश्तकारो से पुरानी शरह पर लगान वसूल करने के लिए बार बार बकाया लगान का दावा करना पडता हो उनमे ड्योढा और दूना लगान हासिल करना नामुमकिन है। और जवान हाथो को तरसते हुए खेतो की नीममुर्दा फसलो मे अगर सरकार न गल्ला भी वसूल करना शुरू कर दिया तो देहाती जिन्दगी मे खलफिशार हो जाने का अन्देशा है और एमे म कि सारी फौज जमन और जापान स लडन म लगी हुई है इस खलफिशार को दबाना मुश्किल हो जायेगा।

बाकी ई जो मशहूर है कि हिटलर तुर्की के इसमत अनूना है, ई कहाँ तक दुरस्त है। अभइ परसो जो हम गाजीपुर गये तो सुना कि मस्जिद म लोग हिटलर के जीतन की दुआ कर रह ।'

ठाकुर साहब ने सिगरट को आगन म उछाल दिया। 'बात यह है मीर साहब कि अगर लगान न बढाया जाय या गल्ला न वसूल किया जाय या जबरी चन्दा न लिया जाय तो इत्ती बडी लडाइ का खच कसे पूरा होगा ? और अगर जवाना को भरता न किया जायेगा ता इत्ती बयी लडाई लडी कस जायगी ?"

हकीम साहब के पास इस मनतिकी दलील का कोई जवाब नही था। बोले, "ई त आप ठीक कह रह ह। बाकी '

"सलाम मीर साहब ! गोबरधन आ गया, सलाम दरोगाजी !'

"अब लिया हकीम साहब आपन ! सीधा हो गया ! दरोगाजी न हकीम साहब स कहा। फिर वह गोबरधन स मुखातिब हुए "लाये !

'हाँ सरकार।

दरोगाजी सभल गय। क्योंकि उन्होन तय किया था कि गोबरधन को सिर्फ हजार का रसीद दी जायगी। वह गोबरधन स जी ही जी म खुश हो गय क्योंकि अब हिसाब ठीक हो जायगा। उन्होन तय किया था कि बार पण्डके

नए बीस हजार और अपने फण्ड के लिए तीस हजार जमा करेंगे । गोवरधन के खाते में उनके तीस हजार पूरे हो रहे थे और बाकी फण्ड भी अठारह हजार तक पहुँच रहा था ।

'सरकार, जो कुछ हमारे पास था तीन हाजिर है ।' गोवरधन ने एक कहा और एक थैला पेश की । थैली बहुत मुफलिस थी । कहीं बहुत तन्दुरुस्त था । दरोगाजी की भवें तन गयीं, "यह कहीं का मैं क्या करूँगा ?"

"हमारे कुल कारोबार ए ही मा बाप, सरकार !" गोवरधन ने कहा, "और पूजा पलिया मा । और गिन लियन चार सौ अगारह रुपिया है । अब हम का करें !" वह रुक गया और लाना लगा हुई दीवारों की तरह अपनी शख्सियत के ढह पड़ने के धमाके सुनने लगा । उसका कारोबार एक ख्वाब था । एक बजरर ख्वाब जिसमें उसके बच्चों के सिवाय अब तक किसी का नुकसान नहीं पहुँचा था । वह ख्वाबों में कारोबार किया करता था और अपनी बही में सूदाजिमा का हिसाब लिख लिया करता था । वह घर इन तिलिस्मी खजाने हिन्दसा को देखता था और खुश हो लेता था । जब उसे कोई ख्याली नुकसान होता तो वह होता उदास रहता और जब उसका अन्दाजा ठीक निकलता और ख्याली मुनाफा हो जाता, तो वह हफ्ता खुश रहता । पोतों-नातियों को गिराता । और बहुआ ने अच्छी अच्छी बातें करता । उसने दरोगाजी को यह तमाम बातें बता तो डाला लेकिन हर जुमला उसके गले में फाँसी का फन्दा बन गया । उसका दम घुटने लगा और वह बच्चों की तरह रोने लगा । वह साँस के एक पुतले की तरह सिमट गया ।

'? अब हमारी खातिर का हुकुम बाए ?'

ठाकुर हरनारायन प्रसाद भी आदमी थे । उन्होंने वह थैला उसको लौटा दी । वह उनके पैर छूकर चला गया । और यह बात उन्हें दूसरे दिन कोई नौ बजे मालूम हुई कि गोवरधन मर्गोलि छोड़ गया । गाँववालों ने कहा कि ऐसा मशहूर आदमी आज तक नहीं देखा गया ।

फिर दरोगाजी और हकीम साहब को मालूम था कि वह क्या चला गया । मगर शायद यह नहीं कि नाहक जबान खोलने से क्या फायदा । और कुछ यह भी था कि दोनों अपने अपने कामों में [illegible]

तहसीलदारी मे नामज़द भी हो गया है, इसलिए अब उसकी शादी होनी चाहिए और दरोगाजी को फुन्नन मियाँ की फिक्र थी।

खानदान का बुज़ुर्ग होने की हैसियत से अब्बू मियाँ का मौजूद होना चाहिए था। लेकिन अब्बू मियाँ गाज़ीपुर मे थे। इसलिए मेहमाननवाज़ी के फरायज हम्माद मियाँ अदा कर रहे थे जो इस मौरूसी जमीदारी के मुख्तारे आम थे और इधर उधर के काफी खेत निकालकर वह अच्छे खासे पसवाल भी हो गये थे। और अब वह सोच रहे थे कि इस खलवत को छोड़कर उन्हे अपना मकान बनवा लेना चाहिए। चुनांचे उन्होने बड़े फाटक के सामने अपने दो मंजिला मकान की दाग बेल भी डाल ली थी। और चूंकि वह एकदम दौलतमन्द हो गये थे, इसलिए वह फुन्नन मियाँ को किसी शुमार मे नही लाते थे। और फुन्नन मियाँ खरे सैयद थे, इसलिए इन दोनो घरो के ताल्लुकात खराब भी हो गये थे।

'अब मैं क्या कहूँ ठाकुर साहब! उन्होने दरोगाजी से कहा, "फुन्नन की इन हरकतो की वजह से तो हम लोग आजिज आ चुके है। मगर खानदान की इज़्ज़त तो ढोनी ही पड़ती है। डाके वह डलवाएँ। चोरियाँ वह करवाएँ। करामत खाँ की बीवी का भी निकाल लाये। छुट्टे साँड है! खेत चरते रहते है।

"लेकिन अब यह तो हद हो गयी ना कि थानेदार यूसुफ्पुर का दे दिलाकर झिंगुरिया को हवालात मे बन्द करवा दिया और रात को वह वारदात कर गया। वारदात भी कैसी कि कत्ल। लेकिन समझ मे यह नही आता कि आखिर उस औरत से उसकी क्या दुश्मनी थी?

हम्माद मियाँ हँसे, "आप भी खूब है। अरे साहब, झिंगुरिया गुलबहरी को कत्ल करने गया था।

'गुलबहरी।

"अरे, वह अशरफ खाँ वाला।

ओह! तो यह किस्सा है। ठाकुर साहब ने गरदन हिलायी, "यानी वह बच्चा गफ्फू खाँ ही का है!

"ज़ाहिर है।'

"तब तो अशरफुल्लाह मियाँ भी लपट म आ जायेंगे।" ठाकुर साहब न कहा और दिल-ही दिल म सोचने लगे कि इस गाम मामले म अशरफुल्लाह मियाँ कितना दे मरेंगे। अभी वह किसी नतीजे पर नहीं पहुँचे थ कि फुन्नन मियाँ आ गये। उन्होंने हम्माद मियाँ की तरफ देखा। ठाकुर साहब की तरफ देखा मगर किसी को सलाम किये बिना वह पैर लटकाकर एक पलंग पर बैठ गये।

'कहिए।'

"साहब साहब झिंगुरिया के मामले म कुछ बात करनी थी। दरोगाजी न कहा।

'कहिए।

वह नक्व उसी न लगायी थी।

'वाकी हमन त सुना है कि उ हवालात म रहा।

'मुझ मालूम है कि आपने अफसर इलाज यूसुफपुर को तीन सौ रुपये दिये थे।

"का कुई बयान दिहिन है? वह खड़े हो गये "हमारे पास फाजिल पैसा ना है।'

'कोई आदमी सरकार म टकराकर नहीं जीता है साहब साहब।

'ना जाना हाइय। बाकी आपउ सरकार ना हैं, ठाकुर साहब। फुन्नन मियाँ न दरोगाजी की आँखों म आँखें डालकर कहा और इहि बखत आप हमर दरवाज पर है नहीं त कौनो माई का लाल एसा त ना है कि फुन्नन मियाँ का धमकाकर चला जाय। कई हम्माद अम्माद का अपना दरोगायी दिखलाइए।

'हमने सुना है कि आप गज्ज पीछे का चन्दा देते हैं।

फुन्नन मियाँ मुस्कराये। मगर वह मुस्कराहट बड़ा जहरीली था।

'अमद मेक म ना दिया है। बाकी कहिए त देवे लगें। मा कहीं कानून म ई लिखा है कि कांग्रेसवालन का कोई चन्दा न दे। का तूं दुग्गा पाठ रहिया। उन्होंने दरोगानवा चौरीमार म पूछा हम त ना सुना। आतन अब तक थाने-दफ्तर म चन्दा भी नहीं दिया। मालगुजारी त ना न बाकी है। फुन्नन मियाँ ने

त चन्दे म दे दिया है ना। छ महीने स कौनो खबरा ना आयी है कि इम्तियाज़ जियत है कि मर गये। कहिए तो मुन्ताज को भेज दें। वार फण्ड वाह का वार फण्ड। हम कहा रहा जमन से लडे का ? कि हम वार फण्ड द ? कपड़ा हम ना मिले। ए भाइ, गाय की हर चीज बजार स बलाय गयी है। नजर याज को चीनी हम्मे ना मिले। मिट्टी का तल त आब जमजम हो गवा है। खास लोगन को मिलता ह। हम एक डबल न दगे वार फण्ड म। जुअन रर को हा तुअन कर लियो।

खामोश।'दरोगाजी का लहजा सख्त हो गया।

ह दरोगाजी ! फुन्नन मियां चुटीले नाग की तरह पलट, "फुन्नन मियाँ से कोई ए तरह बात ना करता। का है !"

'क्या यह गलत है कि आपने अफसर इलाज यूसुफपुर को तीन सौ रुपये नहीं दिय ?'

'त उन स कहि दिजिए कि अदालत म आक इ बयान द द। बाकी इहो कहि दिजिएगा कि रोजनामचहु को फिकवा डालें। और जा हमरे पास नक्ल रोजनामचा है उहो को छीन ल।

आपके पास यह नक्ल क्या है ?'

आप कौनो अदालत ना ह कि आपक हर सवाल का जवाब देना हमरा फर्ज हो जाय!

गुलचहरी अब पुलिस की हिफाज़त म है!

अच्छा और कौन पुलिस की हिफाजत म है ?'

जी तो चाहता है कि आपको बगावत के जुर्म म गिरफ्तार कर लू।

हिम्मत हो तो जी का कहा कर डालिए!

यह मत समझिए कि बशीर साहब या वजीर साहब या अम्मू मियाँ आप को बचा लेंगे!

हमरे बचायवाले का नाम दरोगा शरीफुलहसन और शिवधनसिंह स पूछ लीजिएगा।

ठाकुर साहब क तन बदन म आग लग गयी और उनकी हरारत म अलफाज पिघल गय। चन्द लमहा तक फुन्नन मियाँ न इन्तज़ार किया।

लेकिन जब ठाकुर साहब ने कुछ नहीं कहा तो वह बड़े दरवाजे से निकल गये। उन्हें झिगुरिया की तरफ से कोई परेशानी नहीं थी। दरोगा युसुफपुर ने उसकी बयान को जरूर बना दिया होगा कि मामला क्या है मगर उनके बाप भी अदालत में यह बयान नहीं दे सकते वरना बेटा खुद बँध जायेंगे। इसलिए उनको तो सिर्फ एक सवाल ने परेशान कर रखा था। मौलवी बेदार ने उनकी तनख्वाह रद्द कर दी थी क्योंकि हकीम साहब हज्जामों के चौधरी को पास रखने में कामयाब हो गये थे और गुरु सफुनिया ने यह बयान दे दिया था कि झिरमा कोई नहीं था। रहीम को चुप हो जाना पड़ा। वह बिरादरी से लड़ नहीं सकता था। चौधरी ने कह दिया था कि अगर सफुनिया की शादी में कोई अड़चन पड़ी तो वह उसे अपने नवास में ब्याह लेंगे। इन सब बातों के लिए चौधरी को दस मन का एक खेत मिला और मौलवी बेदार ने रहीम को एक सौ पाँच रुपये दिये और यह वादा किया कि सफुनिया की शादी के तमाम इखराजात वह खुद बरदाश्त करेंगे। ये बातें फुन्नन मियाँ को बहुत देर से मालूम हुईं। इसीलिए मौलवी बेदार के इन्कार को फिर्न ने उन्हें हैरान कर दिया था। मगर जब वहाँ से लौटने के बाद रहीम से उनकी बातें हुईं तो बात उनकी समझ में आ गयी।

'तैं एक सौ पाँच रुपिये में हमरी बात बेच दिये ?'

का करें सरकार साहब! चौधरी सब गड़बड़ कर दिहिन।

ठीक है। उहीं का देख लेंग। ऊ ससौसी छोड़ देत न रहिन।

ये बातें उनके दिमाग में गूँज रही थीं। सलीमपुर जाते वक्त उन्हें चौधरी के खेत से गुजरना पड़ा। धन और जौ की बड़ी अच्छी फसल खड़ी थी। उन्होंने गुनगुना लिए और यह सोचता हुए रास्ता की एक ठाकुर साहब आगे बढ़ गये।

जब वह सलीमपुर पहुँचे तो अस्गरन्वाह सो किसी आसामी का ... ... बैठे थे। फुन्नन मियाँ को देखकर तो उसकी शामियों ... ...

और ... ... मगर पम्मा नहे सलात और ...

... हार इतर सब नीलाम करवा दूँगा और

... और ... समझ कि अदालत में

सामने ही एक तन्दुरुस्त दमकता हुआ नौजवान मुर्गा बना हुआ था। उसकी पीठ पर ईंटों का एक मीनार सा बना हुआ था। जब वह मीनार हटाया गया तो कई मिनिट तक वह खडा न हो सका। वह खडा होने के बाद भी अपनी पीठ सहलाता रहा।

सलाम कर जमींदार को!" बाप ने उसे कुहिनी मारकर सरगोशी में कहा। उसने खाँ साहब को सलाम किया। फिर अपने बाप के साथ चला गया। उन दोनों के जाने के बाद खाँ साहब देर तक उन दोनों को और फिर आसामियों की सारी कौम को गालियाँ देते रहे।

बेदार मियाँ ना माने। फुन्नन मियाँ ने कहा।

नहीं माने? अशरफुल्लाह खाँ ने चौंककर पूछा।

"हाँ असिल में बात ई है कि चौधरी साला ऊनहीं का आसामी है।

तब?

अरे तब का। जब तक फुन्नन ज़िन्दा है आपको कोई का कर सकता है। आज त हम ऊ साले दरोगा कासिमाबाद को भी जी भर के सुना दिया। और हम देख रहे कि *अब ई हम्मादा की शामत आ गयी है।'*

और झिंगुरिया का क्या होगा?

ऊ की फिकिर आप काहे को करते हैं। ऊ को छुडाना हमरा काम है। बाकी गुलबहरी के बारे में अलबत्ता सोचना है। हमरी समझ में त अब इक्के ठो सूरत रह गयी है कि ऊ लड़के पर काबू कर लिया जाय। और कौनो और ज़िने से गुलबहरी का वारण्ट निकलवाया जाय कि ऊ किसी की जाजा मनकूहा है। भाग गयी है और पता चला है कि वारिसपुर के शेर मोहम्मद के घर में है लिहाज़ा वह बरामद करवायी जाय। एक मरतबा ई मुकदमा चालू हो जाय फिर देख लेंगे।

काफी देर बाद तय पाया कि मत्तोपुर जिला फ़ैज़ाबाद के गज़नफ़र अली खाँ से यह दावा करवाया जाय।

अच्छा त अब हम चलें।

खाना वाना खाकर जाइए और एक ताज़ा गज़ल भी हो गयी है।

अन्दर से गाना आ गया। लड़कियों ने सलाम कहलवाया। फुन्नन मियाँ मुँह में गिलौरी दाबकर जमकर बैठ गये।

'बिस्मिल्लाह!'

खाँ साहब ने गजल शुरू की। फुन्नन मियाँ झूम-झूमकर तारीफ करने लगे। मगर इक्कीसवें शेर पर वह चौंके 'जरा दुबारा इरशाद करिए!'

खाँ साहब ने दुबारा जहमत की।

'वाह!'

क्या बात है? खाँ साहब उनके महज पर चौंक पड़े।

'साहब, हम बोलो पढ़े लिखे तो हैं नहीं। बाकी आशिक के दामन सर उठाने का मुहावरा कुछ समझ में ना आया। ऊ सर कटा सकता है मन्सूर बनकर सरमद बनकर। ऊ ईसा बनकर सूली पर चढ़ सकता है। बाकी ऊ सर नहीं उठा सकता। सर उठाना तो मास्टरन का बच्चापन साबित करना है जैसे ऊ का असली मालिकन की अकड़ है।

अशरफशाह खाँ भी आस्तीन चढ़ाकर लग गये। लेकिन फुन्नन मियाँ ने आखिरकार उन्हें कायल कर ही लिया। चुनांचे वह शेर खारिज कर दिया गया। फिर खाना लग गया। अण्डे का कोरमा था कलिया था। मटरपुलाव था और गाजर का हलुवा था जिस पर चाँदी के वरक की मोटी तह थी।

खाने से फारिग होकर फुन्नन मियाँ वापस हो रहे थे कि कुँवरपालसिंह से मुलाकात हो गयी।

ठाकुर साहब उन्हें देखकर रुक गये। शिकवे-शिकायतों का सिलसिला शुरू हो गया। फिर यह बात निकल आयी कि झिंगुरिया ने सलाम हुसैन खाँ को धरकर अच्छा नहीं किया था। तो फुन्नन मियाँ उखड़ गये बोले रहे क्या ठाकुर रहे क्या? हम ना रहे से तू झिंगुरिया पर चढ़ गयो।

नहीं भाई, तो चुप हो गये रहे नहीं तो

नहीं तो का करियो। देखो, ई हमरा तुम्हरा मामला है। समझत रहो। ऊ बाबा के खानदान हैं और हम उनके खानदान के नमकखोर हैं। और तोहें हमरे लिहाज से कबीर का साथ देना चाहिए।

इस बीच साहब का पता तो चल ही गया कि बाकी गमीरा उसीरा की

बात रह द । ऊ म हमार-तुहार फैसला न भइल बाय । रइन अली कबीर मिया की बात । त ऊ हमार दोस्त हइ । उस्ताद का नाम बीच म मत ला आवा !

'काहे न ली आयें ?'' फुन्नन मिया ने कहा, 'और एक बात कहि दे रह ठाकुर कि मरद होवा त पुलिस को बीच म मत ली आओ और गुलबहरी का परसा अदालत म पहुँचा दियो ।'

''इहे हुई । बाकी हम चलब उकर डोली क साथ ।''

मजूर ।'

यह बात फुन्नन मियाँ की स्कीम म दाखिल नही थी । मगर अब तो हाथ मिल गया था।

चला लग हाथ इहू तय हो जाती कि मीर साहब का खलीफा हम हैं कि न ! ठाकुर ने कहा ।

त ऐसा कर तूहो अकेल आवा हमहूँ अकेल आयें । तोहरी जीत होय त गुलबहरी हिया रह हमरी जीत हुए त हम जुअन चाह तुअन करें। फुन्नन मिया ने कहा ।

ईहू ठीक बाय । हम ओके ले के कल रात के चले के सोचत बाडें ।

बात खतम हो गयी । दाना फसला और महँगाइ और सरकार की ज्यादतिया की बात करने लग । फुन्नन मिया थोडी देर क लिए बारिखपुर मे रुके भी । ठाकुर साहब के लडका और पोता ने उन्ह घर लिया । अन्दर स घर का गुड आया जिसम इलायची की तज खुशबू आ रही थी और जो घर के घी म तयार किया गया था । फुन्नन मियाँ न पानी पिया और इधर उधर की गप्पें टाककर वह फिर गगौली के लिए रवाना हुए । रास्त म फिर हज्जामा व चौधरी क खेत आये और उन्ह देखकर वह फिर मुसकराये ।

व खेत उसी रात कट गये ।

इस दिन के तमाम काश्तकारो क दिल दहल गय क्योंकि खेत कभी तनहा नही कटत इसलिए खेतो की रखवाली बढ गयी और यूँ रात के कोई एक बज नील क गोदाम क पासवाले खेतो म रखवाली करनेवाले एक चमार न फुन्नन मिया का लाशी लिय तेज तेज कदमो स गढ़ई की तरफ जाते देखा ।

गाड़ी से पहले वह एक बलगाड़ी को भी देख चुका था जिसे खिलाफ मामूल ठाकुर कुंवरपालसिंह हांक रहे थे। गाड़ी में यकीनन कोई औरत भी थी क्योंकि इस चमार ने एक बच्चे के रोने की आवाज़ साफ सुनी थी। और उसने पहले वह जिगुरिया को जाता देख चुका था।

फुन्नन मियाँ अकेले ही जा रहे थे कि गाँव में कोई साल भर पर उन्होंने देखा कि ठाकुर कुंवरपालसिंह बलगाड़ी रोके उनकी राह देख रहे हैं।

तूं त बहुते राह देखइला। कुंवरपालसिंह ने कहा।

हाँ, तनी देर हो गयी।

गुनबहरी ने फुन्नन मियाँ की आवाज़ पहचान ली। उसका दिल धड़कने लगा। उसने अपने बच्चे को छाती से लगा लिया।

सावधान!' ठाकुर साहब ने कहा।

या अल्ला! फुन्नन मियाँ ने कहा।

दोनों पतरे बदलने लगे। कच्ची सड़क और दोनों तरफ खड़े हुए आम इमली और जामुन के पेड़ और रात के सन्नाटे के सिवाय कोई तमाशाई नहीं था क्योंकि गुनबहरी तो आँखें बन्द किये बड़े पीर साहब को याद कर रही थी।

लाठियाँ टकराती रहीं। कोई चोट नहीं लग रही था। दोनों ही एक अखाड़े के थे और दोनों हाथ मनौती के पक्के थे। सुने हुए हाथ चल रहे थे। नन्ही चाँदनी में लाठियाँ डूबते हुए चाँद की रोशनी में चमक रही थी।

या अल्ला! फुन्नन मियाँ ने वार किया। ठाकुर साहब का सिर खुल गया। उनकी सफ़ेद दाढ़ी खून से लाल हो गयी।

जै बजरंग बली! ठाकुर साहब ने वार किया। फुन्नन मियाँ का बायाँ शाना खुल गया।

गुनबहरी चीख पड़ी। फुन्नन मियाँ ने ठाकुर साहब की लाठियों पर रख लिया। ठाकुर साहब लड़खड़ाये और गिर पड़े। एक दरख्त की आड़ से चिड़िया निकला।

वो बहुत देर लगने बाद
गुनबहरी को ले जा।

"बाकी।"

'बहि न रहे ' फुन्नन मियाँ ने झिंगुरिया को डाटा, "ले जा!"

झिंगुरिया गुलबहरी को घसीट ले गया। फुन्नन मियाँ ने देखा कुँवरपाल सिंह के बैल उनके ज़ख्मों को चाट रहे हैं। खुद उनके जिस्म पर भी कई ज़ख्म थे और बायाँ हाथ तो बिलकुल ही बेकार हो गया था। लेकिन वह ठाकुर के ज़ख्म साफ करने लगे। ठाकुर ने आँखें खोल दीं।

खलीफाई मुबारक होये। ठाकुर साहब मुसकराये।

फुन्नन मियाँ ने उन्हें बड़ी मुश्किल से गाड़ी पर रखा। फिर वह खुद भी बैठ गये। उन्हें इतना तो होश रहा कि उन्होंने गाड़ी को गाँव की तरफ मोड़ा। फिर क्या हुआ यह उन्हें नहीं मालूम हो सका। लेकिन बैलों को रास्ता मालूम था।

बैलगाड़ी जब नील के गोदाम के पास से गुजरी तो खेत की रखवाली करनेवाले चमार ने देखा कि एक खाली बैलगाड़ी चली जा रही है।

उसकी आवाज पर कई खेतों के रखवाले लाठियाँ लेकर दौड़ पड़े। उन्होंने देखा कि गाड़ी में दो बेहोश जख्मियों के सिवाय और कोई नहीं है। गाज़ीपुर करीब था। गाड़ी वहाँ पहुँचा दी गयी। एक आदमी कासिमाबाद की तरफ लपकाया गया।

समीउद्दीन खाँ अपने कलमदान के पास कम्बल ओढ़े सो रहे थे। पहले वह जागे फिर उन्होंने रपट लिखी। चूँकि मामला ठाकुर कुँवरपालसिंह का था इसलिए हरनारायन प्रसाद अफसर इंचार्ज कासिमाबाद को जगाया गया, जो थके थकाये गुलाबीजान के साथ सो रहे थे। वह अपनी उस बीवी को ख्वाब में देख रहे थे जो बहुत खूबसूरत थी और ठाकुर साहब के खानदान के साथ जी रही थी। चुनांचे जब उन्हें जगाया गया तो वह एक हद तक खुश हुए क्योंकि अपनी बीवी की याद उनके लिए हमेशा तकलीफदेह हुआ करती थी। उन्होंने जल्दी जल्दी वर्दी पट्टी दुरुस्त की। मगर जब तक वह गाज़ीपुर पहुँचे पहुँचे असीमवा जर्राह ठाकुर साहब की मरहम पट्टी कर चुका था और हकीम अली कबीर का खयाल था कि ठाकुर साहब का बचना मुहाल है।

माई हमरे खयाल में तो ई काम फुन्नन के सिवा कोई और का ना है। हकीम साहब ने कहा।

सबका यही खयाल था। लेकिन फुन्नन मियाँ खुद लँगड़ा थे और वही ठाकुर साहब के साथ थे। इसलिए किसी की समझ में यह किस्सा नहीं आ रहा था और उस हंगामे में गुलबदरी का किसी को खयाल ही नहीं आया। बड़े तो जब दरोगाजी आये तो उन्होंने पहला सवाल गुलबदरी के बारे में पूछा और तब सनसनी फैल गयी। ठाकुर साहब ने आँखें खोल दीं। बोले दरोगा जी, हमारे बयान लिख लिये जायें। अन्तिम यात्रा का समय आ गया है बाबू।

नहीं ठाकुर साहब आप

नाहीं। ठाकुर साहब ने दरोगाजी की बात काट दी हम मर न सकन नाहीं। हम गुलबदरी के ले के जात रहे कि चार-छह जनों हमरे पर हमला करिन। ऊ पचे फुन्नन मियाँ हमरे संग रहीन अपना बयान लिखाकर ठाकुर साहब ने इत्मीनान की साँस ली उन्होंने अपने बड़े बेटे को नजर दौड़ा कहा, भूमि पर लेटने का समय आ गइल

उन्हें जमीन पर लिटा दिया गया।

फुन्नन कहाँ बाड़ें?"

"हमरे पास बइठल हैं। फुन्नन मियाँ ने जो बड़ा मुश्किल से उनके पास आ गये थे।

हम जात हईं सलीमा

फुन्नन मियाँ की आँखें भीग गयीं और वह बच्चों की तरह बिलख बिलखकर रोने लगे।

उस वक्त यह बात किसी के दिमाग में नहीं आयी कि चार छह आदमियों के बीच तो अकेले ठाकुर साहब मारे गये। इसलिए यह बात सब लोग हो गयी कि फुन्नन मियाँ और ठाकुर साहब मिलकर मुकाबला करें और चार छह आदमियों से मार खा जायें। लेकिन जब ठाकुर साहब के मरने का हंगामा जरा कम हुआ तो लोगों ने इस सवाल पर सोचना शुरू कर दिया।

ठाकुर हरनारायन सिंह बड़े लम्बे-चौड़े आदमी थे। लेकिन यह ठाकुर

कुंवरपालसिंह के बयान को झुठला भी नहीं सकते थे और गुलबहरी अपने बच्चे समेत गायब थी। बरसों बाद सलीमपुर के एक आदमी ने गुलबहरी को बलिया के इशरतगंज¹ मुहल्ले के एक कोठे पर देखा। तब यह किस्सा फूट निकला कि उस दिन ठाकुर साहब और फुन्नन मियाँ में लड़ाई हुई थी। ठाकुर साहब के जख्मी होने के बाद झिंगुरिया गुलबहरी को अपने साथ ले गया था। परन्तु इस खबर ने कोई सनसनी नहीं फैलायी क्योंकि यह बात तो सबके दिमागों में पहले ही दिन से थी।

ठाकुर हरनारायन प्रसाद थानेदार कासिमाबाद की बड़ी सुबकी हो रही थी। वह कानून की सारी ताकत के साथ टूट पड़े। लेकिन किसी को कुछ मालूम ही नहीं था। फुन्नन मियाँ पर उन्होंने हाथ नहीं डाला, क्योंकि वह काफी जख्मी थे। हालांकि फुन्नन मियाँ की बातें उनके दिल में काँटे की तरह खटक रही थीं।

"आखिर इन फुन्नन मियाँ का क्या इलाज किया जाय?" उन्होंने गुलाबी जान से पूछा। जाहिर है कि गुलाबीजान के पास इस सवाल का कोई जवाब नहीं था। इस सवाल का जवाब तो समीउद्दीन खाँ के पास भी नहीं था, जिनसे दरोगाजी रोज ही यह सवाल पूछा करते थे। परेशानी केवल यह थी कि वह कोई उचटता हुआ वार करना नहीं चाहते थे। वह चाहते थे कि वार इतना भरपूर पड़े कि फुन्नन मियाँ हमेशा हमेशा के लिए टूट जायें।

"क्या न मगुनिया से कोई दावा करवा दिया जाय।" एक दिन समीउद्दीन खाँ ने कहा।

"गुलबहरी से एक नालिश करवाके देख नहीं चुके क्या?" ठाकुर साहब ने कहा, "बशीर मियाँ, वज़ीर मियाँ, शब्बर मियाँ और अग्गू मियाँ न होते तो मैं अब तक कब का फुन्नन मियाँ को कुचल चुका होता। मगर क्या करूँ— शहर के हुक्काम से उनकी बनी हुई है और अब मालूम हुआ है कि यह लोग यहाँ से मेरी बदली कराने की फिकिर में हैं।"

समीउद्दीन खाँ हमदर्दी जरूर करते मगर उसी वक्त रात आ गयी। एक

¹ तवायफों के मुहल्ले का नाम हुआ करता था।

मन उनका भी था। उस पर भाँति भाँति की मुहरें लगी हुई थीं। उनका दिल धड़कने लगा। क्योंकि इन मुहरों के साथ तो सिर कट का मन आता था। ठाकुर साहब ने भी लिफाफा पहचान लिया।

"लो!" उन्होंने लिफाफा बढ़ाया, "मुन्ने का मन मालूम होता है। मुन्ने ने लिखा था कि वह पाँच अगस्त को आ रहा है। उसने यह भी लिखा था कि उस फौज से डिस्चार्ज कर दिया गया है। सिलसिले के कागजात बन रहे हैं।

समीउद्दीन खाँ मन लेकर क्वार्टर की तरफ भागे। चाबी से खोल, अरे, सुनती हो, मुन्ने आ रहे! उनकी छुट्टी हो गया। पाँच अगस्त को इतवार है।

'आज कौन अगस्त है?' बीवी ने पूछा।

'आज तो पचीस जुलाई है।'

"आप अच्छा करिये की फरीदा जाके ब्याह की तारीख ठीक आइए

'अरे सुना तो जल्दी क्यों मची है अभइ तो कउनो तयारियो ना हुई है।

आपको का मालूम कि तयारी भई है कि ना भई है। हम सब तयारी कर लिया है। शादी बिलकुल तयार है। नहर का गहना बनके बक्स म धरा है। अउर हाँ, जौनपुरी निगर लिजित की तारीख दे गया। सफूरन मिरासिन का बिसरा मत भूल आदमी नही तो ऊ जान गाय म कउना कसर ना छुटि। अ हमरे मयार म तो पूआ या का भी बुना निजित। पुराना बाउन है। काम दखिहै अउर आला बग अरमाना है मुर्दन का सहरा देग का।

"पहले समधी ला दो आवें"

'आगे की बात का गुलाम हुसैन खाँ इनकार कर गए

"फिर भी कुछ लब म कउन नुकसान है?

उन्होंने बक्स के अन्दर बिलकुल नीचे दबा हुआ लखनवी निकाली। इस बक्स के अलावा मेरवानी पहनने का मौका हो नहीं सकता था। मालूम पड़ता है तो उन्होंने कभी पहनी नहीं थी। अपनी मोहल्ला म — बस तक रिवाज था कि जौनपुर का मातम पर रखा। बस्ता लखन[1] का सदाल्दि

[1] जौनपुर के शीआ मातम के लिए यह बड़ी गहरी नजर मरन है।

म कसा मजा आता था। क्मा क मातम क लिए खजर साफ हो रह हैं। जजीर[1] धायी जा रही है, वह तो आठ मोहर्रम का पायक भी बना करत थे। कमर म काली डोरी काली और सफेद डोरियो की वदधी पन्ना हुआ हरा कुरता

पायक तो वह अब भा बन लिया करते थे लकिन हरे कुरते पर खाकी कमीज पहनना उन्ह वडा अजीव लगता था—ता एसे म शेरवानी पहनन का भला सवाल ही कहा पदा होता था। इसलिए वकरीद के बाद शेरवानी मुइन की मा के भारी कपडो के बक्स म रख दी जाती थी, और फिर इद ही के दिन निकाली जाती थी। लेकिन वह बेटे की शादी की तारीख पक्की करने के लिए पुलिस का वरदी म जाना नहीं चाहत थे। चुगडी मुगडा शेरवानी पर मुइनुद्दीन की मा ने तामचीनी के एक बड प्याल स इस्त्री का और समाउद्दीन खा शेरवानी डाटकर तयार हा गय। बीवी न नप स एक गिलौरी खिलायी और समीउद्दीन खा बिस्मिल्लाह करक अपन क्वाटर से बाहर आ गये।

'कहाँ जा रह हा?' ठाकुर साहब न शेरवानी दखकर सवाल किया।

पाँच का मुईनुद्दीन आ रहे हैं। मुईनुद्दीन की मा का ख्याल है कि छ या साल का ब्याह हा जाय। ता जा रहे हैं गगौली तारीख तय करन।

मुबारिक हा! ठाकुर साहब ने कहा भई गगौली जा रह हा ता जरा हकीम स भी मिल लना और कहना कि गल्ल की वसूला म उन्हान जा मदद की थी उसकी मुनरा साहब न तारीफ की है। सनद चन्द दिना म आ जायगी। खबर गरम है कि शायद अबके उन्हे खाँ साहब का खिताब भी मिल। मगर इस इलाके स दस हजार और मिल जाय तो खिताब कहा गया नहा है।

ई ता बडी अच्छी खबर है।

समीउद्दीन खाँ न अपनी साइकिल सभाली।

बारिश शुरू हा चुकी थी। फिजा म एक नमी था। हवा तज थी और इधर उधर स बादल इकट्ठा हा रह थे। समाउद्दीन खा न बादला का दखकर

---

[1] यह लाग तरह की जजीरें भी मातम के काम आती हैं। इसम छोटे छोटे बेशुमार तज धारदार फल लग होत है और इनस पीठ या सीने पर मातम किया जाता है।

अन्दाज़ा लगाया कि वह गगौली पहुँच सकते हैं। फिर भी एहतियातन उन्होंने छाता मँगाकर साइकिल के डण्डे से बाँध ली।

गगौली के बाज़ार में समीउल्लाह खाँ की निगाह फुन्नन मियाँ पर पड़ गयी। फुन्नन मियाँ ने भी उन्हें देख लिया इसलिए खाँ साहब को सलाम करने साइकिल से उतरना पड़ा। फुन्नन मियाँ ठीक तो हो गये थे मगर उनका बायाँ कन्धा झुक गया था। और अभी तक चेहरे पर बहाली नहीं आयी थी।

'कहिए मीर साहब क्या हाल है?'

'हैं! हाल में कौन खराबी है!' फुन्नन मियाँ ने कहा। शायद वह यह पहचान कर चुके थे कि उन्हें पुलिसवालों से सीधे मुँह नहीं बोलना चाहिए तू कहीं शहर का रस्ता भूल गइल्या। सब कहरा घर लूटे को है। गगौली में अब गाफ़िलन के अलावा कोई के पास का न है।

'आदाब चचा!' अनवारुलहसन राकी का लड़का पास आ गया।

'आह भया, सार पाकिस्तान का का हाल है?'

'वह तो बन रहा है।'

'काहे न बनिहे भया। तूं कहि रहया तो ज़रूर बनिहे। बाकी ई गगौली पाकिस्तान में जइहे कि हिन्दुस्तान में रहिहे?'

'गगौली हिन्दुस्तान में रहेगा। पाकिस्तान में तो सूबा सरहद, पंजाब, सिन्ध और बंगाल होंगे। और कोशिश कर रहे हैं कि मुस्लिम यूनिवर्सिटी भी पाकिस्तान में हो जाय।'

'गगौली के बारे में न करिहो कोशिश'

'गगौली का क्या सवाल है?'

सवाल न है त हम्मे पाकिस्तान बनने या न बनने से का!

एक हम्माली हसूमत का आदमी।

कहीं इस्लाम है कि हुसूमत बन जैहे। ई भाई ... की खबर लियो है और इमामबाड़ा लियो है ... लियो है। हम बारा सुनत है कि सार पाकिस्तान जिन्दाबाद में फँस जायँ।

अंग्रेज़ों के जाने के बाद यहाँ हिन्दुओं का राज होगा।

होने ना दूंगा। गूँ न एसा हिन्दू कहि रहिया जब ...

हैं कि काट लीहयन । अरे, ठाकुर कुवरपालसिह त हि दुए रहे। मिगुरियो हि दु है । ए भाड आ परसरमुवा हि दुए न है कि जब शहर म सुनी लाग हरमजदगी कीहन कि हम हजरत अली का ताबूत न उठें दग, काहे को कि ऊ म शीआ लाग तबर्रा पढन हएँ त परसरमुवा ऊधम मचा दीहन कि ई ताबूत उट्ठी और ऊ ताबूत उठा । तारे जिना साहब हमरा ताबूत उठवाय न आय ।"

फारूक हस दिया ।

असल म इन हि दुआ की सि सियरिटी मशकूक है ।'

का मशकूक है ?

सि सियरिटी मरा मतलब है कि अग साहब वह यानी कि "

का भाई बाप दादा की जबाना भूत गयो ।'

फारूक सिर खुजान लगा ।

अच्छा मार साहब, हम चल रह ।' समीउद्दीन खाँ ने कहा ।

हई सुसर पाकिस्तान क मगड म त हम ताहे भूल गय रह । वहाँ जा रन्यिा ?

मुईनुद्दीन का खत आया है कि ऊ पाँच का आ रह तो सोच रह कि छठी का दा बाल पढा दिया जाय एही मार गुलाम हुसन खाँ के हा जा रह ।"

मुबारिक हा भई ।' फुन्नन मियाँ मुसकरा दिय, हालाँकि उन्ह यह बात शिद्दत स याद आयी कि इम्तियाज अब ना लौन्हि ।' उन्ह यह खबर मिल चुकी थी कि उनका बेटा बहादुरी स लडता हुआ काम आ गया है । जब एस० डी० ओ० मुसुफपुर ने उन्ह यह खबर सुनायी, ता उन्होंने कहा, आपऊ का बान डिप्टी साहब । फुन्नन मियाँ का लटका बहादुरी स लडन लडत काम आ गया ना इसम कौन ताज्जुब की बात है । ऊ कौनो हवाम अली कबीर का लडका है ! मगर इस वक्त मुईनुद्दीन के आने की खबर सुनकर वह अन्दर स उन्ाग न् ा गय । क्योंकि उन्ह इम्तियाज की शान्ी का बडा अरमान था । उन्ाने ता हम्माद मियाँ की लडकी उम्म हबीबा को पसन्द भी कर रगा था न्ालाँकि वह जानन थ कि यन् शान्ी नहीं हा सकती पर तब तक यन् सोचकर खुश न्ा लन म क्या न्ज है कि हा सकती है । उन्होंने यह जिक्र नहीं करवाया था क्योंकि उन्ह मालम था कि हम्माद मियाँ इकार

कर देंगे लेकिन वह मुतमईन थे कि इम्तियाज़ के लौटने के बाद कोई-न-कोई लड़की मिल ही जायेगी। असल सवाल तो नसीबा का होता है। आखिर अल्लाह ने जोड़ा बना ही दिया। रज़िया और रफ़ीक़ा अपने अपने घर की हो गयीं। तभी मग़फ़िरत तो अल्लाह ने उसका जोड़ा भी पैदा न किया होगा। लेकिन इम्तियाज़ के मरने की ख़बर आ गयी। ठाकुर कुंवरपालसिंह की मौत ने उन्हें यूँ ही बुझा दिया था। इम्तियाज़ की मौत ने सारी तरफ़ बिल्कुल ही अंधेरा कर दिया। सच तो यह है कि वह दीवाली के जुए की फड़ पर भी नहीं बैठे और हरनारायन प्रसाद ने नाम उनके लिए जो छापा मारा था वह ज़ाया हो गया। उन्होंने यारों जुआरियों को नशा-ख़्वारी नक़द छोड़ दिया था। दीवाली की फड़ पर न बैठना एक बहुत बड़ी घटना थी। फुन्नन मियाँ ने दुआ पर बस नहीं किया, उन्होंने नमाज़ पढ़ना शुरू कर दिया। नमाज़ में वह सिर्फ़ तीन दुआएँ माँगते थे :

परवरदिगार! मुहम्मद और आले मुहम्मद के सदक़े में ठाकुर कुंवरपालसिंह को बख़्श दे, मग़फ़िरत की चादर अता कर और इम्तियाज़ को साथ ख़ैरियत से वापिस कर!

अब पता नहीं कि अल्लाह मियाँ ने ठाकुर कुंवरपालसिंह को बख़्शा या नहीं। लेकिन मग़फ़िरत के लिए उसने कोई रिश्ता फ़राहम नहीं किया और इम्तियाज़ के साथ ख़ैरियत से वापिस आने का सवाल ही ख़त्म हो गया। ले देकर एक मुमताज़ था मगर वह अभी छोटा था। फुन्नन मियाँ का मतलब था कि अगर लड़ाई-लम्बी खिंच गयी और मुमताज़ जवान हो गया तो क्या होगा? इसलिए उन्होंने ग़ाज़ीपुर के मुसलमानों और हिन्दुओं के बेटियों और मुहाज़ों के आरज़ुओं के लिए एक और दुआ माँगना शुरू कर दी।

परवरदिगार! मुहम्मद और आले मुहम्मद के सदक़े में ठाकुर कुंवरपालसिंह को बख़्श दे, मग़फ़िरत की चादर दे और जर्मन को हराकर इस फ़साद का ख़ात्मा करदो। आमीन!

गाँव में किसी को इन दुआओं की ख़बर नहीं थी। बस यह बात फुन्नन मियाँ को मालूम थी और अगर कोई सुनता है तो वह ख़ुदा ही सुनता अगर दुनिया साथ ही में दोस्त बात न कर दे सब!

लेकिन हर दुआ के बाद वह यह सोचने लगते थे कि ठाकुर को किसने मारा। उस फुन्नन ने जो अशरफुल्लाह खाँ का दोस्त था या उस फुन्नन ने जो अखाड़े का खलीफा था। वह कोई फलसफी तो थे नहीं कि हयातो मुमात के मसाइल पर गौर करते। वह कोई मौलवी भी नहीं थे और कोई शेख सादी भी नहीं थे कि उस वाक्य से कोई इखलाकी हिदायत गढ़ लेते। वह तो सिर्फ फुन्नन मियाँ थे। गंगौली के एक जमींदार और उनके पास एक मोहर्रम के सिवाय इखलाकी फलसफाओं, तारीख का ज्ञान और जखीरा नहीं था। सोचते सोचते उन्हें मुहम्मद इब्ने अबू बक्र याद आये, जो सियासी तौर पर अपने बाप के खिलाफ थे और उन्हें तसकीन हो गयी कि अगर ठाकुर उन फुन्नन मियाँ के हाथों से मारा गया जो अशरफुल्लाह खाँ के दोस्त हैं तो पशेमाँ होने की कोई वजह नहीं। फिर भी उनके जेहन से ठाकुर साहब का आखिरी जुमला नहीं निकलता था—'हम जात हुए खलीफा!' यह जुमला फुन्नन मियाँ से बार बार यह कहता था कि शायद ठाकुर के कत्ल में खलीफा फुन्नन मियाँ का हाथ भी है और इसीलिए जब एक खेत के मामले में हम्माद और ठाकुर साहब के बड़े लड़के पृथ्वीपालसिंह का इख्तिलाफ हुआ और फौजदारी की नौबत आयी तो फुन्नन मियाँ ने अपने आदमियों से कहा कि वह ठाकुर का साथ दें। इस बात पर पट्टी में उनकी बहुत ले दे भी हुई, लेकिन एक बार सुनते सुनते वह झल्ला गये और बोले पट्टीदारी का मतलब एह है का कि हम्माद जुअन आफत चाहें जोतें और सब उन्हें का साथ दें। ई हम से ना होईये।

लेकिन इसका अंजाम यह हुआ कि फुन्नन मियाँ दक्खिन पट्टी से भी टाट बाहर कर दिये गये थे। जब वह करामत अली की बीवी को निकाल लाये थे तब वह टाट बाहर नहीं किये गये थे। सिर्फ इतना हुआ था कि कुलसुम की बीवियों के साथ उठने बैठने का हक नहीं मिला था। और यह होना भी चाहिए था। फुन्नन मियाँ को कोई शिकायत नहीं हुई थी लेकिन जब फुन्नन मियाँ ने गैर हक की बात पर पृथ्वीपालसिंह का साथ दिया तो पट्टीवालों ने उन्हें टाट-बाहर कर दिया। उनका हुक्का पानी बन्द होने का भी ज्यादा मलाल नहीं था इसलिए कि उन्हें मालूम था कि अब उन्हें मरने में दिन नहीं बरसों

है लेकिन मुझे यह ख़याल बहुत तकलीफ़देह था कि हुक्का-पानी बन्द है और 'मुमताज़ अभी छोटे हैं' और इम्तियाज़ बहादुरी से लड़ते हुए काम आ गए हैं और मसीउद्दीन भी अपने मुईनुद्दीन की शादी की तारीख़ तय कर रहे — उन्होंने अपनी गरदन झटक दी, 'ए भाई! अब किस्मत में इन्हें लिखा है न कोई क्या करे।'

लेकिन जब उन्होंने मुईनुद्दीन की शादी की बात कुलसुम को बतायी, तो वह इम्तियाज़ को याद कर-करके रोने लगी। उसे रोता देखकर रज़िया भी रोने लगी और रुख़साना भी। रज़िया को रोता देखकर उसकी छः साल की लड़की बनात फ़ातिमा उर्फ़ बन्नन रोने लगी और उसे रोता देखकर उसका साढ़े पाँच साल का लड़का मुहम्मद निज़ाम हुसैन अशरफ़ उर्फ़ दुल्लन भी रोने लगा। उसे रोता देखकर चार साल की मुमताज़ फ़ातिमा उर्फ़ पत्तो ने चीख़ना शुरू किया। उसके बाद वाला पेट गिर गया था और उसके बादवाली परवीन फ़ातिमा उर्फ़ पप्पो अभी एक ही साल की थी इसलिए वह रोने से बेनियाज़ थी।

रज़िया की तबीयत इधर छः सात महीनों से ख़राब रहने लगी थी। शाम को तबीयत निढाल रहती थी और हल्की-सी हरारत भी हो जाती थी। उसकी बड़ी बड़ी चमकदार निगाह आँखों की चमक धुँधली पड़ गयी थी और मुस्कराहट के वे चिराग़ बुझ गये थे जो उसके होठों पर हमेशा जलते रहते थे। और इन सब बातों के साथ-साथ तीन महीनों का पेट अलग।

कुलसुम तो आग बगूला हो गयी थी।

'मुहम्मद हसन को ईदे एक ठो काम रह गया है। जब देखो तब पेट! दिन भर आराम से दराबे नमाज़ पढ़े औ रहे एक के बाद एक!

उसने बेटे से तो ग़ुस्से में यह कह दिया। लेकिन दामाद से तो यह कहा नहीं जा सकता था और चूँकि रज़िया को कलकत्ते की आबोहवा रास नहीं आ रही थी इसलिए रज़िया मायके आ गयी थी कि मायके में भी कर लेगी और दवा से सम्भव बच्चा भी हो जायेगा।

रज़िया को ही दुलारकर नसीमा को तो मार-मार कर दिया, 'अब

रजिया न बची हसन और उम्मुन, तू देख लिया फुन्नन मियाँ के मुहम्मद हसन से ब्याह दिहिन ।

नाहीं !' उम्मुल ने नाक पर उँगली रखकर कहा, 'फुन्नन का सठिया गये हैं। मुहम्मद हुसैन की शादी दर म भई नहीं त मगफिए वगैरह त ऊ की बेटी होती और मगफिए का कुद्दन से ब्याह ना है। हमरे ख्याल म त तीन चार साल ढेर का फर्क न है।'

'त फुन्नन का कमासु दमाद कहाँ से जुडिय ?" नइमा बी ने चमककर कहा।

जस रब्बन का जुड गया और रजिये का जुड गया ! मगफिए का जोडा का अल्लाह मियाँ ना बनाईन होइएँ ?'

तोहे बात का टूगना जरूरी है !' नइमा बी बिगड गयीं क्योंकि एक जमाने के बाद कुबरा ने भी बेटियाँ की एक खेप उतार दी थी। उम्म हबीबा, सुगरा, अजरा, नजमा और फिरोजा। सुगरा के नाम पर तो अच्छा खासा फिसाद खडा हो गया था। क्योंकि हकीम साहब की एक नवासी का नाम भी सुगरा था। चुनांचे उनकी बेटी उलट गयी कि हम्माद ने उनकी बेटी का नाम कैसे रख लिया। औरतों के लिए नाम तो बडी गजब की चीज होता है।

बशीर मियाँ की माँ अकबरी बाबी का यह हाल था कि चूंकि उनके मियाँ का नाम मुहम्मद था इसलिए वह मरते मर गयीं लेकिन आधी से ज्यादा जिन्दगी गाजीपुर में गुजारने के बावजूद वह मुहम्मदपुर को उन्हपुर कहा करती थीं। और जब उनकी बडी पोती सरवरी की शादी इब्न अली से हुई तो बडा फजीता खडा हो गया। क्योंकि नौहा मरसिया में इब्न अली बार बार आता है। इसलिए जब शादी के बाद पहला मोहर्रम आया और सरवरी ने रस्म-दस्तूर नौहा पढना शुरू किया तो दूसरे ही शेर में इब्न अली आ गया। सरवरी को चूंकि बाकायदा उर्दू पढायी गयी थी और उसने मिसेज नायडू से अधूरा को इन्किलाबी किताबें पढी थीं इसलिए वह उस बगावत को न समझी। पढ गयी। अकबरी बीबी सब सुनकर सन्न हुईं कि पन हुआ म उठ गया यानी ... म बहुत रहियें ...

का मत बुलाओ। बाक़ी अंग्रेज़ी पढ़ाने का शौक़ चर्राया रहा ना। अब लिया अँग्रेज़ी। लगान मियाँ का नाम लिए जा रही है।'

उन्हें लाख समझाया गया कि इन्ने अली इमाम हुसैन को कहते हैं मगर वह न मानीं। उनका मंतक़ अजीब था, "म का न जानियू ? बाक़ी इब्न अली के मियाँ का नाम है कि ना ?'

इस सवाल का जवाब कौन दे सकता था ! चुनांचे अकबरी बीबी सरवरी से खफ़ा रहा कीं। तो भला ऐसी दुनिया में कोई किसी और का नाम कम रख सकता है। मगर नईमा बाजी खेल गया। अज़रा और नजमा का उन्होंने किसी तरह बर्दाश्त कर लिया हालांकि उनका कहना था कि 'नौज ता नाम है।' लेकिन फ़िरोज़ा पर तो वह बिलकुल ही बिगड़ पड़ी हों

उनका ख़याल था कि अब्बास अपनी बहना के लिए किरिस्टाना जमा रहा है। बहुत बिगड़ीं कि 'ई नाम बशीर और अग्गू मियाँ को रह गए हैं ! लेकिन अब्बास ने ज़िद की और नईमा बी का हार मानी पड़ी। लेकिन बहू से खफ़ा ना कोई नहीं रोक सकता था। तो वह रमज़ान का हा की तरह अपनी बहू से खफ़ा हो गयीं। चुनांचे उन्हें जब बीच में टूकड़ा लगाया तो वह उखड़ गया। बुढ़िया कुड़कुड़ाकर दीवानख़ाने में चली गयी और नईमा बी फिर उम्मुन से बातें करने लगीं। इसरार था कि रज़िया मर जायगी और फुन्नन मियाँ मशफ़िक़ा या मुहम्मद न में रख लेंगे। उम्मुन का इस बात के मान लेने में कोई ख़ास एतराज़ न था।

सुन रखियू कि मखूर की लड़की का रिश्ता आया रहा फ़र्रुख़ाबाद से। न पक्की हो गया रही। बाक़ी फिर लड़केवाले रिश्ता तोड़ दिहन कि लड़की का नाम ख़राब है।

न का ग़लत कहिन सब।' नईमा बी बोलीं, 'हमने तो सोचियाम दरी ख्याल का है। बाक़ी तू न बोलो शक ना है कि नजमा की सूरत बुरी है।

वह एक ठो सलमा बदसूरत है। कौन कहे कि बुढ़िया, सदा उसमें रंगा, फ़क़ीर ख़राब और ऊ नाकवाला का का नाम है हाँ, महजबी का

शक्ल बहुत अच्छी है ? आँव का आवा बन गवा है । फुस्सू का दिल गुरता है कि सभन को चाहत हुएँ ।'

'और सुना है कि बदरुन के ब्याह की तारीख पड गयी ।'

हा औं मार गाना बजाना हो रहा ।

गुलाम हुसन त बडा जहेज तैयार कीहन हाइहैं ।"

सुन त रहे कि पाँच थान सोने का और दस थान चादी का गहना दे रह । कपडा म परेशानी है । एक दम्म स न उड गवा है । परमिट अरमिट वनवाईन न हाएँ । वाका देख जुअन उन जाय तुअन गनीमत है । का जमाना आ गवा है ।"

मगर गुलाम हुसैन खा ने मर जीकर किसी न किसी तरह ग्यारह जोड तयार कर ही लिये । दो भाइया के बीच म अकेली लडकी थी, क्योंकि बुल सुम के निकल जान के बाद करामत खाँ ने शादी नही की और वह थे डिप्टी अली हादी के मुह लगे मुलाजिम । उन्ही के साथ रहत भी थे । इसलिए उपर की आमदनी काफी थी और खच एक नये पसे का नही था । उन्होने सोचा कि पैसा किसके लिए बचायें ? इसलिए उन्होने अपनी डाकखाने की काफी बडे भाई के सुपुर्द कर दी उसम आठ सौ चालीस रुपये तेरह आने थे ।

गुलाम हुसन खाँ न अपनी बिसात से ज्यादा इन्तजाम किया । बस हकीम साहब और डिप्टी अली हादी न भी मदद की । दोना न एक एक जोडा कपडा दिया । हकीम साहब की बीबी न चाँदी की आठ चूडियाँ दी । डिप्टी अली हादी की बीवी न अपना एक पुराना बुन्दा दिया जो सुनार के यहाँ स साफ होकर आया तो दप-दप कर रहा था । फिर खुद बदरुन की माँ न अपने चार गहने पात दे डाले । यू जहेज तयार हो गया । ढोल पर थाप पडी और बदरुन माँझे बिठा दी गयी और सफुनिया की माँ उसे सुबह शाम उबटन मलने लगी । उसका खाना बिलकुल बन्द कर दिया गया । चुनाँचे बदन की जरदी पर उबटन की चमक चढने लगी और बदरुन उल्टे सीधे ख्वाब देखने लगी । शादीशुदा हमजोलियाँ और गाँव की भौजाईयाँ उसे तरह-तरह की कहानियाँ सुनाने लगीं । कभी उसका दिल धडकने लगता और कभी वह शरमा जाती और लाजवन्ती की तरह अपने मले कपडा म सिमट जाती ।

जमाईनों का गाना गन्दी गन्दी गालियाँ गाने लगा। औरतें—शरीफ औरतें—वे गालियाँ सुनने लगीं। कभी किसी ने एक चवन्नी देकर किसी के लिए गाली गवायी। कभी उसने एक अठन्नी देकर उस गाली गवायी। नतीजे में मालूम हुआ कि सबकी बहुओं का थानेदार से नाता है और तमाम की-तमाम शरीफजादियाँ और घर की शादीशुदा औरतें हर्राफनियाँ हैं कि सौ-सौ मर्दों से उनका जी नहीं भरता। और उन गालियों को सुन-सुनकर मन ठहाके लगाती रहीं। गाने गाती रहीं। और जमाने की खराबी पर माथा कूटती रहीं कि क्या जमाना आ गया है कि गढ़े चार मर का लिख रहा है।

गाने अरबन का मुजरा हो में शामिल होने लगीं। लड़कियों ने बदरुन का छेड़ना शुरू किया।

'हम बहन न रहें की पनाली में मत जाओ। अब इ कीचड़ में मियाँ गई वहाँ गिर गिरा गये तब'

बदरुन मियाँ भाई का जिक्र सुनकर अपना सिर घुटनों में छुपा लेती।

यकायक बाहर रात के ग्यारह बज आया तो मालूम हुआ कि मुईनुद्दीन की एक टाँग मसरी थी है। अन्दर से लड़कियों और औरतों के गाने की आवाज आ रही थी

बन्ना घूम नगर में आया री बन्ना
कुम्हार की गली हो आया री बन्ना।
अपनी अम्मा नचाता आया री बन्ना
सब लोग कहें कुम्हार का जना।
बन्ना घूम नगर में आया री बन्ना।
महतर की गली हो आया री बन्ना।
अपनी बहन नचाता आया री बन्ना
सब लोग कहें महतर का जना॥
बन्ना घूम नगर में आया री बन्ना

मगर मदरसा की टाँग की खबर जो अन्दर पहुँची तो गाने रुक ही गये।

यह खबर सोनार में फैल गया। मदरसे का कहना था कि मुईनुद्दीन ने यह खबर फैलाकर अच्छा नहीं किया। औरतों ने माथा कूट लिया कि

बदरुन की किस्मत फूट गयी। सारे गाव ने कहा कि यह खुली हुई धाधला है। बगत लौटा दी जाये। मगर गुलाम हुसैन खा बरात लौटान पर तयार नही हुए। करामत खाँ न ता लाठी तक उठा ली थी। लकिन गुलाम हुसन खाँ नडकीवाल थे, बोने ई मत भूलो कि हम लडकीवाले हैं।"

'हैं ता का भया हमरी नडकी का नगडी लूली है? समीउद्दीन खा की एमा की तसी! हम इनकी सारी दीवानी अभई निकाल देते है। भया, बदरुन क वास्त कौनो लटके की कमी ना है।

ऊकी किस्मत म ई लँगटवे लिखा है त हम कौन खुदा के कारखाने म दखल देव वाले?

गाव के लोग भी पट्टीदारी और जात बिरादरी को भूलकर लडने मरने पर आमादा हो गये। जौनपुरवाल शेरवानिया पहने पहने अकड रह थ।

अर निकाल दामाद के त ऊ सुसरन के ' गया अहीर न कहा।

आप अलग हटें खा साहब! इ गाँवभर की मरियादा का सवाल बाय।' सुखरमवा चमार न कहा।

"ई साले का समझ के बरात ली आये हैं! ' फुन्नन मियाँ ने कुलसुम म कहा।

आपमे हम इसकी उम्मीद न थी। हकीम साहब ने ठाकुर हरनारायन प्रसाद म कहा।

मीर साहब अब म क्या अज करूँ! ठाकुर साहब बाले म तो समझा था कि समाउद्दीन खा ने बता दिया होगा। मुझे तो बल्कि ताज्जुब था कि जान-बूझकर आप लोग लडकी को कुएँ म क्या ढकेल रह हैं!"

किस्मत फूट गयी बचारी का। एक तो हकीम साहब की बात पूरी न हो सकी क्योंकि मौलवी बेकार हुसन मदरसफाजिल बदरुन की मजरा लकर आ गय। अन्दर रोना पीटना पडा हुआ था। बदरुन की माँ रो रही थी और बरात क साथ आनवाली औरता की कोई बात नहीं पूछ रहा था।

हम कहि रहें कि आप लरिकिया का लरिकवा की टाँग स ब्याह रही कि लरिकवा स? मुईनुद्दीन की माँ ने जलकर सवाल किया। उस अपने लडक की शादी क मौके पर यह रोना धोना एक आँख नही भा रहा था।

हालाँकि जब मुईनुल्हसन लँगड़ा की एक टाँग पर घिसटता हुआ घर में दाखिल हुआ तो उनके मुँह से चीख निकल गयी थी। वह सोच भी नहीं सकती थी कि यह भी हो सकता है। उन्होंने आँगन में नंगे सिर खड़ी होकर जमनो और अंग्रेज़ों को खूब कोसा था कि उनकी लड़ाई में बेटे की टाँग गयी। मगर वह बात और थी। इस समय जब कि मौलवी लड़की से पूछ रहा है कि क्या उसे मुईनुद्दीन खाँ वल्द मसीउल्हसन खाँ से पाँच सौ इक्यावन रुपये और पाँच अशर्फियों पर निकाह कबूल है? रोने का कोई मौका नहीं था। कोई माँ यह बदशगुनी नहीं कर सकती थी।

बन्नन की माँ मुईनुद्दीन खाँ की माँ की बात पी गयी। उसने भी सोचा कि अब तो जो होना है हो गया। रोने से क्या फायदा। इसलिए वह अपनी समधिन के लिए गाने गवाने लगी।

मगर जब लँगड़ा अपनी टाँग पर घिसटता हुआ जलवे के लिए अन्दर आया तो गाँव बिरादरी की औरतें फिर बात पर ... 'नौज इससे तो अच्छा रहा कि बन्नन को तमाम हुसन कुएँ में झोंक देते।'

मगर मिरासिनों ने बात सँभाल ली। वे गालियाँ गाने लगीं।

काहे से बना भैया हमारा बना

बन्ने की अम्मा बाँस बरेला

बन्ने का अब्बा रूठा मुर्ग़ा हमारा बना

काहे से बना लम्बा हमारा बना

फिर मिरासिनों ने बलबा करवाया। जौनपुर की गफूरन मिरासन ने गोरा की औरतों के लिए गालियाँ गायीं। औरतों ने उन्हें गालियों पर इनाम दिया। तमाशा देखा। मुईनुद्दीन की एक साली ने मुईनुद्दीन के हाथ में बन्नन की माँ का दुपट्टा दे दिया। ई तोरी सास है, पकड़े रहो दुपट्टा।'

बन्नन की माँ ने ग्यारह रुपये दिये। मगर ने दुपट्टा नहीं छोड़ा। उन्होंने पाँच रुपये और दिये। तब ने दुपट्टा नहीं छोड़ा। औरतों में फिर खुसर फुसर होने लगी कि यह तो कोई बात नहीं हुई। लड़का आखिर चाहता क्या है। लड़के की साली बोली 'लड़का मार्शल चाहता है।

लड़का का लोग पर मार्शल नौज, की ... ! उसने अपनी ज़बान

न राक सकी । सफुनिया इस बात पर खिलखिलाकर हस पड़ा । खाला बिगड़ गयी । नेन के देन पड़ने की नौबत आ गयी मगर बदरुन की माँ ने माँफी माँगी। हाथ जोड़ तब जाकर खाला मानी । वरना वह तो इस पर तुल गयी थी कि लड़की को सड़ने के लिए गंगौली म छोड़ दिया जाय ।

खैर खुदा खुदा करके लड़का बाहर गया ।

हकीम साहब के बड़े फाटक म बरातियों के सोने का इन्तज़ाम था। आगन मे पलग पड़े हुए थे । नौशाह के लिए लाल पाया वाला निवाड़ का पलग था बाकी लोगो के लिए सुतली और मूझ के । एक बराती का बँसखट मिला। वह उखड़ गया कि क्या गंगौलीवालो का यही तरीका है ।

हकीम साहब खून का घूट पीकर रह गये। उन साहब के लिए पलग आया ।

ताश का गड्डियाँ निकल आयी । कोटपीस गन, ब्लैक कुइन, ट्वन्टी नाईन माग पत्ती जोड पत्ती और फ्लश होने लगा । बूढे बराती हुक्का पीते पीते और पान खाते खाते थककर सो गये । ठाकुर साहब का पलग हकीम साहब के पलग के पास था । ठाकुर साहब उन्ह खाँ साहिबी की मुबारकबाद द रहे थे कि न मालूम कैसे उस साधू का जिक्र निकल आया जिसने मुरादपुर के पुराने गैर आबाद मन्दिर को आबाद किया है ।

भाई हमने तो सुना है कि वह काई पहुचा हुआ आदमी है । हकीम साहब न कहा दिन रात मूरती के सामने बैठा रहता है और एक लाल रग की मोटी सी किताब पढ़ा करता है । न किसी से बोलता है न चालता है। लोग जो दे देत है खा लेता है । नहीं देत हैं तो खाली पेट सो रहता है ।

हमने तो सुना है कि वह लोगो की मन्नत मुराद पूरी कर रहा है । किसी के यहाँ लड़का नहा होता था उसने असीस दी । अब सुना है कि उसकी बीवी पेट से है । यह बात मौलवी बशीर न कही और उनके लहज म शिकायत की कोई झलक नहीं थी ।

यह बात तो म भी जानता हूँ ठाकुर साहब न कहा ' बिना मुझसे पूछे गछे गुलाबीजान वहाँ जाकर उससे यह माँग आयी कि मेरी तरक्की हो जाय । उस बेचारी को क्या मालूम कि सर्विस इम्पीरियल यानी नाम का ओहदा है । म क्या मिट्टी फाँकता हूँ कि तरक्की की ख्वाहिश करूँ । मगर साहब गुलाबीजान

के यह समझने मानने के बाद पंद्रह दिन बाद जो मैं गाज़ीपुर गया तो एस० पी० साहब ने मुझे मुबारकबाद दी कि अनक़रीब मेरी तरक्क़ी होनेवाली है। सोच रहा हूँ कि किसी दिन मुज़फ़्फ़रपुर का कोई काम निकालकर उधर जाऊँ तो महराज के चरन छूकर प्रार्थना करूँ कि महराज हम तो थानेदार रहते तो हम तरक्क़ी नहीं चाहिए।

'और अगर हो गयी?'

तो मैं नौकरी छोड़ दूँगा। थानेदारी करने के बाद इन्स्पेक्टरी में भला क्या मज़ा आयेगा! थाने भी ज़मींदारी बना दी है। सो बाप की ज़मींदारी भी कर ली है। वहीं चला जाऊँगा, खेती बाड़ी करूँगा।

"और क्या साहब!" हकीम साहब रहीम हज्जाम की तरफ़ मुड़ गये, "काहे रे?"

'फुन्नन मियाँ की बड़ी लड़किया की तबीयत बहुत ख़राब है। बिचारे भागे भागे उतरौलपुर गये। थानेदार साहब गाज़ीपुर गये हैं। पर मोर साला पटना गया है।' रहीम ने चिलम उठाकर उसे फूँकते हुए कहा। फिर जब चिलम की आग साफ़ हो गयी तो उसने चिलम कान पर रख ली। हकीम साहब जल्दी जल्दी और छोटे छोटे कश लेने लगे। थोड़ी देर तक तो उन्होंने रहीम की बातों का असर को टालना चाहा। लेकिन कोई पाँच सात मिनट के बाद वह पसोपेश में या अपना [illegible] हुए।

ज़रा उधर हो आऊँ। उन्होंने ठाकुर साहब से कहा। फिर जब रहीम से मुख़ातिब हो गये, 'तो का फुन्नन मियाँ अकेले हैं [illegible]?'

'नाहीं। रहीम ने कहा, बीवी ने मोर जिन्दगानी रही। यानी ऊ करन भर काम किया रहा। हम अभी कवार को सलाम कर ना जायेंगे।

हकीम साहब मुस्करा दिये।

तुम आगे आगे चलो। वो मालूम मसनिया करो न निकर आवे और तुम पछताओ बुलाकर मशहूर करने लगे। तुम कहीं ज़्यादा ज़्यादा क्यों नहीं कर रहा। हरामज़ादी तेरा किस्सी है। मज़हब का मज़ाक़ करवाओगे क्या?

रहीम ने और सिकायत किए अब हकीम साहब उससे कभी की बात हो नहीं कर रहे थे।

हकीम साहब गस की रोशनी से जो बाहर आये तो अँधेरा और गहरा मालूम होने लगा। एक कुत्ते पर उनका पाँव पड़ गया, वह ट ट करता हुआ भागा। हकीम साहब उसे मा बहन की गालियाँ देते हुए आगे बढ़ गये। रहीम साथ-साथ था। मगर जब वह बड़े फाटक पर पहुँचे तो एकाएक कुलसुम के बैन करने की आवाज आने लगी। वह इनल्लाहो पढ़कर लौट पड़े।

कुलसुम के रोने की आवाज ने रात्रियों के घर जगा दिये। फारूक और अनवारुलहसन लपके हुए आये। हम्माद मियाँ ने अपने दरवाजे से पूछा 'अरे भई क्या किस्सा है?'

मालूम होता है कि फुन्नन चा की नन्का का इन्तिकाल हो गया। फारूक ने कहा।

हम्माद मियाँ फिर अन्दर चल गये। दक्खिन पट्टी में जाग सब मगर सोते बने रहे। हद तो यह है कि वाजिद मियाँ की रखनी यानी रहमान बो ने जब फुन्नन मियाँ के घर जाना चाहा तो वाजिद मियाँ ने उसे घुड़क दिया वहाँ जा रहिया वा ताहे मालूम ना है कि फुन्नन वा हुक्का पानी बन्द है?

रहमान बो ने कुछ कहना चाहा तो वाजिद मियाँ ने उसे दो थप्पड़ मारे। मारने की बात हो या। एक दाश्ता का यह मजाल कि उनकी मर्जी के खिलाफ ची पी करे। उसके जवान लड़के कमालुद्दीन उर्फ कम्मा को माँ का यूँ पिटना बहुत बुरा लगा। दूसरा लड़का फिदा हुसन उर्फ फद्दू ने रोना शुरू कर दिया। वाजिद मियाँ ने उसके भी दो हाथ रसीद किये।

टेंटुआ दबा दे ई मार का!

'चुप हरामजादे! नहीं त ताहूँ को मारभर के छोड़ी!

मुद त एक हाथ के हो बाकी जवान सात गज की है।

तें हमें मरबे?

त बाने हमरे सामने अम्मा को मरिहो?

नो त!

वाजिद मियाँ ने रहमान बो को फिर मारना शुरू कर दिया। कम्मा ने लपककर उनका हाथ पकड़ लिया। कम्मा जवान था। वाजिद मियाँ का

हड्डियाँ चौड़ा उम्र था लेकिन वह बूढ़े थे। नाचकर रह गये लेकिन जब हाथ न छुड़ा सके तो वह कम्मो को मादरजाद गालियाँ देने लगे।

खाना नया गाना था। हरामजादे ने रंग लिये हैं। कम्मो ने कहा वाको अब जा तू अम्मा को कुछ कन्या तो मन के गाड़ देंगे।

रहमान की कम्मो से लिपट गयी छोट मार्गोमिल। का तैं बाप का मरद? तारा जनाजा निकले। झाड़मार। दिमाग टूटे। अरे मैं काट दियें हाय जवानीपाट।

मगर जब इतना सुन-सुनाकर भी कम्मो ने वाजिद मियाँ का हाथ नहीं छोड़ा तो रहमान की कम्मो को मारने लगी। आखिर झल्लाकर कम्मो ने वाजिद मियाँ को धकेल दिया। वे पलंग पर गिर पड़े और वहाँ से लेटे लेटे कम्मो को गालियाँ देने लगे।

ठाकुर पृथ्वीपालसिंह जब रजिया के मरने की खबर सुनकर गंगौली लौटे तो उन्होंने वाजिद मियाँ की गालियों की आवाज सुनी। जाहिर है कि उन्होंने गालियों पर कोई ध्यान नहीं दिया।

फुन्नन मियाँ ने हम्माद मियाँ से पूछे बिना ही कब्र खोदकर खुलवा लिया था। हम्माद मियाँ ने यूँ जगी की तो वे सारा सबर निकल आये।

कि ताबे का लगा दिन नहीं रहे थे। अब कहिए रहे हैं हम्माद के चमन हर जा! सादा परेशानी का गुस्सा इस पार्टी में लिया। न की अब रजिया की गुस्सा सब का हम जिन्ना साहब के पाकिस्तान चले जायें।

हम्माद मियाँ उधर खबर खोदकर हट गये लेकिन लम्मो की और तुरत ख्वाब पर आकर फुन्नन मियाँ की गालियाँ देने लगी। बार हाने सुनाने गवराना औलिया ने इस सारा को बर्दाश्त किया। और बात ही। हम तारा कही कहाँ। फुन्नन मियाँ कि घर न भया तो हम हम्माद की मार मार के नचमर निकाल देंगे। यारों इतना सुन लिया दोनों औरतें सहमकर चुप हो गयीं। फुन्नन मियाँ एक पलंग पर बैठकर बोलने लगे। एक पलंग पर जाकर बैठ गया। लेकिन अनवारुलहसन नहीं बैठे। वह बाहर पर उठकर बटोर सिगरेट पीने लगे। तमाम कार पर माया उगम कर की टहनियाँ हाथ दो गया।

फुन्नन मियाँ ने उस लम्बे चौड़े आँगन का देखा जिसम पाँच सौ आदमी एक साथ बठ सक्त थे, फिर उ होने उन दो आदमियों को देखा जो उन्हें पुरसा देन आय थे। वह बहादुर आदमी थे। अपनी मूछा से खेलन लग। मगर आसू बहादुरा का रौब नही खाते। उनकी आँखें भीग गया ता वह करवट से लेट गये कि फारूक उन्ह रोता न देख ले। लकिन जब चुपचाप लेटना नामुमकिन हो गया तो वह गुनगुनाने लगे।

म यह नही कहती कि अमारी मे बिठा दा।

बाबा मुझ फिज्जा की स्वारी म बिठा दो।

रजिया का जनाज़ा निकला ता ताबूत फुन्नन मियाँ, ठाकुर पृथ्वीपालसिंह झिंगुरिया और अनवारूलहसन के कधा पर था और ठाकुर कुवरपालसिंह का सारा परिवार जनाजे के साथ। फुन्नन मियाँ जनाजे को कबला की उत्तरी दीवार के पास अपनी खानदानी गडावर के पास ले गये। कब्र तयार थी। ताबूत रख दिया गया। मौलवी बेदार सदरलफाजिल न नमाजे जनाज़ा पढान से और गगौली के मोमनीन न नमाजे जनाजा पढन स इन्कार कर दिया था। इसलिए फुन्नन मियाँ न नमाजे जनाज़ा तनहा पढी। उन्ह नमाज़ याद नहीं थी मगर उन्हान नीयत बाधा

पालपरवरदिगार! हम्म ता ई नमाज़ा ना याद है का कर। वाकी हमरी इ नमाज़ कबूल कर अल्लाह अकबर! या आवाज़ बुलन्द तकबीर कहकर उन्होन नमाज़ पढ डाली। फिर उन्हान कब्र म उतरना चाहा। लकिन पृथ्वीपाल न उन्ह कब्र म नहा उतरन दिया हम उतारब अपनी बहन को!

लकिन जाहिर है फुन्नन मियाँ यह नहा कर सकते थ। पृथ्वीपालसिंह फिर ना मज़्म था। चुनांच वह खुद कब्र म उतर। पृथ्वीपालसिंह और झिंगुरिया न लाश उतारी। फुन्नन मियाँ न चहरे से कफन सरकाया। बाल ऐ बटी हम का कर हम्म तलवार पकडना आना यादी हम गवाही द रहे हैं की तू मुहर्रम के एहत्तराम वत रहिया नमाज़ी रहिया और मियाँ की खिदमतगार रहिया!

वह कब्र स निकल आय। कब्र बराबर कर दी गयी।

फुन्नन मियाँ जब गमोत्री म शामिल हुए तो बन्नन की पालकी जा रही थी। आगे आगे एक बडगाडिया म मुर्सुद्दीन था। उसकी लकडी की टाँग खोली हुई एक तरफ रखी हुई थी। फुन्नन मियाँ न जानी छूट बरात क लिए खाना छोड दिया।

बरात क रानिमाबाद पहुँचत ही ठाकुर साहब को एक इनपेक्टर न बताया कि मुहम्मदपुर क मन्दिर म परसराम चमार आस-पास क मठ क गाँव को इकट्ठा किय बाद जलसा कर रहा है। अभी ठाकुर साहब उस पर गौर भी न कर पाए थ कि गाजीपुर म खबर आ गया कि गाँधी और पडित नहरू और कांग्रेस क दूसर तमाम बड बड लीडर गिरफ्तार किए गए हैं और होशियार रहन की जरूरत ह।

ठाकुर साहब न अपन आठ कान्स्टबलों क साथ उसी वक्त मुहम्मदपुर पर छापा मारा। लकिन वहाँ कोई नहीं था। बाबाजी महाराज भी। भगवान क सामन एक लाल कपडा जमा किताब रखी हुई थी। टाकुर वह किताब उठा ली। वह एक बनी थी। उस पहचानन म ठाकुर साहब को दर नहीं लगी। यह शारखवन का बनी था जिसम उसका पनी हुई निजाम का तरमा ताल था।

ठाकुर साहब रानिमाबाद पहुँच तो शाम हो चुकी थी। समीउद्दान की क क्वाटर म गुलाबोजान क तरफ चहचहाकर गान की आवाज आ रही थी। ठाकुर साहब न समाउद्दान मी को तरफ देखा जो अपना पर सार रह थ। जाओ बहू को दख लो।

समाउद्दान मी न बहू को देखा और पसन्द किया। यह निकलावी म उन्होंन उस अपना भी को बहू पसन्द किया जो उन्हें मुल्लुद्दीन की याबी क लिए बहू दखर मरी थी। रात क इस बजत बजत गाना-बाना हो गया। सब गुम कर दिय गए। गुलाबोजान न मुर्सुद्दीन मी को दबर-दबाकर हवाल उसको म भेजा। क्योंकि जौनपुर म जो औरतें आयी थी व तो समदिगार की खबर सुनत हो अपन बेटा मरने की खबर सुना जा पूरी थी।

मुईनुद्दीन बहुत शर्मिंदा था।

'मैं तो तुम्हारे पास चुपके से आना भी चाहूँ तो नहीं आ सकता। यह लकड़ी की टाँग ठुक ठुक ठुक ठुक बोल जाती है।'

वह पलंग पर बैठ गया। बदरुन सूहा पहने मुर्दे की तरह पलंग पर चित पड़ी हुई थी। उसकी आँखें बन्द थीं। दिल जोर-जोर से धड़क रहा था और नथुनों के ऊपर पसीने के नन्हे-नन्हे कतरे लरज रहे थे। उसके बालों में एक अजीबो गरीब खुशबू की लपटें निकल रही थीं और उसका लिबास इत्र सुहाग में बसा हुआ था। माथे पर अफशाँ की कहकशाँ थी। मुईनुद्दीन ने यह सब कुछ एक नजर में देख लिया। फिर वह अपनी टाँग खोलने लगा। उस टाँग को एहतियात से कमरे की दीवार से टिकाकर वह बदरुन पर झुक गया।

'आँख खोलकर देख तो लो एक बार कि मैं कैसा हूँ।'

बदरुन ने उसकी आवाज़ सुनी। उसे उसकी आवाज़ अच्छी भी लगी। मगर उसने आँख नहीं खोली। हाँ, उसका दिल और जोर-जोर से धड़कने लगा क्योंकि किसी ने उससे कहा था, पहली रात का ढेर इतराइयो मत, लड़का हुए में जान पर बन आहियै। और उसे एक जज़्बये तजस्सुस भी रह-रहकर उकसा रहा था कि पेट में लड़का पड़ता कैसे है। मगर उसका सारा बदन बर्फ की तरह सर्द था और कोई आठ दस रोज़ के फाके ने उससे एहतजाज की कुव्वत भी छीन ली थी। मुमकिन है कि मांझे में खास इसीलिए लड़कियों से फाका करवाया जाता हो कि अगर शौहर एक टाँग का हो या बहुत बदसूरत हो तो दुल्हन एहतजाज न कर सके। कम से कम बदरुन तो एहतजाज न कर सकी।

गयी रात को जब मुईनुद्दीन थककर हारकर सो गया तब बदरुन ने आँख खोली। वह दर्द बदम हो रही थी। उसके बदन में फाके से पैदा हो जाने वाली बेहिसी के बावजूद एक मीठा मीठा सा दर्द था। फिर भी उसने आँख खोली। पहले उसने मुईनुद्दीन का चेहरा देखा और हालाँकि वह बराबर सो रहा था, लेकिन वह शरमा गयी। फिर उसने जरा जरा करके उसके पूरे बदन का जायजा लिया। मगर उसके बदन का एक हिस्सा तो शायद रो टिका रखा था। लकड़ी की उस टाँग को देखकर वह उदास हो गया।

ऐन उस वक़्त थाने के पहरेदार ने पहला फ़ायर किया।

थाना मरदानी के भरा और पृथ्वीपालसिंह और असगरफुल्लाह खाँ के आदमियों ने घेर लिया था। न रहे लोग तो कोई दो हज़ार आदमी रहे होंगे। इस मजमे में ऐसे लोग कम थे जिन्हें 'हिन्दुस्तान छोड़ दो' के नारे की ख़बर रही हो। उनमें ऐसे लोग भी नहीं थे जिन्हें आज़ादी का मफ़हूम मालूम हो। ये लोग वे थे जिनसे हथौड़ा लगान लिया गया था जिनके खेतों का अनाज छीन लिया गया था जिनसे ज़बरदस्ती वार फ़ण्ड लिया गया था। जिनके नाती भतीजे लड़ाई में काम आ गये थे या काम आनेवाले थे और जिनमें थाना शमीमाबाद के पुलिस से रिश्ता न रहा था। उनमें कामिला चमार का बाप बाबूराम चमार था—बल्कि बाबूराम चमार थे। उनमें गोवरधन था। लेकिन उनमें सबसे बड़ा गोल फुन्नन मियाँ का था हालाँकि फुन्नन मियाँ ख़ुद मौजूद नहीं थे। फुन्नन मियाँ के गिरोह की अगुआई ठाकुर कुँवरपालसिंह का पोता और पृथ्वीपालसिंह का बड़ा लड़का हरपालसिंह कर रहा था और झिंगुरिया गाँव में ख़ासा सियापा पड़ा था।

मजमे का मुतालबा था कि ठाकुर हरनारायण प्रसाद को उनके हवाले कर दिया जाय। ज़ाहिर है कि ऐसा नहीं हुआ। ठाकुर साहब क़िला बन्द हो गये और पहला फ़ायर उन्होंने किया, जिसने हरपालसिंह को ठण्डा कर दिया। पहले राउण्ड में गोवरधन भी मारा गया और मुमताज़ भी जो अभी दो दिन पहले पन्द्रह साल का हुआ था। फुन्नन मियाँ को यह नहीं मालूम था कि मुमताज़ भी इस बग़ावत में शामिल है। वरना शायद वह उस रात सन या हो सकता है कि उन्हें मरसिये का कोई ऐसा बन्द याद आ जाता जिसमें हुसैन अली अकबर या क़ासिम की कमर में तलवार बाँध रहे हैं—अगर—काश ऐसा वक़्त याद आ जाता तो बहुत मुमकिन है कि वह गुन गुनाह और मुमताज़ को इजाज़त दे देते और कुलसुम को यह न बताते।

मजमे ने जो नारे लगाये तो वह बावला हो गया। थाना फ़तह हो गया। ठाकुर साहब और तमाम सिपाही एक कमरे में बाँधकर फूँक दिये गये और बस्तियों में आग लगा दी गयी। किसी और क्वार्टर में तो कोई आवाज़

नही निकली लकिन समीउद्दीन खाँ क क्वाटर स औरता क चीख़न की आवाज़ देर तक आती रही।

मजमे के मु तशिर होन के बाद समीउद्दीन खा के क्वाटर क खडहर से एक औरत निकली। अगर वहा कोई मौजूद हाता तो उसे इस गयी गुज़री हालत म भी पहचान लेता। वह गुलाबीजान थी। उसके हाथा म लक्डा की एक टाग थी और वह उसी का लकडी की तरह टेक टेककर चल रही थी।

गाथा

दिन बीते मगर गंगौली के रहनेवालों का दर्द न गया। नीदरसोल की ठोकरों ने मिट्टी की दावानी के बदन पर जो खराशें डाल दी थीं उनके निशान न मिटे। मियाँबाड़ पर नीदरसोल का नज़ला नहीं गिरा था, फिर भी माहौल फीका फीका हुआ क्योंकि वे हाथ जो मातम करते थे और वे हाथ जो ताज़िया को सँवारा करते थे और वे हाथ जो भारी चौकी के ताज़िया को उठाया करते थे और वे हाथ जो जुलूस के आगे लम्बी लम्बी लाठियाँ लेकर चला करते थे और वे हाथ जो लकड़ी के करतब दिखलाया करते थे सहमे हुए थे। अज़ादारों के बाहर हिन्दू लड़कों की भीड़ में कोई कमी नहीं हुई थी, लेकिन आँगनों के चिराग़ कुछ बुझ से गए थे और वे बच्चे जिन्हें जव्वाद मियाँ या हकीम अली कबीर गालियाँ देकर चुप कराते-कराते थक जाया करते थे, चुप ही चुप हो गए थे। नीदरसोल ने भंगटोलों, चमारटोलों, अहीरटोलों और बाज़िदपुर के बच्चों को गीले कपड़े की तरह निचोड़कर शायद रूह को एक तरफ़ बनाकर गाड़ दिया था। मुसीबत गंगौली की हिन्दू आबादी पर भी आयी। लेकिन मुसलमान कम हैं तक महसूस रहे। अब्बास के ग्रोन के मुताबिक उन्हें मुस्लिम लीग ने बचा लिया था। यहाँ मियाँबाड़ा तो दक्खिन-पट्टी का नम्बर सिर्फ़ अली हाफ़िज़ की वजह से नमाज़ पढ़नेवालों में हुआ और फिर हकीम साहब ने एक सौ ग्यारह आदमी फ़ौज में भरती करवाये थे और उनका नाम भी बार फ़ण्ड में भी कानी रूपया गया था। दक्खिन-पट्टी पर नज़ला ज़रूर गिरा होता लेकिन एक तो अन्नू मियाँ और बाकर मियाँ और वज़ीर मियाँ का असर काम आया और फिर हम्माद मियाँ ने मौक़े का फ़ायदा उठाकर फुन्नन मियाँ के ख़िलाफ़ रिपोर्ट दे दी थी। चुनाँचे मुमताज़ की हत्या के जुर्म में फुन्नन मियाँ गिरफ़्तार कर लिए गए। तमाम वालियों का नम्बर नक़्शा भी गड़बड़ हो गया। अन्नू मियाँ और वज़ीर मियाँ ने उनसे बहुत कहा, 'अब तुमने कुछ किया नहीं तो हम लोगन से कहा काहे फ़ायदा, सब ठीक है।'

मगर फुन्नन मियाँ की गैरत ने इसे गवारा न किया, बोले, ए भैया हम बहुत गुनहगार हैं। माफी माँग का होइहे तो अल्लाह मियाँ से माँगेंगे। पर हई सुमरन से न माँगेंगे हाँ।'

चुनांचे फुन्नन मियाँ तो जेल चले गये। मगर कुलसुम कहाँ जाती। उसे जब मालूम हुआ कि हम्माद मियाँ ने फुन्नन मियाँ के खिलाफ गवाही दी है तो वह आँगन में निकल आयी। हव नजफ की तरफ मुँह करके खड़ी हो गयी और बोली हे मौला मुश्किलकुशा! तुम्हीं हमरी मुश्किल आसान करो।

अपनी मुश्किल मौला मुश्किलकुशा के सुपुर्द करके वह बआवाजे बुलन्द हम्माद मियाँ को कोसने लगी कि उनके बदन में कीड़े पड़ें। कब्र में अँधेरा रहे। और उनमें हबीबा का कोई चमार निकाल ले जाए। यह आवाज सफुनिया के जरिये नईमा बी तक पहुँची और उन्होंने फुन्नन मियाँ और कुलसुम के ताल्लुकात और उनके बच्चों की वल्दियत और खास तौर से मगफिरत की जवानी के बारे में इजहार ए खयाल करना शुरू किया और यह फैसला सुना दिया कि चूँकि मगफिरत मुहम्मद हसन से फँसी हुई है इसलिए उसने रजिया को जहर देकर मार डाला है। और को मालूम के कुलसुम फँसी होए दमाद से। हाँ और का। एसी औरतन के कौन ठीक। दो ठो भतार कर चुकी तीसर की जाह रही।

बहुत मुमकिन है कि कुलसुम का नईमा बी की इन गालियों से कोई इलाज मिला हो। क्योंकि मुमताज की बरसी के तीसरे ही दिन उसने मौलवी बुलवाकर दो बोल पढ़वा दिये और मगफिरत रजिया के तीन बच्चों की माँ बन गयी।

म त पहले ना कर रह्यूँ नईमा बी ने रुखन बी से कहा बाकी अब गुस्सा न कर मगफिरत मरिन तक कुलसुमियाँ मुहम्मद हसन से का का ध्यान कराये? रुखन बी ने सवाल किया।

और म त सुन रह्यूँ कि मुहम्मद हसन बीवी को कलकत्ते ना ले जा रहे। बुदराने कहा ऐसे रहे ना फुद्दन दूल्हा फन्नू और फम्मू की दस्तभार परीहे।

—। ! —उन या न अपनी इरानी औख नचायी "तुड़गिया बान !
ना आर लड़का ना —।

'अ, हा— वा— ना ' न—मा की नाना ' बाकी वान व का होइहे ।
बाड़ हुए व— द न जवान पकड़ी जाय । बाकी व को ना मालूम वि जब से
फत्तन की मजा —ने है झिगुरिया का —का राज़े न आवत है । गैर खबर
मालूम कर अट्ठारह बीस बरस का गोइ है ।"

बात य— था वि झिगुरिया का ला मरवार न फाँसी —ी थी । लेकिन
—मका बेटा ना इत्तिफाक़ म उन दिना गाँवी म नहा था गिरफ़्तार होन स
बच गया था । उस फत्तन मियाँ और अपन बाप व ताल्लुकात का इल्म था ।
—र्सालए व— राज़ उनव घर आता कि कुलसुम यह महसूस न कर वि फुत्तन
मियाँ घर नहा हैं । वह आता और —रवाज़े पर उकड़ू बैठकर आवाज़ देता
है दुत्तन मियाँ !" यह आवाज़ सुनते —ा —वय्य वी लम्बी —िवशा— हुसैन
—ा —ुत्तन नपककर बा—र आता ।

बना मियाँ ! तुम्हार मुसलमानी का वा होत वाय ! यह सुनते ही दुत्तन
मज़दूरों म शामिल का याम मना । —मकी मुसलमानी अभी तक नहीं हुई थी ।
—य्य न कोई मन्नत मान रखी थी कि जब वह बारह साल का होगा तब
—मकी मुसलमानी होगी । —म बीच म वह कई मुसलमानियों का हश्र देख
चुका था —लिए —ौफ़ज़दा रहता था ।

अ—ा बाप — वैद । ना कोई । जा —ानर जाक आपने नानी से
पूछ आया कि कौनो काम त ना बाय

दुत्तन —मकी मुसीबत जानता —म —— पता आना । कुलसुम का
—रिंगिया का पयाम —ना और जो जवाब पाता उसम बिना काई नहरीना
—िए झिगुरिया तक पहुँचा —ना । जवाब पाने व बाद भी झिगुरिया थोड़ा —र
वहीं खड़ा-खड़ा ज़मीन पर या ना अपनी उँगलियों स —डे-मेड़ निशान बनाना
—रता या —नो पवन पकड़ता और सूना होन व बाद नमक का निकल
—ार और —ोना व —रम्यान —मकर पचायत बुकने म मशगूल हो जाता और
—ा—भी—ार —मार मियाँ व उस हाम—ज़िरी मकान का —्सन —गता जो बन
बनाकर तैयार हो चुका था ।

उस मकान की कुरसी जमीन से काफी ऊँची थी। इसलिए सामने वाले दालान में लोहे के ढले हुए जँगले लगे थे और अमूमन गया अहीर इन्हीं जँगलों पर झुककर खड़ा रहता था। छिकुरिया गया से कुछ नहीं कहता था। उसको गया से कोई शिकायत नहीं थी। लेकिन गया बहरहाल हम्माद मियाँ की नाक का बाल था और हम्माद मियाँ ने फुन्नन मियाँ के खिलाफ गवाही दी थी। इसलिए हम्माद मियाँ के किसी भी आदमी की तरफ से छिकुरिया का दिल साफ नहीं था। उसे बाप के फाँसी पा जाने का ऐसा मलाल नहीं था। उसे तो एक दिन फाँसी पानी ही थी। और उसे यह भी नहीं मालूम था कि उसका बाप किसी बड़े काम के सिलसिले में मारा गया है या शहीद हुआ है। उसे तो सिर्फ इतना मालूम था कि इमाम साहब शहीद हुए थे। चुनांचे उसके खयाल में शहीद होने के लिए इमाम साहब होना जरूरी है और उसे यह भी मालूम था कि उसका बाप चाहे और जो कुछ रहा हो इमाम साहब हरगिज नहीं था। खैर यह बात तो मरते मरते खुद छिकुरिया को भी नहीं मालूम हो सकती थी कि वह मर नहीं रहा है बल्कि शहीद हो रहा है। यह बात तो उसके मरने के बाद तय हुई कि वह मरा नहीं है बल्कि शहीद हुआ है। शहर में एक मास्टर साहब ने जब छिकुरिया को यह बताया कि उसका बाप वतन की राह में शहीद हुआ है तो छिकुरिया ने इस बात को मानने से साफ इनकार कर दिया। मास्टर साहब बहुत हैरान हुए। उन्होंने एक लम्बी चौड़ी तकरीर भी की। लेकिन वह तकरीर छिकुरिया की समझ में नहीं आयी और उसने सोचा कि मास्टर साहब से कुछ तो कहना ही चाहिए। इसलिए वह बोला : एमन मत कहें मास्टर साहिब। इमाम साहिब गुस्सा गइहें ना त उपद्दर हो जाई।

इमाम साहब? मास्टर साहब की पेशानी पर नये हुए नक्शे का निशान उठा। इमाम साहब कौन?

छिकुरिया को यह सवाल सुनकर सख्त हैरत हुई। उसने सोचा कि मास्टर साहब भला लड़कों को क्या पढ़ाते होंगे जब उन्हें यह भी नहीं मालूम कि इमाम साहब कौन थे। इसलिए वह बोला : ई त हमहू का ना मालुम। बाकी इमाम साहब बड़ा जबर होवत। दस दिन को मजलिस हियाँ आवत ला। मार

तालियाँ पड़ रहीं। परमार बैठे थे। नसरू को अलगाना उसके था। ' उसने मौलवी को मारा तड़पीलाल सुना नहीं।

'अरे, तू अमर शहीद का सन्तान हो के मुसलमानन के इमाम साहब का बखान कर रहा।'

हई सा, भया! अरे, का हम बुरबक हईं! इमाम साहब के मुसलमान ना कहे के चाहीं। नहीं त हमनी के भाग जगाय रहो मियाँ लोग औरो इमाम साहिब आर ख्वाजा करतीं।

मास्टर साहब ने उस नासमझ को समझाया कि इमाम साहब पक्के मुसलमान थे लेकिन वह जानता था कि इमाम साहब मुसलमान नहीं हो सकते। मुसलमान तो मौलवी बदरू हैं जो हिन्दुओं का छुआ नहीं खाते। मुसलमान तो हराम अली कहार हैं जो बात बात पर दरवाजे के हौज में अपने पाँव रखने के लिए नमाज पढ़ते हैं।

मास्टर साहब झल्ला गए। उन्होंने मुसलमानों को बड़ी गालियाँ दीं। बोले कि इन मस्जिदों ने तो भारतवर्ष का नक्शा-नक्शा कर दिया है। मन्दिरों को तोड़-ताड़कर मस्जिदें बनवा ली हैं इन पापियों ने। छिकुरिया ने यह बात भी नहीं मानी। क्योंकि गाँव में तो ऐसा नहीं हुआ था। मियाँ लोग दशहरे का चन्दा देते हैं और यह के बाबा का ठाकुर मियाँ ने पाँच बीघे की माफी दे रखी है।

मगर मास्टर साहब ने इतिहास भी पढ़ रखा था। बोले, 'औरंगजेब बादशाह तक ने मन्दिर का भ्रष्ट किया है का?'

'हम औरंगजेब के ना जानी ला।' छिकुरिया ने कहा। 'बाकी हम जहीर मियाँ औरी कबीर मियाँ औरी मजूर मियाँ औरी अनवारुलहसन साहेब के जानी ला। हम ना मानब आपकी बात। और जेकरा आप नाम लेत बानी ऊ मान हईं कौना बन्दा। कर्मनाशा के जुलम के हम ना कहत बाड़ा। बाकी उनके नाम जमाना हाई जुरत उसमें उनका बरबस पड़ी। ना कभी ना उधारी ना बसा, औरी मियाँ लोग जमींदार होइत।'

'और ई जौन पाकिस्तान बनवा रहे हैं सब?'

'पाकिस्तान-वाकिस्तान हम ना जानत। बाकी जो कोई पाकिस्तान बोला

बुरी चीज बाय त मत बन दे इ । हम छानी ठाक के कहत बाडी क पीछे हट जायी त आपन बाप का ना कहला, चनी ।"

लेकिन मास्टर साहब चुप कहाँ सकते थे । उन्हें तो उन मन्दिरों की ईंटें गिननी थीं जिन्हें उनके खयाल में मुसलमानों ने तबाह किया था । और उन्हें तो इसका हिसाब लगाना था कि मुगलों और पठानों ने हिन्दुस्तानी तहजीब के बदन पर कितने दाग लगाये हैं । यह ताजमहल, यह सीकरी, यह आसिफुद्दौला का इमामबाड़ा, यह खयाल गायकी, यह कलमी आमों के लहलहाते हुए बाग—वाकई मुसलमानों ने हिन्दुस्तान को जबरदस्त नुकसान पहुँचाया है । इसीलिए मास्टर साहब मुसलमानों का आमालनामा बता रहे थे ।

हम कौनो महापुरुष ना हई किसान हई । हम आकिस्तान पाकिस्तान ना जानी ला । खेत बाडी की बात समझी ला । त हम त ई देखत बाडी कि बारिखपुर क ठाकुरो साहिब जुलम करे म गंगौली के मियाँ लोगन से कम ना होवन । कही त लिख दिहल जाय ठाकुर साहिब के । ऊहो मुसलमान जनात बाड़ा ।"

मास्टर साहब ने आखिरी वार किया 'अरे सिगरी का फाँसी त दिलवा न दिहन फुन्नन मियाँ ।

"अरे मास्टर साहिब ! फुन्नन मियाँ क कछु ना कह । बाकी रहिल फाँसी की बात, त अभन त आप कहत रहिन कि बाबू क शहीद सामने के चाही । त अब ई बतायें कि हम बाबू के का समझ ? जहाँ फुन्नन मियाँ का पसीना गिरी ना हुआँ ममूच भर टानी मर ना जायी । जाय पढाय ।

वह शहर से बहुत मायूस लौटा । अब तक तो उसका जी चाहता था कि वह अपने बेटे को पढ़ायेगा । गाँव के स्कूल में नहीं शहर के स्कूल में । जहाँ लड़के कुर्सियों पर बैठते हैं । मगर मास्टर साहब से बातें करके उसका दिल खट्टा हो गया । क्या शहर के स्कूल में यही अण्ट शण्ट पढ़ाया जाता है ? उस दिन वह पीपल के नीचे विराजमान शिवजी के सामने देर तक बैठा-बैठा उनसे पूछता रहा कि मास्टर साहब का यह घटी मच्ची बातें किसने बनायी हैं लेकिन दूसरे दिन जब वह हस्बमामूल फुन्नन मियाँ के यहाँ गया तो

उसने फिर हमेशा की तरह उसी प्यारभरे लहजे में आवाज़ दी
मियाँ।'

और जब दुल्लन उसी तरह भागता हुआ आया और जब उसने उसी
तरह उस दस्त ही अपनी मुसलमानी पर हाथ रख लिया तो छिकुन्निया को
यक़ीन हो गया कि मास्टर साहब ग़लत कह रहे थे। चुनांचे उसने हाथ बढ़ा
कर दुल्लन की मुसलमानी पकड़ ली। दुल्लन ने चीख़ना चिल्लाना शुरू किया।
कर ईंतें का कर रहा। अन्दर से कुलसुम की आवाज़ आयी।
'दुल्लन मियाँ के मुसलमानी करने वाली।' उसने मछली की तरह तड़पते
हुए दुल्लन को सँभालते हुए कहा। अन्दर से कुलसुम और मग़फ़िरा के खिल
खिलाकर हँसने की आवाज़ आयी। वह दरवाज़े से झाँकने लगी। पन्न
और पम्मू तो यह तमाशा देखने के लिए बावर्चीख़ाने बाहर निकल आया। और
दुल्लन ने भां भां रोना शुरू कर दिया।

छिकुन्निया हँस पड़ा। उसने दुल्लन की मुसलमानी छोड़ दी। दुल्लन तेज़ी
से बड़े फाटक की तरफ़ भागा और फिर वहीं ठहरकर वह छिकुन्निया को
माँ बहन की गाली देने लगा। छिकुन्निया हँसते हँसते लोटपोट हो गया। और
जब मग़फ़िरा ने अन्दर ही से दुल्लन को डाँटना शुरू किया तो छिकुन्निया ने
उसे टोक दिया। कुलसुम ने जो मग़फ़िरा और छिकुन्निया की बात सुनी तो
वह ग़ाफ़ी रखना था के पर लगाती। उसने दोनों मेंढ़वान को जुम्मन भी
न मालूम था। इधर उधर देखकर छप्पर वाले फाटक में घुस गया और
गोरी बी के आँगन से होती हुई ज़नाने इमामबाड़े को पार करता हुआ
अप्पू मियाँ के मामा मकान से गुज़रती हुई वह रसोई के पर पहुँच गयी।
रखना को इस वक़्त कनमख़ान सात अख़्तरी बुआ की इस्तिंजा में
मन लिख रही थी। इसलिए में वह अकड़ा था था मग़फ़िरा और छिकु
न्निया हा के बारे में लिख रही थी। इसलिए जब उन्होंने कुलसुम से यह सुना
कि कयामत बिल्कुल सिर पर आ गयी है तो क़लम रखकर वह दौरन
मुतवज्जह हो गयी। कुलसुम ने उन्हें मग़फ़िरा और छिकुन्निया का सारा राम
कथा सुना डाला। उसने यह नहीं कहा कि मग़फ़िरा के याद दुल्लन की
बग़ली पर हँस पड़ी थी। ... हुआ था दुनियादार पर मु आन्द की तर

पूरी कहानी नहीं कह ली कि किस तरह उसने एक रात छिकुरिया को नाठी टकराकर फुन्नन मियाँ की दीवार फलाँगते देखा था।

ए दुलहिन रब्बन बी ने सकीना को आवाज दी तनी कुबरा का पान बनाओ। म बाजी का खत लिख रहा।

सकीना ने पानदान खोला। रब्बन बी ने फिर अब्बासी को खत लिखना शुरू किया। इस खत में उन्होंने मगफिए और छिकुरिया के ताल्लुक की कहानी भी लिख दी। उधर कुबरा और सकीना दोनों ही जग और अपनी-अपनी मल्लुआ की जवानी का पीटना डाले हुए थी। फिर दोनों में तकरार होने लगी। यह तो तय था कि उम्म हबीबा और सलमा में छः महीने की छुटाई बड़ाई है। मगर सकीना का कहना था कि उसकी उम्म हबीबा का रिश्ता सलमा छोटी है और कुबरा का खयाल था कि उसकी उम्म हबीबा का रिश्ता नहीं मिलता तो माएँ अपनी बच्चियों का उमर बढ़ने नहीं देती। एक एक दिन का फर्क अहम हो जाता है कि अगर कोई टोके तो यह कह सकें क्यों ओसी अवहिन उमर का है। अवहिन तो फुन्नन मियाँ की लड़कियों का ब्याह ना भवा है। हमरी वाली तो आम छः महीना छोटी है।

रात इस कदर बढ़ गयी कि कुबरा तुनककर चली गयी।

हम्माद मियाँ जब तक उस छोटी सी निजवन में रहते थे उस वक्त तक उनकी बीवा किसी सय्यदानी से यह तुनक नहीं सकता था। लेकिन दोमंजिला पुख्ता मकान में रहने से रहन्दार सय्यद हो जाते हैं। कुबरा भी सय्यदानी बन चुकी थी। हद तो यह है कि हम्माद की माँ नर्गिसा भी सय्यदानी बन चुकी थी जबकि उनके मायके वाले अब तक जुलाहे के जुलाहे थे और गंगोली में करघा चला रहे थे।

हम्माद मियाँ ने अक्बरा दा और अपने बड़े भाई (जिनकी माँ सय्यदानी थी) और मंगाद मियाँ (जो गंगोली के बारह आना के जमींदार थे और जिनके बड़े मुख्तार आम थे) की सारी मीर पट्टीदारी वाला खानदान से मिल मिलाकर अपनी काश्त दर्ज करवा ली थी। यह सब में नाना का पासबान के पास वाला मन मिल गया था जिस पर बहुत दिनों से लालिम राजा साहब थे। हम्माद मियाँ ने उस में फायदा उठाकर कुछ और कमरों की भी चर्चा की थी। कुछ

मिलाकर कर चार-पाँच इंच का मोटी घर रहे थे। और मेरी भी निर आनू
की। उनका शुमार गाँव के शोहरतमन्दों में होने लगा था। कम गाड़िया की
दौलत से उनको शोहरत का कोई मुकाबिला न था। लेकिन गोरा जमादार
रही थे। वह अब शहर जाते तो मिल्क की नाचा शरवानी पहनकर। ये शेर
वानियाँ उन्हें बड़े भाई के मरने के बाद बकस-की बकस मिल गया था। सिर पर
खूबसूरत पन्ने का टोपी होता घुनी हुई। इस टोपी को चुनने में वह जितना
मेहनत करते थे उतना मेहनत तो लड़कियाँ दुपट्टे चुनने में भी न करती
होंगी। अब इस कदर शानदार सफेद हम्मार हुसैन जैसी हुसैन जैसी एक सफेद अव्वल
दर्जे का पीला मुसम्मात कुबरा बेगम बिना शेर शजाअत अली असगरी
को पूरा-पूरा हक पहुँचता था कि सकीना जैसी लड़की और पुराना गूमट
सफेदानी से मुनव्वर चार चाँद से।

लेकिन यह खबर जो वाजिद मियाँ को मिली कि कुबरा के मजार का
बीबी से मुनव्वर गया है तो वाजिद मियाँ चिराग पा हो गए।

अब हम्मादों की बाबा को ईमद भया कि सदस्यानियन के मुहल्ले नगी।
गले गलामज रंग मजार और बुर्ज का जिनकी बदौलत हम्माद पसवान
हो गए। बाकी रहा ईमनवन ना है कि वाजिद को जिन्दगी में नक्श
जाने रहन की कह से टर्गिज चला जाएँ।

पर गमगा हासार वह हम्माद मियाँ के रुखसार पर पहुँच
गए। गया मक्तूर के मुताबिक जगने से लिखा गया था। वाजिद मियाँ का
स्याह ही रुखन गुलाम किया क्योंकि वाजिद मियाँ का नन्दुर बरहराम
जमींदार खानदान से था। मगर वाजिद मियाँ ने जवाब नहीं दिया। वह बार
पड़े हैं हम्माद। ऊ मुत्तहिन हरामजादा अब सदस्यानियन का पानी रूर।
हम्माद मियाँ अन्दर हो थे। आवाज सुन सब गया। मगर वह बाहर नहीं
निकले। कुनमुन और मर्सिय अनवरा लगाकर अपने दरवाजे से झाँकन
लगीं। वे इस तमाशे को देखना चाहती थीं। गया अनवरा कामकाज में था कि
बना कर और बना न कर। वाजिद मियाँ बरहराम मियाँ थे। वह यकवार सामने
रह गया। वाजिद मियाँ और सर हो गए। बार-बार में कभी हम ना रहे। बाबा
अब तो कुबरा बीबी इन्तमाजा किरिस तो हम से कुछ कहे ना होहि।

का करबे त ?" नईमा बी स बरदाश्त न हुआ ।

ए जुलाहिन ! तारा का करग । बाकी हम्माद की टँगिया चीर देंग !'

तारे बाप की सरकार है ना माटीमिले ! दो वखत की रोटी त जुडनी ना । बाकी जबान रावनभर की है ।" वह यकलख्त गया से मुखातिब हो गयी माटीमिले त खडा-खडा सुन रहा ।"

"अरे त हम का करें !' गया बेचारगी से बोला, "बूढ पुरनिया के मारें ?' वह वाजिद मिया की तरफ मुडा, 'हे मीर साहिब, ढेर हा गयी । अब जाय दें ।"

तूहा के सगीर मिया की रोटी लग गयी ।' वाजिद मियाँ तनकर खडे हो गय । उनका सुर्खो सफेद चेहरा गुस्स से बिलकुल सुख हा गया । नसें उभर आयी हराम की कोठी पर मत फाँको ।"

यह खबर उत्तर पट्टी पहुँची कि गया ने वाजिद मियाँ को ललकार लिया है । वहाँ खलबली पट गयी । नौजवानो का ख़याल था कि उन्हे इस मामल म पडने की क्या जरूरत है । लेकिन हकीम साहब बोल 'न ई बिरादरी की बात है ।

वह जो घर से निकल तो सारी उत्तर पट्टी निकल आयी । दरवाज़े पर जो अहीर और चमार थ व भी साथ हो लिये । हम्माद मियाँ क घर के सामने आकर हकीम साहब रुक गय ।

का बात है मियाँ वाजिद ? हकीम साहब ने पूछा ।

का बतायें मियाँ कबीर !" वाजिद मियाँ बाल अब ई ज़माना आ गया है कि जुलाहिने सयदानियन से अकड रही हैं । हम्माद भाई मरहूम का खयाल करके हम लोग चुप रह जाथी त हम्माद ई समझत हैं कि हम लाग गुडा-न मास्ता उनकि का दिया खा रह । और अब ई हरामजादा गयवा अकड रहा ।

अब ई का कह मीर साहिब ! गया बोला हम आपस अकडब ? बाकी मियाँ न वह की दर बाय पिना ई भीड ना निगायी दई । हम त नौकर हई । आपहू की सिन्मा के मज़दूर बाना । आप त हम स बात कर थ ना चाही । बाकी हमार सामन मियाँ क गाली मत देवा । नहीं त बन कर गया ।

"नहीं तो न का करब।" हकीम साहब को जलाल आ गया।

"अरे करब का मीर साहिब!" गया बेचारा सो वाला। ज़ाहिर है कि वह हकीम साहब का क्या कर सकता था। नईमा बी ने यह देखकर हकीम साहब का सामना शुरू कर दिया। और तब हम्माद मियाँ ने यह सोचा कि अब घर में रहना मुनासिब नहीं है। वह बाहर निकले। साथ-साथ उनका सातवें नम्बर का बेटा मिग्दाद भी निकला। यह मिग्दाद अवाम से बिलकुल अलग था। हम्माद मियाँ ने मिग्दाद को तालीम नहीं दिलवायी थी। उनका कहना था कि मिग्दाद ने पढ़ लिख लिया तो गारा कौन करेगा। मिग्दाद ने भी इसका बुरा नहीं माना। वह बचपन से ही और मन-मानिहान के देख रेख में लगा रहता था। हम्माद मियाँ ने बचपन में सोलह के बाद शादी कर ली थी और हिन्दुओं में रही। वह काम भी मिग्दाद ही का करना पड़ता था और उस अपने बचाव होने का अहसास भी नहीं हुआ। एक शाम को वह भाग आई ही रहा था कि महरुनिया आ गयी। महरुनिया उसे बहुत परेशान करती थी। वह उसे देखते ही कोई-न-कोई नुकीला जुमला उछालती। वह जुमला मिग्दाद को चुभ जाता और रात-भर परेशान करता रहता। पर उस दिन वह बात दूसरी थी कि मिग्दाद महरुनिया से डरने लगा। नतीजे में महरुनिया शेर हो गयी। उस शाम भी उसने जुमले का नश्तर फेंका। मिग्दाद तिलमिला गया। गुस्से में आकर उसने उसका हाथ पकड़ लिया। मगर उसका हाथ बहुत नरम और गरम था और नरम। बड़ी-बड़ी आँखों की बड़ी-बड़ी पलकें मिग्दाद के साथ से टकरा रही थीं और उसके गोरे-गोरे होंठ मिग्दाद के होंठों से कुछ ही फ़ासले पर थे कि वह उनको आँख में रख रहा था। महरुनिया खिलखिला कर हँसने लगी। हँसी की आवाज़ में सरसराहट-सी थी और खिलखिलाहट थी। मिग्दाद सनसनाता रहा और उसे ऐसा मालूम हुआ कि सारी शरीफ़ जैसे महरुनिया की बड़ी-बड़ी काली आँखों में समा गयी है। मिग्दाद एकदम बदल हो गया। पाँव हिला भी नहीं सका। महरुनिया को पा सकने के बाद मिग्दाद का दिल अवाम की

तरफ से बिलकुल साफ हो गया और वह दुआ करने लगा कि किसी तरह जल्दी से पाकिस्तान बन जाय।

"अब्बा उहाँ मजे में हुआँ चले जैहैं। हम अपना हियाँ रहेंगे, खेती करेंगे और सैफुनिया खाना ओना पकैहै।" चुनांचे अब्बास जो गरमी की छुट्टी में आया, तो उसने सीधा सवाल किया, "हे भैया, ई आपका पाकिस्तान आकिस्तान कब बनिहै भाई?"

"क्यों!" अब्बास मुसकराया "क्या मुस्लिम लीग को वोट दोगे?"

"हाँ!"

और जो अब्बा ने डाँटा!

"वोट हमरा है की अब्बा का!"

"मगर अभी तो तुम बच्चे हो। तुम्हारा वोट ही नहीं होगा।"

मिगदाद के होठों पर बड़ी अर्थभरी मुसकराहट आ गयी। अब वह अब्बास को कैसे बताता कि वह बच्चा नहीं है, जवान है। चुनांचे वह बात टाल गया और बैलों को चारा लगाने चला गया। उन बैलों से उसे बड़ी मोहब्बत थी। उसने एक के कान में कहा, "सुन रह्यो लोग। भैया के खयाल में अबहीं हम बच्चा हैं। अ हो बुरबक हैं।" वह हँस दिया। उसी वक्त सैफुनिया आ गयी। वह हर शाम को अपने लिये दूध लेने आ जाती थी। उसे सेरभर दूध देने के बाद मिगदाद लोटे में सेरभर पानी मिला देता था।

"पाकिस्तान बन जाय दे, बड़ा मजा आयी!" मिगदाद ने कहा।

"तो अभने तोहें मजा न आ रहा!" सैफुनिया ने शिकायत की। वह इस लड़के से वाकई फँस गयी थी। मिगदाद से कोई चार-पाँच साल बड़ी होने के बावजूद जब वह शाम को दूध लेने आती तो उमर के इस फर्क को और गाँव की जवान नाइनों के तजुर्बों को भूल जाती। मिगदाद ही उसका पहला मर्द था। अब तक तो मर्द उसे हासिल करने की फिक्र में रहते थे। पाई-कौड़ी शामिल कर भी लेता था। लेकिन मिगदाद को खुद उसने हासिल किया था। वह मिगदाद को अपनी चीज समझने लगी थी और शाम के धुंधलके की गोद में यह भूल जाती थी कि वह नाइन है और मिगदाद जमींदार का लड़का है। वह शादी की बात तो नहीं सोचती थी,

लेकिन वह यह कभी चाहती थी कि वक्त यहीं रुक जाए। यह शाम तमाम न हो। उसके बाप ने उसकी शादी लगायी तो ठीक बरात के दिन वह गायब हो गया। मिरदाद ने उसे पुआल की कोठरी में छुपा लिया। बरात लौट गयी। और जब वह घर पहुँची तो महरुन्निसा और रहीम ने उसे पीट कर अधमरा कर मूसल के लिए मार दिया। लेकिन उसने यह नहीं बताया कि वह किसके साथ थी। उसका अंग अंग दुख रहा था। मगर वह खुश थी कि उसने मिरदाद का नाम नहीं लिया। दस-बारह दिन तक तो वह निकलने के काबिल ही नहीं हुई। महरुन्निसा फिर माँ थी। वह उसकी छाती में लिपटकर बैठ गया। और एक दिन जब उसने पेट में रख गया तो वह बालों मिली बागन में कोना "कमीन" ना रहा।

वह एक मामूली सा जुमला था। लेकिन इस एक जुमले से महरुन्निसा और उसकी माँ अमना और उसकी माँ शमशुन्निसा की महरुन्निसा और ज़िन्दगी का पूरा बहाना थी। महरुन्निसा अपनी माँ के लहजे पर नज़र उठी। महरुन्निसा के लहजे में तो मेहरुन्निसा के लहजे से भी ज्यादा ... था। लेकिन महरुन्निसा कम हुई थी तो सोच गया।

तो बताओ!"

न ई माँ रहा तो कि मार को जाने ग। बाबा मार के कुल मारेम बाद। ठीक है मेरे बेटा बाबा, इस मुन में शेरा का पीला महिर आसमान जाय। मगर जब मनवा दुआई ना न ना मजिल आई। गम्भीर हूप पर ज़िन्दगानी ना गुज़री। दो बार कहने के बाद वह याद पड़ा कि इस तरह तसरा ध्यान अब तक यहां नहीं गया था अरे याद न आए! गज़ब हो गया। वह घबराकर सन्न हो गया।

"क्या भई!" महरुन्निसा ने घबराकर पूछा।

"कुछ भी तो नहीं!"

महरुन्निसा कुछ और पूछना चाहती थी मगर महरुन्निसा तरह से निकल गई। वह तो इधर से भी नहीं पूछना चाहती थी। मगर हम्माद मियाँ के चेहरे पर उभर रहे आता पल। वह बस आग बबूलो! चेहरे पर मजमा लगा था और ज़िन्दगी भी तो रहीम अली बड़े के धूप रहा था।

और क्या मास्टरजी? ग़ालिबन वह हजरत यूसुफ हैं ना। और मैं कहता हूँ कि आखिर तो वह लड़का घर की है। अगर हमीं ने उसे कुबूल न किया तो कौन करेगा।'

'सब ठीक है, काकी

'मैं तुमसे सब नहीं माँग रहा हूँ। तुम अपने भाई साहब को मन लिखवा लो।

कुबरा बहुत करना चाहती थी। मगर हम्माद मियाँ ने करवट बदल ली। कुबरा फिर खामोश रह गयी।

मगाई के लिए सख्त विनाश्न शुरू हुए तो एक दिन उसने हवीवा के अलावा तमाम कहना ने सिराहद का घर लिया। तब की लड़ाई शुरू हो गयी। नईमा का ने खाब बताव करवाया। लेकिन सिराहद जिस तरह बहनों का तिरस्कार बाहर चला गया उसने नईमा को का परमान कर लिया कि वही शुरू ने कर काम और बात ना करें। लेकिन फिर यह सावकार उन्होंने तसल्ली हासिल की कि अभी अपना तो लड़का जवान हुआ है, मासालना से रमना के बाद कहर। फिर और बात का सुनना पड़ा हान का क्या सवाल पैदा होता है। उनका छोटा-छोटा बूढ़ा तजुरबकार आंखें सिराहद का सल्ला हर पर सबक ने दाग गयी।

'का बात है बन्ने! ने ब्याह की बनिस्बत पर बिगड़ कर गया रहा?'

इसान सिराहद का पगा हारन हुआ कहा।

'हम ब्याह आबाद ना करेंगे।

'काहे ना करिया

'अब हम आपको का बतावें भाई। सिराहद फिर शरमा गया। बस कह दिया कि ना करेंगे।

'ई ने कौनो बात ना भई।

'बात भई हो चाहे ना भई हो। हम कह दिया कि ना करेंगे। ने बस ना करेंगे।

नईम का उसके गरदुर वाला से सेहत मर्गी। बूढ़ा उँगलियाँ उस दरवाजन मली। और सिराहद मर्सिया के बाद से नाचन लगा। लगर थोंि

तोरे पास एको का सुबूत है कि सफ़ुनिया हमरीए है ?" उन्होंने महरनिया से सवाल किया।

सबूत तो कौनो ना है।' महरनिया ने कहा।

सफ़ुनिया मज़ूर वज़ीर फुस्सू, हादी और सुलेमान काहू की हो सकती है।

बाकी ऊ काई की है ना। महरनिया ने इस यकीन से कहा कि हम्माद मियाँ लरज़ गये।

'अच्छा, ए बखत त जा। उन्होंने कहा कुछ सोचेंगे।'

महरनिया चली गयी। हम्माद मियाँ उसके जाने के बाद ही अन्दर चले गये।

'ई महरनिया का खुसुर पुसुर करती रही ता से ? कुबरा ने पूछा।

तुमने मेरा जीना हराम कर दिया है। तुम्हें क्या ज़रूरत थी सकीना से टर्रान की बदतमीज़ ! हम्माद मियाँ ने कुबरा को डाँटना शुरू कर दिया। वह हक्का बक्का रह गयी। हम्माद मियाँ ने अब तक उसे नहीं डाँटा था। वह रोने लगी। आँसू देखकर हम्माद मियाँ और आग बगूला हो गये।

'अगर मैं शरीफ़ बाप का बेटा न होता तो इस वक्त मैं तुम्हारी ऐसी कुन्दी करता कि तुम जिन्दगी भर याद रखती। हम्माद मियाँ फरफर उर्दू बोले चले जा रहे थे।

'त सठिया गये हो का ! नईमा बी ने हम्माद को डाँटा अब तू बाबा का मरीहो !

हम्माद मियाँ का जी तो चाहा कि बुढ़िया जुलाहिन का गला घोंट दें जिसने उनकी माँ बनकर उन्हें गगोली में और उठाकर जीने का हक नहीं दिया। लेकिन माँ पर हाथ उठाने का दस्तूर नहीं था। और हम्माद मियाँ हमेशा से बचपन का, रस्म और रिवाज का पूरा एहतराम करके छुपाने की कोशिश किया करते थे। बस उन्होंने अपने आपको समझा लिया था कि खानदान बाप से चलता है। वरना हज़रत अली, इमाम हसन और इमाम हुसैन के अलावा तमाम अरबी मासूमीन कनीज़ों से पैदा हुए थे। मगर उन्हें यह भी मालूम था कि कनीज़ों और जुलाहिनों में फ़र्क होता है। इसलिए

वह हमेशा इसका ख़याल रखा करते थे कि उनसे कोई ऐसी बात न हो जाय कि लोग कह दें कि ख़ून बोल रहा है। इसलिए वह ख़ून का घूँट पीकर चुप रह गये। उसी वक़्त फ़िरोज़ा दही की कनहरी लेकर बावर्चीख़ाने से निकली। पायचे में पाँव फँसा। वह गिर पड़ी। कनहरी टूट गयी। दही बिखर गया। हम्माद मियाँ को मौक़ा मिल गया, उन्होंने फ़िरोज़ा को पीटना शुरू कर दिया। नईमा बी जो उसे छुड़ाने लपकीं तो हम्माद मियाँ ने उन्हें ग़ुस्से में धकेल दिया। वह गिर पड़ीं, पलंग की चूल से टकरायीं। माथा लहूलुहान हो गया। रम्मू ख़ाला, सुग़रा, नजमा और अज़रा ने लपककर दादी को सँभाला। हम्माद मियाँ टहल-टहलकर रोती हुई फ़िरोज़ा को छोड़कर बाहर चले गये।

नईमा बी ज़ख़्म धुलवाती जा रही थीं पट्टी बँधवाती जा रही थीं और अपने आपको कोसती जा रही थीं, हे मौला! अब और क्या देखना है। उठा क्यों मौला नहीं लेता हमें!

निसार जब शाम को बाग़ लगाकर आया तो उसने नईमा बी को इसी आलम में पाया। वह अपनी दादी को बहुत चाहता था। शायद मफ़ुलिया से भी ज़्यादा। उसकी आँखों में ख़ून उतर आया और कई दिन तक उसका ग़ुस्सा ठंडा नहीं हुआ। हम्माद मियाँ को देखते ही उसकी त्योरियाँ चढ़ जातीं। एक दिन उन्होंने उसे टोक दिया।

आख़िर, बात क्या है। अब आपको हम को कहें। नहीं तो काम से काम रखा कीजिए रहा था ... उसने अपना जुमला पूरा नहीं किया।

बदतमीज़ नालायक़, मुझसे ज़बान चलाता है!

निसार देर तक रहा चुप रहा। ये न अपनी अम्मा से हाथ-पाँव चलायें और हम बेग़ैरतों में रहें!

दूर हो जा मेरी नज़रों से!"

दूर न हम तुम्हीं हो जायें। काश बचपन का प्यारा कौन ... भी कौन ... अगर ... । दुनिया से ... दिन में ही दूर हो जाता!

बराबर के बेटे से ज़बान चलाने का नतीजा देख लीन, हो।' नईमा बी ने पूछा।

मिगदाद बड़बड़ाता हुआ बाहर चला गया। जब बाहर भी जी नहीं लगा, तो वह बड़े फाटक में चला गया। मगर वहाँ क्या था। वहाँ तो बस दस दिन की रौनक हुआ करती थी। और मोहर्रम में अभी देर थी। आँगन वही था। तीन दरा वहाँ था। कमरे वही थे। शहनशीन वहीं थी। मगर ज़िन्दगी के आसार नहीं थे। ताज़िया के चोबी फ्रेम गुसलखाने की दीवार से लगे हुए धूप खा रहे थे और फरहरे का बाँस निगस्तों में फँसाकर रखा हुआ था।

वह वहाँ से भी निकल आया। उसे यह नहीं मालूम था कि पन्द्रह सोलह दिन से जो सैफुनिया नहीं आयी है, तो वह उसी की जुदाई में तड़प रहा है। उसे तो बस यह महसूस होता था कि जैसे बैल अजनबी हो गये हैं और भैंस रंभाने में ज़्यादा शरारत करने लगी है।

मगर इस शाम जो वह भैंस दोहने और बैलों को चारा लगाने गया तो सैफुनिया आयी और उसने ऐसा महसूस किया कि ज़िन्दगी फिर मानूस मानूस सी लगने लगी है। मगर सैफुनिया के हाथ में दूध का बर्तन नहीं था। फिर भी वह हमेशा की तरह उसके पास आकर बैठ गयी।

दूध ना ले का?' मिगदाद ने पूछा।

'ना।"

काहे।

माई मना किहिन है, ऊ कहत रही हम्मे तू से ना मिल को।

काहे ना मिले को। और ओरो ई बताइस कौन ?'

का जाने कौन बताइस। बाकी ओ का मालूम हो गवा है।

तब ?'

अरे तब का। जित्ता हम्मे मारिन है लोग उस डर का करीहै।

तम्मे मारिन रहा ?

हाँ।

हम ऊ सारे रहमनवा की हड्डी पसली तोड़ देंगे।

फिर उसे लेकर पुआल के ढेर की तरफ चला गया। दोनों हमेशा की तरह मग्न हो गये। उन दोनों को यह तो मालूम नहीं था कि इश्क का दस्तूर क्या है। उन्हें यह भी नहीं मालूम था कि मोहब्बत करनेवाले बात नहीं किया करते हैं। उन्हें तो सिर्फ यह मालूम था कि उनका रिश्ता बदन से ज्यादा मजबूत है।

न गाजीपुर चले, न हम तोहका सनीमा दिखलाये।"

'सनीमा? सनीमा का?'

'ई त हमहूँ को ना मालूम। बाकी सुना है कि तसवीरिया सब टापें टाप नाचत हैं।'

'जाने!' सकनिया ने मानने से इनकार कर दिया, 'त्यो तसवीर कैसे नाचे?'

अल्ला कसम रे। हम नशा बनाइके रहा न हम तो मान रहे। बाकी मालूम पड़त रहे कि गाजीपुर में टूरिंग सनीमा खुल गया है।"

त हम न चलकर दिखला देबा।

त हम और कवन का रहे। तू त बिलकुल पगली है का!"

वे दोनों अपने सपनों की नरम धरती में धँसते हुए चले गये। हम्माद मियाँ आये तो उन्होंने भी उनकी बातचीत का एक हिस्सा सुन लिया।

'कुछ हो गया सब?'

'कुछ भी नहीं।'

'तू है कस मालूम?'

'अरे, मम्मू भाई का बतावत रहे कि एक ठो सिनेमा चल गया। हम लोग बकन से एक गो निकाल दिया है। कल तो आवेंगे।'

'काहे आज?'

'अरे जब आज तो कुछ भी मसा तो आज कल भी नहीं।' मियाँदाद की इस सवाल ने सकनिया को लाजवाब कर दिया।

'काहे त हम सनीमा देखबा ना।'

हम्माद मियाँ ने कुछ और सुनना मुनासिब न जाना। वह लौट आये। मैना कस के मन में बड़ा दुख था। और अब चुप रह जाने के सिवाय कोई चारा

नहीं था। लेकिन उन्होंने यह फ़ैसला ज़रूर कर लिया कि मिगदाद की शादी कर देनी चाहिए और सफ़ुनिया को गंगौली से निकाल देना चाहिए।

सफ़ुनिया को निकालने की एक ही सूरत थी कि उसका ब्याह कर दिया जाय। मगर पहले मिगदाद के ब्याह की फ़िक्र करनी चाहिए। इसलिए उस रात उन्होंने कुबरा से मिगदाद की शादी की बात छेड़ी। कुबरा को बड़ा ताज्जुब हुआ। जानी मिगदाद के ब्याह की कौन जल्दी है। ताड़ ऐसी उम्मे हबीबा बैठी है। उनके ब्याह की तुमका फिकिर नाहीं है। सुगरहो माशाल्ला से मालहव से गयी। अजगर पन्द्रहवें में है। नज्जवा ब्‌ बरस में ब्याह के काबिल हो जहें। तोन तीन ठो पहाड़ धरे हैं घर में। ऊ ना टाले जाय, बाकी मिगदाद का ब्याह ज़रूर हो जाय!

अरे तो क्या लड़का पैदा करूँ! हम्माद मियाँ ने कहा, या किसी धुनें जुलाहे से ब्याह दूँ अपनी लड़कियों को! कभी-कभी तुम बहुत बेवकूफ़ी की बातें करने लगती हो।

जानी तीन जवान जवान लड़कियन के घर में लड़के का ब्याह हुईहै ते लोग का कईहैं! और मिगदाद के ब्याह का तो कौनो जल्दी ना है।

क्या ?'

अजाम ना बठे हैं ?

वह तो इश्क कर रहा है। अब तो इश्क विश्क करना शरीफ़ों का काम नहीं है। फिर वह लड़का सुन्नी है। क्या सुन्नी बहू ब्याह लाऊँ ? मोहर्रम में चूड़ियाँ बजाती फिरेगी तो कैसा लगेगा ? लेकिन इस वक़्त में मिगदाद की शादी की बात कर रहा हूँ।

कौन जल्दी है आखिर ?

अब मैं तुम्हें क्या बताऊँ। मेरे ख़याल में तुम्हारे भाई से अब्बन से पहल कर लिया जाय। अगर वह अपने बेटे से उम्मे हबीबा का रिश्ता कर लें तो उनकी बेटी से मिगदाद का ब्याह किया जाय। लड़का माशाल्ला से अच्छा है। बी० ए० तक पढ़ा हुआ है। लखनऊ में अच्छी नौकरी पर भी है।

बाकी लड़कियों के कौनो काम का ना न है। कुबरा बोलीं अब तो बानी है। फिर उन्हें माटी है। मैं ओ की बहू ना बनहीं।

'और क्या मास्टरसाहब सलामत ना रहे इसलिए मुमकिन है ना। और मैं कहता हूँ कि आखिर तो वह लड़की घर की है। अगर हमीं ने उसे कबूल न किया तो कौन करेगा।'

यह सब ठीक है यारो।

"मैं तुमसे राय नहीं माँग रहा हूँ। बस अपने भाई साहब को खत लिखवा दो।"

कुबरा तरह करना चाहती थी। मगर इरशाद मियाँ ने करार कर दिया था। कुबरा दिल मसोसकर रह गया।

शादी के लिए सारी तैयारियाँ शुरू हुईं तो एक दिन उसमें हवेली के अलावा तमाम बहनों ने मिरज़ा को घेर लिया। तब भी लड़ाई शुरू हो गयी। नईमा बी ने बीच बचाव करवाया। लेकिन मिरज़ा जिस तरह बहनों को छिटककर बाहर चला गया उससे नईमा बी को परेशान कर दिया कि कहीं गुस्से में कर बैठें और बात ना बने। लेकिन फिर घर लौटकर उन्होंने तसल्ली हासिल की कि अभी अर्दली तो लम्बा जवान हुआ है, माशाअल्लाह से जुम्मन के साथ रहकर। बिना और बात की मंजूरी पेश होने का क्या सवाल पैदा होता है। उसका छोटा-छोटा कुछ नजरअंदाज और मिरज़ा की सल्तनत हर बात में दखल न रख सकी।

का यार है बेटा! ब्याह की तैयारियों पर बिगड़ जाए ऐसा हमारा ... उन मिरज़ा को पता लगने हुए बस।

हम ब्याह आगाज़ ना करेंगे।

शादी ना करिए।

अब हम आपको को बताये जाए। मिरज़ा फिर झल्ला गया ... बस कह दिया कि ना करेंगे।

मैंने कौन सी बात ना भई।

बस यही तो बात तो भई हो। हम कह दिया कि ना करेंगे, तो बस न करेंगे।

नईमा बी उसके बाद झल्लाने से नरम पड़ी। कुबरा उदास होकर रह गयी। और मिरज़ा शादी के बारे में सोचने लगा। इधर ...

हम्माद मियाँ ने बकरों को चारा डालने का काम गया को सौंप दिया था और भस दाहने पर नबी जुलाहा मुकर्रर कर दिया गया था इसलिए सैफुनिया से मिलने की आसानियाँ भी खत्म हो गयी थीं। बस इमामबाड़े की वह खिलवत रह गयी थी जो नज्जन मिरासी के खानदान के चले जाने के बाद से वीरान पड़ी थी। वह खिलवत तो खुद अब्बास को याद नहीं रह गयी थी तो उसे कोई और क्या याद रखता। मिगदाद ने चुपके चुपके उसका झाड़-झंखाड़ साफ कर डाला था और सबकी नज़र बचाकर उसमें एक बँसखट भी पहुँचा आया था। कड़ी दोपहर में मिलने का वायदा था। इसीलिए वह नईमा बी से छुटकारा हासिल करना चाहता था। आखिर जब उनके प्यार के चोचले हद से बढ़ गये तो उसने उन्हें घुड़क दिया। नईमा बी सन्नाटे में आ गयी। उसके जाने के बाद ही उन्होंने मन्नत मान डाली।

हे मौला! जो मिगदाद की शादी साथ-खैरियत से हो गयी, और साल भर में लड़का भवा तो मैं आठ को मिमबर भरीहों और हाज़री करहों। हे छोटे हज़रत! हमरी मदद करिए। बाकी लड़का साले भर में हो जाय की हमरी ब्कुलाहट दूर जाय। इ एहू मारे वह रहिया कि आखिर मिगदाद ब्याह के नाम पर बिदक काहे रहा।

मिगदाद इस मन्नत से बेखबर अली हुसन की कोठरी में बँसखट पर लेट कर सफुनिया की राह देखने लगा। गरमी बहुत ज्यादा थी। वह बार बार दामन से पसीना पोंछता था। फिर उसने लोट-कालरवाली अपनी कमीज उतारकर उसका तकिया बना लिया। मगर फौरन ही उसने अपना सिर उठा लिया। बगली जेब में बीड़ी का बण्डल था। बण्डल निकालकर उसने देखा। बीड़ियाँ नहीं टूटी थीं। उसने फिर कमीज का तकिया बना लिया और एक बीड़ी सुलगाकर उसके गाढ़े धुएँ की लकीरों में सैफुनिया के बदन के खुतूत देखने लगा।

सफुनिया आयी तो बिना कुछ कहे हुए वह एक तरफ सरक गया। सफुनिया लेट गया।

का सोच रहा? सफुनिया ने पूछा।

अब्बा हमरा ब्याह कर रहे। उसने कहा।

त्या।' वह हँसी 'त ए म घबराए की कौन बात है। सोच रहे त टाक कर रहे। का ज़िन्दगी भर ब्याह ना करिहो ?

"ब्याह कान ना करेंगे। वह वाला वाका ता म ब्याह करेंगे।

यह जुमला शायद किसी नाइन न किसी ज़मींदार क लड़क क मुंह स पहला बार सुना था। क्योंकि सफुनिया यह बात सुनकर हैरान भी न हो सकी। वह खिलखिलाकर हंस दी और बोली पगला गए हो का। हमरा तुम्हरा ब्याह कस हुइहै ?

कौन बुराइ है एह म ?

'नाही नाना। मियाँ जहाँ तोरी सगाई लगा रहे कर ल्या।

न' वह ठुनका करेंगे तो तो ही म नहीं त करबे ना करेंगे।

सफुनिया न उसक मुंह पर हाथ रख दिया। उसक होठा म गुदगुदी की एक लहर दौड़ी फिर वह लहर उसक पूर बदन म फैल गया। करवट लेकर उसन सफुनिया को भींच लिया। उसकी गिरफ्त इतनी सख्त थी कि सफुनिया का दम घुटन लगा। लेकिन दम घुटन का मसर्रत इतनी ज़्यादा थी कि सफुनिया ने मना भी न किया। बस उसन अपनी बड़ी बड़ी आँखें बन्द कर लीं।

हमर पास पचास रुपया है। सिराज न कहा 'चल, कलकत्ता भाग चलें।

ई तूं का कह रहा। सफुनिया न आँखें खोल बिना कहा ई गांव म हम लोगन का रिश्ता अटूट है। तूं ब्याह कर ल्यो। हम त निहार हैंस्ये हैं।

इकार की यह मुन्ना-सी आवाज़ सुनकर वह इतनी खुश हुई कि रो पड़ी और सिराज उसक होठों से आँसुओं क क कतर चुनने लगा। मगर वह जानती थी कि सिराज को किसान्दरा का जहन्ना क लिए शादी तो करना ही पड़ेगा। उसक दिल म तो आधा ही सूरज आ सकता था। और उसन तो कभी पूरे सूरज की तमन्ना भी नहीं की थी। उसक लिए तो इतना ही काफ़ी था कि इत्मीनान सिराज उस अपने बाज़ुओं में इस ज़ोर स कस म कि

उसका दम घुटने लगे और वह आँखें बन्द कर ले और उसके भर भर शादाब होंठों में एक जोंफ पड़ जाय।

वह देर तक चुपचाप पड़ी रही और उसके वजूद की गरमी मिगदाद के वजूद की गरमी में तहलील होती रही।

बाकी हमरा-तुहरा ब्याह कब होई है?

दस बीघ की खेती हमरे नाम है। मिगदाद बोला, 'हम अलग हो जायेंगे।

ओ कहाँ रहा जाई?

ओ ह खिलवनिया में। मिगदाद ने कहा जिहको छोड़के हम लोग नए वाले मकान में आये हैं।

और जौन मियाँ ना रहे दिहिन?

ऊ सब मत सोच। ऊ सब इ जना कि हमसे ब्याह करबे की ना करबे'

ई ह त मुश्किल है। ऊ हो गा तो कोई मकान भी ना देगा, और जो हो ना वह मकान कि करेगा।

ई का बात भई?

डिर लगता हम।

क्यों से?

नानी।

अब्बा से?

नानी।

फिर काहे से? हम से?

इस बार वह बोली नहीं। उसने 'हाँ' में गर्दन हिला दी। मिगदाद उसे घर में लाने बना चाहता तो घर न रहती। लेकिन मिगदाद तो एक अनहोनी बात कर रहा था। इसीलिए वह डर रही थी। इसीलिए वह बहुत डर रही थी। अब तक ऐसा नहीं हुआ था।

त हमई से डर रही?

हाँ।

'का तो इ माच रही कि तुम नाराज हो रहे हो ?

'नाहीं । इ बात ना है । बाकी हम ताज कम बनायें ।

मिगदाद ने अपनी बात अलग कर ली । मरुनिया ने आँखें खोल दी । मिगदाद रूठा रूठा-सा लग रहा था । मरुनिया ने उसके कम बदन की तरफ देखा जिस पर पसीने का निशान था ।

रूठ गया तू ?

रूठ के का पायब ? मिगदाद ने कहा तब तो ई तय कर लिए हैं कि हमरे साथ ब्याह ना करब ते हम का कर सकत है । हमरे मुकद्दर है ।

ई बात ना है ?

फिर का बात है ?

तू ब्याह कर ल्या ।

न ।

फ से हमरी पूरी दुनिया ने सुन ल्या ।

अच्छा कह द ।

हम ई कह रहा कि तोहरी मियाँ वह रहें जिन्हें निकाह कर ल्यो । फिर हमरे से भी बात पड़वा लीह जब तोहार नाम भी साथी नाम में पड़वा लिख्खि रखा ।

न । मिगदाद ने कहा हम ब्याह ठा दुबारा करब । नहीं त करब त करेंगे । मामू का है जगह मरुनिया के बारे ख्याली रह गए हैं ।

त का मामा रहा मार के ब्याह ना कर रहा की ऊ कम्बख्त है । मरुनिया का ज्यादा का निश्चित रहना नज़र आने लगा और बात है न तो हम तू से ब्याह ना करब ।

ना करब

त करेंगे ।

ना करब

ना करेंगे ना करेंगे ना

मिगदाद ने उस दौर का दरवाज़ा मारा कि उसका हाथ गिर गया । इस बात ने कई आवाजें लिया था । वह मिगदाद से लिपट रही और बच्चा का सा रोने लगा और उसके आँसू मिगदाद के बदन के पसीने से मिलने लगे ।

करगे र। ता से ना करेंगे त और के से करेंगे!''

बिलवन की कोठरी में सन्नाटा हो गया। बस यह जुमला तानपूरे के तार की तरह लरजता रहा और इसकी मद्धिम झंकार धीरे धीरे सफुनिया और मिगदाद के वुजूद में घुलती रही। यहाँ तक कि दो बदन प्यार की आग में जल गये। फिर सफुनिया चली गया। उसने पहले दरवाजा खोला, इधर उधर देखा। गली में एक आवारा कुत्ते के सिवाय कोई नहीं था। वह झमाके से गली के सन्नाटे के गहरे पानी में कूद पड़ी। कुत्ते ने उसे देखा। फिर वह जनाने इमामबाड़े के बड़े चाबी फाटक को सूँघने लगा।

मगर मिगदाद सफुनिया के जाने के बाद भी देर तक लेटा रहा और सड़ी हुई आग की गरमी में पिघलता रहा। उसे यह नहीं मालूम था कि सफुनिया से शादी करना आसान नहीं है। सफुनिया के बदन की मिठास से मिगदाद का सारा बदन जैसे चिपचिपा रहा था और यह मिठास उसकी रगों में भी रिस आयी थी। वह अँगड़ाई लेकर उठा। कमीज से चेहरे का पसीना पोछने के बाद उसने उसे पहन लिया। फिर वह मुसकरा दिया। खाली कमरे को अपनी निगाहों से झाड़ने पोंछने के बाद वह कोठरी से निकल आया।

दिन ढल चुका था। सहनची में धूप का कोई हल्का सा धब्बा भी नहीं था। धूप इमामबाड़े की खपरैल को पार कर चुकी थी। कोठरी के कलस पर एक चील बैठी अपने पर तौल रही थी। मिगदाद ने उसकी तरफ एक फर्जी ढेला फेंका। वह उड़ गयी। अनवारुलहसन के मकान की खपरैल पर पालतू कबूतरों का एक गोल बैठा हुआ था। उसने मिट्टी का एक ढेला फेंककर उन्हें भी उड़ा दिया। फिर गलाराने दरवाजे को अन्दर से बन्द करके वह इमामबाड़े के पूरबी कमरे में आ गया।

प्यास

तनू मजर हुसैन बनकर लौटा। उसके चेहरे से सिपाहीपन की नर्मी खत्म हो चुकी थी और चेहरा बरसात में भीगकर अकड़े जानदार जूते की तरह सख्त पड़ चुका था। उसकी छोटी-छोटी आँखों में ख्वाबों की चमक की जगह एक डरी डरी-सी बेपरवाही आ गयी थी।

गणोली से जाने के बाद मकुनिया उसे एक दिन भी याद नहीं आयी थी। अब उसके बकस में कई लड़कियों की तसवीरें थीं। उन लड़कियों के नाम वह भूल चुका था। उसे तो बस उनके बदन याद रह गये थे। इटली की एक लड़की से तो वह ब्याह करते-करते रह गया था। अब भला उन मिस्री, इटली, मराकशी, फिलस्तीनियन और इराकी लड़कियों की भीड़ में वह जिन्दों की नवाबी और मरदानियों की बेटी मकुनिया को क्या याद रखता! मगर जब उसे दूर से बराड़ की मस्जिद के गुम्बद और मीनार नज़र आने लगे तो हवा पर बिखरी गणोली की तेज़ सुगन्ध से बोझिल हो गयी। वह यह बात भूल गया कि वह उसका और मीसों के बियाबान में जिन्दगी के छः साल गुजारकर आ रहा है। वह यह भूल गया कि मशीनगनों की आवाज और बमों के धमाकों में किस तरह अपने जिन्दा होने का यकीन टटोल-टटोल पाया करता था। वहाँ उसे यह सोचकर में बड़ा दुःख लगी थी कि हवाई जहाज की आवाज सुनकर बाहर नहीं निकला जाता बल्कि छिप जाया जाता है। मगर गन्ने और अरहर के हरे भरे खेत देखकर वह वे तमाम बातें भूल गया। उसका दिल जोर जोर से धड़कने लगा। इसका सुर सुनकर आग बढ़ता रहा। पुलक बढ़ने लगा और मधु पुरानी शराब का नशा पुराने दिनों के पैर भरता रहा।

उसने घड़ी देखी। चार बज रहे थे। यानी हकीम साहब के दरबार की मजलिस खत्म हो चुकी होगी। लोग मिलकर दाल के दरवाजे पर होंगे। सूरज ढलान पे धूप बना-बनाकर इधर-उधर पर उछाल रहे होंगे। उसने सोचा कि वह तो धूप बनानेवाला को पहचान भी न सकेगा। जाने कौन-कौन-से गहरे

चहे बनाने की उम्र के हो गये होंगे। और क्या पता अब नौहा कौन पढ़वाता हो। मसेन चा और मश्शू भाई ने तो नौहा पढ़वाना छोड़ ही दिया होगा। ये लोग तो अब अंजुमन की सफ़ से निकलकर बूढ़ों में मिल गये होंगे और ज़ार ज़ार से रोने की प्रक्टिस कर रहे होंगे। वह आंखें बंद करके देख सकता था कि मिछ्छू दादा के कमरे दर कमरे में फ़र्श लगा हुआ है। उत्तरी सिर पर बेहत्था वाली एक कुर्सी एक सफ़ेद चादर ओढ़े खड़ी हुई है। कुर्सी के सामने हकीम अली कबीर, अब्बू मियां, अनू सईद मियां और दूसरे बूढ़े लोग बैठे हुए हैं। बीचवाले दरवाज़े से पीठ लगाये जवाद मियां बैठे हैं। उनसे लगे हुए फुन्नू मियां पसरे हुए हैं। मोहम्मद हुसन और मश्शू मियां अंजुमन के लड़कों के साथ बीच फ़र्श पर हैं। छोटे बच्चे कुर्सी के इधर उधर रूमाला के बूटे उछाल रहे हैं और एक दूसरे के चुटकियां काट रहे हैं। और शोर कर रहे हैं। और डांट सुन रहे हैं... उसे इस बात का ध्यान अब आया कि वह पूरे छः साल तक गंगौली और उसके मोहर्रम के लिए तरसता रहा है और कल आठ की मजलिस है। अलिमवा हलवा बनायेगा

नीम के पुराने मोटापे को देखकर उसकी आंख भर आया। फिर उससे इक्के पर न बैठा गया। वह इक्के से कूद पड़ा। इक्केवान ने लगाम खींच ली। घोड़ा उस कूड़े रास्ते पर रुक गया।

तुम चलो। मैं आता हूं। तन्नू ने कहा।

इक्केवाले ने जबान बजायी। घोड़े ने दुम से मक्खी हिलायी और लीद करता हुआ आगे बढ़ गया। घुंघरुओं की आवाज़ दूर होती गयी और फिर गन्ने के खेतों ने इक्के को ढंक लिया। तन्नू ने अपनी मोटी ऊनी जर्सी की आस्तीनें चढ़ा लीं। फिर वह गोदाम की तरफ़ बढ़ गया। गरदन निहुड़ाये चरती हुई एक गाय ने मुंह उठाकर उसे देखा। उसके पास खेलते हुए कुछ नंग धड़ंग बच्चे तन्नू के पीछे दौड़ने लगे। गोबर इकट्ठा करती हुई एक जवान चमाइन उन भागते बच्चों को देखकर मुस्कराती और अपनी मां से बोली, 'तना मियाँ के देख !'

तन्नू यह आवाज़ सुनकर रुक गया। उसने उन दोनों की तरफ़ देखा। वह उनकी तरफ़ बढ़ा। वे दोनों घबरा गयीं।

"ये क्या लड़की है ?" उसने लड़के से पूछा।

"हमसाये की।"

"ये बोहरा की लड़की है ?" नन्नू ने उसे छेड़ा। वह सहम गयी। नन्नू हँस दिया।

"आप नन्नू मियाँ के लड़के हैं न ?" यह उसने पूछा जो घूँघट निकाले खड़ी थी।

"हाँ।" उसने जेब में से रुपये का एक नोट निकालकर ज़मीन पर गिरते हुए उस बच्चे के माथे पर फिराकर दिया जो अब उसे घूर रहा था। "हमने सुना था कि गफ्फारमियाँ जेल में हैं। यह लड़का किस क्लास में पढ़ता है ? इतने बरस में यह कितना लम्बा हो गया।"

"अब तो बरस भी हो जाएँ।" लड़की ने कहा।

बच्चा उस नोट को पकड़ने से डरता था कि कहीं न उसे डपट दिया।

"हाँ ! नन्नू आप यहाँ कैसे आ गये !"

"रमजनिया के बाबू के गाँव आये थे। गाम भर"

"हाँ हाँ !" नन्नू ने उसकी बात काटी। "बात मत करो।"

मगर रमजनिया की माँ बहुत ज्यादा बातूनी थी। वह यह नहीं चाहता था कि नन्नू मियाँ का वहाँ उनके बारे में उलटी-सीधी बातें मालूम हों। मगर नन्नू के पास वक्त नहीं था। वह सामान की तरफ बढ़ गया। गाने के दरवाजे पर प्यार से हाथ फेरकर वह आगे की मंजिल पर चढ़ गया। सामने सलोना थी। उसकी माँ—सलोना !

अब शाम हो चली थी और गाँव की औरतें नदी की तरफ जाने लगीं। तो उसे लगा कि अब चलना चाहिए। सूरज भी अब नहीं थी। दिन का चौथा हिस्सा बचा था और सागर के टीलों पर ढलती किरनें करते हुए आम, जामुन और पीपल के बूढ़े पेड़ सिपाहियों जैसे खड़े थे। जब वह अपने घर की ओर चला। हर तरफ सन्नाटा था। सागर का पानी एक सा, पर उसमें कौन था, मगर सन्नाटा भी था। उसने एक कंकड़ उठाकर फेंका। छोटी-छोटी लहरें दूर तक गयीं। उसने दूसरा कंकड़ फेंका और फिर वह उसी पानी पर सरकता हुआ सागर के पार चला गया।

दिया। हाथों को पोंछकर उसने वुडबाइन की डिबिया निकाली। उसमें एक ही सिगरेट थी। सिगरेट जलाकर उसने डिबिया फेंक दी। फिर कुछ सोचे बिना उसने डिबिया को ठोकर मारी। वह उछलकर पोखर में जा गिरी। तन्नू गुनगुनाने लगा। कोई पुराना नौहा। इतना पुराना नौहा कि उसे उसके शब्द भूल चुके थे। मगर धुन याद थी।

गन्ने के खेतों में हवा सरसरा रही थी।

"अब त सैफुन का दिमाग अउरो ना मिली..." एक आवाज आयी।

तन्नू रुक गया।

"बाकी तनी ईहो सोचे की बात बाय कि अब हम्माद मीयाँ का करिहें।"

"अ कर के रह का गइल बाय। जोर जूलुम कर के आब पटाइल बाड़न बिचारू।"

"कानी के कहत रहे की एक दिन जब मीयाँ ढेर बिगड़लन त मिगदाद मीयाँ छउक के हाथा छोड़ देहलन।"

"चच... नाहीं! ई सब उत्तर पट्टी के मीयाँ लोगन की कहानी बाय। न हम ना मानिब।"

तन्नू आगे बढ़ गया। मगर अभी वह दो-चार कदम ही गया होगा कि उसके पैरों में फिर एक जंजीर पड़ गयी।

"कउ आवत बाय!"

यह एक बड़ी रसीली आवाज़ थी। तन्नू यह सोचकर उदास हो गया कि यह आवाज़ उसके पीछे में जवान हो गयी जब वह यहाँ नहीं था। वह कोई आवारा आदमी नहीं था। शन्नू मियाँ, बशीर मियाँ और वज़ीर मियाँ के लड़कों में यही तो खास बात थी कि वे आवारा नहीं थे। यह तो गंगौली में छः बरस की जुदाई का दर्द था, जिसने तन्नू को उदास कर दिया था।

"हवा है रे!" यह एक मरदानी आवाज़ थी और इस आवाज़ को उसने पहचान लिया। यह अनवारुल हसन राकी के भतीजे मशीअतुल्ला उर्फ ममोता की आवाज़ थी।

"हवा ना है। हम हैं।" तन्नू ने कहा।

सेन न कोई जवाब नहीं दिया। तन्नू गन का एक पत्ता नाचता हुआ आग
बढ़ गया।

सामने ही पुम्मू मियाँ की मस्जिद था। बन्द दरवाजों की दरारों में जनान
इमामबाड़े में जलने वाले पट्टामैकस की रोशनी चौंक रही थी। दालान में दो
पलंग थे और उनमें मिली हुई कपड़े की कुछ आरामकुर्सियाँ पड़ी हुई थीं। उस
शालान का दृश्य के बाद तन्नू के लिए धीरे धीरे चलना असम्भव हो गया।
पुम्मू चा, आदाब। उसने दूर ही से नारा मारा।
जान रहा। पुम्मू मियाँ ने कहा बात इत शायद कहीं हो गया रहा
भाई। उन्होंने उसे निरख लिया बाकी तू हो जइस के नइस। तनिका
मार ना भयो।

अन्ना मियाँ कहिन कि सब गोश तोर पुम्मू चा का न दिया है। उसने
पुम्मू मियाँ का ता पर हाथ फेरते हुए कहा।
जवाब में पुम्मू मियाँ रोने लगे। यानी बाउआयदा रोने लगे। तन्नू घबरा
गया और बोला ई का साहब।

आज भाई साहब होते तो कहता गुण होते। पुम्मू मियाँ नाक छिनकन
के लिए रुके। चारपाई के पाय में हाथ पोछकर उन्होंने शामन में चश्मा साफ
किया हम इसलाम में आ बगल उनकी पट्टिय के पास बैठ रहे। मरत
मरते मार दा बस गये। हमसे बात ए पुम्मू! अब गुण का जन्न मजूर
हो। हम ने जिन्दगी उनकी मोहब्बत ना लिहिस। बाकी हमस मज़ान है कि
तन्नू हमरा गाहिम का ना टलिहैं।

का शाहिद रही उनका?

उन्हें मस्ता बस पसन्द रही। पुम्मू मियाँ ने कहा अउर ताकी
कहा शाहिद रहा का बाद सरस सता का ऊ अपनी कर बना दें। हम न
उनसे कहा भा का भाई साहब आपका हुकुम सिर आँख पर। तन्नू साथी
से दुनिया से के अदर। अब ऊ कहना लिखा ल्हानिन में का बिवाह करिह
भया। बाकी ऊ बात
ए भाई ई तनुआ करता है का? जवाब मियाँ अपना दाढ़ी फरकात
हा आ रहे।

तन्नू खड़ा हो गया, "आदाब, दादा !"

"जीते रहो बेटा ! हाय, आज जो शब्बू होते त कतना खुश होते ?"

"आप तो अच्छे रहे न दादा ?"

"अ काहे ना अच्छे रहे बेटा। बाकी बुढ़उतिया का कउनो इलाज। दू दिन डागदर लोग की नाही ? इ साली रियाहु बहुते परेसान किये है मारो।" उन्होंने बड़े इत्मीनान से पादा। सारा दालान गूंज गया।

"इ जवाद के सिवा कोई अउर ना हो सकत।" रब्बन बी की आवाज आयी।

"त का करें भाई। पदवो ना करें। अ निकले वाली चीज कोई व गये क्वीहे की हमही हुकुम चलायें आ पर ?" जवाद मियाँ ने सवाल किया।

"आदाब, छोटी दादी !" तन्नू ने सलाम किया।

"ए तू बहरवा कवन बन्है हो गटा ?" सवाल हुआ। वह अन्दर चला गया। रब्बन बी ने उसे लिपटा लिया। फिर सल्लो की माँ सकीना ने उसकी चटाचट बलाएँ ली। फिर सलमा, कुबरा, सयदा, उम्मे नसीं कनीज, रबाब और महजबीन ने उसे सलाम किया। वह सलमा, कुबरा और सयदा को गले न लगा सका। हाथ तो उसने बढ़ाया मगर यह देखकर रुक गया कि ये लड़कियाँ जवान हो चुकी हैं। वह जब गया था तो सलमा तेरह चौदह साल की थी और महजबीन गोद में थी। वह आया तो महजबीन नौहा पढ़ रही थी ! छः बरस यूँ तो कुछ भी नहीं मगर बहुत कुछ भी हैं। छः बरस में लड़कियाँ बिलकुल जवान हो जाती हैं और फलिये पर पशाव करने वालियाँ टाँयँ-टाँयँ नौहा पढ़ने लगती हैं।

महजबीन के हर कुर्ते पर एक छोटा सा काला पटका झूल रहा था। तन्नू ने उसमें से छालियाँ और भुना हुआ गरी और धनिया का एक फंका मारा। वह रोने लगा। पन्ने तो कुबरा ने उसे बहलाने की कोशिश की। मगर जब महजबीन ने बदलने से साफ इनकार कर दिया तो कुबरा बिगड़ गया, "चुप रह… की दया एक चटकना !"

महजबीन सहमकर चुप हो गया। उसके चुप होते ही रब्बन बी ने फिर बोलना शुरू कर दिया। तन्नू हैरान रह गया कि छः बरस में इतनी बातें कम

हो गया। मुमताज मर गया। रहम्म मर गयी। मौलवी बेदार सैफुनिया से फँस और मिगदाद ने सैफुनिया से ब्याह कर लिया। फुत्तन मियाँ को उमर कैद हो गयी। झिंगुरिया को फाँसी दे दी गयी। गोवरधन गाली खाकर ढेर हो गया। मसाणिन छिबुरिया में अटक गयी है

वह बिलकुल घबरा गया।

अन्दर सब के ऊपर है आपने नई बेटा की सफुनिया ' रज्जन को चुप हो गयी। लड़कियाँ खड़ी थीं।' इतू लोग सिरवा पर चढ़ के का खड़ी हो ? जाओ, आराम हो चुका।' लड़कियाँ खिसुरती हुई चली गयीं। वे नर के पास से जाना नहीं चाहती थीं। इतने दिन के बाद तो आये थे उनके ननू भाई। मगर रज्जन की तानाशाही के आगे कौन टिक सकता था ? रज्जन ही ने लड़कियों के टल जाने के बाद फिर बोलना चालू कर दिया। बोला, 'मैं का कहत रहिए ?'

"आप सफुनिया के बारे में कुछ कहने जा रहे थे

हाँ। अब मैं का बताओ, बेटा। मुँह से निकाल की बात तो है। बाकी मन से का छिपाएँ। ई सफुनिया मिगदाद की बहिन है।

यह कैसे हो सकता है मामू !'

"काहे ना हो सकता मामू ?" रज्जन भी चमका। 'अरे ई कलजुग में का ना हो सकता ?' हम्मा त अइसा साठ पाँच के बइठे गये हैं की कोई का कहे। अब ई बेटा हराम की हो चाहे हलाल की बेगम फिरा करी है। अन्दर अब ते नाहीं बहिन के हियो एक दो लड़किया हो गया है।

मगर छोटे भी

तो छोटे रहा कहे में सब भूट ने हाथ से रहा। कि हो जल्दी ' एक यम बहिन से बियाह किए बइठा है अउर ओखर के मदद बने का फाकिन में है। मार ढूँढ़-ढाँढ़ के रमन न मदद मान्त बिआह है।"

का मिगदाद तभी वह हो गये माहेर की बियाहता कर लिहिन ? और एक दो लड़किया हो गया।

हाँ ! न का मिगदाद उन हो वह रहन जैसा कभी तू छोड़ गये रहो ! गवरा या हम रहो, अरगा अब नना ई बनाया की नइया बिलकुर माप हो गयी की कउना कार-बसुर बाड़ा है अमह ?'

'जी, लड़ाई बिलकुल खतम हो गयी।

लड़य्या के खतम होए की एक ठो मन्नत मान रहिबूँ कि लड़ाई खतम हुए अउर तू साथ खैरियत के अल्या त एक ठो मजलिस करिहो और माला कब्बन साहब स पढवय्हा। बाकी ऊ त बहुते बड मौलवी ह। नौ रविअव्वल से पहिल त मिलिह ना। राजा महाराजा कीहा पडिह क हमरे हियाँ अय्ह? बाकी पढवाये को है उनही से।

'ए तनू! फुस्सू मियाँ आ गय, का भाई दरवजवा पर की मजलिसिया करे ना चलिहो का?"

चलिये।

छ बरस क बाद उस मानूस रास्त पर चलना तन्नू को बहुत अजीब लगा। बँसवाटी जस की-तस थी। जुलाहा के मकान जसे के तस थे। अंजुमन हुसनिया की अधूरी मस्जिद उतनी ही अधूरी थी और उसी तरह गढई मे याँक झाँक कर अपना मुह दख रही थी और अपन अधूरपन पर शरमाया जा रही था।

किराय का इक्का दरवाजे स कुछ इधर ही दीवार स टिका खडा हुआ था। पास ही उसका घोडा घास खा रहा था और जमीन उसके पशाब स भीगी हुई थी। फाटक स याँकनवाली गस की राशनी उस बुरी तरह घूर रही थी।

मजलिस शुरू हा चुकी थी। शब्बर मियाँ पढ रह थ। शब्बर मियाँ की आवाज सुनकर उसक रागट खड हा गय और उसकी आँख भर आयी। आस्तीन स आँखें सुखाता हुआ वह फाटक म आया।

शहनशान का नया ताख्तार दरवाजा खुला हुआ था। काल मखमल म मढा हुआ चकला का खूबसूरत ताजिया अब भी उतना ही खूबसूरत था जितना खूबसूरत वह उस छाड गया था। पजा पर वही पुराना बनारसी दुपट्टा पडा हुआ था। मजूर मियाँ तो झप स अलमा का तसनीम करक फश पर बठ गय। मगर वह खडा हुआ उसन कलम की उगली उठायी और बाना

अय्यनामो अनका या अबाअब्दुल्लाना, अय्यनामा अनका यब्ना रसूलल्लाहा अय्यनामाअलहुम बकरमतुल्लाहा ववरकाना!

शब्बर मियाँ पढ रह थ

'यह हुसैन ही का काम था कि जब मौत और तबाही दरख़्तों पर दस्तक दे रही थी तो बच्चे खाली कूज़े लिए अल्अतश-अल्अतश चिल्ला रहे थे और [illegible] का [illegible] जनाब एक खेमे से दूसरे खेमे में पानी ढूँढ़ती फिर रही थी तो हुसैन ने सोचा कि बारगाह परवरदिगार में जाने से पहले अपने तमाम फ़र्ज़ अदा कर देने चाहिए। चुनांचे जनाब से बोले, बहन बिन बियाही कुबरा को छोड़ मुर्दा के सामने कैसे जाऊँ।' और फिर मरहूम भाई की निशानी का नाम लेकर हुसैन रो दिए। मंज़ूर मियाँ ने इसके आगे सुनने की ज़रूरत महसूस न की। उन्होंने फुक्कार मार मारकर रोना शुरू कर दिया। मगर तनू के कानों में तो ज़ाकिर की आवाज़ कहीं दूर से आ रही थी। वह तो हैरान-सा [illegible] रहा था। जहाँ गोरे दादा बैठा करते थे वहाँ अब्बू मुहम्मद दा है। जहाँ मौलवी बेदार बैठा करते थे वहाँ उस्ताद है। जहाँ फुन्नन मियाँ बैठा करते थे वह जगह खाली है। मिम्बर के पीछे लड़कों का ग़ोल होता था लेकिन तनू [illegible] के अलावा किसी को नहीं पहचान सका और जिन लोगों को वह मिम्बर के पास छोड़ गया था वे लोग मुहम्मद हुसैन के साथ बीच में फ़र्श पर थे और उनके गले में अंजुमन हुसैनिया की सियाह कफ़नियाँ थी।

नौहाख्वानी के वक़्त वह अंजुमन के साथ खड़ा हुआ। मज्जू और मुहम्मद हुसैन मुस्कुरा दिए। मासूम और मन्टू ने उसे अपने बीच में जगह दी। मूनिस बिल्कुल सामने थे और शम्मू ने मूनिस की बग़ल में तनू के पास अपने चमकदार सीने से मुस्कुराहट का पैग़ाम भेजा। इनके बीच में खड़े होनेवाले लड़कों में वह किसी को न पहचान सका लेकिन ज़ाहिर है वे ख़ानदान ही के लड़के होंगे।

'हसीन!

'हुसैन!'

तनू ने देखा कि मातम करने का फ़न बिल्कुल नहीं भूला है। उसके हाथ [illegible] पड़ गए थे चुनांचे उसने सीना निकाल लिया। मातम होने लगा। [illegible] और [illegible] की [illegible] [illegible] लगी। न मालूम क्या मातम की आवाज़ पर तमाम लोग रोने लगे। मंज़ूर मियाँ, अच्छू मियाँ, अब्बू मियाँ वग़ैरह मियाँ मंज़ूर मियाँ [illegible] मियाँ मुस्लिम मियाँ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

कि तमाम बाक़ी लोग मुँह खोल खोलकर रोने लगे। मासूम मियाँ मातम करते करते बैठ गये और रोने लगे। अन्दर से औरतों की रोने की आवाज़ आने लगी। तन्नू इन आँसुओं का मतलब जानता था। वह जानता था कि वे लोग हुसैन पर नहीं रो रहे हैं बल्कि उसके बाप का पुर्सा दे रहे हैं। चुनाँचे उसका हाथ तेज़ से तेज़तर होता गया। मातम की लय ऊँची ही उठती गयी। मुनिस ने दोनों हाथों से मातम करना शुरू कर दिया। मासूम को दोनों हाथों से मातम करने का फ़न नहीं आता था। उसका दाहिना हाथ बिलकुल भर गया था। गिग्गे मदन और शम्मू वग़ैरह भी थक गये। हतारे में मातम करने वाले बच्चे थक थकाकर बैठ गये थे। मगर तन्नू मातम करता रहा और मोमिनीन रोते रहे। रफ़्ता रफ़्ता रोनेवालों की तादाद घटती गयी और फिर अकेला तन्नू रह गया। उसके नम भूरे बाल उसकी पेशानी पर थे जो उसकी गर्दन की जुम्बिश के साथ हिल रहे थे। उसने हुसैन हुसैन कहना भी बन्द कर दिया था। उसका हाथ चला जा रहा था। लोग रो रहे थे और बिलख रहे थे। फिर इमामबाड़े की दीवारें उस पर झुक गयीं और कँवला और हाँडियों ने उसे घेर लिया और

तन्नू को जब होश आया तो वह जनानी कमरे में था और हकीम अली कबीर उसे कोई मीठी चीज़ पिला रहे थे। उसने इधर उधर देखा। कमरा ठसाठस भरा हुआ था। उत्तर पट्टी और दक्खिन पट्टी के तमाम बुज़ुर्ग इकट्ठा थे और बच्चे दरवाज़े से झाँक रहे थे। फुस्सू मियाँ पोछा कर रहे थे। उसने उठकर बैठ जाना चाहा। लेकिन फुस्सू मियाँ ने उसके सीने पर हाथ रख दिया और कहा अबहीं थोड़ी देर!

"मैं ठीक हूँ साहब!" वह न मालूम क्या बर्रा गया।

"जाओ हाथ मुँह धोकर कपड़े बदल डालो।" बशीर मियाँ ने कहा।

यह साफ़ इशारा था कि सब ख़ैरियत है। लोग एक एक करके जाने लगे। हकीम साहब ने एक नुस्ख़ा लिख दिया जिसे उस्ताद मियाँ अपने अगार गान में बाँध गये। फिर सिर्फ़ घर के लोग रह गये। इमामबाड़े का ग़म धुला दिया गया। फ़र्श पर बिस्तर लग गये और तब अन्दर से खाने का बुलावा आया।

नन्नू का घर म शालीन नयी चीज़ें नज़र आयीं। एक तो शब्बर मियाँ की लड़की ज़ाहिदा परवीन उर्फ़ मुन्ना थी और दो कदीर मियाँ की लड़कियाँ मरियम उर्फ़ मुन्नी और असमत उर्फ़ मुँइया थीं। मुन्ना और मुँइया सात-सात बरस की थीं और मुन्नी पाँच साल की।

अर भई य कौन ना !'' कदीर मियाँ न कहा।

जो न तो रहा हूँ।'' नन्नू न कहा।

साबिर भा। मरवरी न इस समय म उसकी प्यार म कीमा निकालना शुरू कर दिया।

'तुम्हारा लड़का कहाँ है ?' नन्नू न पूछा।

उसको पैदा नहीं है।' सरवरी न यूँ कहा जैस उसकी छुट्टी न होन म सारा कसूर नन्नू हा का था।

अर तो मुझ पर गुस्सा क्या हो रही हो ? इन्न अली भाई की डाँट !' नन्नू न कहा।

खाना लाओ खाना लाओ !' कदीर मियाँ न अपनी पगड़ी का घुड़का। दस्तरख्वान पर रकाबियाँ सज दी गयीं। लोग चुपचाप खाना खान लग।

'ए नन्नू ! तू एकदो अमन असमत का मरवी किया की माली घुड़सवार बनकर चला आया !' कदीर मियाँ न पूछा।

अब बड़ा हो कहना चीज़ होता है साहब।' नन्नू न कहा, 'अपन साथियों के खून और आग के पानी म क़ाफ़ी देर नहीं रह जाता। जिस तरह आदमी मरम्मा की मिनिट स्नान का आदी हो जाता है उसी तरह हम अपन स्नान और अपनी सूरत का आदी हो जाता है। एक बार

खाना खाओ। कदीर मियाँ न कहा।

नन्नू चुप हो गया। कमर म फिर सिवाय की आवाज़ रह गयी। तमाम चार सफ़ेद दस्तरख्वान पर सालन के धब्बे लग गये। मालूम होता है म मरहूम की रूह म पड़े हुए का तिनक म था। नन्नू न उस बक्त चाहा था। मरहूम की रूह का लिहाज़ करन के लिए इसका, तो मालूम न कुछ माफ़ कर दिया।

नन्नू को घर इतना बड़ा अजीब और खुशरंग मालूम हुआ। अपन अंदर स के रहत और व मरतें लिपट रह जिनम उस समय खाना रखा था।

दिमाग म बसी हुइ इन्मानी पसीने खून और पानी की महक निकल गयी। यह बात निकल गयी कि जिन्ह उसन मारा, वह उन्ह पहचानता भी नही था। तमाम बाता की जगह एक गहरी उदासी न ले ली। यू ही न जाने कितने खानदान दस्तरख्वान पर ऐसे न मालूम कितने लोगो की राह देख रह होगे जो वापस नही आयेंगे। उस न मालूम क्या एक इतालवी सिपाही याद आया जिसे खुद उसन अपनी सगीन पर उठा लिया था। मरते मरते उसकी आँखो म एक हैरत थी। शायद वह यह सोच रहा था कि वह क्यो मर रहा है। उसने कुछ कहा भी तम्मू उसे सुन न सका या समझ न सका। उसकी जेब मे सुख चमडे का एक बटुआ था। उसम एक तसवीर थी, एक औरत और दो बच्चा की। एक बूढी औरत थी और गेहूँ के चन्द दाने थ। मुमकिन है कि ये दाने खन्द उसने गेन क रह हो।

ऐं! वह चौक पडा। उसने देखा कि मुन्नी कुछ पूछ रही है।

हम ई पूछ रह रह कि रात को परछाइ काहे ना दिखायी देती?" मुन्नी न सवाल किया।

हई नीजिये ई अँधेर म परछाइ देखिह!" मददू ने कहा।

सब परछाइयाँ मिल जाती हैं तो रात हो जाती है।" मूनिस ने कहा।

न! मासूम बोला जइस हम लोग रात का सो जात हैं ओइसे ही परछाइयाँ सब सो जाती हैं।

लेकिन बन्दवन करवाना कोई जुल्म नही!" वजीर मियाँ बशीर मियाँ स कह रह थ।

भई हम लोगा ने कभी बदबली करवायी नही है।' बशीर मियाँ ने कहा अउर बेइमानी करना का फायदा का, जो सेतवा हम्मादे को जाते को है अबकी बा न कहा।

ल्लन ए मल्लन!" बावर्चीखाने से वजीर मियाँ की बीबी की आवाज आयी नउज ई सब लाग हुआँ जाके का बइठ गयी हा अउर ई मट्टीमिली नतिनी कहाँ है?'

याजी जरा पानी दीजिए!" मूनिस ने गल्लन से कहा।

अरे भई गल्लन कुछ मीठा नही है क्या? बशीर मियाँ ने पूछा।

अभी आता हूँ।

दिल का बोझ्ना मक़ीरा गुनगुना रहा था उस पर भी एक मधुर हर आवाज़ पर दूर की लहर थी और शाम अनमना हाथ उस डाल को चुनता चला जा रहा था और तन्नू के पास घर का नक्शा-सा बनने लगा था। तन्नू एक-एक आवाज़ को पी रहा था।

खाना ख़त्म हो गया।

वज़ीर मियाँ और बशीर मियाँ बाहर चले गए। वज़ीर मियाँ तन्नू को भी ले जाना चाहते थे मगर अम्मा ने तन्नू को नहीं जाने दिया। मसहरियाँ ने उस पर लिया। बुढ़िया पलंग पर ऊपर बैठ गयी और तन्नू उन्हें मुन्ना मुन्नी की कहानियाँ सुनाने लगा। ऊपर छत से बड़ी-बड़ी मुर्गियाँ आ गयीं।

'आप लोग मजलिस में चलिएगा'

यह आवाज़ सुनकर तन्नू चौंका। यह अम्मा मियाँ की मझली गुलशन की आवाज़ थी।

गुलशन तन्नू से बहुत हिली हुई थी। वह उससे कोई ग्यारह साल छोटी थी। तन्नू भी उसे बहुत चाहता था। इतना तो वह सल्लन अफ़सरी को भी नहीं चाहता था जो सदा बड़ा की तरह थी। वह हमेशा गुलशन को बचपन के छोटे-छोटे नाम लिया करता था। कभी-कभी तो अफ़सरी खफ़ा हो जाती और गुलशन और अफ़सरी में तू-तू-मैं-मैं हो जाती। उसके हैदराबाद जाने और सायरा उसमें और जोधपुर जाने में भी यह हर साल बाहर की सैर देख देख कर और लोगों की तरह चुटकियाँ भरकर पुकारा करता था तब भी वह मझली को नहीं भूला था। शायद ने उसका नाम उसने गुलशन के दिल में ही लगा रखा था।

यह गुलशन को देखकर बेसाख्ता मुस्करा दिया। 'अरे तुम तो बड़ी बड़ी हो गयी!' उसने कहा।

भाभा! गुलशन उसके पास आ गयी। तन्नू ने उसका सिर अपने सीने से लगा लिया।

अब शादी में भी कुछ दिन रह गये हैं। उसने कहा और तन्नू को याद उसे यह बात मालूम थी कि [illegible] गुलशन की शादी [illegible]।

के बावजूद वह अपने घर की बोली नहीं भूला है। उसकी बोली खड़ी बोली के सख्त और बलचक लफ्ज़ों को पिघलाकर नर्म कर लेने पर अब भी उसी तरह कादिर थी जिस तरह पहले हुआ करती थी।

"क्या, अंग्रेज़ी पढ़ रही तो अग्रेज़ियो ना करें!" रब्बन बी ने इकलौती आँख को नचाकर कहा।

"क्या दादा ने तुमको पढ़ाना मंज़ूर कर लिया?" तन्नू ने हैरत से पूछा।

"जी हाँ।" सईदा हँसी। "मैंने फर्स्ट डिवीज़न में हाई स्कूल किया है जनाब और मैं अलीगढ़ में पढ़ती हूँ।"

'हट झूठी!'

'अल्लाह क़सम!'

'ए बहिनी हई मुई अंग्रेज़ी की बात में अल्लाह मियाँ बेचारे को काहे घसीट रहिउ।" अक्बरी बी बोलीं। 'मैं त अग्गू में बहुत कहिउँ। बाकी उ त लगे समझावे कि ज़माना बदल गवा है... अउर हइ हा गवा है, हउ हो गवा है... हा गवा है मोरी जूती! ई गिटिर पिटिर किहन ना कि अग्गू का बाछ खिनी ना। बड़ा नाम कर रही बेटी। जवान जहाँ लड़की अकेली अलीगढ़ पड़ी रही। बाकी ना पढ़िहे त फ़ैशन में फ़र्क पड़ि। भाड़ में जाये ई मुआ फ़ैशन!'

मगर यह तो बड़ी अच्छी बात है दद्दा!' तन्नू ने कहा।

'अच्छा रहुआ दा। सारी बिरादरी में नाक कट गयी। ए के अलीगढ़ जाय से तुनहरा पार जगीपुर अज़्ज़ानीपुर बकठिया—कहीं मियाँ लागन की बाना लड़की अंग्रेज़ी पढ़े है कि अगर ना लड़की पढ़ि। बशीरा मुंशी का अंग्रेज़ी पढ़ाय चाहिन... मैं जूती ना पढ़ी हा। बड़ु कि सवारगार जो तू ई माचियो!'

'बहुत अच्छा किया दद्दा आपने!' तन्नू ने कहा। सईदा ने मुँह बनाया।

ई नाम की बात का बेग बात में कोई फायदा ना।' उसने चुपके से कहा। सईदा मुसकरा दी और तन्नू से बोली। मैं अपना नाक रगड़ाकर भाग गयी।

ए दद्दा चाहिए भाई जल्दी में मजलिस कर लिया जाय।' सल्लो ने तीन की बधाई उठाकर हुए कहा... अबकी ज्या मजलिस कर का है और फ़ातिहा पढ़ी चल को है।

'तू तो अच्छा बिगड़ गया बड़ा साल भागी बजने में देर हो रही।' अकबरी बी ने कहा फिर चल उठीं। सलिहुन्नी! उन्होंने नौकरानी को आवाज़ दी, 'इस साल जो यह मजलिस कर ले तनी नन्हू के सिर का में तेल डाल दे।' उन्होंने नन्हू के बालों को छूते हुए कहा।

औरतों के घर जाने के बाद सन्नाटा हो गया। इधर उधर चमकी पर छोटे बच्चे सो रहे थे। सब शामान के बोतवाल ... में एक बड़ी सी लालटेन लटक रही थी जो आधे आँगन तक रोशनी फैला रही थी।

सलिहुन्ना तेल की शीशी लेकर आयी। नन्हू ने सिर के तीन तकिए को बराबर करने के बाद बदन को सीना तोड़ लिया मगर जब सलिहुन्नी ने उसके बालों पर तेल रखा तो उसका सारा बदन सनसना गया। फिर सनसनाहट बढ़ती हो गयी। आखिर दो-चार मिनट के बाद उसने गरदन मोड़कर देखा। सलिहुन्ना चौबीस-पच्चीस साल की एक खूबसूरत औरत थी।

'ज़रा सरहनियाँ कम कर दे। आँख पर पड़ रहा है।' उसने कहा। सलिहुन्नी उठी। रह रह गयी। उसका पैर बहुत अच्छी थी। लालटेन कम करने के लिए उसने हाथ उठाया तो बदन के सारे मखमूर बाल तन गए। वह वापस आकर फिर तेल लगाने लगी। नन्हू ने अपने दोनों हाथ अंगड़ाई के लिए उठाए। वे हाथ शायद इत्तफ़ाक़ से सलिहुन्ना की गरदन से छू गए।

छोड़िए बड़े सरकार। सलिहुन्ना गुनगुनायी।

'काहे का शरीर। उसने मुँह हवा में आवाज़ निकाली। लोग मजलिस को गयी हैं। और फिर उस कमरे में ... दर की शामें शामान के साथ गोटे और सिलने सामान, लालटेन आँगन में सरकने लगा—सब ... में लग रहे हैं और कह रहे हैं—... यहाँ गम हुई दर गुज़ारी पर है

उसने सलिहुन्नी की गरदन से हाथ निकाल लिया।

अम्मू मियाँ के घर में शोर की आवाज़ आ रही थी।

नादे ए, अब्बास दिल में ... अल्लाह ...।

दुकान में ए ... नज़र गुलज़ार

नन्हू मौला पढ़ने वालों की आवाज़ को पहचानने लगा था। उसने सोचा वह है बाबू मुहर्रम पर ... था ... यह है कल्लू ... आवाज़ आती है

अगर ऐसा है तो मैं कुछ भूला क्या नहीं ? मुझे तमाम बातें और तमाम आवाज़ें क्या याद हैं ?

नौहा ख़त्म हो चुका था। औरतें मातम कर रही थीं।

'हुसन! हुसन!

या सैयदी! या अन्नाम!

तन्नू मुसकरा दिया।

नहीं साहब कोई-न-कोई तब्दीली ज़रूर हुई है। सईदा अलीगढ़ में पढ़ रही है। गंगौली की सय्यदानियाँ मर्सियों के पुराने और सादे पुरअसर मातम को छोड़कर लखनऊ और जौनपुर के मसनूई और बनावटी मातमों में उलझ रही हैं। यानी फ़ैशन गंगौली के मातम का दरवाज़ा खटखटा रहा है। यह बात उसे अच्छी नहीं लगी। उसे यक़ीन था कि सद्दा और रब्बन दादी और ख़ुरशीद दादी और मुहसिना दादी और सागी दादी ने यह मातम सुनकर ज़ेरेलब 'नऊज़ु' ज़रूर किया होगा। और उनकी आँखों से बहता हुआ आँसू सहमकर ख़ुश्क हो गया होगा।

मजलिस ख़त्म हो गयी। तनिफ्नी ने शिकायत की।

इ! तन्नू चौंका। उसने देखा कि तनिफ्नी अपनी छोटी छोटी कसी हुई छातियों को चोली के प्यार में उलझने की कोशिश कर रही है और उसके सीने की नम और ताज़ा गंदुम जैसी सोंधी जिल्द चाँदनी में चमक रही है। वह तेज़ी से बाहर चला गया।

इमामबाड़े के सहन्दर में लोग सो चुके थे। एक ताक़ में शीशे का एक धुंधला-सा मज़लूम लैम्प ऊँघ रहा था। गुसलख़ाने के दरवाज़े के पास लगा हुआ सफ़ेद फरहरा हवा में हिल रहा था। सहन्दरे में मिम्बर के ऊपर वाले ज़ीने पर मुँह पर बनारसी दुपट्टा डाले गहरी नींद में है। दीवारों पर लगी हुई करबला और नजफ़े अशरफ़ और ज़लज़ाले की तस्वीरें सुर्ख़ नक़्शों में रंगीन हो चुकी थीं। पूरब वाले कमरे से बशीर मियाँ के ख़्वाब में सोने की इत्मीनानी आवाज़ आ रही थी।

वह अपने बिस्तर पर लेट गया। उसने तकिये पर हाथ फेरा। फिर उसने गालों की ठंडक को छुआ और तावीज़ के पत्थर को गुनगुनाने के बाद यह

मुसकरा दिया। वह मुसकरा दिया कि देखो शायद उसे अब भी बच्चा समझती है। जैसा तो गाँव में गफ़ार और सालेहा की मनहूस रातों में वह पैदा हुआ रहा था। पानी की तरह तालों और मोटी लालटेनों का उसके पास नन्हा छोड़कर चला गया। उसे यह नहीं मालूम कि मकान जगह में भूख किस क़दर बढ़ जाती है। रोटी की भूख, प्यार की भूख और बदन की भूख। उस चालीस पैंतालीस साल की वह बलाय सिसिलियन औरत याद आयी जिसके साथ उसने ज़िना किया था। ज़बरदस्ती का सवाल नहीं। ज़िना। अगर इतालवी फ़ौज गाज़ीपुर आ जाय तो क्या होगा? क्या नहीं होगा! उसके रोंगटे खड़े हो गए। इमामबाड़े के सहन में गाँव साहबमुल्लाम का इस गाँव का अपने साथ हुए अज़ीज़ों के मजमे में जाकर उसने जंग की बड़ी बुरी गालियाँ दीं। उसने देखा कि सड़क पत्थर के ढेर में छिपी हुई वही बुढ़िया खड़ी है। उसने देखा कि सिसिली के सागर तट पर बैठकर वह बुढ़िया अपनी मजलिस पढ़ रही है। किस अजनबी ज़बान में नहा। गाँव और शाहम्ना में। मौलवी बकरा के सहज में। मौलवी इरन हसन लानतरवा की मजा-मजाथी ज़बान में। उस वक़्त तो उसकी समझ में बुढ़िया का एक शब्द भी नहीं आया था। उस वक़्त तो वह सिर्फ़ आँखों की बदनाम वीरानी और गहरी निराशा और हिकारत और नफ़रत की ज़बान समझ पाता था (शायद सारी दुनिया में आँखें एक ही ज़बान बोलती हैं) मगर इस वक़्त गाज़ीपुर के बड़े फाटक के सामने में सिपाही सिसिली के साथ जम और एक बिस्तर पर आराम से लेटा के बाद वह उस बुढ़िया की ज़बान खूब समझ रहा था। मैं जानता हूँ मदर हसन, कि तुम सिर्फ़ मदर हसन नहीं हो। तुम मदर भी हो। गाज़ीपुर की रश्मिन बहू के मदर। रज्जू मियाँ के इस्तीमन मदर। अब्बासी बीवी के प्यारे यार मदर। क्या तुम्हें अपना भी याद नहीं आती? ज़रूर याद आता होगा। वह जिन्दा होता तब भी सुगम कुछ छोटी हो जाता। जिस तुम मेरा दर्द समझ रहे हो वह तो तुम्हारा भी इन्तज़ार पहचाना है पहले उतारा उतारा!

चुप रहो! वह चीखा। उसकी आँख खुल गयी।

रात उसका ही गहरा और गहरा हो उठता था। आँख में भी बुरा मद

रह थे। और गिद मूनिस मद्दू हद्दन, नम्सन, वसर, हम्माद मियाँ और अब्बास वगैरह सो रह थ।

'लाहौल विला कूवत ! वह बडबडाया।

'का बात है बेटा ?' हम्माद मियाँ ने पूछा।

कुछ नही साहब, ख्वाब देखा था।" उसने कहा।

'सो जाओ।"

उसने करवट ल ली। उस बुढिया स जान बचाने क लिए वह लनिफ्नी के बारे म सोचने लगा। मगर वह उसके बारे म सोच ही क्या सकता था। वह उस बिलकुल नही जानता था। वह भी उस बुढिया की तरह बिलकुल अजनबी थी। सुबह को जब उसकी आख खुली तो फश खाली था। तमाम बिस्तर उठाय जा चुक थे। लखना चमार आँगन म झाड़ू दे रहा था और गए भागी भागी फिर रही थी। उसने अँगडाई ली। मानूस छत और दीवारो को देखकर वह मुसकरा दिया।

सलाम साहब ! लखना न कहा।

सलाम। सब लोग कहाँ गय ?

गइल बाडन नाग हकीम साहब क इहाँ मजलिस माँ। वह मुसकराया,

मैं बहुत सो गया। उसने कहा।

लखना ने यह जुमला नही सुना क्योकि वह फिर झाड़ देने म मशगूल हो चुका था। तन्नू फिर लेट गया। थोडी देर तक वह करवटें और अँगडाइयाँ लिया किया फिर तकिय क नीचे म सिगरेट की डिबिया निकालकर उसने एक सिगरट सुलगाया। अभी उसकी सिगरट खत्म भी नही हुई थी कि मासूम की क्यादत म उत्तर पट्टी क लडको का गोल बड दरवाज म दाखिल हुआ।

हई लिजिए ! मासूम न कहा हुआँ की मजलिस खतम हो गयी और आप अबही लेटे न है।

तू नौहा पढ़े रह्यो ? तन्नू न पूछा।

जी हाँ। मासूम न गर्व स कहा।

का मुस्तफा चा अबुल कासिम चा और मरगू भाई छोड दीहिन नौहा पढ़ना ?' उसने पूछा।

अरे क्या बात कही है! मासूम ने हैरत से कहा, "कहाँ सब पुरानी धुन अबकी तक पसंद रह गयी। हम ने बाजों में सारे सब लखनऊ की धुन खोज लिए हैं जनाब।'

अच्छा! वह गद्दा पर उठकर बैठ गया 'अबुल कासिम का गाना पर मुआफी चाहते हैं कि ना?

और उनका नाम क्या है? उड़ा तो गये जंग पर। अच्छा, ए तन्नू भाई! वह तन्नू के पास बैठ गया, वो हवाई जहाज पर से नीचे के आदमी गिराता है।'

तन्नू हँस पड़ा अबुल कासिम का कन्न रह था?

हाँ! मासूम बोला, कहते रहे कि जब ऊ एक मरतबा गगोला पर से गुजर रहे थे कि गुरुशाह भागी जाती जिस मकान आ रही और मौलवी बनारस गाड़ी में मुँह धोते रहे।

सभी लड़कों ने वाकायदा मातम शुरू कर दिया। और फिर दो लड़के रोने लगे। और मुस्कराना शुरू हो गयी। तन्नू ने लपककर शाना को अलग किया। मासूम ने इस बार में उसको बिस्तर लपेटकर मिसकर के पास बिस्तरा के अम्बार पर रख दिया।

ए मासूम भय्या!' जनाना दरवाजे पर से सितारो ने झाँककर मासूम को पुकारा 'तन्नू भइया जग कि ना।'

जग गये!

ई कह शाकिर कि नाश्ता कर लें।

आते हैं तन्नू बोला।

सितारो दरवाजे में हट गयी। मगर वह अन्दर नहीं गयी। वह इस नीम अँधेरे गलियारे में खड़ी रहकर लम्बी लम्बी साँसें लेने लगी और तन्नू का इन्तजार करने लगी। और यह हुआ सोचने लगी कि तन्नू अकेला ही आये। जाहिर है कि इसका तो कोई सवाल पैदा नहीं होता कि अन्दर किसी ने उनको दुलार गुनाह कबूल कर सकी हो लेकिन तन्नू उस गलियारे में अकेला ही शामिल हुआ।

वहीं नाश्ता सब रखा है। सितारो ने आहिस्ता से कहा।

मगर तन्नू उसे नज़रअन्दाज़ करके गोरी बी के आँगन में दाखिल हो गया। पाखाने के दरवाज़े पर लगा हुआ शरीफ़े का दरख़्त शरीफ़ों से लदा हुआ था। एक शरीफ़ा तोड़कर हाथों में जादू की गेंद की तरह उछालता हुआ वह सदर मकान में चला गया।

'आदाब!" उसने अकबरी बी को सलाम किया।

'जीते रहो, खुश रहो!" अकबरी बी ने कहा।

तन्नू उसी पलंग पर लेट गया जिस पर अकबरी बी बैठी हुई थीं। सर्दी ग़ज़ब की थी। उसने पाँयती पर पड़ी हुई दुलाई ओढ़ ली और करवट लेकर पलंग की पट्टी के पास रखी हुई मिट्टी की बोरसी पर हाथ सेंकने लगा, जिसमें लकड़ी के कोयले दहक रहे थे।

'दीजिए हमरी दुलाई।" सर्दी से बदन चुराती हुई सईदा ने दाखिल होकर तन्नू से कहा। तन्नू ने उसकी आवाज़ पर गरदन मोड़ी। सईदा बड़ी ख़ूबसूरत निकल आयी थी। गोरा चिट्टा रंग। छोटे छोटे निहायत सफ़ेद दाँत। लम्बी गरदन। सियाह बाल सियाह आँखें। तरशा हुआ मरमरी जिस्म। वह मुसकरा दिया। सईदा ने दुलाई छीनने के लिए हाथ बढ़ाया। उसने दुलाई को अपने गिर्द लपेट लिया।

"अरे दे दे," अकबरी बी ने कहा, "ओको सर्दा लग रहा है।"

"ना देंगे!" तन्नू ने कहा।

सईदा ने अपने दोनों हाथों में उसके बाल भर लिये। वह तिलमिलाकर चीखा।

'तू सठिया गया हो सईदा!" जग्गू मियाँ की बीवी आ गयीं, "छोड़ो ओके बाल।"

"हमरी दुलाई ना दे रहे।" सईदा मिनमिनायी।

"ना दे रहे त रहे देओ।" उसकी माँ ने कहा, "दुसरी ओढ़ लेओ।"

"ई खुद काहे ना दुसरी ओढ़ लेते।"

"तू त अइसा लड़ रहिउ कि तेरा ऊपर के भाग वज़न का लिखि।"

"अच्छा!' तन्नू ने दाँत पीसकर कहा, "तेरे लिए एक मोटा सा काना भुजंग मियाँ तलाश करूँगा।"

'शरम से ना आ रही मगर माहरुख की निकाह की बात करते।' मइन्ना ने मुस्कराकर कहा। और तब उसे यकायक ख्याल आया कि नन्नू उसी की शादी की बात कर रहा है। वह शरमा गया। नन्नू खिलखिलाकर हँस पड़ा।

'ना बेटा, आज हँसी का दिन ना है।'

अम्मू मियाँ की बीवी भी उसी पलंग पर बैठ गयीं। 'ई आज की सरदी से ऐसा लग रहा था कि जिस्म ने दाह। निगोड़ी हवा ने हड्डी में घुसी जा रही।' उन्होंने लरजकर दुशाले का घूँघट निकाल लिया।

'जाओ नाश्ता कर रखो।' अम्बरी बी ने कहा। फिर वह लतीफनी पर बिगड़ने लगीं, 'दिमाग कहीं अँगीठी बिलकुल फुक गयी है क्या? कोयलों को ढक दे।'

लतीफना ने जल्दी से केतली पर ढकनी धर दी।

'चाय पाव पी।' नन्नू ने गद्दे से कहा।

'ना पायेंगे।' मन्नो ने कहा।

'लाओ आपके लिए चाय बनाऊँ?' नन्नू ने मइन्ना की अम्मा से पूछा।

'बहुओं मुई में गरमी ना रह गया है बेटा।' उन्होंने कहा, 'तुम्हीं ही पानी पहिर ने आज का गवन कर उठिए।'

'तू मेरे पाँव मत जकड़।' अम्बरी बी ने नन्नू से कहा।

वह तख्त पर बैठकर नाश्ता करने लगा। घी-नमक की गरम टिकिया के साथ अण्डे का मलीदा खाना उसे बहुत अजीब लगा। पहला कुल्ला खाने के बाद उसने फिर मइन्ना की तरफ देखा जो दरवाजे में खड़ी हुई किसी नौहे की धुन बनाने की कोशिश कर रही थी। उसका दुपट्टा ढलक गया था। वह हौले-हौले मातम करती और गुनगुनाती जा रही थी और सोचता जा रहा था कि आखिर वह इस कदर खुश क्यों है। उसे यह भी नहीं मालूम था कि नन्नू के आने के बाद वह उदास हो गयी थी। यह बात उसे इसलिए नहीं मालूम थी कि उस उम्र की बच्चियों की उदासी की वजह नहीं मालूम हुआ करती। उसके बचपन में नन्नू की एक तसवीर थी। मुश्किल मालूम मद्धम

शम्मू गिग—किसी की तसवीर नहीं थी मगर तन्नू की तसवीर थी। यह तसवीर उसके बक्स में बिछे हुए अखबार की तह में रखी रखी अलीगढ़ भी गयी थी। गलती से नहीं। उसने जान बूझकर रखी थी। और अखबार की तह में इसलिए रखी थी कि उसका बक्स उसकी अम्मा ठीक करने वाली थी और न मालूम क्या वह यह नहीं चाहती थी कि वह या कोई और उस तसवीर को देख ले। उसे यह भी नहीं मालूम था कि वह ऐसा क्यों नहीं चाहती। उसने अलीगढ़ में एक बार भी उस तसवीर को अखबार की तह से निकाल कर नहीं देखा था। मगर जब वह किसी काम से अपना बक्स खोलती तो जरा सिरा अखबार उठाकर उस तसवीर को देख लेती और पलभर के लिए खो जाती। तन्नू भाई क्या कर रहे होंगे कहाँ होंगे कब होंगे जल्दी से आ जायें। उनकी शादी हो। ढेर सारी नेग ली जाय। तन्नू की शादी की बात सोचकर वह कभी खुश नहीं हुआ करती थी मगर वह उसकी शादी के बारे में सोचती जरूर थी क्योंकि अशराफ की लड़कियाँ को शायद अपनी शादी के बारे में सोचने से शर्म आती हो। मगर अपनी सहेलियों से वह तन्नू भाई की बातें इस कदर किया करती थी कि वहाँ की लड़कियाँ उसे तन्नू भाई पुकारा करती थीं। और अब वही तन्नू भाई सामने बैठे नाश्ता कर रहे थे और उनकी गहरी भूरी आँखों में अब वही शरीर मुसकराहट थी। चुनाँचे उसने यह मानने से इनकार कर दिया कि तन्नू छः साल बाद आया है।

'का भाई अब नाश्ता कर रहओ तू। सकीना आ गया।'

'आदाब!' उसने आदाब किया, 'चाय पीजिए यहीं आओ मेरे पास।' वह सईदा से मुखातिब हो गया।

'कहो जान!' सईदा ने कहा।

'ए भाया तू बिलकुल मठिया गया हुआ उसकी माँ बिगड़ी ... ना जानीउ?'

वह जाकर उसके पास बैठ गया। उसका ताजा नहाया बदन की भीनी भीनी खुशबू अण्डे और टिकिया की खुशबू में मिल गया। तन्नू ने एक नुस्म सा सवाल सवाल उसकी तरफ देखा। उसकी मसहरी उंगलियाँ चौका के फर्श पर आड़ी लकीरें खींच रही थीं। उसकी बड़ी बड़ी आँखें लम्बी पलकों के

बाल में सूखा हुआ था। उसकी नाक में नीम का एक सूखा हुआ तिनका चाक रहा था। पतली-पतली सुडौल कलाइयाँ लगी थीं और उसका सिपाह दुपट्टा दुनिया तक झूल आया था।

'दादी, इसका शादी किसी अच्छा आँखोंवाले से कीजिएगा।' उसने मन्नो की अम्मा से कहा।

'ए भइया, क काहे का ?' वह मुसकराया।

'इसकी ये चार आँखें काहे हैं!'

'आपको आँख का इसमें छोटी है ?' मद्दा ने तिनककर कहा।

'मुझे इतना बड़ा बड़ा आँख की का जरूरत पड़ गया जी बहिनी ?" उसने पूछा।

'अच्छा, नज़र मत लगाओ।' अकबरी बी ने डाटा।

'इसे भूख लगा है।' मासूम के रिनकने की आवाज़ आया।

'ए भाई, ई लड़का त हम बिलकुल आजिज कर दिये है।" मन्नन ने कहा, 'अबकी इसके तक मर के गया रहा।'

'त का अब ताए हुकुम से लड़कन का भूखा ना रहे!' अकबरी बी ने कहा। मासूम उनसे लिपट गया। वह उसके बालों में सहलाने लगी, 'बहुत भूख लगी है?'

'हाँ।'

'चल, मैं तोरे वास्ते का का पाड़ा रख हुआ।'

वह अकबरी बी के साथ कोठरी में चला गया और वहाँ से मुँह की ला चाँदियों तक निकला। मन्नन बड़बड़ाने लगी कि अम्मा ने इसी लाड़-प्यार ने मासूम को गारत किया है। फिर बड़बड़ाती हुई बावर्चीख़ाने में चली गयी और मसिहना की देखने लगी।

"हम तो कसम से कहते आप ने हमरे वास्ते पीढ़ा ना निकली।' तन्नू ने इतराकर शिकायत की 'और मासूम के वास्ते कोठरी से निकल आया।'

'तुझे ई कहना न ठीक है, बाबा।' मन्नन की माँ ने कहा।

'बनिए मसखरी।' मासूम ने तन्नू से कहा।

'इसे भी गोद लीजिए।' मद्दू ने कहा।

'ए भाई, तोरा निखौरा पेट है कि भाड़! अबही त नाश्ता करके गये हो।' अक्बरी बी ने कहा।

नाश्ता करके तो मासूम भी गये थे। मन्नन ने टुकड़ा लगाया।

ई कौनो आज की बात ना है। ओके आज में कोई पाँच बरस बीमार ना पड़ा। अक्बरी बी के हृदय में उसक गयी 'ते लाग जलाथिउ आग।'

'और का! मौलना है न!' मन्नन ने कहा।

तन्नू मासूम के साथ बाहर चला गया।

मजलिस के बाद बुजुर्गों का अखाड़ा जम गया। मुसलिम लीग, कांग्रेस, पाकिस्तान, कुरान, हदीस, गांधीजी की तकरीर। तन्नू को इन बातों में कोई दिलचस्पी नहीं थी। अब्बास ने उसे कई बार गुफ्तगू में शरीक करना चाहा मगर वह हर बार टाल गया।

अब्बास को बुजुर्गों की मजलिस में बैठने और गुफ्तगू में हिस्सा लेने का हक मिल गया था। वह बच्चा तो था नहीं। अलीगढ़ यूनिवर्सिटी में पढ़ रहा था। सियासत के मामले में उसकी वाकफियत भी सबसे ज्यादा थी। वह कायदे आजम से मिल चुका था। लियाकत अली खाँ के साथ खाना खा चुका था। सर सुलतान के साथ दौरा कर चुका था और चौधरी खलीकुज्जमाँ का कहना था कि उससे बेहतर मुकर्रिर हिन्दुस्तान में दो-चार ही होंगे। उर्दू के कई अखबारों में उसकी तसवीर छप चुकी थी।

'अब्बास की तकरीरें तो अंग्रेजी अखबारों में भी छपती हैं।' हम्मादे मियाँ हम जुबान की नंगी तलवार लिये हर वक्त तैयार रहते थे। जहाँ गाँव या बिरादरी के किसी लड़के या बड़े की तारीफ हुई और वहाँ हम्मादे मियाँ ने घुमाकर हाथ मारा और किस्सा पाक। 'यह ठीक है कि हकीम अली कबीर का लड़का सद्दन डिप्टी सईदुर्रहमान जैसा हो चुका है। यह भी ठीक है कि मूनिस की अक्ल के चर्चे हैं। यह भी ठीक है कि सफ्दर मियाँ और बशीर मियाँ और वज़ीर मियाँ और अम्मू मियाँ ने वकालत की और रुपया कमाया। यह भी ठीक है कि शन्नू मियाँ मरहूम का लड़का तन्नू मेजर तनवीरुर्रहमान हो गया है। मगर इनमें से किसी की तसवीर अखबार में छपी? इनमें से किसी की तकरीर सुनने के लिए हजारों का मजमा इकट्ठा हुआ? डिप्टी हो

काम और बात है। पढ़ाने से ज़्यादा मुतबर्रक और कौन-सा पेशा हो सकता है साहब। कुर्बान हुसैन ने भी सुना लिया था कि अब्बास ने एक सुन्नी लड़की से शादी की है और वह उसे इसीलिए घर नहीं लाता कि वह मोहर्रम में चूड़ियाँ नहीं बढ़ा सकती। जब इस्माइल मिर्ज़ा ने सुना था कि अब घर की लड़कियाँ मर्सियों चूड़ियाँ पहनना छोड़ रही। उन्होंने तय किया था कि अबकी जो इस बार मोहर्रम की मातमी मजलिसों में शरीक होने के लिए आगरा जाएँगे तो अब्बास के घर बहू को देखेंगे। सुना जाता क्या होता है। असल चीज़ तो यह है कि सुन्नी लड़की मोमिन और उसका किताब पर ईमान हो। मिर्ज़ा इस्माइल ने मोहब्बत से निकाह न कर लिया होता तो ज़िन्दगी बड़ी खूबसूरत होती। सकीना के मरने के बाद उन्होंने इत्मीनान का एक साँस लिया था कि चलो, एक बात रह कर दखल न गया। वरना मिर्ज़ा ने सैफुन्निसा को रख लिया होता। मगर इस कम्बख्त ने तो निकाह किया और मुझसे उस [illegible] बग़ैर से जिसने निकाह पढ़ा दिया। मौलवी बनता है कम्बख्त। इतना भी नहीं सोचा कि एक मयख़ाने और [illegible] का निकाह कैसे हो सकता। सब सीधा सब उलट गया। मिर्ज़ा के अलग हो जाने से तो [illegible] कर [illegible] हो, मगर ज़्यादा परेशान यह हुआ था कि

के बाद सेहरा पढ़ा गया और हम्द व नात सेहरे में कुछ शायरी अशआर भी पढ़े गये तो गंगौलीवाला ने मौलवी बेदार का गला दबाया कि जवाब दो। मौलाना ने तुरन्त एक तार मौजूं किया और उसमें दरभंगिया को भंगिया नज़्म किया और यह ऐसा कि नुक्ता करते वक़्त 'दर' अलग हो जाय और भंगिया अलग। बात यह है कि बदरुलहसन और ज़ियाउलहसन की दादी महलगनी थीं। चुनांचे यह बात ससधियान वालों के दिल में तराज़ू हो गयी तो वहाँ के एक नस्साब ने हम्माद मियाँ को नवाब अवध और इंशाअल्लाह ख़ाँ इंशा का अनजाना वाला वाक़िया सुना दिया और बात बराबर हो गयी लेकिन ज़ाहिर है कि अल्लन-बन्ने से रिश्ते पर कोई हर्फ़ नहीं आया। इसलिए हम्माद मियाँ उस रजीवा और सुग़रा की शादी से मुतमइन थे। और अब तो दोनों के यहाँ माशाअल्लाह एक एक बच्चा भी हो चुका था। और हबीबा का बच्चा इस वक़्त उनकी गोद में पेशाब कर रहा था।

नन्नू के पेशाब पर उछल पड़ते हम्माद मियाँ को हँसी आ गयी। उसने पुचकार बच्चे की सुम सुम नाक का एक मुन्ना सा बोसा ले लिया। बच्चा मुस्करा दिया।

"यह तो बिलकुल रजीवा पर पड़ा है।" उसने कहा।

"तुम भी कमाल करते हो।" हम्माद मियाँ ने कहा, "आँख और नाक तो हसन मियाँ बल्कि सैयदनामदू की पायी है।" उनकी इस अदा पर जवाद मियाँ ने कन्धे उचकाये और फिर उन्हीं किनारों में अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरने लगे। इन सभी बातों की वजह से हम्माद मियाँ दिन ब दिन उत्तर पट्टी और दक्खिन पट्टी के लोगों से दूर होते जा रहे थे। लोगों का कहना था कि "भई, कभी बाहर जाओ तो बोलो अंग्रेज़ी फ़ारसी वाला। अपने घर में बाप दादा की ज़बान बिगाड़ने से क्या फ़ायदा!" इस बीच में हम्माद मियाँ शौकतमहल भी हो गये थे। उनके दरवाज़े पर एक भैंस की जगह दो भैंसें थीं और दोनों जमुनापारी थीं। इसलिए ये भी मियाँ लोगों का दिल उनकी तरफ़ से साफ़ नहीं था। एक दिन तो रब्बन बो ने कह दिया था, "ए हम्माद! इतना मत गर्राओ कि

मगर हम्माद मियाँ ने इन बातों का कोई असर क़ुबूल नहीं किया। वह जानते थे कि गाँव के सौ साहबान उनसे जलते हैं। मगर मियाँ लोगों के

जबान न इस्तेमाल का पाकीज़गी ना अख़्तियार कर नहीं सकते थे ना। उन्होंने ही इन्कार अपनी बाबा का भी गन्दी वाली बातचीत सिखा दिया था। बस माँ ने उनकी बात नहीं मानी थी। वह मर भी चुकी थी। उनकी लड़कियाँ यूँ तो घर-आँगन की ज़बान बोलतीं लेकिन जब भी हम्माद मियाँ अन्दर दाखिल होते थे तो लड़खड़ाकर बोलने लगतीं। तब यह मर्दों-वाली ज़बान निहायत थकी आवाज़ और मसनूई मालूम होती। वे उस ज़बान में दिल की बात बताने से डरती थीं। ज़ाहिर है कि किसी अजनबी का घर की बातें नहीं बतायी जातीं। इसलिए हम्माद मियाँ की मौजूदगी में उनके घर में घरेलू बातें हो नहीं होती थी। बल्कि ऐसा मालूम होता था जैसे कुछ अजनबी बाशिन्दे इत्तफ़ाक़ से यहाँ इकट्ठा हो गयी हैं और वक्त गुज़ारने के लिए निहायत तकल्लुफ़ से बातें कर रही हैं। चुनाँचे उनके घर का घरेलू माहौल ग़ायब हो गया था। उनकी बीवी झींकना शुरू करतीं

मैं ईश्वर कहती हूँ कि [illegible] फिर घर क्या जाना [illegible] का तुम लोगों का दिमाग ख़राब हो गया है उन्हें मोहल्ले में जाकर [illegible] निगोड़ी बोली। वह ज़बान को ताला देने लगतीं और ये बात हम से टल जाती और छोटी लाल वाला लड़की मौके का मुनासिब समझकर या तो बावर्चीख़ाने में चली जाती या इसरार से किसी कमरे में घुस जाती। नतीजा यह निकला कि उनकी [illegible] बेगम का झींकना भूलती जा रही थी और रोज़ हम्माद मियाँ उन पर बिगड़ते तुम आख़िर लड़कियों को डाँटती क्यों नहीं

मैं क्या करूँ मैं तो कहूँ [illegible] ज़बान हम से आया ना हमसे बातें [illegible] होता ना।

उस रात हम्माद मियाँ घर की इस बात से मायूस हो गये। लेकिन सबसे ज़्यादा ताज्जुब उन्हें उस वक्त हुआ जब वह अख़बार पढ़ते ग़ैरों की ज़बान में बात करते देखा। ज़ाहिर है कि वह अख़बार को ग़ौर से भी नहीं पढ़ते थे। क्योंकि अख़बार [illegible] दिया था और [illegible] मुश्किलों में पड़ गये थे। मगर अब तो [illegible] ज़बान में बात करना शुरू किया तो हम्माद मियाँ ने सोचा कि उर्दू का मसला में बड़ा नुकसान है। [illegible] तो यह कि वह [illegible] है और फिर यह कि किसकी [illegible] है।

क्या भाई तन्नू उन्होंने कहा सारी दुनिया घूम आये मगर उर्दू हऊ न छूटे ? मैं तो कहता हूँ

इ तू हर बरस में मैं क्या करते हो जा।" जवाद मियाँ ने हम्माद की बात काटी, 'तू त अइसा मिमियात हो जसे तोरे सिवा गाँव म कोई और हइय नाहीं।

अब्बास इस वक्त पाकिस्तान के हक म कोई तकरीर कर रहा था। वह बोलते-बोलते रुक गया। फिर उसने अपने बाप को रहमभरी निगाहों से देखा। मगर वह बेबस था। वह हम्माद मियाँ को गाँव के टेढ़े मेढ़े मासूम और सादे रोह रास्तों पर वापस नहीं ला सकता था।

मैं तो मुसलिम लीग का वोट देगा। हम्माद मियाँ ने जवाद मियाँ की बातों को नजरअन्दाज करके कहा। उन्हें बातों को नजरअन्दाज कर देने का फन आ गया था। वह बकसी की झल्लाहट के इन मुजाहिरों से एक किस्म की लज्ज़त हासिल किया करते थे और जब कोई उनसे इस किस्म की बात कहता था तो वह पुर-तकल्लुफ हो जाया करते थे।

जब तूने वोट न दीहो तब मुसलिम लीग के जीने म कौन रुकावट रह गया। जवाद मियाँ ने हिकारत से कहा।

आप काहे इनकी बतिया म टर म जान देत हैं ? फुस्सू मियाँ ने कहा।

अच्छा त चुप रहो! हम्माद मियाँ ने उसे घुड़क दिया हम फिनह गैयर हैं।

फुस्सू मियाँ ने अपनी बात आजिज़ी से कही थी। जवाद मियाँ ने अपनी बात रख की चोट कही। तमाम लोगों ने बात सुनी। मगर सब उसे पी गये। अब्बास का मन जरूर खोला मगर वह चुप रह गया क्योंकि वह जानता था कि जवाद मियाँ कुछ आत्मा नहीं हैं।

अब का इरादा है ? उसने तन्नू से पूछा ताकि जिन्नाजामक गामाशा टूट जाय इसरे मयार म हो।

अभी नहीं ! तन्नू ने उसे टाला 'हम बहुत थक गये हैं अब्बास भाई। अबकी हम कुछ ना मारे आर्मी। मोहरम के बाद हम गगौलिय म न रहेंगे। कुछ दिन साथ बन्दूक की आवाज भूल जायें। इसकी नाक म सास और मुँह

'और मैं त सुने रहिउँ कि मक्कनिया हम्माद की लड़की है। कुलसुम की न तीन तेरह 'मगर हज जियारत करके आ गये हैं। बेटा बेटी से बियाह कर लिहिन त कुछ ना बोले। ए बेटा त का अल्लाह मियाँ उनकी कोठिया से राख खा जइहें ?' उन्होंने सवाल किया मगर जवाब का इंतजार नहीं किया। 'मैं राह देख रहिउँ मगरिब के अजान की। ऊ साथ खैरियत से आ जायें त जूती से मैं हम्माद की नाक कटिहौं न काटूँ त कुलसुम नाम ना! हमरे घर में मौत हो गयी और कोनो जना कंधा देवे ना आये। उनकी आवाज़ आँसुओं में भीग गयी और उनकी बड़ी बड़ी आँखों से आँसू बह निकले, "रकियाने वाले और कुँवरपाल सिंह ना रहते त लाश ना उठती !"

सब ठीक हो जायेगा दादी। उसने कहा।

मैं त सोच लिये हौं कि मैदाने हश्र में हम्माद का दामन पकड़िहौं और अल्लाह मियाँ से कहिहौं पाक परवरदिगार ई उहै हम्माद मियाँ है।'

"अच्छा दादी, ज़रा कब्रों से हो आऊँ। वह खड़ा हो गया।

फातिहा पढ़े जा रहे आ ?

जी हाँ।

'जाओ बेटा, जो रह गये उनकी खिदमत करतआ। अब ईहे खिदमत रह गयी है। अबकी रहिया ने ?

जी हाँ।

त आते जाते रहिया बेटा। ई गंगौली के मियाँ लोग त हम लोग का बाहर कर दीहें न।

तन्नू इन घरेलू शिकवे शिकायतों पर शर्म से मर गया। उसकी समझ में यह बात कभी नहीं आयी कि कुलसुम ने फुन्नन मियाँ के लिए अपना बना बनाया घर क्यों छोड़ दिया ? मशहूर तो यह है कि औरतें [illegible] तहफ्फुज़ चाहती हैं और इसीलिए अपने शौहरों से अमरबेल की तरह लिपटी रहती हैं और उनके रास्ते में पायंदाज़ की तरह बिछी जाती है। लेकिन कुलसुम ने तो इस [illegible] तहफ्फुज़ को ठुकराकर फुन्नन मियाँ को कबूल किया। वह चाहती थी और अब वह सिर्फ एक लाश है। फुन्नन मियाँ जब चाहें उसे अलग कर दें। कोई उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता। इसलिए मुहब्बत कोई चीज़ है ज़रूर। वरना अब

कुलसुम से क्या छुपा है ? उसकी कसी-कसायी बच्चे अफ़ज़ल जैसी छातियाँ लटक चुकी थीं। उसका बदन ढीला पड़ चुका था। उसकी आँखें धुँधला गयी थीं। फिर भी वह इस घर में यों थी जैसे कोई ख़ामख़्वाह रहता है। यह भी नहीं था कि पुरुष मियाँ कोई बहुत ख़ूबसूरत थे। काला रंग, लम्बा तड़ंगा बदन और बिलकुल मामूली शक्ल और उस पर एक निहायत कसाइयाना मूँछ।

पम्मा दौड़कर उससे लिपट गयी और उसके हाथ को खींचकर तख़्त के कोने में ले गयी। कुलसुम ने मुसकराकर पम्मा को इस नज़र से देखा जैसे वह सहेली न हो, बल्कि कोई खिलौना हो। उसने उसे धकेल दिया। पम्मा रोने लगी।

उतार दो कुरतवा अमराई पाइ गुइयाँ मोर।

मैं काम नहीं जाना।

नहीं।

उसने पहले ख़ंजर उतारकर पलंग पर फेंका। मालिका उसकी कुलाई देखने लगी। फिर उसने कुर्ता उतारा। मालिका खिलखिलाकर हँस दी।

'ए नाश आये हो बनिया का कान काट ना बनवाते!' फ़ौज में हज्जाम ना हो ना हो।'

'आ गई कान निहार का कौन शक है ?' कुलसुम मुसकरायी। फिर वह तख़्त से मुख़ातिब हो गयी। काफ़ी ए बस बच्चा हाथ ए का। मैं बहुत मसरूफ़ है।

जा भागो।

मालिका ने कुर्ता पाया। एक अरसे बाद से विलायत बाद इस कुर्ते में उसकी बास मिल रही थी। वह बराबर याद दिला मुहम्मद हुसैन के बारे में सोचती रही थी और अब तक उसे कोई ख़बर नहीं मिली थी। कलकत्ते में मकान इतना था कि मज़दूरी ही नहीं मिलता था। और एक बार के अलावा मुहम्मद हुसैन ने मज़दूरी हासिल करने की कोशिश भी नहीं की थी। और एक बार भी मुहम्मद हुसैन यह लिखाइकर भेजने के बाद घर का पता था। वह एक बक्स आयी रही थी और उसके बाद बक्स ख़ाली रही थी और फिर यह

लगी थी। चूल्हे पर कुर्ता सुखाकर वह लायी। दामन पर बेशुमार शिकन पड़ गयी थी। तन्नू वह कुर्ता पहनकर बाहर निकल आया और कर्बला की तरफ चल पड़ा। फातिहा तो वह घर बैठे पढ़ सकता था। लेकिन वह गाँव के रास्तों और इमाम चौक और नुरुद्दीन शहीद के मज़ार और कर्बला को यह बता देना चाहता था कि वह वापस आ गया है।

ज़नाने इमामबाड़े पर उसे मिगदाद नज़र आया।

"का भाई, तू त अईसा डूब गये हो कि दिखाइये न देतेओ!" उसने कहा।

'आदाब!" मिगदाद ने कहा, "हम सुना रहा कि आप कल्ह आये। मिले को बहुत जी चाहता रहा बाकी मिलत नहीं। ए वक्त देखा कि आप फुस्सन मियाँ के हियाँ गये हैं तो इहाँ खड़े हो गये कि शायद आप इधर से जाएँ।'

'का तू दरवाजे पर ना आत्या?"

"ना, हम ई कहत रहे तन्नू भाई कि एमें कोई में का मतलब कि हम काहे बियाह किया। हमरा जी चाहा और हम सफनिया से कर लिया बियाह। कोई के बाप का का गवा? बाकी सारे लोग ऊधम न मचा दिहिन। का हम्मे ई ना मालूम कि ऊ नाउन है! बाकी हम्मे त इहो मालूम है कि हमहूँ सैयद ना है। बाकी जना रहा कि अब्बा ई बतिया का बिलकुले भूल गए हैं। ऊ त तबहीं से सैयद हो गये हैं और अब त जब से बड़के अब्बा की शेरवानी पा गये हैं तब से अउरो मार इतराए लगे हैं। चढ़ के आए रहे हम्मे मारे। कहिन—निकल जाओ तुम इस मिलकियत से! हाँ साहब, ऊ त फारसी बोले लगे हैं न। हम कहा—हमहूँ देखें कि हम्मे इहाँ से कौन निकालता है! जब देखिन कि हम ना डरा रहे त चुपचाप घर निकल के चले गये। ए साहब आपका त ई मालूम होइहै कि पाकिस्तान कब बनी?"

"क्या, क्या पाकिस्तान जाने का इरादा है?"

'हम ना जाये वाले हैं कहीं। जाय ऊ लोग जिन्हें हल-बैल से शरम आती है। हम त किसान हैं तन्नू भाई। जहाँ हमरा खेत, हमरा जमीन—वहीं हम। हम ई पूछ रहे कि पाकिस्तान बन जाय त कोई तरह अब्बा का भेज देंगे।'

क्या ?

'सिलवनिया छोटा है।

हम तुम्हें बताए न भेजा रहा   मर्तुनिया की आवाज़ आयी 'आ तू हुआ सदा सब रहा रह आ

अरे तन्नू भाई आये हैं री !' सिद्दीक ने कहा।

सिद्दीक की रायी रायी गुनगुना रहा था। मर्तुनिया से शादी करने के बाद पहली मर्तबा सजदगाही उसने गुफ्तगू कर रहा था।

चलिए न तन्नू भाई एक मिनट को। हमारी मर्तुनिया का दम साथिए।

चलो।'

वह सिलवर अब भी वैसी ही छोटा था। दरवाजे पर अमरूद का पेड़ वैसे तरह खड़ा था। अलगनी उसी जगह पर थी और उस पर कुछ कपड़े सूख रहे थे। और छोटा-सा सहनचा में एक मचान पर एक फूल-सी बच्ची लगी हुई थी। वह उसी मचान पर बैठ गया।

'सलाम !' मर्तुनिया ने कहा।

उसने मर्तुनिया को देखा। वह अब भी इतना ही खूबसूरत था। बस उसमें एक सिर्फ इतना ही हुआ था कि वे आँखें जो हर वक्त शरारत से मुस्कराया करती थीं गम्भीर हो गया था।

कैसी है ?

ठीक है भैया हम इनसे बहुत बड़ा कारी हैं ना मान।

न का बियाह निहित मियाँ साथ हमरा ' सिद्दीक चहक उठा अब ये हम न मार साथ की बात है। ई बहनवा का समझे मैं ई ना आता तन्नू भैया कि हम न ना बियाह किया है। अब ई हमरा इज्जत है। मियाँ सावन की मौज का याद !

तन्नू ने कुर्ते की जेब से अपना बटुआ निकाला और पाँच रुपये का एक नोट बच्चा का साथ धार मुट्ठी में बन्द किया। फिर उसने मर्तुनिया की तरफ़ देखा दिया। लेकिन मर्तुनिया ने हाथ नहीं बढ़ाया। उसकी आँखें डबडबायी हुई थीं। सिद्दीक उस रात बार बार पूछा था। कई बार नदियों में डूबा

था। मगर इम वक्त तो तन्नू भइया भी थे। इस वक्त उसे ऐसा नहीं करना चाहिए था।

ले ले, तैं मिगदाद की बीवी हैं, त का हम लोग मुँह मुफ्त म देख लें?"

सफनिया ने हाथ बढ़ाकर रुपये ले लिये।

यह लड़की तो बहुत खूबसूरत है तुमसे भी ज्यादा खूबसूरत है। क्या नाम रखा है इसका?"

अहमदी'' मिगदाद ने बड़े गुरूर से कहा।

तन्नू हँस पड़ा।

'रह गयो तू चुगदे के चुगद। इहो काऊ नाम है? इतनी खूबसूरत लड़की का इतना बूढ़ा नाम। रहा हम रखते हैं इसका नाम नाज़िश शादाँ चच ठीक नजमुस्सहर रखो इसका नाम!

का रखें?" मिगदाद बौखला गया।

'नजमुस्सहर।' तन्नू ने कहा।

गाँवभर म अब्बा के सिवाय कोई और क मुँह स त इ निकल का ना है नजमोसार! एका मतलब का है?

'नजमोसार नहीं नजमुस्सहर सुबह का तारा!'

ना साहब ई नाम ना चलिहै। कौनो गाँववाला नाम बताइए। ई त मुँहा म ना निकलिहै। त पुकारेंगे का? तैं पुकार! उसने सफनिया से कहा।

सफुनिया चुप पड़ गयी।

अरे पुकार! उसने फिर कहा अब आप दम न रह तन्नू भाई, ई हरामज़ादी का!

ना निकलता त कम पुकारें? सफनिया ने शिकायतभरे लहजे म कहा।

कौनो अइसा नाम बताइए तन्नू भाई कि हमरे मुँह से निकल जाय और एह क। मिगदाद ने कहा अब्बा के पुकार क वास्ते हम अपनी लड़की का नाम ना रखेंगे।

अच्छा इ का नाम ' वह हार गया निकहत रखा।

इसका मतलब का होता है? मिगदाद ने पूछा।

गुनाह!

ई नाम त अच्छा है ... वह मरुनिया की तरफ मुड़ा।

हाँ। मरुनिया मुसकरा दी।

तभी डर हुई हम पता निहिस तन्नु नाह! मिठुआ ने बच्चों का तरह सुबक हुए कहा। फिर उसने उसका नाम मन ही मन में बाट लिया। वह हँसने लगी। मरुनिया ने तनकर उसे देखा लिया और मन में बमानी आवाजें निकालकर उसे बहलाने लगा।

ई का हरकत है ... तन्नु ने मिठुआ का डाँटा।

तभी नहिया हम्म बहुत अच्छा लगता है साहब!

तन्नु हँस पड़ा। इस मिठुआ का वह अनुभव के बच्चों के साथ मानस करता छोड़ गया था। और अब वहाँ मिठुआ उस बच्चा का बाप था और फिर बाप लिया के बाप बन गया। थोड़ा बदल जाएगी और हो सकता है कि फिर किसी और का गाँव का मजदूर बनिहाँ और घर के मालूम घर छोड़कर जग में जाना पड़। तो कहा न सम्भाली होना हो रहेगी? इस सवाल का जवाब वह नहीं दे सका चाहता था। बिना किसी मकसद के रहना बहुत मुश्किल काम होता है ... साथ आदमी न ऐसा काम करने की मंजिल भी गया

आप कहिए तन्नु ना हम अभाव आ गए। मिठुआ ने कहा।

... वह बात ... न। कहा मैं भी साथ ... । अब न हम

"ओही का है। लडाई म मार पसा कमाक ढेर लगा दीहिन। सुन रहें कि फौजवालन को गल्ला सप्लाई करता रहा। और कोनो एही पर बस थोड़े ही है। रजक्वा कुजडा याद है न आपको ? साला कल तक टोकरी लिये चिल्लाता फिरता रहा। आज आही की एक ठा कोठी है और अब ऊ रजक्वा ना है, शेख मुहम्मद रज्जाक कुरशी हो गया है। गाँवभर मे जउन मकान इंट का दिखायी दे समझ लीजिए कि लडाई क रईस हैं। एक ठो आप लोग है कि अहे मिट्टी का मकाम खला है कानी कइम।'

सलाम, मीर साहब। अच्छे रह !" तन्नू न पूछा।

आ न्ने भए मियाँ अब मरे का दिन नगीचा रहा। अब अच्छे रह का दिन है ? आप कब आय ?'

कल।

'शन्नू मियाँ बहुत बवक्त मर गय। जउन आज रहत त आप देख के कइमा खुश हाते। शरबत अरबत मनवाएँ ?

'नहीं शुक्रिया।'

ई हमरा पोता है मुहम्मद सिद्दीक। फकार का लडका। कलकत्ते म पढ रहा। कानी कौन दरजे म " उन्हा एक नौजवान की तरफ इशारा करके कहा कौन दरजे म रे ?

'बी० काम०।' फकीरे क लडके मुहम्मद सिद्दीक न कहा।

अच्छा, हाजी साहब ! तन्नू इतना कहकर चल पडा।

हाजी साहब बैठ गय। मुहम्मद सिद्दीक हाजी गुलजार स उलझ पडा।

'का है ई मियाँ लोगन के पास की आप हाट मीना म्इड हो गये।

काह ? हाजी साहब बाल जमीदारी है रहा और काह ?'

तन्नू न य बातें नही सुनी क्योंकि वह तो एक गन्धिया के प्यास की तरह गाँव की हर आवाज का पी जाने म मशगूल था। लकिन चलत चलत रहमू हज्जाम क घर पहुँचकर वह रुक गया। वहाँ अब काइ घर नहीं था। एक कुआ-सा था। कुछ गिरी-पडी दीवारें थीं और गिरे हुए दालान क सामन लगौरी इंटों वाला हमाम चौर बहुत उदास नजर आ रहा था।

गन्धिया कहाँ गया ?

'काना कहाँ गया।' निगार न कहा।

"बाबा "

देखा का, नन्न भाइ ?' मिश्दार न उसका बात काटा, "हम इ ग्रवाज पर बगत तक आत रह। इनों क बाजवार तयार न भए त हम गाज़ीपुर स स्वन रचा गइ अथवा बाजवालन वा बुलाया। बगत म खाना हम रह और बनबहन रह और मौनवा बदार रह। एना पर नतान्नक्विन पट्टा का कन्ट्ट का सुनन हा गना। लाग कन्नि का ट बिरादरा का नाव का सवाल है। इहान अना कवार चौनरा म कहिन का या ता रहिमवा का गाव म निगन दा या बन्नुना क सामन तयार ना जाना। त रहिमवा टाट बाहर हा गया। फिर दाव म काइ बात हाय कुछ बच का तयार ना रहा। अन्ना मत निगन निर्दिन आवा। मह्इनिया मर गया। त क माचिन कि अब गगौना म हा है। बन एक दिन चला गया। हम त आस बइन कहा—त कहा जा गग हुना भाव गग गन निर्पी लागन का दस नेग। बाबा हन्नाम त कहन बन्न हराम। भाग गया।

गा अब इ नाजिया कौन बनाता है,' नन्न न चौक का तरफ इशारा किया।

"बहनिया।" निगार न कहा 'अच्छा, हम त अब जा रह नमस्ते।"

बच्चा।

निगार एक दना में मुड गया। नन्नू एक सिगरट सुलगाकर आग बढ गया।

"सलाम मियाँ।"

सलाम मीर साहब।

सलाम मदवा।

शेख रहीम ना।

बहता रह क हाई

इन्न-कुन्न पर इन आवाजा न माँ का तरह बचाए ना। और वह इन बच्चन भरी का इन्न इतन मनहूा नन रा दिया जा य आवाज नहीं सुनो,

खुदा कसम।' तन्नू ने कहा, 'हम बड़ी बड़ी आँखवाली बहुत सी लन्दियन को देखा। बाकी अल्लाह कसम तोरे जैसी आँखवाली इक्का न दिखायी पड़ी। बाप रे बाप, ई तोरी आँख है। वाली में हाथी का डुबाव होइ है।'

सईदा खिलखिलाकर हँस पड़ी। फिर जल्दी जल्दी हँसी रोककर अपने गालों पर हलके हलके तमाचे मारने लगी, "तोबा-तोबा! खुदा हम्मे माफ करे। आठ मोहर्रम को हँसनेवाले पर खुदा की फटकार!"

ए भाई, तू त लखनऊ में से मुल्लानी हो गयी हो।' तन्नू ने कहा, "अब कोइ को आठ मोहर्रम को हँसी आय त उ का करे? का मुहवा में कपड़ा ठूँस ले!"

कोई ऐसी बातें काहे को करे या काहे को सुने जिसे आठ मोहर्रम को हँसी आय।" वह फिर लेट गयी, और तन्नू की तरफ करवट लेकर फिर आँगन पर अपनी कलम की उँगली से लकीरें खींचने लगी। उसके बालों की एक लट छूट आयी। तन्नू ने हाथ बढ़ाकर उस लट को उसके कान की जड़ में फँसा दिया।

वह खिड़की पट से खुली जो फुन्नू मियाँ और अब्बू मियाँ के घरों को मिलाती थी। सबसे पहले अब्बू मियाँ की बीवी दाखिल हुई, फिर खानदान की और औरतें। लेकिन तन्नू और सईदा ने उनके आने का नोटिस नहीं लिया। वे लेटे गप करते रहे। दस्तरख्वान दोनों पलंगों पर कई लड़कियाँ और कई औरतें बैठ गयीं। तन्नू तो फिर भी लेटा रहा, लेकिन सईदा को आनेवालियों के लिए जगह बनाने के लिए उठ जाना पड़ा।

"ए तन्नू!" रास्ते में अब्बू मियाँ की बीवी की आवाज आयी, "तुम सईदा के अब्बा पूछते रहे।"

"जी अच्छा।" तन्नू खड़ा हो गया।

"लौट!" अब्बू मियाँ की बीवी चमकीं, "ई कौन तरीका है कि लड़का दस्त लिये के बाद आवा त आवा, कोई बैठा ना देना। ई लखनऊ से पढ़ा के आ रहा। त बड़ा बना!"

तन्नू फिर लेट गया।

मस्जिद जो आखिर मस्जिदवाले दलान पर थमा तो मस्जिद के लिए बिलकुल जगह नहीं रह गया।

ईद का बाजा! वह मुस्कराया। वह इस दलान में उठकर नन्नू के सिरहाने आ बैठा। नन्नू का सिर उसकी बगलों-बगल गोदी में सिमट गया। मईना उसके नन्हे-नन्हे बालों में अपनी उँगलियों से लकीरें खींचने लगी। तमाम औरतें बैठ वक्त मुनासिब मौजूआत पर बातें करने लगीं और छोटे बच्चों को पुचकारने लगीं। नन्नू इन मासूम आवाजों के सुनने में लम्बी-लम्बी पलकें बन्द करता। मईना की उँगलियों का लम्स सारा गाल चूमता। उसकी आँखें बन्द होने लगीं।

'ए भाई, कहाँ तक भाई है?' मद्दू ने दरवाजे से हाँक लगायी। नन्नू की आँख खुल गयी।

'क्या है जी?'

'हम निकल!' मद्दू बोला, 'हम गोश्त ढूँढ आये।' चलिए अच्छा शाम पर बैठ मार बमक रहे।

'बस!' नन्नू ने अपने बालों से मईना की उँगलियाँ निकाल दीं। मईना ने उसके सारे बाल बिगाड़ दिये। वह हँसता हुआ बाहर हो गया।

वह ढोल सुनने के लिए उधर हाफ़िज़ घर में शामिल हुआ मगर उस पर ढोल नहीं रहा। मिन्नू मियाँ और रज्जब मियाँ भी मौजूद थे। मिन्नू मियाँ अचकनी की तो बातें कर रहे थे और रज्जब मियाँ मुरदा को गिना रहे थे और मुर्गी के नीचे मुन रहे थे। मुंशी नियामत मस्जिद से कोई नौहा पढ़कर की वापिस कर रहे। और उनका गला भी रुँधा उमगा हुई थी।

ढोल बजाकर मुनीम तर तरफ़ गरम गया। नन्नू मासूम और मुनिम के बाप में बैठ गया।

'सुनो भैया रज्जब मामू की ढोल तो बिलकुल ठीक है,' बकार मियाँ कह रहे थे, 'बात यही है कि हम लोग इस गाँव के जमींदार हैं और इस गाँव में ताज़िया का एक भी मन्दिर नहीं।'

'हाँ भई रज्जब!' मिन्नू मियाँ अचकनी की बात अलमस्ती करके मुस्किरा रहे, 'ढोल बुरा लगता है। एक तो मन्दिर में है ही चाहिए।'

मामू, मस्जिद बनाना तो मुश्किल नहीं है।' बशीर मियाँ ने कहा, "मगर "

'नहीं, नहीं भया!' वज़ीर मियाँ ने कहा 'यह बात नहीं है। यह मस्जिद अंजुमन हुसनिया की होगी और इसकी तामीर में सिर्फ इस गाँव के सैयदों का पैसा लगेगा। तमाम सैयदों का पैसा लगेगा। दोनों पट्टी के बीच में गली के किनारे बन जाय। बड़ी बहारदार जगह है। बरसात में तो बिलकुल ताजमहल लगेगी।

ठीक है, मुझे कोई एतराज़ नहीं। बशीर मियाँ ने कहा।

तो फिर अब की अंजुमन में ई तजवीज़ रख दी जाए।' सिब्तू मियाँ ने कहा।

'कौन तजवीज़ रख रहओ ?' अब्बू मियाँ आ गये।

आदाब बूबू!' उन्होंने अकबरी बी को सलाम किया।

एक मस्जिद बनवाने का इरादा है भाई। शब्बर मियाँ ने कहा।

नमाज़ी पढ़ैवाला है कोई कि मस्जिदे बिना बड़ा नुक़सान हो रहा!' अब्बू मियाँ बोले।

ए अब्बू! अकबरी बी चमकीं अब तू मस्जिदों बनाए की मुख़ालफ़त कर रहओ भइया

नाहीं, बूबू!' अब्बू मियाँ बोले, हम त इत्तिफ़ाक़न पूछ लिया। र बिरानी मस्जिद से त ई अच्छा है कि मस्जिद ना रहे। घर में देख लीजिए— शम्मू मिग्गा मूनिस, मासूम भदद् नन्नू माशाअल्लाह से इत्ते बच्चे हैं कौनो का नमाज़ पढ़े का शौक है? उन्होंने सवाल किया त आख़िर मस्जिदवा के वास्ते बनिहै? का जिन्नात लोगन के वास्ते?

मगर अब्बू मियाँ की मुख़ालफ़त के बावजूद ग्यारह मोहर्रम को अंजुमन हुसनिया के जलसे में एक मस्जिद की तामीर की तजवीज़ मंज़ूर हो गयी। यह भी मंज़ूर हो गया कि उसकी तामीर में सिर्फ़ सैयदों के मोमनात का पैसा लगेगा कोई आम चन्दा नहीं किया जाएगा। सादात की जगह मोमनीन न इसलिए न सी कि गज़नन और उस्ताद ने कहा कि क्या ये सुन्नियों की ही

मस्जिद में नमाज़ पढ़ने लगा ? फुन्नन मियाँ ने उनकी बात नज़रअन्दाज़ करके तामीरे मस्जिद में उन्हें भी शरीक कर लिया। मज्जन ने चार रुपए नक़द दिए और बीस रुपए का वायदा किया। मुख़्तार ने एक रुपया नक़द दिया और पाँच रुपए का वायदा किया। तन्नू ने दस रुपए नक़द देकर एक सौ ग्यारह रुपया का वायदा किया और यूँ कुल मिलाकर ग्यारह रुपए नक़द और तीन सौ इकतालीस रुपए बारह आने का ज़बानी चन्दा हुआ। मौलवी ने हर वायदे पर ब आवाज़ बुलन्द दुरूद पढ़ा। चूँकि मौलवी बेदार अली मौलवी थे इसलिए उन्होंने ही पहला फ़ायदा उठाया।

बारह मोहर्रम के बाद मन्सूर बग़ैर गंगौली वापस हो गया। ग़ाज़ीपुर के क़ाफ़िले एक-एक रवाना हो गए। सईदा ने तन्नू से पूछा: तन्नू भाई ग़ज़ल लिखिएगा ना ?

हाँ, तन्नू ने कहा, लिखूँगा जब आप अलीगढ़ में रहेंगी।

सईदा चुप हो गई और चली गई। तन्नू उदास हो गया और अपने दरवाज़े पर वापस आ गया। मगर दरवाज़े पर क्या रखा था। सद्दन का चबूतरा पर कोई ग़मगुसार नहीं था। फुन्नन उठ चुका था। मिसरी कुँआ जा चुका था। सब लोग अपने-अपने घर हो गए थे। तन्नू सोचा कि मोहर्रम के बाद गंगौली में रहकर वक़्त गुज़ारना क्या है? उसे भी सब के साथ चला जाना चाहिए था। वह एक दफ़ा फिर उठकर सईदा के दरवाज़े में झाँकने लगा और फिर वापस आकर उसकी अम्माँ और यह कहा कि सईदा से उसका रिश्ता तय हो चुका है। मगर क्या हो चुका है ? उसने सवाल किया। अगर मैं लड़ाई में काम आ जाता तो ? तो क्या मगर किसी सईदा का ख़्याल के बारे में सोचा ... तो फिर सईदा से मैं क्या कहूँ ? सईदा ने जब लिखा कि नहीं ... मगर शरीफ़ है वह बुज़ुर्ग

क्या कह रहे हो ? अभी किसी से मत कहो।

वह कमरे में जाकर बैठ गया। सिरहाने की खिड़की से उसने ... लिया लिया। ... नहीं। वह सही हो गया ... मोहर्रम के बाद सब गंगौली ख़ाली हो जाता है।

हाँ ... अब दिन ... गंगौली में ... आवाज़

हैं। बस उधर इमाम गए इधर घर भाँय भाँय कर लगा। वह रान नग ! ए हम्माद ! आँसू पोछकर उन्होंने हाँक लगायी।

जी ! हम्माद मियाँ ने अपने कमरे में झाँककर जवाब दिया।

तनी हुक्का भिजवाओ भाइ

'ले आ रहे।

सुना रही कि शब्बू मरहूम नारी निस्बत लगा गय रहे ?' अब्बू मियाँ ने नरम हुए कहा।

जी, हाँ।

और ई बात मरहूम उस वक्त पर कहिन कि सिवाए फुम्मू के कोई ना रहा उनके पास।

जी ! तन्नू चौंक पड़ा।

और का बेटा खुदा का शुक्र है कि फुम्मू रहे नाहीं त उनकी आखिरी ख्वाहिश तूहे कस मालूम होती।

आप कहना क्या चाहते हैं दादा ! तन्नू ने पूछा।

तुम उनको मजबूर क्या कर रहे हो ? हम्माद ने मालान से कलम रखते हुए कहा और भई अगर शब्बू भाई मरहूम की यही ख्वाहिश होती तो क्या वह कभी इसका जिक्र न करते !

मगर दा

अगर मगर का कर रहिआ, बेटा ? अब्बू मियाँ बोले "तू न माशा अल्लाह से मजरू हो गये हो सभ लोग चाहिन कि नाम अपनी बेटी बियाहें।

तन्नू का दिल जोर जोर से धड़कने लगा।

इस निस्बत का क्या मतलब ! हम्माद मियाँ ने पूछा।

भाई अबही हम फैसला ना किया है। अब्बू मियाँ ने कहा, 'हम फुम्मू की तरफ कोनो जल्दी न ना है न हमारी नदरी में कोनो गगरी है। ई ठीक है कि लड़का इंजीनियर है। बाकी ऊ जरा कमसन है। दुलहिन की शक्ल अच्छी है। बाकी तनख्वाह-ननख्वाह भर की आमदनी है। चार सौ तनख्वाह में कौने बुरी ना होती, बाकी इंजीनियर फिर इंजीनियर है।

तन्नू के दिल की धड़कन की रफ्तार मामूल पर आ गयी। वह फिर उदास हो गया।

'अलीगढ़ में न कि हुस्नाल भर की लड़कियाँ आती हैं न पढ़े। न घर काज सब करती हैं। और माशाअल्लाह से हजारों में एक है।

मैं तो कहता हूँ करम को छोड़िए। असल चीज़ आमदनी है। अल्लाह का नाम लेकर उसी इंजीनियर वाला रिश्ता कबूल कर लीजिए।

इस्तखारा निकलवा के कबूल करेंगे।'

'और अगर शादी के लिए इस्तखारा मना आ गया तो?' तन्नू ने पूछा।

'क्या कोई जबरदस्ती है कि दोनों ही बार मना आ जाए।' अम्मू मियाँ बोले, 'ये हो सकता है इस मौलवी साहब से तो निकलवा रहे हैं। हम ने अहद्या नसिरुल मिल्लत से निकलवायेंगे इस्तखारा। मौलवी साहब क्या जानें इस्तखारा देखना ... बुजुर्गों का खयाल करके ही चुप हो गया वरना काम तो उन्होंने ऐसा किया था कि

तन्नू अन्दर चला गया। घर भर की निगाहों में मसरूफ़ियत थी क्योंकि वह तो मोहर्रम में भी नहीं आयी थी। दिल्ली की निगाहों में ... बच्चों के गाने और रमज़ानिया के पकवान की आवाज आ रही थी। ... के पेड़ पर अब भी ... पर मोहर्रम के ... नहीं जाता। वह ... जनानखाने में चला गया। वहाँ क्या था। हर तरफ ... सन्नाटा था। ... पर बैठा हुआ एक कौवा अपने पर नोच रहा था।

वह जनाने इमामबाड़े से होता हुआ मिश्कू मियाँ के जनानखाने में चला गया। वहाँ भी सन्नाटा था। खिड़की खुली हुई थी और अम्मू मियाँ के घर से आवाजें आ रही थीं। ... की बातें हो रही थीं। अम्मू मियाँ की बाबा किसी और बाबो को समझा रहे थे कि कैसा वसीअत और कम भाई साहब— आप ... विषय में कर दिया। अब ... कि ... की बात में भूल गये ... कर दिया रहा। ... वसीअत ... किस्सा ... से बताइए ... दिन।

वह अब्बू मियाँ के जनानख़ाने में जाकर उस आँगन और उस दालान और उन कमरों में साँस लेना चाहता था जो थोड़ी देर पहले तक सईदा के वुजूद की ख़ुशबू से बसे हुए थे। मगर सईदा की माँ की आवाज़ ने जब खिड़की का दरवाज़ा धड़ से बन्द कर दिया। वह सिन्नू मियाँ के वीरान जनानख़ाने के आँगन में एक बुझी हुई मोमबत्ती की तरह खड़ा रह गया। क्या सच है कि अब्बा ने वसीयत नहीं की? अगर न की हो तो कम-से-कम यह तो हो ही सकता है कि सईदा के लिए उसका पयाम जाए और अब्बू मियाँ इन्कार कर दें। इन्कार का वह ख़त पढ़कर इत्मीनान हो जाएगा कि सईदा एक परछाईं है जिसको छूना भी दुश्वार है और न छूना भी मुहाल। उसे अपना यह इश्क़ बहुत अजीब मालूम हुआ। चन्द दिनों पहले तक उसे सिर्फ़ यह मालूम था कि वह सईदा से इश्क़ करता है। उसके ख़्वाब देखना चाहता है और उसे हासिल करना चाहता है। ये घरेलू इश्क़ कितने अजीब होते हैं। इतने सादे और बरजस्ता होते हैं ये इश्क़ कि इन पर यक़ीन नहीं आता। उसने सईदा की क़ुरबत के एक-एक लमहे को याद किया। मगर वह किसी नतीजे पर न पहुँच सका। कभी उसका जिस्म कहता कि ठीक है। और कभी उसकी दानिशमन्दी कहती कि ठीक नहीं है। सईदा तनहाई और मजमे में कोई फ़र्क़ ही नहीं करती थी। इस वीरान आँगन में सईदा के ख़याल ने उसे पसपा कर दिया। वह तेरह-चौदह साल के फ़र्क़ को भूल गया और उसने अपने दिल को समझा लिया कि अब्बा ने कोई वसीयत नहीं की थी।

'ए भाई तू अँगनवा में खड़ा का कर रहेआ?' अब्बू मियाँ की बीवी ने खिड़की से झाँककर कहा।

आप की ही आन रहे कि सिर चकरा गया। वह साफ़ झूठ बोला। मगर क्या वह वाक़ई झूठ बोला था?

अल्ला रहम करे! का बात है बेटा? वह घबरा गयी।

कुछ नहीं भाभी। बस चकराकर खड़ा हो गया। बहुत ज़ख़्म खाए हैं कमज़ोर हो गया हूँ।

आओ। घर के भीतर चले आओ।

नहीं भाभी।

अच्छा बन्दा था। जन्नत नसीब है। वह उसे अपने घर घसीट ले गया। उन्होंने उसे पलंग पर लिटा दिया। वह उस बिस्तर को पहचान गया। सन्दरा उसी बिस्तर पर सोया करती थी। तकिये से टूटा हुआ एक सियाह रेशमी बाल लगा हुआ था। उसने वह बाल उठा लिया। वह उस बाल से खेलने लगा।

एक ठो बात पूछें भाई?

पूछो, बेटा।

का अब्बा मरहूम वाकई बगावत करिहन रहा?

अम्मू मियाँ की बातें अपनी मालगाड़ी के लिए मशहूर थीं। वह तकरीबन दस हजार साल्या और जवानमर्द थे लेकिन शायद वह इस सवाल के लिए तैयार न थे इसलिए वह फौरन जवाब न दे पाया। पान लगाने लगा। जब गिलौरी तन्नू के मुँह में डालकर एक छोटा-सा पान के पत्ते पर उन्होंने अपने लिए पान लगाना शुरू किया।

आपने बताया नहीं?

अब मैं का बताऊँ? का मालुम करिहन हो।

आप कहाँ से हो सकता है या करिहन हो! तन्नू ने कहा।

हाय बाबा से ना हो सकता बाबा। वह रुक गया। करिहन हो या ना करिहन हो। आखिर तू काहे को ई बियाह करब करिहो। ई मनमा में गुस्सा न लागा कोनो बुराई न ना है ना।

बुराई तो नहीं है दादा। मगर मैं तो क्या करूँ।

ए बेटा। ओ तू अब इनकार किया तो बड़ा बदनामी होई और मुन्नू का अब्बा नौशिदा और सर्वेश्वरन का बियाह कर रहा है।

गाँव का हर कुँआरी लड़का ना ना में ब्याह नहीं कर सकता। मुस्लिम ने कर दे हमू से कर दें लिए से कर दें।

तारीखियो बात। मैं मामा के पास मुन्नू का लड़का रह गया है?

ना बेटा

अबही मालामसरा ने बरोतो दिया है और सबो मजहब के जरूर और शिबू भाई का दिया रहा। मुन्नू करार बगावतनामा पर दस्तखत करें।

मैं नहीं करूँगा यह शादी।' वह उठा और अब्बू मियाँ की बीवी के जवाब का इंतज़ार किये बिना निकल गया। फुस्सू मियाँ के यहाँ जाने को जी नहीं चाहा। उसे रब्बन बी, सकीना और फुस्सू मियाँ की खातिर बहुत अजीब लगती थी। वह जाता तो घर में भूचाल आ जाता। सलमा झट से बावर्चीख़ाने में घुस जाती। एक बार तो जब उसे भागने को कोई जगह नहीं मिली और पाखाना ही करीब नज़र आया तो वह बिना लोटा लिए झट से पाखाने में चली गयी। तन्नू हँस दिया। फिर मजूर मियाँ की तमाम लड़कियों ने उसे घेर लिया। और रब्बन बी और सकीना ने लड़कियों को डाँट डाँट और बास-बासकर अलग करना शुरू कर दिया। और एक बार तो उसने घरेलू तकल्लुफ़ का लुत्फ़ लिया। मगर फिर उसका जी ऊब गया। उसे यह बिलकुल अच्छा नहीं लगता था कि वह आये तो लेटे हुए फुस्सू मियाँ उठ जाएँ। वह तो चाहता था कि हमेशा की तरह वह जाय और रब्बन बी भी उसी चारपाई पर लेट जाय और उसे अपने बाजुओं में दबाय और वह हँसने लगे और खाँसने लगे। मगर रब्बन बी यह नहीं कर सकती थी। ख़याल फिर सईदा का आ गया। और फिर उसने महसूस किया कि उसके दिल पर कोई बड़ा बोझ है। वह गर्दन झुकाये हुए सिब्तू भाई के दरवाज़े से बाहर निकला और नूरुद्दीन शहीद के मज़ार की तरफ़ चला गया।

लेकिन अब्बू मियाँ की बीवी के लिए तन्नू के इनकार को चुपचाप पी जाना आसान नहीं था। यह सब एक खानदान के लोग थे। लेकिन एक-दूसरे की परेशानियों में शरीक होने के बावजूद थोड़ी सी जलन भी हासिल करते थे। ये तमाम लोग एक-दूसरे से गहरी मुहब्बत करते थे। लेकिन उनकी मुहब्बत इस कमीना जलन के रास्ते में कभी हायल नहीं हुआ करती थी। और फिर सईदा के अलीगढ़ जाने पर सबसे ज़्यादा जो नाक चढ़ा था, वह रब्बन बी की ही थी। इसलिए वह झप से एक पान खाकर सिब्तू के ज़रिये मजूर मियाँ के घर गयी।

'आदाब ममानी!' मजूर मियाँ ने कहा।

'जीते रहो बेटा।' अब्बू मियाँ की बीवी मजूर मियाँ की फूआ दरर

रहमन खाँ की बातचीत के बाद चौपाल बैठ गया। सकीना पान लगाने लगीं। 'मुहर्रम के बाद न गरीबों की शादी न जी हराम लगता है।'

'और का कहिनी।' रहमन खाँ ने कहा 'भूख आदमियन को जिन्दा रखा।'

'मन्नो के निकाह का कोई तारीख पक्की कि ना?'

'अब हम त मुहर्रम खतम भया है तारीख कइसे पड़ रहे हैं। नौ रबीउल-अव्वल के बाद न बात निकालें।' रहमन खाँ बोलीं 'मैं तो सोचन रहिउ कि रजब के चाँद में ब्याह होत माशाअल्लाह से।'

'पक्का तक दो तारीख है।' मजूर मियाँ बोले 'गाजीपुर जइहें तो बड़े भइया से बातचीत करेंगे।'

'काहे मन्नुआ से पूछ लिया है कि ना?' अब्बू मियाँ की बीवी बोलीं।

'मन्नू से पूछे का का जरूरत है?' रहमन खाँ ने चमककर कहा 'हमरे यहाँ लड़का-लड़कियन से पूछे का रिवाज अबहीं ना भया है।'

'आप त जरा-सा बात पर लगत हैं बिगड़े जात।' अब्बू मियाँ की बीवी ने कहा 'मन्नू अबहीं साफ़ कहकर गए हैं कि हम कमाऊ आदमी से ना मानेंगे! का मालूम कहीं अटका है कि ना। हम ना करेंगे।'

'अरे! मन्नू कहिन है?' सकीना ने कहा।

'और नहीं तो का हम अपने मन से गढ़ लिया है!' अब्बू मियाँ की बीवी के चेहरे से उतर गयी। सकीना, मैं न कहती थी कि दौड़ी-दौड़ी आइके कि बच्चा... बड़ी जिद हुई गया। घर बदहवासी हुई चला गयी। उनके जाने के बाद आँगन में सन्नाटा छाया रहा। मजूर मियाँ उठ हुए हुक्के के कश लेने लगे। रहबा भी उठ गयी मगर फिर चौपाल हो उठ बैठी। बाबा ... मारो मन्नू के ... उनकी ना रही।

'हम चाहत का किस्मत फूटी है अम्मा!' मजूर मियाँ ने कहा 'नहीं तो का ई होता कि हमार का बिटियन की शादी हो। बाबा और अम्मा बैठ रह जाती।'

'किस्मत फूट गयी रहमत की!' रहमन का चिढ़ना का तरह चमकी 'का और किस्मत फाटत बाट! दुनिया में मन्नू के हमारा प्यारा लड़का ना

है ? ना करिहै न मत करें। उनकी करनी पटी मारी जूती की नाव पर है। हम त मरहूम की वसीअत का मुनकर चुप लगा गये। बाकी जब अह माटी मिट को अपन बाप की वसीअत का खयाल ना है त हम्म कौन मजबूरी है! का हम्म सरलो के वास्ते कोइ वर ना मिलिह ? खुदा न ख्वास्ता लडकन का अइसा काल ना पड गवा है। अउर इ अगू की दुलहिन आयी रही हमरा मजाक उडाये। का सईदा का बियाह न करिह।

'अब इ सब बात करे से का फायदा। आपकी जबनिया से त हम बिलकुल आजिज आ गये हैं।' मजूर मियां बोले 'अब मैंवनी ममानी और सईदा आपका का बिगाडिन है ?'

'आ त चुप रह। जा हमरी लडकी का बुरा चहइ ई बुराइ खुदा करिहै न ओका लडका के सामने अइहे। उन्हान दोनो हाथ बददुआ के लिये बुलन्द किये हे मौला मुश्किलकुशा! हम आप पर भरोसा करके सबर कर रहे।

बात शायद आगे न बढती लेकिन खिडकी खुली हुई थी और अब्बू मियां की बीवी पट के पीछे मौजूद थी। रब्बन बी ने जो बददुआ के लिये हाथ उठाया तो वह चमककर सामने आ गयीं और हमरी लडकी को कोई का कहिहै! जूती से जबनिया ना काट लेब।

त हमरी जबान कटब!' रब्बन बी बददुआ करना भूल गयीं।

हम आपका ना कह रहे हैं! बाबा कोई हमरी लडका का कुछ कहिहै त हम चुप ना रह सकते। ई गांववाले आकी पढायी लिखायी से जलायें बरू। सभ का ई जलन है कि काहे की लडका त ना पढी त मरदा बदन पड लीहिन।

ना हां दुलहिन और पढावा! ऊ त नौकरी करिहै क्रिस्टान की तरह।

नौकरी कर आके दुश्मन!

अ दुश्मन त हमेशा लागा है। रब्बन बा ने फौन बनावकर कहा बाबा हमरा लडका ना अंग्रेजी पढ़ रहा नाग गयी ना इ है कि नौकरी करिहै।'

त अम्मा आप चुप हो जाइए। फुन्नू ने बडा बदमाशी से कहा।

तू त अम्मा का अदगा चुप करा रहवा! अब्बू मियां की बीवी चमकी

'अहम हम ही वर रहे और ऊ निगावन कर रहा। अर वटी का वर न जुड रहा त मैं का कम। कौना मैं नन्नू म अपना लडका त वियाह ना रहिउ।'

'ताग लड़का एक आविता है कि कौना शरीफ घर म ओका वियाह हा। रब्बन वा न कहा 'अंग्रजा पढ़ा रहना त कौना अंग्रजा स ओ का वियाह कर गाग।'

हाँ नमिाग बूढ़ा! हमरा मना का कुछ कहियगा ना नहा त ठीक ना ।ड़।'

का कहिहा तैं।' अम्नू मियाँ का वादी थर थर काँपन लगा।

'ऊ जबान मड जहर जा मारी लड़का का कुछ कहिहै।'

जबान मड ताग।' रब्बन वी न मिसरे पर मिसरा लगाया।

अम्नू मियाँ का बीवा न तड म खिड़की बन्द कर ली और जजार 'गा।

य खिड़कियाँ जो एक मकान को दूसरे मकान स मिलाना हैं साल म दो एक बार गुस्स म बन्द भी जाना है और फिर कुछ दिना क बाद बिना बीच बचाव क खुल जाना है। फुम्नू मियाँ जानत थ कि इस तू-तू मैं-मैं का ननीजा यही होगा कि खिड़का बन्द हो जायगा। चुनांच जब खिड़की बन्द हुइ तो उन्होंने इत्मीनान का साँस ली। रब्बन वा काफी देर तक बड़बड़ानी रही। थाग दा दिन क बाद गुस्सा आ गया और फिर उम्म हवीबा भी आयी। हसा-खुशी करक ननदड़ा का बातिया का शानियाँ भी आन लगा, तब रब्बन वा का माथा ठनका। उन्हें पड़ान हो गया कि नन्नू क इन्कार की खबर गार मोह म फल चुका है।

तमाम बातिया न एक जबान होकर नन्न का बुराइ शुरू का कि उस अपन माहम बाप का बुढ़ापन का ख्याल करना चाहिए था। लगा हुई निस्बत का तर जाना यू भी अच्छा नहा हाना। किसी का जबान तो पकड़ा नहा जा सकता। मगर य तमाम बातियाँ एक हद तक दिखावा दिल में खुश भी थी कि इस कम्बख्त उनका लड़कियाँ क हिस्स म नहीं आया। अलबत्ता सलमा स दर दुःख का बुझना किसी न मुनासिब नहीं का कि उस पर क्या गुजर रहा है। मगर तमाम मोहल्ला लड़कियाँ का तरह एक निशाना। मान्ताने और

बेवकूफ़ लड़की थी। बस फूहड़ वह नहीं थी। उसे क्रोशिये की बेलें भी बनानी आती थीं। वह तकिये का गिलाफ़ भी काढ़ सकती थी। घर में पलंग की तमाम चादरें उसी की काढ़ी हुई थीं। खाना पकाने में उसका जवाब नहीं था। क्योंकि रज़्ज़न बी और सकीना ने बावर्चीख़ाने का सारा तजुर्बा उसे घोलकर पिला दिया था। वह फर्राटे से उर्दू पढ़ सकती थी। हद तो यह है कि वह टूटी-फूटी उर्दू लिख भी लेती थी। चुनांचे जब वह तनहा होती और अपने बारे में सोचती तो अपने लड़के-लड़कियों के देहाती नाम न रखती। बल्कि वह इस क़िस्म के नाम रखती जो उन कहानियों में रखे जाते हैं जिन्हें उसने ग़ाज़ीपुर में मासूम के कमरे में रखे हुए रिसालों में पढ़ा था। नज़िश तावक्का, ताज, नीलो, सलमा, अहमदी, अकबरी, सरवरी किस्म के नाम न रखने का वह फ़ैसला कर चुकी थी। फिर जब उसकी और तन्नू की शादी की बातचीत शुरू हुई तो वह यह सोच-सोचकर ख़ुश होने लगी कि जब वह अपनी पहली लड़की का नाम सीमा या नज़िश रखेगी तो दद्दा किस क़दर बरहम होंगे। "नौज! ई कोई नाम है" पर अब तन्नू के एक ख़त ने उसे ख़्वाबों की तिलस्मी सरज़मीन से दूर फेंक दिया था। उसने रज़्ज़न बी और अब्बू मियां की बीवी की सारी बातें बावर्चीख़ाने में सुनी थीं। वह उस वक़्त चपातियां बना रही थी। आवाज़ें उसके वजूद में उतर रही थीं और उसके हाथ मशीन की तरह पटरे पर बेलन चला रहे थे। आटे के पेड़े पर पलेथन डाल रहे थे। तवे पर चपातियां उलट-पलट रहे थे। फिर वह चौंक पड़ी थी क्योंकि रज़्ज़न बी ने उसी का मातम शुरू कर दिया था। वह बहुत हैरान हुई कि अगर तन्नू भाई ने शादी से इनकार कर दिया तो इसमें उसका क्या क़सूर है। 'हां, इसमें कौन क़ुसूर है?' ज़ाहिर है कि उसके सवाल का जवाब देनेवाला कोई नहीं था।

तवे की आख़िरी चपाती उतारकर उसने रोटी की टोकरी पर कपड़ा उलट दिया। फिर हाथ धोकर दुपट्टे से पोंछती हुई वह बावर्चीख़ाने से आंगन में आ गयी। रज़्ज़न बी कलमदान संभाले शाकिरा अकबरी को ख़त लिख रही थीं। सकीना पलंग पर घिस-घिसकर आलू छील रही थी। फुन्नू मियां बाहर जा चुके थे।

वह चुपके से बाहर गलियारे में घुसकर सिन्नू मियां के घर की तरफ़

चली। वह जानती थी कि अच्छू मियाँ के यहाँ जाना इस वक्त मुनासिब न होगा। मगर वह घर में रहना नहीं चाहती थी। क्योंकि वह रोना नहीं चाहती थी। इसलिए वह जावेद मियाँ के घर चली जाना चाहती थी कि रहमान के साथ वाले कमरे जो कहना सब। मगर वह जैसे ही मिच्छू मियाँ के दरवाज़े पर पहुँची तन्नू से टकरा गया। बिलकुल टकरा गयी। उसका सिर तन्नू के सीने से टकराया। तन्नू ने उसे सँभालने के लिए हाथ बढ़ाया। रहमान वाले ने सिटका ... समझा कि सल्मा तन्नू की बाँहों में है। उसने गुस्से में खिड़की बंद कर ली। इसलिए वह यह न देख सका कि तन्नू ने उसे फ़ौरन अलग कर दिया और फिर मिच्छू मियाँ के मरदाने की तरफ़ चला गया। वह तो माधो जवाद मियाँ के पलंग की तरफ़ गया जहाँ वह बैठे हुए हुक्का पी रहे थे। वह पायंता बैठ गया और बोला... अब्बा से भी कहा।

कुछ मत कहो। जवाद मियाँ ने उसकी बात काटकर उसे खामोश किया।

... बोला। तभी बलिये देख है कि जो चाह रहा कि अलियाँ पुर गयी होती तो अच्छा रहता।

... क्या? जवाद मियाँ उठकर बैठ गये।

तन्नू सल्मा से विवाह ना करिए और उसको सिलहट्टा करिए।

... कह रहा है।

मैं बक-आर ना करिए। मैं अपनी आँख से देख हूँ। यह बाली ... क़यामत का आसार है। नहीं तो इस घर में सब ... रहा बाक़ी है न ... रहा। अम्मी ने ई गुस्सा पाए गिन्तु कि सल्मा का क्या हो गया है।

अच्छा हम ... से बहुत दिन से कहे दिन ... अब तो ... बात ... ग हम साथ बयान करें। जवाद मियाँ ने कहा।

मैं तो सुना है कि करना ... जब ... बयान करे पर हम ... सगार।

जवाद मियाँ ने साथ माना। वह ... से मुड़कर गयी। जवाद मियाँ उस ... दिन से। वह दरअसल उस पर नाराज़ नहीं थे। उन्हें तन्नू और सल्मा ... शिकायत थी जिसकी वजह से ... अपना ... का बड़ा सुनना पड़ा।

रहमान बो जमीन से उठकर कपड़े की मिट्टी झाड़ती हुई आँगन की तरफ चली। जवाद मियाँ बोले, "निकल ने ई बात मुँह से नहीं त मुँहवा झुलस देंगे।" वह बाहर आ गये जहाँ उनके बड़े बेटे कमाल उर्फ कम्मो का मदरसा जमा हुआ था। पास के जुलाहों और दागदार सैयदों और खरे गरीब सैयदों के लड़के लड़कियाँ दो का पहाड़ा याद करने में मशगूल थे और खुद कम्मो तीन टाँग की एक कुर्सी पर बैठा हुआ कोई किताब पढ़ रहा था। छोटा भाई फिदा हुसैन उर्फ फद्दू मदरसे को सख्त नापसन्द करता था। वह अभी-अभी खेत से वापस आया था, और खम्भे के एक ओर में उकड़ूँ बैठा हुआ बासी पी रहा था।

इस मदरसे ने जवाद मियाँ के घर की बहुत सी छोटी-मोटी ख्वाहिशों को पूरा कर दिया था। मसलन रहमान बो अब पैबन्द लगा कपड़ा नहीं पहन रही थीं। लड़कों के घर से गल्ला भी आता था और पैसा भी। कम्मो के स्कूल में कोई पचास लड़के-लड़कियाँ पहाड़ा याद करने और आम सिपारा और कायदा बगदादी पढ़ने आते थे। चार आने महीने फी बच्चे के हिसाब से कोई साढ़े बारह रुपये फीस के होते थे। लेकिन कभी पूरी फीस इकट्ठा नहीं हो पाती थी। मगर लगभग दस रुपये माहवार की आमदनी हो जाती थी। इसके अलावा फसल पर गल्ला आ जाता था। जुलाहों से कुछ गमछे और लुंगियाँ भी मिल जाती थीं। तीन-चार तोरा बीघे की खेती भी थी। इसलिए जवाद मियाँ के घर में एक हद तक आसूदगी थी। सबसे वाजह अलामत यह थी कि रहमान बो कम्मो का ब्याह करने के लिए सख्त बेचैन थीं। वह दिन रात एक बहू के ख्वाब देखा करती थीं। खुद जवाद मियाँ भी यही चाहते थे। मगर वह इसका इन्तजार कर रहे थे कि कम्मो डॉक्टरी शुरू कर ले तब रिश्ता ढूँढ़ा जाय। कम्मो के डॉक्टर होने की खबर को जवाद मियाँ और रहमान बो और फद्दू ने सीने में छुपा रखा था। क्योंकि अभी इजहार का वक्त अभी न था और नाराज करने में कोई फायदा भी न था। खुद कम्मो भी होमियोपैथी की किताब को कुरान शरीफ के जुजदान में रखता था और कभी-कभी रहल पर रखकर पढ़ता हुआ भी नजर आता था। चुनांचे गंगौली में यह मशहूर था कि कम्मो बड़ा मजहबी आदमी है। वह हर वक्त तिलावत किया करता है।

और अगर कोई न बदला न तो उसने दुनिया में दिलचस्पी लेना भी छोड़ दिया है। बस हर वक़्त कुरान है और वह है। किसी ने इस बात पर गौर नहीं किया कि इधर मुहर्रम या गरमी की छुट्टियों में जब सल्मा आ जाती है तो कम्मो की आँखों में एक चमक पैदा हो जाती है और वह अपनी माँ से हँस-हँसकर बातें करने लगता है और जब सल्मा चली जाती है तो कम्मो उदास हो जाता है। इस बात पर किसी ने इसलिए गौर नहीं किया कि यह गौर करने की बात ही नहीं थी। कहाँ अब्दु मियाँ का बड़ा बेटा और कहाँ नवाब मिर्ज़ा का इकलौता बेटा कम्मो। यह बात सिर्फ़ कम्मो को मालूम थी कि वह सल्मा के जाने के बाद उदास हो जाता है। लेकिन वह अपने आप से भी यह सवाल करने से डरता था कि ऐसा क्यों हो जाता है। वह तनहाई में भी सल्मा से बातें करने के बारे में नहीं सोचता था। लेकिन उसने यह ज़रूर तय कर लिया था कि वह शादी नहीं करेगा चुनांचे जब रहमान बी उसकी शादी की बात निकालतीं तो वह टाल जाता।

नवाब मिर्ज़ा ने कम्मो की पढ़ाई में शुरू [illegible] अपनी लम्बी दाढ़ी पर हाथ फेरा। कम्मो ने एक नज़र उन पर डालने के बाद फिर अपनी किताब पर नज़र जमा ली। उसे नवाब मिर्ज़ा से कोई प्यार नहीं था। वह उनसे एक हद तक नफ़रत ही करता था। वह भी कोई बाप हुआ कि बस जिसका नाम वतन में हवेली और जागीर। बाबा अब भी किसी और आदमी के नाम से पुकारा जाता हो। कमालुद्दीन वल्द सफ़दर नवाब हुसैन ज़ैदी—और माँ रहमान थी। कहा जाता है, मगर यह बात वह जानता था कि अपने पास है न उसका कोई इख़्तियार नहीं था इसलिए उसने दिल में अपनी माँ—दादा रहमान की बाबा और जवाद मियाँ की इज़्ज़त के लिए भी कोई इज़्ज़त नहीं था। लेकिन वह इसका इज़हार नहीं करता था, कभी-कभी तो उसे ऐसा लगता जैसे वह अपनी माँ से मुहब्बत करता है। ये मौके कम [illegible] जब नवाब मिर्ज़ा उसकी माँ को गालियाँ दे-देकर मार बैठते थे। वह उन मौकों पर बिलबिला उठता था। बाद में तू-तू मैं-मैं हो जाती थी। और फिर वह खोखला [illegible] सामान में नाम पाया वाली कुर्सी पर बैठकर यह सोचा करता था कि आख़िर वह इस गाँव में क्यों रहा है। कभी ऐसा

है इन कच्चे मकानों और गन्दी गलियों में। उसका जी चाहता था कि लोग उसे भी उसी तरह देखें जिस तरह और बापों के बेटों को देखते हैं। लेकिन इस गाँव में तो भंगियों चमारों तक को मालूम था कि वह हरामी है। उसके बाप की गोरी हड्डी उसे हलाली नहीं बना सकती थी। इसलिए वह गाँव के उन तमाम लोगों से जलता था जो हलाली थे। इसीलिए उसकी किसी बच्चे से दोस्ती ही नहीं हुई। वह मुनिस मासूम गिग्ग, शम्मू मन्नन—और हद तो यह है कि मिगदाद तक के साथ नहीं खेला। ये लम्बे टोलियों में निकलते, शोर करते शरारतें करते बागों में फल तोड़ते, खेतों से गन्ने चुराते और कम्मो अकेला उन्हें देखा करता। गाँव भर में फुन्नन मियाँ के लड़कों के सिवाय कोई और उस-जैसा था भी नहीं। मगर फुन्नन मियाँ के लड़के सैयदजादों में घुल मिल गये थे। इसलिए उसने फुन्नन मियाँ के लड़कों से भी दोस्ती नहीं की। नतीजे में उसका बचपन एक गहरे सन्नाटे में गुज़रा। उसे बचपन का कोई मज़ा ही नहीं आता था। जब वह जवान होने लगा तब भी उस जानलेवा सन्नाटे ने उसका पिण्ड नहीं छोड़ा। फ़र्क बस इतना हुआ कि वह पाखाने में ज़्यादा वक्त गुज़ारने लगा। और उसका मुँह पीला पड़ने लगा। और उसकी आँखों के गिर्द काले हलके पड़ने लगे। उन्हीं दिनों तक्कन मियाँ उसे गोदाम ले गये। फिर एक दिन जवाद मियाँ ने उसे तक्कन मियाँ के साथ गोदाम से उतरते देख लिया। उन्होंने तक्कन मियाँ को तो वहीं लाखों सुना डालीं और फिर कम्मो को वहीं से पीटते हुए घर तक लाये। इतना ज़रूर हुआ कि यह बात सारे गाँव में फैल गयी कि तक्कन मियाँ कम्मो को गोदाम ले गये थे। उनके साथ गोदाम जाने का मतलब सबको मालूम था। लड़कों ने जुमलेबाज़ी शुरू कर दी और कम्मो ने घर से निकलना बिलकुल बन्द कर दिया। लेकिन उसने तक्कन मियाँ को माफ़ नहीं किया। और एक दिन वह लाठी लेकर तक्कन मियाँ पर टूट पड़ा। अगर ठीक उसी वक्त कहीं से फुन्नन मियाँ न आ जाते तो शायद उसने तक्कन मियाँ को मार डाला होता। उस दिन से गाँव के लड़कों ने डर के मारे जुमलेबाज़ी भी बन्द कर दी। और कम्मो के चारों तरफ़ फिर वही जाना-पहचाना सन्नाटा छा गया। वह इस सन्नाटे में जूझ रहा था क्योंकि उसे यह नहीं मालूम था कि वह सन्नाटे में क्या, क्यों और

कम प्यार करने लगा। हो सकता है कि यह मुहब्बत उस दिन शुरू हुई हो जिस दिन सुरय्या ने आकर सम्मन को गुदगुदा दिया था। यह भी हो सकता है कि यह मुहब्बत उस दिन शुरू हुई हो जिस दिन मदीना पाँयचे उठाए, कीचड़ से बचती, बारिशों के पानी में हाथी की तरह जा रही थी और उसकी गोरी-गोरी सख्त पिंडलियाँ नज़र आ रही थीं। उस ने अपने प्यार की ख़बर उस दिन दिया जिस दिन सम्मन अलीगढ़ जा रहा था। उसके गाज़ीपुर में रहने को वह बुरा नहीं मानता था। लेकिन अलीगढ़ तो एक बिलकुल ही अजनबी शहर है। उस दिन गाँव के स्कूल जाकर सम्मन मास्टर साहब से यह पूछा भी था कि यह अलीगढ़ किस मुल्क में है? और यह जानकर भी उसकी तसकीन नहीं हुई थी कि अलीगढ़ हिन्दुस्तान ही में है। और अब तो वह यह सुन रहा था कि अलीगढ़ पाकिस्तान जानेवाला है। अलीगढ़ के पाकिस्तान जाने या न जाने से उसे कोई दिलचस्पी नहीं थी। उसे तो बस यह फ़िक्र थी कि अलीगढ़ के साथ कहीं सम्मन भी पाकिस्तान न चली जाए। बस उसकी समझ में यह बात भी नहीं आ रही थी कि अलीगढ़ कोई आदमी तो है नहीं कि कहीं चला जाएगा। भला गाँव और शहर कहीं और जा कैसे सकते हैं? मगर यह बात जब उसने अख़बार में पढ़ी तो अख़बार लिखनेवाले पर ईमान लाना पड़ा। अख़बार छपा लिखा था। इसलिए सम्मन को चुप हो जाना पड़ा। गाँव के स्कूल का पढ़ा हुआ सम्मन ऐसी अख़बार की बात का जवाब ही क्या दे सकता था! लेकिन यह बात उसकी समझ में नहीं आती कि अलीगढ़ पाकिस्तान कैसे जा सकता है। आख़िर जब सम्मन से रहा नहीं गया तो वह अब्बू मियाँ के घर चला गया। मदीना बहुत मसरूफ़ थी। वह दुपट्टा धन चुका था, मगर उस ... बनवान ... रहा दिन रहा था। लेकिन सम्मन को देखकर वह ... हो गई।

"ए सम्मन भाई, नहीं हैं ... उधर आइए।"

सम्मन ने ... दिया। ... मदीना ने देखा। फिर वह ... की ओर ... लगा। और सम्मन चूड़ियों के ... से ... गया। और वह ... अलिफ़ ... देखने लगा ... हाथ ... में ... नहीं थीं।

जो कउनो शहर इ चाहे की एक जगह से दुसरी जगह चला जाय त का ई हो सकता है ?' कम्मो ने सवाल किया।

जी ? सईदा न नूशा बनात बनात पूछा।

यार लोग इ ना कह रहे का अलीगढ़ पाकिस्तान म जाय को है ? याका हमरे कहे का मतलब ई है की ई हाइ ना सकता।'

काहे ना हो सकता ?

क्यों। शहरो कउनो आदमी है की जहाँ चाहे तहाँ चला जाय ?

'जालल म जिन जा मरना है सईदा न कहा त पाकिस्तान म अलीगढ़ काहे न आ सकता ?'

ई सब बेकार बात है। हम ना मान सकत।

सईदा दुपट्टे की लुडा लिय हुए चली गयी तो फिर कम्मा वहाँ क्या करता! वह भी चला गया। मगर यह सवाल उसे परेशान करता रहा। फिर जब एक सरनवा वह जलाल मियाँ के साथ गाजीपुर गया तो उसने यह सवाल मासूम मन्दू सिराज और शम्मू सभी से किया। कोई उसे ऐसा जवाब न दे सका जिससे उसकी तसकीन हो जाती। मन्दू ने इतना जरूर कहा कि जोर यो न जाने के बारे म तो वह कुछ नहा कह सकता लेकिन उसने मुस्लिम स्टूडेण्ट फेडरेशन के एक जलसे म अलीगढ़ हो के एक लडके से यह बात सनी जरूर थी।

ए भाई तब त बडा गजब हो जइहे। कम्मा घबरा गया त का जउन लोग हुआँ है उहो लोग चले जइहे ?'

शहरवा जइहे न ऊ लोग कहाँ रहिहें त ? मन्दू ने सवाल किया।

ई त परेशानी की बतिय है।

फिर वह गाजीपुर से लौटा तो पाकिस्तान के खिलाफ होकर लौटा। गाँव म और किसी से तो उसका मिलना जुलना था नहीं। इसलिए वह अपनी माँ ही का सामने पाकिस्तान के खिलाफ तकरीरें करने लगा। सा एक दिन तो इसरार था ने सुन लिया। फिर वह उलझ गयी। उसके पास बेकारी की इन बातों के लिए वक्त कहाँ था ? इसलिए वह 'तउज गुना' कर कर चला जाता और कम्मा मजबूरन गली गलियों म आकर लड़के लडकियों

पहले याद करवाने लगता और फिर रहल सामने रखकर हामिदायरी की नाव पढ़ने लगता और सईदा के बारे में सोचने लगता

'हम घर जा रहे।' एक लड़के ने कहा।

आवाज़ से कम्मो चौंक पड़ा। उसने किताब पर से आँखें हटाकर उसकी ओर देखा। पहर जुलाहे का लौंडा अपनी जगह पर खड़ा था और बाकी सब पढ़ना ख़त्म कर चुके थे।

'बहुत गुस्ताख़!' कम्मो ने डाँटा, 'हरामी! घर जा रहे।'

'हम शादी मनाने जाएँ।' लड़के ने चिढ़कर कहा। कम्मो का पूरा चेहरा घूम पड़ा। मगर कम्मो के पास उस लौंडे की बात का कोई जवाब नहीं था। ज़ाहिर है कि वह किसी का दावत-नामेवाला नहीं रोक सकता था।

'जा, भाग जा!'

लड़का भाग गया। बाकी लड़कों ने फिर पढ़ना शुरू कर दिया। कम्मो ने हामिदायरी की किताब को जुज़दान में रखकर जुज़दान को खूँटी में टाँग दिया और फिर एक बार गुनगुनाकर सईदा के बारे में सोचने लगा जब वह बड़ा डॉक्टर हो जाएगा।

'अस्सलामअलैकुम!'

यह आवाज़ सुनकर वह चौंक पड़ा। काली शेरवानियाँ पहने दो अजनबी सामने खड़े थे।

'वअलैकुमस्सलाम!' उसने सलाम का जवाब दिया। 'आइए, तशरीफ़ लाइए।'

वे दोनों अन्दर आ गए। जिद्दू ने एक बैंगपट थाम लिया।

'हम यहाँ अलीगढ़ से आ रहे हैं।' एक साहब ने कहा।

'ए साहब का दूसरा रूप है आजकल?' कम्मो ने सवाल किया।

जी नहीं। दूसरा बोला 'इन्हीं का नहीं है मगर आपने सुना होगा कि रिश्ता होनेवाला है।'

'हैं न हमने सुना था।'

मालूम कहिए और बात क्या आ गयी है।

यह सुनकर कम्मो का मन भर आया। उसने एक बार अपनी माँ के लिए

किसी में 'वालदा' सुना था। वरना वह तो न माँ थी, न बीवी। वह तो सिर्फ रहमान की थी। वह मुसकरा दिया।

'अच्छा ई बताइए की अलीगढ़ पाकिस्तान चला जइहे की हिअइ रहिय ?'

'हम लोगों की कोशिश तो यही है कि अलीगढ़ पाकिस्तान में शामिल हो जाय। क्योंकि वह इस्लामी तहजीब का एक रौशन मीनारा है।'

'मीनारा ?' कम्मो हैरान हो गया, "ए साहब, हम त सुना रहा की हुआँ एक ठो उनीवरसीटी है। अउर आप कह रहे की ऊ रोशन मीनारा है।"

लड़के मुसकरा दिये। बोले, "देखिए, बात दरअसल यह है कि..."

"ए साहब, सुनिए हमरी सीधी बात," कम्मो ने उनकी बात काटी, 'अगर अलीगढ़ पाकिस्तान में जाय का होय त साफ साफ बता दीजिए। काहे मारे की तब हमरे वालिद अउर हमरी वालदा आपको ओट ना दे सकत।'

'जी ?" एक ने सवाल किया।

"पाकिस्तान न बना तो ये आठ करोड़ मुसलमान यहाँ अछूत बनाकर रखे जायेंगे।" दूसरा बोला।

"ए भाई, हम्म त अइसा लग रहा कि आप लोगन का पढ़ा लिक्खा सब बेकार भया। काहे मारे की आप लोगन के त ई हो ना मालूम की भंगी चमार अछूत होते हैं। हम कउनो भंगी चमार हैं ? अ जो अछूत होइबे ना करीह ओको कोई अछूत कइसे बना दीहै साहब ? तुम्ही बताव तनी हमें सुनें।"

लड़कों में से एक ने एक पूरी तकरीर कर डाली। वह तकरीर कम्मो की समझ में बिलकुल नहीं आयी। क्योंकि लड़के जिन बातों का जिक्र कर रहे थे उनमें से किसी एक का भी कम्मो या गंगौली से कोई ताल्लुक नहीं था।

'हम ई सब ना मानबे साहब !' कम्मो ने तकरीर को सुन लेने के बाद कहा, "हिन्दुस्तान के आजाद होने के बाद ई गयवा आहीर ई छिकुरिया या लगना चमार या ई हरिया बढ़ई हमार दुश्मन काहे को हो जइहें ? यानी बिना सबब ? हुआँ कै सब पढ़ा के आप लोग का ?

'इस वक्त आपकी समझ में यह बात नहीं आयेगी, लेकिन होगा यही। हमारी मस्जिदों में गायें बाँधी जायेंगी।'

'तो साहब, अब मुसलमान लोग पाकिस्तान जाकर ही मस्जिदों में पाक बने रहें। या पहले पहिल अब हिन्दुओं सब आम जाकर नमाज़ न पढ़े न रहे। ई अच्छा ज़बरदस्ती है या हम न जायेंगे पाकिस्तान औ हिन्दू अपनायें हमरी मस्जिद।'

बग्गा ने पहले तो उस गँवार की मसखरी का आनन्द भी लिया, लेकिन फिर धीरे धीरे उसे गुस्सा आने लगा। गुस्सा आना भी चाहिए था। आखिर हर बात की कोई हद होती है। वह बहुत बिगड़ गया। बोला, 'ठीक है, लेकिन जब हिन्दू आपकी माँ बहन का निकाह कर जाय तो ऐतराज़ न कीजिएगा।'

'हमरी माँ बहिन का कौन बहनचोद निकाह कर ले जा सकता है जी!'

बग्गा का बदन गुस्से से थर थर काँपने लगा। 'आप लोग जब तक हमारे तलवार पर न होंगे तो टपिया चार धक्के हम आप साहब को!' सामने से हाथ में मिट्टी के तेल की बोतल लटकाये एक चमार आ रहा था। बग्गा की आवाज़ सुनकर वह रुक गया।

'सुन रहे हो?' बग्गा ने उससे पूछा।

'का बात हो मियाँ?' उसने पूछा।

'ई लोग अफ़वाह में हमसे कह रहे हैं कि जब हिन्दुस्तान आज़ाद हो जायेगा तो ये लोग हमरे साहब की माँ बहिन का निकाह न करेंगे।' बग्गा ने बात बना ली।

अरे राम राम! चमार बिल्कुल घबरा गया। वह अलीमुहम्मद की तरफ़ मुड़ा, 'आप लोग तो मियाँ-बड़े मुसलमान। तेरा साथी की हिम्मत के जीभ काट दिये साहब की बहिन माता की तरफ़ ऐसा कहना?'

भाई साहब ने अपने से ज़्यादा ई समझते हैं। बग्गो ने कहा, 'वो माँ बहिन के निकाह किए जाने की बात सुनकर राम राम करने लगा।'

मैं माफ़ी चाहता हूँ,' ... ने कहा, 'हमारा मतलब यह हरगिज़ नहीं था। हम तो सिर्फ़ यह कहना चाहते थे कि हिन्दुओं पर भरोसा नहीं किया जा सकता।'

'काहे न किया जा सकता साहब ?'

अब मैं आपको कैसे समझाऊँ !"

इहाँ हमहू बतायें ? कम्मो मुसकरा दिया, "चाय पीजिएगा ?'

'जी नहीं शुक्रिया !'

दोनों लड़के कम्मो के दालान से उतरकर रास्ते पर आ गये। कम्मो ने झल्लाकर खूँटी पर टँगा हुआ जुजदान उतार लिया। लड़के आगे बढ़ गये। उन्होंने वोटरों की लिस्ट खोल ली।

फुन्नू मियाँ से तो भुगत लिया हमने। जवाद मियाँ का घर भी देख लिया गया। अब्बू मियाँ गये हुए हैं गाजीपुर। बस हम्माद मियाँ से भुगत लिया जाय तो दक्खिन पट्टी का सिलसिला खत्म हो जाय। रहे उत्तर पट्टी के मियाँ लोग तो उनका वोट तो हमारी जेब में है।'

'मगर ये जुलाहे ?'

इनके लिए तो मौलाना आजाद सुभानी और मौलाना अब्दुल बाकी चले आ ही रहे हैं। मैं जुलाहों और बिहारियों से बातें नहीं कर सकता। दोनों साले मादरजात चूतिये होते हैं।

'अस्सलामोअलैकुम चचा !' एक मकान से निकलते हुए हाजी गफूर अंसारी को देखकर दूसरे लड़के ने हँसकर सलाम किया।

'वालेकुमस्सलाम भैया।' हाजी साहब ने जवाब दिया। 'आप लोग अलीगढ़ से आये हैं का ?'

'जी हाँ !'

'हम त देखते ही समझ गये रहे।' हाजी साहब ने दाढ़ी पर हाथ फेरकर कहा। और अपनी पहचान पर बड़े खुश हुए कि मुसकरा दिये। 'आप लोग आज शाम को आइएगा ?'

'जी नहीं।' एक ने कहा। 'जलसा तो कल होगा। मौलाना आजाद सुभानी और मौलाना अब्दुल बाकी साहब तशरीफ ला रहे हैं ना।'

'वोटवा बाद का मसगिरिया लिया रहे ?' हाजी साहब ने तुर्री ब-तुर्री

जवाब दिया हम लाग न जमीयतुल अन्सार वाल है। हम लाग उसलिम लीग मुस्लिम लाग का आद ना न सकत।

मुखालिफ करना ता हमारा फज है।

तरह न निमाज राजा है नया।

स्ता उमाज क वनार क लिए ता पाकिस्तान का जरूरत है। बाला

सरयाना न दूसरा लगाया।

नाहा मियाँ। हाजा साहब न कहा हम त अनपढ़ गवार है। राजा

हमर गवार म निमाज मालिर पाकिस्तान आकिस्तान का मतिका उस्तन ना है। निमाज क बारा मानी स्मान का जरूरत है। सताबत ताना मार-साप परमा लिहिन है का ए मर पगम्बर का द लाग त का हम इमानवालन क गाय है। अउगा काना बजन त कहना रगा की आप लागन क जउन जिन्ना है क निमाजा ना पढ़ा।

इनदाम का माया न रविया और पगम्बरा नर पर लगाया है जिनका गर मरना लिर गम हान लगा।

बारा पयम्बर माग त माजजा-आजजा स्वना क गार कर लिलिन।

जिन्ना साहब का माजजा पाकिस्तान है।

हुई हवा भया। हमम न न ना मालुम रहा का जिन्ना साहब पगम्बर हा गय है।

महब मरदना गर और लिर ही लिर म हाजा साहब का तराज म गाना दा मार। लर बाला नऊजबिल्लाह। यह आन बना रमति है। यह ता कहन का नर मगाया था। वर्ना रसुलमरताल सदना व मौलाना हजरत मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहु अलह सल्लम क बाद किना क पगम्बर हान का बना सवाल पदा हाता है?

गवार न मुँहा लाग न उठाओ। हाजा साहब मुस्करा दिए। आखिर उन्हा दुनियादारा क सा मन्दा का खिन कर लिया था। लहजा नया अस्सलामा अलकुम।

वह सलवकर भाग खड़ हुए। तब स्ना मन्दा का दल आया कि जुब का नि है और नमाज का वक्त निर गर है। व भी गरद।

मगर जब वे मस्जिद में घुसे तो नमाज़ की जमात खड़ी हो चुकी थी। वे दोनों भी जल्दी से पिछली सफ़ में खड़े हो गये। एक ने हाथ बाँध लिये। दूसरे ने हाथ खोल लिये। साथी ने कुहनी मारी तो उसने भी जल्दी से हाथ बाँध लिये।

नमाज़ के बाद उनमें से एक खड़ा हुआ।

बिरादराने इसलाम। अस्सलाम अलैकुम!"

वालेकुमसलाम! बिरादराने इसलाम ने एक साथ जवाब दिया।

'यह तो आप लोगों को मालूम ही होगा कि आजकल पूरे मुल्क में मुसलमानों की ज़िंदगी और मौत की लड़ाई छिड़ी हुई है। तकरीर शुरू हो गयी। हम एक ऐसे मुल्क में रहते हैं जिसमें हमारी हैसियत दाल में नमक से ज़्यादा नहीं है। एक बार अंग्रेज़ों का साया हटा तो ये हिंदू हमें खा जायेंगे। इसीलिए हिंदुस्तानी मुसलमानों को एक ऐसी जगह की ज़रूरत है जहाँ वे इज़्ज़त से जी सकें। मैं यह नहीं कहता कि खालिद बिन वलीद और मुहम्मद बिन कासिम की औलाद हिंदुओं से डरती है। मगर..."

बड़ी जोशीली तकरीर थी। बीच-बीच में बिरादराने इसलाम ने तकबीर भी डाली। नतीजे में राकियों और जुलाहों के एक बड़े हिस्से ने यह तय किया कि वोट लीग को देना चाहिए। यह एक मज़हबी फ़र्ज़ है। हाजी गफ़ूर ने कई मरतबा बोलना चाहा लेकिन नौजवानों ने उन्हें बोलने का मौका नहीं दिया।

ते जाने जो लोग अपनी माँ चुदावें! हाजी साहब को गुस्सा आ गया। गुस्से में वह यह भी भूल गये कि वह मस्जिद में हैं। अलीगढ़ से आनेवालों ने इस गाली का पूरा फ़ायदा उठाया। जो लोग ढुलमुल रहे थे वे भी बिलकुल गच पुख्ता हो गये।

हाजी साहब गुस्से में मस्जिद से निकल आये। उनकी समझ में तकरीर बिलकुल नहीं आयी थी। उनकी समझ में यह बात भी नहीं आ रही थी कि मुसलमानों को यह तस्म्म से एक पनाहगाह की ज़रूरत क्या आ पड़ी है। और अंग्रेज़ों का यह साया क्या है जिसकी बात लड़कों ने इस धूमधाम से की थी। गंगौली में तो अब तक कोई अंग्रेज़ देखा नहीं गया था। और जब अंग्रेज़ हिंदुस्तान में नहीं थे तब आखिर हिंदुओं ने मुसलमानों को क्यों नहीं मार

छिकुरिया ने बड़बड़ाते हुए हाजी गफूर को देखते हुए कहा जो बार बार अपने कंधे का रूमाल बराबर करते जा रहे थे। 'आपो के त आट दवे के होई?' उसने सवाल किया, हम त सुनन हईं की मियां लोग मुसलिम लीग के आट देन बाटन।

हम माटीमिली मुसलिम लीग का कभइ जो दें अपना आट!" कुलसुम ने चमककर कहा "हम त अपने मुनताज़ के दवा अपना आट। दुना अलीगढ़ वाले हमरहू किहा आय रहे। हम उनहूँ लोगन से साफ साफ कह दिया इहे बात।

"ई बीबी हई पकिस्तनवा कहर बनी?' छिकुरिया ने वह सवाल किया जो उसे बहुत दिनों से सता रहा था।

अ का जाने कहर का रहा माटीमिला।"

जउना गाजिपुर में बनत त हमहू देख लेते!' छिकुरिया ने अपनी धोती की फेंट से कच्ची तम्बाकू की पत्ती निकालते हुए कहा 'हम त समझत बाडी की ई पकिस्तान कउनो महजिद ओहजिद होइ।' वह बाएँ हाथ की हथेली पर दाहिने हाथ के अगूठे से तम्बाकू मलने जा ही रहा था कि उसने आते हुए तन्नू को देख लिया। वह खड़ा हो गया। 'सलाम, मीर साहब!'

तन्नू मुसकरा दिया, 'का कर रहा है!'

'हम बीबी से ई पूछत रहली की हई पकिस्तान कउनो महजिद ओहजिद बाय का?'

तन्नू हँस दिया। उसके पास छिकुरिया के इस निहायत माकूल सवाल का कोई जवाब नहीं था। इसलिए वह हँसता हुआ अन्दर चला गया और कुलसुम को सलाम करके एक चारपाई पर लेट गया। उसी चारपाई के पाँयती सगफिर बैठी पानदान का सामान काट रही थी।

"ए बेटा, हम सुना है की तू लड़ना में बिआह कर से इनकार कर दिये हो।' कुलसुम ने उसे एक पान देकर यह सवाल किया।

'काहे हम इनकार कब किया रहा अम्मा?' तन्नू ने पूछा।

'काहे ए बेटा, तोरे अब्बा बगीअन ने कहे गये रहे?

'बगीअन कहे के वास्ते उनहूँ गये हा कि पुसगुप का मिल रहे?' तन्नू ने

बे सवाल कर लिया जिसका जवाब गगौनी म किसी के पास नहीं था। और जिस सवाल पर सारा मयन्वाला सोच रहा था। गाँवभर म किसी एक का स्पष्ट ध्यान नहीं था कि शब्बू मियाँ न यह वसायत की होगी। लेकिन हुस्सू मियाँ की आँखों म आँसू डाक्टर कोई यह कह नहीं सकता था कि शब्बू मियाँ की वसायत की बात एक मनगढ़न्त कहानी है। हद तो यह है कि जब शब्बू मियाँ तन्नू को छोड़ रहे थे तब भी उन्ह इसका यकीन था कि शब्बू न कोई वसायत नहीं की है। अब जब पूरे मयन्वाड म किसी के पास इस सवाल का जवाब नहीं था तो बेचारी कुसमुस क्या जवाब देती? इसलिए वह सिर इतना कह सकी वसीअत की बात रहने दो। यारो इ सोच कर की कहेगा बदनामी की बात है।

की भाई मज़ाक! तन्नू मज़ाक म बात करने लगा माहम्मद चा ऐसा न्या नहीं रहे थे ना?

अ बात नो निकल गयी। जवाब कुसमुस न दिया जरूर अग्य रिवाज हाथ नूँ त जानकी का जब म नाहर गया था जहल मर है इकरा पदम की आयस्ता ना मई है। या इसनियाज की नमाह अदर अज़ीज़ टुल्हा क स्पय पर घर भर रहा था और लस्टम-पस्टम।

अज़ाज़ हुआ। यह गिनाव तन्नू क दिल म टकराया। क्या बात ह इन गाना की ना! सामान की बदल-बदल गिनाव दिए जाते ह। अज़ाज़ हुआ। नराज हुआ। हमान हुहा और हुस्न म कोई नया पूछा कि नई तू भा कहा गया कहा गए है? उसन मज़ाक की तरफ देखा। वह उसी तरह गायब कान्न म जुगा हुए था।

हम रोज दो कहानी सुनाए, उसा न ... मिरगान बटन हुए पूछा। सुनाओ।

एक दो गरा बाश्नाह

ऐसा गरी नशा हुईन बावर्चीखान हा म नागा न्नि का बगान ऐसा ऐसा मशगूला। अरे बरद मामू ऐसा भुर अम्पह र।

...ी बग। कुसमुस न कहा इसनियाजी मुसाफिर है ऐसा भुन बला।

ए तन्नू भाइ ई मुसाफिर का होना है ?' फत्ता ने पूछा।

मुसाफिर ? मुसाफिर उस आदमी को कहत है जो " वह जवाब देते देते रुक गया।

मगफिए खिलखिलाकर हँस पड़ी।

जाइए तन्न भाइ।' वह बड़ी मुश्किल से बोली एत्ती जरा सा बात आपको ना मालूम !

अच्छा तू ही बता देयो।' तन्नू ने मगफिए की आँखों में आँखें डाल दीं। मगफिए शरमा गयी। उसका सारा बदन गुनगुना उठा। उसे आँखों की ज़बान नहीं आती थी क्योंकि कभी मुहम्मद हुसन ने उससे आँखों की ज़बान में बात नहीं की थी। शायद मुहम्मद हुसन को भी आँखों की ज़बान नहीं आती थी। लेकिन उस वक्त तन्नू की आँखों की ज़बान वह तड़ से समझ गयी। उसे ऐसा लगा जैसे इस ज़बान को वह हमेशा हमेशा से जानती है। बिलकुल घरेलू ज़बान की तरह जानती है। और उसे यह भी लगा कि वह इस ज़बान को भी अपनी घरेलू ज़बान की तरह फर फर बोल सकती है। उसने अपनी लम्बी लम्बी पलकों की आड़ से तन्नू की तरफ देखा। मगर तन्नू फत्ता की तरफ मुड़ चुका था।

लेके रहेंगे पाकिस्तान !

लड़के लेंगे पाकिस्तान !

इनकिलाब ज़िन्दाबाद !

दुल्लन कंधे से स्कूल का बस्ता लटकाये नारा लगाता घर में आया।

हम भूके नगी है ! तन्नू की तरफ एक आवाज़ उछालकर उसने नारा लगाया।

पाकिस्तान ले के का करिहो जी ? तन्नू ने पूछा।

हम का जानें ! दुल्लन ने कहा मास्टर लड़कवा सब चिल्लात रहे त हमहूँ कह दिया।

अउर पाकिस्तान के साथ इनकिलाबो माँग रह्यो ? ' तन्नू ने दूसरा सवाल किया, जैसे तू काँग्रेसी हो लीगी ?

हम मुसलमान हैं। दुल्लन ने छाती पर हाथ मारकर कहा।

मुसलमान ! भई ना अउर मुसलमान हो गयो। मगफिए बोली।

मुसलमानों का नाम सुनते ही दुल्हन टनकने लगी। उसने मौके का फायदा उठाकर दुकड़ा लगाया, मान की चिड़िया फुर से उड़ गयी!

चुप, बदतमीज! दुल्हन ने उसे बदतमीजी से [illegible] मुँह से कहा।

ये मजहब की बड़ी बात है। उसने पूछा ए नन्नू, और मुसलमानियों का मजहब की बात है? आपा की नई हाउस।

नन्नू सन्नाटा गया। मशहिर पर फिर हँसी का दौरा पड़ा। कुलसुम ने मुँह पर मुसकरान के बाद चला की तरह धक्का दिया मारा। मिला उन्हें!

अच्छा भाग अब मैं चलता हूँ। नन्नू खड़ा हो गया।

बहनिन! बहनिन! मशहिर ने मुश्किल से हँसी रोककर कहा अब कोई कुछ ना पूछिए।

नहीं अब चलेगा। सोचता हूँ कि गाजीपुर चला जाऊँ।

तूने अभी कुछ दिन रह का न बताया! कुलसुम ने पूछा।

कि हाँ, मगर वह चुप हो गया।

ये बड़ा भी बड़ा बदनदा। कुलसुम ने कहा बड़ा बदनामी की बात है।

'बड़ा बड़ा सा बड़ा कस्बा के डिप्टी कलेक्टर आप मशहिर ने सवाल किया अब भी अच्छा बदकिस्मत है की बाऊ का जो चाहे वो वही बहुत विधाह है उनमें बड़ मान। वह मान की बदनामी का डर है!

नन्नू ने चौंककर मशहिर की तरफ देखा।

ठीक है भाई! उसने कुलसुम से कहा हमेशा का है। बाबा पुरखु घा के घर में सन्नाटा के अलावा भी कई तरकीबें अड़ी है। आखिर हम कालेज कोई में न विश्वास करके न कलम से फिर सत्ताईस के बाद से घर रहे। है का ना।

उसने कुलसुम के सवाल का इन्तज़ार नहीं किया। घर में निकला तो ना [illegible] का साथ न मौका मिला। मानो! मैं सुबह उठना चला गया हूँ और हमारे मानतानी गन्नूबहाना क्या हाल क्या नहीं है? हो क्या बात ने हैं आए।

वह झल्ला गया। सद्दन को कम से कम इतना तो बता ही देना चाहिए था कि वह उसे कितना चाहता है। लेकिन अगर यह सुनकर वह हँस पड़ी, तब? इन घरेलू लड़कियों में यही तो खराबी होती है। सब पर जान छिड़कने को मौजूद होती हैं। अब कोई जान छिड़कने और जान छिड़कने में कैसे फ़र्क करे आखिर?

गया अहीर हम्माद मियाँ के फाटक पर उकड़ूँ बैठा बीड़ी पी रहा था। छिकुरिया जा चुका था। मिगदाद जनाने इमामबाड़े के फाटक के सामने खड़ा अपनी बेटी को खिला रहा था, जिसका नाम तो उसने नक्हन रख लिया था मगर प्यार की वजह से वह जिसे नक्का कहा करता था। प्यार के मुँह से शायद लम्बे नाम निकलते ही नहीं।

बड़े फाटक के सामने जुलाहों के कुछ लौंडे लट्टू नचा रहे थे और गालियाँ बक रहे थे। और बल्ली साईं के नुक्कड़ पर लड़कों का एक जुलूस 'मुसलिम लीग ज़िन्दाबाद!' 'कायदे आज़म ज़िन्दाबाद!' और 'इनक़िलाब ज़िन्दाबाद!' के नारे लगा रहा था और दो दरवाज़ों से झाँकती हुई दो औरतें शायद उस जुलूस पर हँस रही थीं।

तन्नू ने देखा कि गंगौली में कोई तूफ़ान नहीं है। ज़िन्दगी जैसी थी वैसी है। जुलाहे सूत सुलझा रहे हैं। औरतें शिकायत कर रही हैं और लड़ झगड़ रही हैं और हँस बोल रही हैं। लौंडे लट्टू नचा रहे हैं और इक्कट-दुक्कट खेल रहे हैं। मिगदाद अपनी बच्ची को प्यार कर रहा है। गया अहीर उकड़ूँ बैठा बीड़ी पी रहा है। हकीम साहब बीमारों की नब्ज़ देख रहे होंगे और लड़कों को गालियाँ दे रहे होंगे। हकीम साहब का ख़याल आते ही वह मुसकरा दिया। तो फिर मैं गंगा की तरह मज़े मज़े में बहती हुई इस ज़िन्दगी में तूफ़ान क्या लाऊँ? इन देहाती खानदानों में न मालूम कितनी नस्लों से कितने तन्नुओं ने प्यार किया होगा! शरीफ़ों में प्यार ज़ाहिर नहीं किया जाता। क्या पता किस बीबी के दिल की राख कुरेदी जाय तो किस मियाँ की मुहब्बत की चिनगारी निकल आए। तो फिर मेरी मुहब्बत में कौन से सुरख़ाब के पर लगे हैं! और क्या मालूम वह भी यही न कर रही हो। हाँ और क्या। क्या मालूम! मन्नो किसी फ़िल्मी गाने की तरह इन्तज़ार न

लगा। लेकिन वह एक घरेलू गाय की तरह सीधा और मासूम तो है ही। और फिर यह क्या जरूरी है कि

हकीम साहब को अपने सामने देखकर वह चौंक पड़ा। उसने देखा कि वह हकीम साहब के कमरे में है। उसने जल्दी से हकीम साहब को आदाब किया। अलीगढ़वाले लड़के को उसने पहचान लिया। ...के तमाम लोग मौजूद थे। एक काली शेरवानी अपनी उँगलियों में सिगरेट दबाये हाथ घुमा-घुमाकर मियाँ साहब को समझा रहा था कि कुरान में कहाँ-कहाँ अल्लाह मियाँ ने मुस्लिम लीग को वोट देने का हुक्म दिया है।

और सबसे बड़ी बात तो यह है कि दुनिया के नक्शे पर एक और इस्लामी हुकूमत का रंग चढ़ जायेगा। और यह भी नामुमकिन नहीं कि ... के साथ किसी दिन एक बार फिर सारे इस्लामी परचम लहराता नज़र आये। अगर पाकिस्तान न बना '

वज़ीर को पाकिस्तान के बनने या न बनने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। यह एक ... का पौधा लग गया। वह उन लड़कों को ... सुनता और ... सुनता ... मगर ... दिलचस्पी ... हुई थी। वह ... पाकिस्तान ... और ...—सभी के बारे में एक साथ सोच रहा था।

सुन रहे हो ... मियाँ साहब ... है! ... ।

मुसलमान है। काली शेरवानी बोली।

... की यह ... भी सुना होगा आपने! दूसरी ... शुरू हो गया ... हमारा नाम ... अपनी ... है! ... मुश्किल में होता है ... !

... उसने ... और ... में ... हुए ... का ... ।

... के ... अनाम ... मुलाकात ... ! उसने ... मियाँ ... ! ... पर हाथ रखकर वह ... हुए और अनाम को ... बिना ... ।

... और ... सिलसिला ... तो ... हो ... मैं कहता "

'तूँ मागन का का है !' हकीम साहब ने काली शेरवानी की बात काटी बना रहा मलीफा ।

देखिये किब्ला !' काली शेरवानी ने कहा यह मौका इन छोटे मोटे झगडों को याद करने का नहीं है । अल्लाह की रस्सी को मजबूती से पकडिये । आज उस रस्सी का नाम मुहम्मद अली जिन्ना है । आप अल्लाह की ताकत हैं । उठिये और कहिये कि आप पाकिस्तान बनाना चाहते हैं । जरा अपने लीडर को देखिये । और एक यह काँग्रेस वाले हैं । गाँधी हों या नेहरू । गलिया गलिया मारे मारे फिरते हैं । और एक हमारे कायदे-आज़म हैं जिनसे मिलना इतना मुश्किल है कि लाट साहब को भी उनसे वक्त लेना पडता है ।

त जब ऊ काइ से मिलब ना करते त फिर

हाँ अउर का !' हकीम साहब ने उब्बास की बात लोक ली "जब ऊ काई से मिलबे ना करते तब त फिर माशल्ला ऊ अल्लाह मियाँ हो गये ।

यह आप क्या फर्मा रहे हैं ?' काली शेरवानी बोली ।

हम कमा उमा ना रहे । हकीम साहब ने कहा 'ओर त गर हम लाग लीग को रंगे बाकी एक ठो बात पूछे बिना ना रहेंगे की जब जिन्नह साहब ना मिलते अउर अल्लाहो मियाँ ना मिलते त फिरे हम लोग अल्लाह मियाँ को ओट काहे न दे ?

तन्नू खिलखिलाकर हँस पड़ा ।

'आप लोग इस सवाल का जवाब नहीं दे सकते ।' तन्नू ने कहा और फिर आप बिना वजह यहाँ तकरार कर रहे हैं । सरकारी मुसलमानों का यह मान्ना लीग के अलावा और किस बात पर सकता है ? मगर आप गुम्मान कुलसुम का वोट नहीं ले सकते । वह तो अपने 'मुनताज' ही को वोट देंगी । वह औरत निरी अनपढ़ है । वह अपने बेटे का सही नाम नहीं ले सकती । वह मुमताज को मुनताज कहती है । वह बड़ा ही शरीर लड़का था । आप उसे क्या जानें । वह मासिमाबाद के थाने पर गोली खाकर मर गया । मैं तो उस वक्त यहीं था नहीं । मगर सुना है कि वह बड़ी बहादुरी से मरा । यानी जब उसे यकीन हो गया कि वह मर रहा है तो वह मौत से डरकर भागा नहीं । कहते हैं कि उसने भागते हुए एक आदमी का दामन पकड़ लिया

और कहा न गया, मगर उनका उल्टा तो वह होता हमारी अम्मा से भी हम डर गये। हैं इस बहिनचारे हमारी जान ले लीह। आप तो शायद इस ज़बान को समझ भी न होंगे क्योंकि आप लोगों ने तो उर्दू को मुसलमान कर लिया है। मगर नमाज़ की कसम जो ज़बान इस वक्त मैं बोल रहा हूँ वह मेरी मादरी ज़बान रही है। मेरी मादरी ज़बान तो वह है जिसमें मुमताज़ ने अपनी माँ को सलाम भेजा था। यह नहर बानन पर ना हम्माद दो पूरे गाँव में नहर बन गए हैं। पाकिस्तान बनने के बाद आप इस नहर को यहीं छोड़ जायेंगे या अपने साथ ले जायेंगे? हाँ, मैं कोई सियासी आदमी नहीं हूँ। लेकिन मैंने लड़ाई का मंज़र देखा है। लड़ाई में मरनेवाले बड़ी बेबसी की मौत मरते हैं। मारनेवाला तो बस मजबूर हो जाता है। क्योंकि अपनी जान बचाने के लिए वह सामने वाले को दुश्मन मानने और उससे नफ़रत करने पर मजबूर होता है। मुश्किल है कि अगर इसके बाद मुझे यहीं गगौली में मिलता तो मैं उसे सिगरेट पिलाता, पान का रस पिलाता, उसे अपने तालाब में नहाने को भेजता और फिर रात को उसके लिए किसी दोस्त की तरह खिचड़ी इस पसन्द पर बनवाता और इस बिस्तर लगवाता और उससे उसके मुल्क की बातें करता। और उसे अपने गाँव की बातें सुनाता। लेकिन वहाँ मैंने उसे मार डाला। क्योंकि अगर मैं उसे न मारता तो वह मुझे मार डालता। इसलिए मैं डरता हूँ। आप लोग कौन सा डर पैदा कर रहे हैं। डर की यह पसन्द हमीं को मालूम थी। इसीलिए मैं डरता हूँ।

आगे मुहम्मद बिन कासिम के वारिस

"मैं काफ़िर नहीं हूँ।" ननू ने कारी नरवाला की बात काटी। "मैं मुसलमान हूँ। लेकिन मुझे इस गाँव से मुहब्बत है क्योंकि मैं खुद यह गाँव हूँ। मैं नाम के इस शाम इस तालाब और इन कच्चे रास्तों से प्यार करता हूँ क्योंकि ये मेरे ही मुतअल्लिक हैं। मगर जंग में जब मौत बिल्कुल पास आ जाती थी तो मुझे अल्लाह ज़रूर याद आता था लेकिन मक्का मदीना या कर्बला मुअल्ला की जगह मुझे गगौली याद आता था। और मैं यह सोचकर डरता जाता था और रोने लगा करता था कि अब शायद मैं नैना के तालाब में कभी डुबकी न लगा सकूँगा। और शायद

जब मुझे आठवीं की मजलिस का हलवा नहीं मिलेगा। अल्लाह तो हर जगह है। फिर गंगौली और मक्का, और नील के गोदाम और काबे और हमारे पोखर और चाहे ज़म्ज़म में क्या फ़र्क़ है ?

आप ही जैसे लोग हिन्दुस्तानी मुसलमानों को हिन्दुओं के हाथ बेच डालेंगे।' काली शेरवानी बिगड़ गयी, 'आपको शर्म नहीं आती। आप मक्का शरीफ़ से इस जटियल गाँव का मुक़ाबला कर रहे हैं ?'

जी हाँ, कर रहा हूँ!" तन्नू ने कहा, "और मुझे शर्म भी नहीं आती। और शर्म आये क्यों ? गंगौली मेरा गाँव है। मक्का मेरा शहर नहीं है। यह मेरा घर है और काबा अल्लाह मियाँ का। खुदा को अगर अपने घर से प्यार है तो क्या वह माज़ल्ला यह नहीं समझ सकता कि हम भी अपने घर से उतना ही प्यार हो सकता है।

ए बेटा, तू त कुफुर बके लग्यो।" हकीम साहब ने कहा, "ई का कर रहा रे हरामजादे !" उन्होंने उसी साँस में एक हाँक लगाया और हौज़ में थूकने का इरादा करता हुआ लड़का डरकर भाग गया, 'बाबा फिर बाबा रे बेटा।

मैं कब कहता हूँ कि काबा काबा नहीं है ? लेकिन लाहौर तो काबा नहीं है ना ?" उसने सवाल किया, "देखिए चचा, जो कुछ मैंने देखा है वह आपने नहीं देखा है। इसीलिए जो कुछ मैं देख सकता हूँ वह आप नहीं देख सकते। नफ़रत और ख़ौफ़ की बुनियाद पर बननेवाली कोई चीज़ मुबारक नहीं हो सकती। पाकिस्तान बन जाने के बाद भी गंगौली यहीं हिन्दुस्तान में रहेगा और गंगौली भी फिर गंगौली है। तब अगर मथवा अहीर, लगना चमार और छिकुरिया भर ने आपसे पूछा कि उन्होंने तो आपसे कभी दुश्मनी नहीं की थी, फिर आपने पाकिस्तान का वार क्यों किया तो आप इस सवाल का क्या जवाब देंगे ?

तो क्या कांग्रेस का आर्डर दिया जाये जो ज़मींदारी पर अपनी आँखियाँ गड़ाये बैठा है ?" उस्मान मियाँ ने पूछा।

आप चाहें या न चाहें मगर गंगौली में कांग्रेस ही का राज होगा।'

"बउना बकबकता है ?" हकीम साहब बोले।

"और जमींदारों को भी गया समझ लीजिए।'

अंदर की। हकीम साहब चमके, 'गधियों के बाप का है ना जमींदारी को अव्वल अव्वल इन सबों ने तोड़ दी है।

इन की बातें न सुनिए डिप्टी!' बाली शेरवानी ने कहा, "कांग्रेस जमींदारी को तोड़ने की कोशिश ज़रूर करेगी क्योंकि ज़्यादातर जमींदार मुसलमान ही हैं। लेकिन यह काम इतना आसान नहीं। अगर ऐसा हुआ तो पाकिस्तान की इस्लामी फ़ौजें दिल्ली पर हमला कर देंगी।

और हमले की बातें ज़रूर कर सकते हैं क्योंकि आपने जंग नहीं देखी है। तन्नू का लहजा कड़वा हो गया, "पाकिस्तान ज़रूर बनाइये।" उसने उठते हुए कहा, "मगर कभी-कभी ख़ैरियत की ख़बर लिखते रहियेगा वहाँ से।'

गाला इमाम चौकी को छूता हुआ वह बड़े फाटक से निकलकर गली में आ गया। उसे अपने आप पर बड़ा गुस्सा आ रहा था कि आख़िर तकरार करने की क्या ज़रूरत थी। मगर वह सचमुच डर रहा था कि इस नफ़रत का अंजाम क्या होगा? क्या सचमुच हिंदुस्तानी मुसलमान इस ज़मीन का नहीं है? मगर दिलदार नगर और गहमर के राजपूत मुसलमान तो इसी मिट्टी के बने हुए हैं। फिर ये मुस्लिम लीग को वोट क्यों दे रहे हैं? वे क्यों एक वतन की ज़रूरत महसूस कर रहे हैं? राम की सल्तनत का क़दम चूमकर बनाये गये चूमनेवाले मुसलमान पाकिस्तान क्यों बना रहे हैं? क्या सचमुच पाकिस्तान बनाना चाहते हैं? और क्या ... के बारे में ये जानते हैं कि पाकिस्तान कैसा होगा और क्या होगा? क्या ये तमाम लोग जो मुस्लिम ... पाकिस्तान कोई सूबा तो है नहीं कि उसे भी ... मान लिया जाय। किसी मज़हब के नाम को ज़बानों पर चढ़ने के लिए ... नस्लों की ज़रूरत पड़ती है। फिर बारवाली नस्लों का क्या होगा ... इस हवा में लहरनेवाली नफ़रत को कम करना ... शानो नरवासियों को इन सवालों में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वे इस सवाल पर सोचने को भी तैयार नहीं थे कि आदमी सिर्फ़ नफ़रत पर और डर के सहारे ज़िन्दा नहीं रह सकता। तन्नू अपने ही सवालों की ... में उलझ गया। उसका मन पूछने लगा तो अब मैं क्या करूँ? कुलसुम ... मगर हुमायूँ की बातें सुनना चाहती है। हकीम अली कबीर मुस्लिम

लाग का। कौन ठीक है? आह, डिस्मिस! वह एकदम से फौजी बन गया। ... में? उसने एक कुत्ते को ठोकर मारी। वह टें टें करता हुआ भाग गया।

"तो मैं छुट्टी के बाद नहीं रुक सकता।" उसने फुस्सू मियाँ से कहा, "आप मँझले अब्बा से पूछकर तारीख डलवा लें।"

फुस्सू मियाँ हड़बड़ा गये। उठ बैठे। हुक्का उलट गया। चिलम टुकड़े टुकड़े हो गयी। आग बिखर गयी। आँगन के एक कोने में छोटी बहन की गुड़िया बनाती हुई सल्लो शर्मा गयी। सकीना गपागप पान लगाने लगी। रब्बन बी की इकलौती आँख मुसकरा दी।

"मगर बेटा, तो रबिउल-अव्वल[1] से पहिले..."

"तो मुहर्रम का इमाम हसन की बेटी का बिआह भया रहा की ना?'' बेटे ने फुस्सू मियाँ की बात काटी।

"बाकी अइसी जल्दी का है?"

"जल्दी क्या है? अरे साहब, क्या पता किस दिन पाकिस्तान बन जाय। मैं चाहता हूँ कि न मालूम कब तक के लिए बात टल न जाय। सो आनेवाले मोहर्रम के शुरू होने से पहले अब्बा मरहूम की वसीयत पूरी कर दूँ।'

"त फिर त अब्बू का दुलहिन में ? बात कह रह्यो तो नू ई बिआह ना करिहो?" रब्बन बी ने सवाल किया।

"तो आप मँझले अब्बा से बात कर लीजिए।" वह रब्बन बी के सवाल को टाल कर गया।

"ना," रब्बन बी बोलीं, "बिआह होए चाहे मत होए। बाकी तो रबिउल अव्वल से पहिले ना हो सकता।"

"अम्मा तू..."

"तनिको अम्मा-उम्मा करे की जरूरत ना है।" रब्बन बी ने पगला गुना लिया। फिर वह तन्नू की तरफ मुड़ीं, "ए बन्नो, का तू हमरे आँगन पर ...

---

[1] रबी-उल-अव्वल अरबी महीने का नाम है। शीआ मुसलमानों में मोहर्रम के महीने के बाद भी एक महीना आठ दिन तक खुशी का कोई काम नहीं होता।

घर का विवाह कर सका ? अन्नू ने बात हाथ से अलग रख दिया। सारा गुड़िया। बाकी अपना सामान रख दिया।

सलमा का फिर [illegible] गया।

अन्नू ने हिसाब लगाया तो मालूम हुआ कि छुट्टी खत्म होने में अब बाद तक है। सो वह मान गया। मगर उस रात सारा घर सो गया तो उसने चुपके से सामान का बक्सा खोला था। कुछ मिठाई की नाव जागने से बाद रखी थी। सबका था की नाव भी कभी-कभार शराब बुलबुले मार ही लगी थी।

अन्नू ने अपने गुस्से में पड़ दिखाया। फिर वह एक नया लिखने वाला कागज का पन्ना रहा। खत लिखने में वह हमेशा घबराया करता था। मगर कोई सवा दो मिनटों बाद के बाद उसने अपने आपको खत लिखने पर तैयार कर लिया। लेकिन अब सवाल यह था कि खत शुरू कैसे किया जाय। मन की दुनिया तमाम बातें उसके दिमाग में उमड़ रही थी। कोई बुरी बात तो लिखनी नहीं थी। उसे तो अपनी ही मोहब्बत की बातें लिखनी थीं। और प्यार का जोश तो मामूली से मामूली शब्द को भी कुन्दन की तरह दमका देता है। हर लफ्ज़ [illegible] जादू बन जाता है। फिर भी यह बात उसे मुश्किल दिखायी दी। और खत लिखना—खत-पत्र लिखना आसान होता तो [illegible] परेशान न हो गया होता।

आखिर बहुत देर के बाद विचार के बाद उसने खत लिख ही डाला।

प्यारी सलमा [illegible] प्यार।

मैं अच्छा हूँ। उम्मीद करता हूँ कि तुम भी अच्छी होगी। मैं तो एक [illegible] जीता हूँ। [illegible] कि यह बार बार [illegible] लिखना चाहिए [illegible] लिखना यह है कि [illegible] की सालगिरह पर [illegible]। उम्मीद है कि तुम [illegible] आओगी। [illegible] आती है। [illegible] हुआ है। बाकी सब खैरियत है। [illegible] लिखता रहा है। प्यार।

तुम्हारा अपना

अन्नू

यह खत लिखकर उसने फिर से एक बार उसे पढ़ा। [illegible] लिखने, नहीं [illegible] लेकिन वह किसी और तरह का खत नहीं लिख

सकता था। वह भला यह कैसे लिखता कि सईदा, मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ। क्योंकि सईदा तड़ से कह सकती है कि यह तो कोई खास बात न हुई, क्योंकि हर भाई अपनी बहन से मुहब्बत करता है। अब तन्नू को यह तो मालूम नहीं था कि सईदा के बक्स में उसकी तसवीर है। और तन्नू को यह भी नहीं मालूम था कि अलीगढ़ में वहीदिया और सुलतानिया की लड़कियाँ सईदा को तन्नू भाई पुकारती हैं। तन्नू को इसी तरह की कई और बातें भी नहीं मालूम थीं। इसीलिए जब उसे सईदा का खत मिला तो वह उसकी सीधी सादी उर्दू को न समझ सका।

सईदा का खत बेहद सादा और नरम था। उसने लिखा था

'जनाब तन्नू भाई साहब आदाब!

आपका खत मिला। खैरियत मालूम हुई। मैं अच्छी हूँ और आप लोगों की खैरियत खुदावन्द-करीम से नेक चाहती हूँ। आपने तो ऐसा दिन चुनकर रखा है अपनी शादी का कि मैं शरीक न हो सकूँ। जाइए मैं आपसे खफा हो गया।

वहाँ सबको आदाब।

फकत

सईदा'

यह खत तन्नू को गंगौली ही में मिला। वह सईदा की लिखाई पहचानता नहीं था। इसलिए उस लिफाफे को उसने आँगन ही में खोल डाला। मगर खत खोलते ही उसका दिल धड़कने लगा। और उसका दिल इतने जोर से धड़का कि रब्बन बी ने उसकी आवाज सुन ली।

'किसका खत है बेटा?'

'सईदा का।'

'का लिखिस है?'

रब्बन बी के लहजे में कोई-न-कोई बात जरूर थी क्योंकि तन्नू चौंक पड़ा।

'कुछ नहीं।'

वह बाहर निकल गया। दूर से एक इक्का आ रहा था। घुंघरुओं की

आवाज़ इधर से आने लगी चला आ रहा था घर तक। वह देखकर हैरान लगा और सोचने लगा कि मस्जिद के बाद कौन आ सकता है।

यह दृश्य दर दर ही मज़ाकी थी। तन्नू दालान की सीढ़ियों पर आ गया। फिर सीढ़ी से गली पर।

दाहिनी तरफ़ बगवाड़ा के पास लड़कों का एक गोल 'मुस्लिम लीग ज़िन्दाबाद' का नारा बुलन्द कर रहा था—और गला फाड़ फाड़कर चीख रहा था। तन्नू ने बच्चों की तरफ़ देखकर मुस्करा दिया। लड़कों के इस जुलूस में कई हिन्दू लड़के भी थे और वे भी मुसलमान लड़कों ही की तरह गला फाड़ फाड़कर मुस्लिम लीग को जीने की दुआ दे रहे थे।

'ई कउन चिड़िया का पाकिस्तान बन रहा, भाई?' उसने बच्चों से पूछा।

'का मालूम साहेब!' बच्चों ने हामिदअली की किताब को उसके लिफ़ाफ़े में रखते हुए कहा। 'हमें का पता पर बउन आ रहा।'

'हमहूँ ई साथ रह की इ न बच्चो पाकिस्तान का है बाउ के आव का।' उसने इधर का छोर पकड़ते हुए कहा जो अब पास आ चुका था। 'ए भाई, ए पूछा मत लगे रहो।' वह इधर की तरफ़ दौड़ पड़ा।

'आवाज़ दो!' उसने ज़ोर से और से आवाज़ का नारा लगाया जिसके जवाब में सौ मुस्लिम लीग ज़िन्दाबाद का नारा लगा रहे थे।

'ए भाई, तुम कब आ गये?' फुन्नन मियाँ ने हैरानी और प्यार से पूछा।

'आइए, मास्टर साहब!' उन्होंने दरवाज़े का झोंका। दरवाज़ा हट गया। वह उतर पड़े। उन्होंने तन्नू को लिपटा लिया। वह उसका माथा टटोलने लगे।

'ए भाई, इ न कहिए सड़क पर गया रहा, तो ए ने अपना आड़ आड़ लड़ाई दिखाया। न हुआ सड़ा-आँगन रहा की ना।'

तन्नू हँस दिया। 'इ आप लड़कन में भी पड़ गये?'

'ई पाकिस्तान बाड़े मियाँ हिन्दू-मुसलमान की नफ़रत! इस से बहुत बड़ा की पाकिस्तान की लड़ाई में मदद बनाना पड़ा है। बाकी हमरी सुनी ना किसिन सब।'

यह ख़बर सारे गाँव में फैल गयी कि फुन्नन मियाँ आ गये। इधर-उधर

सारा गाँव घर से निकल पड़ा । बस उत्तर और दक्खिन पट्टी के मीर साहबान नहीं निकले । फुन्नन मियाँ सबसे मिले । उन्होंने सबकी खैरियत पूछी ।

"सुन रहे की मिगदाद सैफुनिया से बिआह कर लिहिन ?" उन्होंने ऊँची आवाज में सवाल किया । उनकी आवाज हम्माद मियाँ के जनाने मकान तक गयी । और हम्माद मियाँ बल खाकर रह गये । "अ हम्माद गवजा ना किहिन ई बिआह को ?"

"ताहरिया बात !" कुलसुम बोली, "उनका बस चलता त ऊ खुद बिआह लेत ओको ।"

"धत् !" फुन्नन मियाँ ने अपने पास खड़ी हुई पम्मो को देखकर घुड़का । उसने रोने के लिए मुँह बनाया ही था कि उन्होंने लपककर उसे गोद में उठा लिया और फिर हवा में उछाल दिया । पम्मो ने बाकायदा रोना शुरू कर दिया । फुन्नन मियाँ ने अपनी बड़ी बड़ी मूँछ पम्मो की गर्दन में चुभा दीं । पम्मो हिटकने लगी । मगर फिर हँसते हँसते लोट गयी ।

"जाइए ए अब्बा !" उसने बड़ी मुश्किल से कहा । "अरे, ई नाना हैं रे !" उसने पम्मो को चुमकारा ।

मगर पम्मो ने शायद उसकी बात नहीं मानी । वह रोती ही रही । फुन्नन मियाँ हँसते रहे । फिर उन्होंने पम्मो को एक बिस्तर पर फेंक दिया ।

"तनी एक ठो लुंगी देखा ।" उन्होंने कुलसुम से कहा, "पोखर पर नहाये एक जमाना हो गया । तनी नहा आयें ।"

"जिअई काहे ना नहा लेत्यो !" कुलसुम ने कहा । वह अभी कुछ देर तक उन्हें देखना चाहती थी । वह यह जानना चाहती थी कि जेल में गुजरने वाले बरसों ने उसके फुन्नन को अगर बदला है तो कितना बदला है । सवाल बरसों का नहीं था । क्योंकि वक्त की आँच का सामना तो वह बहुत दिन पहले निकल चुकी थी । सवाल उस आदमी का था जिसके लिए कुलसुम ने ब्याहता ज़िन्दगी को तजकर रखनी बनाना कुबूल कर लिया था ।

"अब रहेंगे पाकिस्तान !" छुन्नन नारा लगाता हुआ घर में आया ।

"ई का सब ?" फुन्नन मियाँ ने तड़ से सवाल किया ।

छुन्नन घबरा गया ।

नाना का आगाव ना किया ? कुनमुम बानी।
आगाव ! हुसन न मनाम किया।
क म नव पाकिस्तान ? हुसन मियाँ न अपना मवान फिर किया।
अनाग्रुवानन म। हुसन न माव विचार क बा जवाब दिया।
इ अनागड्वार ताका कहीं मिन ग्द ?
आप ग्न हुसन आ माग ! कुनमुम न कहा, हमई म कहिन की आर मुगरिम माग इ बाहाग्गवा कउन नाम है
न ते का काश।

हम कहा का हम न अपन मुनताज का आग देंगे। बाक़ी नव हम गव आर ग्व न आम मुनताज का ममव ना ग्न न हम कगग्वा लक पर चन आव। तुम महन म इमनिगाबा ता कग्नी गबर मिला का ना ?'
का बमवा म हम हाकगाना मान ग्न, पुसन मियाँ न कहा वाक्षा हम त गमत ग्न का इमतिआजा ग्व।
त मुना न का। मी नहत गया इ वनिया ता मुग्वा म निरन्ना कग्न।

मव पुग्नवान मउग आर। पुसन मियाँ न कहा अ बहुन म न बमा ए‍व ग्न। कउना जान ना पग्नगा किग्न। कउना काड की जउरन ग्ना म ग्न। कार्ड नाग किग्न और का हाका हानिम। इमनिआजा हान म मउग पुर हान। हम माग्न की किमनन म जीनाग का गुग ना है। हम टा महक ग्ह। हुना मार ग्व। तगकिया न कग्धा ना मकनी। हमरा-नाहग नहिगा कग्न ग्नग

र्मू काभी नहाव। कुमुम न कहा न कग्मी वान कर रखा , बनका म लव गा क। ग्गा। काना कउन मिहू। पुसन मियाँ वान कमनिग्न ग्हा। ऊ कग्ना ग्न का गाग आग मब सट है। हम आग्गा वान ना मान। ग्न दिन वव के ग्न रेड़े मगाहम न मान का इ गाप माग हि। काना है माव का बार। हमाग मन का हव मार के नवा मवे म है। इ ग्न दिनी हान त हम का कमान अहग ना घड मकनी ग्हा।
क करे पर मना हगनकर पर म निकर ग्न। कुनमुम न दगा कि ग्नर

चौड कर्धे झूल गय हैं। और उस यह भी लगा कि उनकी आँखों म वह चमक भी नहा है। उमका दिल भर आया। बडी बडी काली आँखें भीग गयी।

फुन्नन मियाँ की निगाह हम्माद पर पडी, जो अपनी ऊँची गभिया म गया अहीर को कुछ समझा रह थ। फुन्नन मियाँ न फौरन जोर स गला साफ किया मूँछो पर ताव दिया और आगे बढ गय।

सलाम मीर साहब !' हाजी गफूर न कहा।

का हाल है भइ ? फुन्नन मियाँ न कहा रउर ए भाई नारा न्ड़िया म अ ठो बात बाल छोड गय रह ऊ सब मौजूद है जस र तस।'

"आपा की बात। हाजी गफूर न एक ठण्डी साँस भरी 'बुढा न गइली। मँहगाई गाँड मार लिहल बाय !"

बल्ली साह क मोड पर लडको का एक जुलूस एकदम स नार लगान लगा

नारय-तकबीर !

अल्लाहो-अकबर !

काइदे-आज़म !

ज़िन्दाबाद !

मुसलिम लीग !

ज़िन्दाबाद !

हइ लडिकवा सब पगला गय ह का ? फुन्नन मियाँ न पूछा।

अ कमाल ई हो मीर साहब का जार जार स ऊह लागन चिल्लात बाल्न का जो आप्न ना बाइन। हम आप्न हद। त हमार बात कोऊ ना पूछन वाये। बारा जेब दराब आर कुछ तस्वीर कग्न मिली। अ न्हा सउकन वाय की ई पाकिस्तान बन जाई। हई जिन्ना साहब त नो क बाइन ?

ना मालूम कउन है अउर कहाँ का हैं। मुदा रन्दी लन्दन म आराजल करता रहा।

त अपडड्व गम त ना भजन बाइत एक सिपाय-पड़ाय क

अ मागा सालो मगुन्न क ! फुन्नन मियाँ न कहा, अ पाकिस्तान

बनिया करिए त गलती म बहुत दूर बनिए। तू जाके अपनी चरखी सँभालो और ताना तैयार करो। पाकिस्तान आकिस्तान पर मरने का मेल है।'

फुन्नन मियाँ आगे बढ़ गये।

दोनों तरफ़ मकानों में करघों की आवाज़ें आ रही थीं—खट! खट! जुलाहे कमर तक ज़मीन में धँसे गड्ढे में थान, गमछे और लुंगियाँ बुनने में जुटे हुए थे। जुलाहिनें बच्चों को दूध पिला रही थीं और आपस में बातें कर रही थीं। कुछ सन कात रही थीं और आपस में झगड़ रही थीं। सामने शीआ की मस्जिद का काम हो रहा था। दीवारों का कद निकल आया था। गड्ढे के किनारे दो लड़के उकड़ूँ बैठे बाड़ा पा रहे थे और महल्ले के लोग गाने का राग दे रहे थे।

इस मातमी वातावरण ने फुन्नन मियाँ को गुनगुनाना शुरू किया। वह प्यारे-प्यारे गुनगुनाने लगे

'अल्लाह भी लेवे न पाये वह उन के हाथ।
देखा मुझ को छोड़ दिये मुसकरा के हाथ॥'

लेकिन वह शकील के इस तरह की गज़ल की धुन में गुनगुना रहे थे।

बड़े मियाँ के दालान में पहुँचते-पहुँचते दोपहर ढल गये। जवाद मियाँ का लड़का दफ़्तर बेहद सजा रहा था और किताब पढ़ रहा था और खुशी के मारे मन में मगन हुआ जा रहा था। जवाद मियाँ अन्दर-बाहर में बातें कर रहे थे, "हम कह रहे थे कि पाँच पर पढ़ाई लिखाई से का फ़ायदा?" जवाद मियाँ ने एक बुनाई का पहाड़ उठा रखा था। 'इन्तज़ार तक पी जाओ समझ लिहाज़ा ज़रा का हम मज़दूर। पढ़ाई ने ई है का जो अक्बर का तीन ठो मुफ़्त-मुफ़्त खाना मगर लाइन ना की या अर्ज़ी' बड़ा मज़ा ना लवा। लपमुरा का विचारी गावन ना निकला रहो। मियाँ अली अक्बर आधा उधार का सारा ख़ज़ाना गिरा दिया लेकिन। बाकी ताल्लुक़ा भी फायदा भवा होता। एक (दस्तख़त करमानुदान ने डिहिस डिहिस उन्होंने इस मौक़े पर कस्मा का

¹ शीआ मुसलमान इस मानते हैं कि रसूल के दामाद अली तमाम मुश्किलों को आसान करते हैं। इसीलिए वह उन्हें मुश्किलकुशा—मुश्किलें दूर करनेवाला—कहते हैं।

कम्मा कहना उचित न जाना। वह अब माशाअल्लाह स डाक्टर हो चुका था। इसलिय उन्होंन उसका पूरा नाम लिया 'ए कम्मो हमरा मतलब है की कमालुद्दीन आवा। अपनी दू खुराक दवा दिहिन अउर कहिन की एहू का खिलाय के देख ल्या। भूत बहिनचोद पर खादा की फिटकार। तीन खुराक म ऊ नगी पलेट भर भात खाय!

हाँ मीर साहब, काहे नहीं! जुलाहे न कहा 'खुदा जेके हाथ म शिफा दे दे।

हम त कह रहे कमालुद्दीन स की शहर के डागदरन की तरह बड़े स टीन पर लिखवा के इ हे खंबवन पर टाँग द्या की इ है डागदर कमालुद्दीन का दवाखाना। हियाँ सस्ता एलाज होता है और फाएदा जल्दी होता है। फाएदा न होय त पाँच रुपया इनाम अउर दवा का दाम वापिस। बाकी कम्मा अभई ना मान रहे। फुन्नन मियाँ को कहते कहते यह भी भूल गय कि वह डाक्टर साहब है। बोले तू कब आया जी?'

थोड़ी देर भई। फुन्नन मियाँ न कहा अउर तू ई का जनगा जमाय रहे हो! एक्को लड़का आपन पैदा कर लिय हो का?'

अरे इ सआर खाली गाँड न मार रहनी त तोरा ईहो अरमान पूरा कर देत। जवाद मियाँ मुस्कराय 'हम अभई कउनो काम म कच्चा ना है। तें का सुन रहा बे उन्होंन झट बट पिद्दू को डाँटा, जो पास ही खड़ा जलेबियाँ खा रहा था।

हम सुन ना रहे पिद्दू न कहा, गा रहे।

जाय्यो ससुर की दें हाथ! जवाद मियाँ न हँसकर कहा।

पिद्दू जलेबियाँ खाता हुआ घर म चला गया।

अउर का हाल है? फुन्नन मियाँ न पूछा।

अरे सर्री धाजम भर लिआ। जवाद मियाँ न हौर लगायी तें सुनाओ जेल म कइसी गुजरी।'

खूब गुजरी। फुन्नन मियाँ न कहा और हँस फिर हँस रहे। जवाद मियाँ का मौ घोर स रंग दिया दमाद बनाय रखिगर।

पिद्दू न ताज़ा किया हुआ हुक्का लगा दिया। फुन्नन मियाँ बैठ गय।

जवाद मियाँ ने हुक्के का मुँह बढ़ाया। फुन्नन मियाँ ने पहला कश लिया। धुआँ न गले तक लिया। वह खाँसने लगे। उनकी बड़ी-बड़ी आँखें बिलकुल लाल हो गया।

इतना बड़ा हो के तू हुक्का पीना भूल गयो। जवाद मियाँ ने कहा।

"चुप!" फुन्नन मियाँ ने गुस्से में आँखें फाड़ते हुए कहा, "साला हुक्का पीना भाई भूल हैं। का मालूम बाबा के साथ सोलह बार है की ना।"

आज लग गिरा! जवाद मियाँ ने सोच लो।

फुन्नन मियाँ खिलखिलाकर हँस पड़े। वे तमाम दीवारें धमाम से गिर गयीं जो खिलाफ़तों के तूफ़ान ने उठा दी थी।

'ए भाई, अन्दर आओ ना!' रहमान बी की आवाज़ आयी। वह फुन्नन मियाँ के सामने नहीं आती थी। जब वह रहमान बी बाबा की हैसियत से ब्याहकर आयी थी तब उसने फुन्नन मियाँ से पर्दा नहीं किया था। लेकिन जवाद मियाँ की दुल्हन बनने के बाद से वह फुन्नन मियाँ से पर्दा करने लगी थी।

अरे ये अब का फिर कहा!' फुन्नन मियाँ ने मूँछों को बराबर करते हुए कहा। अब हम बाप की बीवी उठाय काबिल ना रह गये हैं।

आग लगाऊँ गनवार!' रहमान बी ने कहा।

ए भाई अब ते कम्मो की विदाई करहू ना!

तनी हल्दिया पर आय रहा।' जवाब जवाद मियाँ ने दिया, 'हम ने कम्मो के घर पयाम भेज का मांग रहे।

हमार नार बाट के ना है।' फुन्नन मियाँ ने कहा। कम्मो के बाप के ... हार में बड़ना रहे ना है ना। ये हम-मज़हब समधी ले मैदान रहे। अब हमार बब के मदद हो गये। जे जब तक मदद हैं तब ते हमरे साथ बिलकुल दरकार न हो आवत।'

ई सुना की ना तू,' जवाद मियाँ ने सवाल किया, "हिन्दू भार तनू ... हैं। पर हिन्दू की हम ... ने बियाह ना करेंगे। गाँव भर से ...। ... हैं ... की ना ... ने टंगिया चोर देंग ... । ... ने बाहर। ... में ई ना हो सकता। हम कह

रहे की जउन फुस्सू वसीअत गढा लिहिन त ए म सल्लो का कउन कसूर है। बस नग तन बगिल झौंव। त फिर हमहूँ नरम पड गये। सुन रहे कि तारीख पड गया।

लेकिन तन्नू की तारीख पड जाने से अगर किस्सा खतम हो गया, तो यह दिल का दर्द कम क्यों नहीं होता? ऐसा क्यों है कि सईदा की बडी बडी सियाह आँखें हर वक्त टकटकी बाँधे देखती रहती हैं?

शादी का दिन जैसे जैसे करीब आता गया, वैसे वैसे उसके दिल की कराहट बढती गया। वह कोई कवि तो था नहीं कि विरह के दर्द को किसी गीत में ढाल लेता। वह तो बस यह करता कि जब यह दर्द बहुत बढ जाता तो वह सईदा को एक खत लिखता और फिर उस खत को कई बार पढ लेने के बाद फाड डालता।

यह बात किसी को नहीं मालूम थी कि तन्नू के भीतर कैसा तूफान आया हुआ है। इसलिए घर में बडे इत्मीनान से गालियाँ गायी जाने लगीं

काली कोन ना।

तारी कोना सुन कानवाल। काली कान ना॥

बड्का बहिनिया का पाँच रुपय्या।

छुटकी बहिन अनमोल। दोनी कान ना॥

लेकिन यह सारा गालियाँ गुदगुदाने का कला जैसे बिलकुल भूल गयी थीं। लडकियाँ ठट्ठा मार मारकर हँस रही थीं। बुढियाँ शर्मा रही थीं। रहमन की का इकलौता और स एक वंश का चिराग जल रहा था और उस चिराग ने पूरे गफूरखान ही नहीं बल्कि पूरे गाँव को जगमगा रखा था मगर तन्नू के चारों तरफ घुप अँधेरा था। क्योंकि उसे यह लगा मालूम था कि उसकी प्रेम कहानी कोई पहली प्रेम कहानी है जो अनकही रह जानेवाली है। उसे नहीं मालूम था कि शरीफों के घरों में ऐसी अनगिनत कहानियाँ अनकही रह चुकी हैं। और शायद ऐसी अनगिनत कहानियाँ अनकही रह जानेवाली हैं। और यदि उसे यह नहीं मालूम था इसलिए वह अपने आप को अकेला पा रहा था और उसके पाँव शुरू आता ही मुस्कराने के बोझ से टूटे जा रहे थे।

उसने बन्द कर दी। अन्दर से औरतों के बोलने की आवाज अब तक चली आ रही थी। उसने घड़ी देखा। रेडियम डायल वाली उसकी घड़ी वक्त बताने के बाद जरा मुसकरा दी। उसने अपने चारों तरफ की वीरानी को देखा। वह बिलकुल ही अकेला था।

शाम की नमाज पढ़ने जाने के बाद उसने अन्दर जाना बिलकुल बन्द कर दिया था। जाड़ों की रातें तो कमरे में गुजर गयीं। मगर गर्मियों की रातें काटने के लिए उसे बाहर निकलना ही पड़ा। थोड़ी ही दूर पर नीम के नीचे कम्मो की चारपाई थी। मगर उस चौपाल में अपना किसका वक्त गुजर सकता था! वह तो हर वक्त तैयारियों में डूबा रहता था। और जो वक्त तैयारियों से बचता था, वह उसे सल्लो को याद करने में गुजार दिया करता था। लेकिन यह बात भी उसी को मालूम थी कि वह सल्लो को याद कर रहा है।

का भाई कम्मो, तुम्हारा उसका साथ रहा का?' नन्नू ने पूछा।

डाक्टर साहब! कम्मो ने नुक्का की घूरने से नाक सिकोड़ते हुए कहा, हम त इ डाक्टरी गुन-ढंग फँस न गये। हकीम साहब और उस्ताद त अब हमरा तमाशा सब के रुखसार तो है। अब आप बताइए की हम घर घर ढूँढ़ते त ना रह गये कि इ लागो! हमरे किहाँ इलाज बगैर अबके जा। नया जमाना है। नये-नये मरज निकल आये हैं। हकीम साहब के पास न कुछ है हकीम लुकमान के नुस्खे धरे रहे। त ऐसा कोई बहुत अच्छा होय। एक दिन हम बुला के कहिन कि तुं डिस्पेन्सार हो जइहा। अउर पता नाहीं का अउर बाता कर लागिन। कम्मो ने उस उपन्यासकार वाले गुस्से कर दी। तकिये के नीचे से बीड़ी का बण्डल निकालकर उसने एक बीड़ी सुलगायी। नन्नू ने भी एक सिगरेट सुलगा ली।

नन्नू को भी यह मालूम था कि कम्मो की डाक्टरी ने गाँव में एक हंगामा खड़ा कर दिया है। एक तो उसके मियाँ का लड़का इतना बेचारा हो गया था कि उस पर सबका दिल व दिल टेढ़ा कम होता जा रहा था। उन्होंने तो कम्मो को (जिसे अब यह कम्मो न कहकर कमालुद्दीन कहा करते थे) डोम-चमार मर्दों का बना दिया था। इसलिए तो यह थी कि कम्मो की तीन शादियों ने

उनकी रियाह तक का ज़ोर कम कर दिया था। नहीं तो रात में घरवालों का सोना मुश्किल हो जाता था। बस रहमान बो और फ़िद्दू के ख़याल में तो उनके पादने का डंका उसी ज़ोर शोर और आन बान से बज रहा था। हाँ घर के बाहर अब वह ज़रा दम भालकर पादा करते थे। इसलिए कम्मो ने कमाल तो वाकई कर दिखाया! लेकिन कम्मो की डाक्टरी जिस बात ने चला दी वह यह थी कि उसकी दवाएँ जब्बार के दवाखाने की दवाओं से सस्ती होती थीं। और सबसे बड़ी बात यह है कि अंग्रेज़ी दवा फिर अंग्रेज़ी दवा है।

मगर ज़ाहिर है कि हकीम सय्यद अली कबीर ज़ैदी को रहमान बो और जब्बार मियाँ के हरामी लड़के की डॉक्टरी एक आँख नहीं भाती थी। उन्हें होमियोपैथी से विरोध था। बात यह है कि होमियोपैथी वाले गाँव गाँव एक कमरा लेकर बैठ गये थे। न नब्ज़ देखना जानें न क़ारूरा। मगर धड़ाधड़ इलाज किये जा रहे थे। लोगों को उससे फ़ायदा भी हो रहा था। यह ठीक है कि हकीम साहब कभी कुछ नहीं लिया करते थे अपने बीमारों से। मगर घोड़े या इक्के का किराया तो मरीज़ों को देना ही पड़ता था। इन लोगों के पास पैसा भी नहीं था। इसलिए हकीम साहब के यहाँ मरीज़ों की संख्या कम होने लगी। आस पास के यह घूमनेवाले डाक्टरों को वह फिर भी झेल जाते लेकिन कम्मो ने तो ठीक गंगौली में अपनी दुकान सजाकर हकीम साहब की कमर ही तोड़ दी थी।

'हमरा का, मर ज्या इ कमज़ात कहीं!' हकीम साहब ने कम्मो को तो अपनी तरफ़ से यह ऐलान कर दिया और अपने हाथ भी झाड़ लिये। लेकिन यह हार बड़ी भयानक थी क्योंकि गंगौली और अड़ोस पड़ोस के दूसरे गाँवों में साढ़े चार सौ साल से उन्हीं के बाप-दादा नाना का दवा दारू करते आ रहे थे। इसलिए उन पुश्तैनी मरीज़ों को कम्मो के दरवाज़े पर देखकर उन्हें दुःख होता था। फिर उस दिन तो ग़ज़ब ही हो गया जिस दिन ख़ुद उनकी बीवी ने उनसे आँख बचाकर अपनी गाय वाली को कम्मो के यहाँ भेज दिया—बस हकीम साहब ग़ुस्से में खड़े हो गये। [illegible] बीमार रही थी। थन फट गये थे। घर के टोटकों से न अच्छा हो सकता था।

इसलिए जब उन्होंने देखा कि गुरु नवी भी अपने बच्चों का मसीहा गनिया मिला रहा है तो वह बुझ-से गये। बोले, 'ठीक है! अब रह देखें का रह गया कि हमारा ननिना का इलाज ऊ इक्कादा समझा कर।'

न अच्छा, आप गये रह अनावलपुर अउर हैं माटा मिला मार राय चली जात रही। जब है बार तरह ना पटानी त हम आर हियों भेज के दवाई मंगवा लिया।

गार है बेटा!' हकीम साहब ने बिना आँखें उठाये हुए कहा, 'हम अनावलपुर म मडुरे बात न रहे न!

पत्तन के पास इस बात का कोई जवाब नहीं था। इसलिए वह अपने बच्चे की बीमारी का मातम करता जो उस वक्त शानान के दर में खड़ा हुआ पत्तन का धाम का स्पष्ट नजर देता रहा था। मगर हकीम साहब पत्तन का इस बात पर ध्यान बिना घर में बाहर चले गये। पत्तन बिलकुल हक्का बक्का रह गया क्योंकि अब तक लगा लगा हुआ था कि उसने बिटिया का मारा हो और हकीम साहब ने उस डाँटा न था।

गना बुनाई होज के किनारे उकड़ूँ बैठा बीड़ी पी रहा था। हकीम साहब को आता देखकर वह उठ के खड़ा हो गया। हकीम साहब अपनी चारपाई पर डाले हुए बिस्तर का टेक लगाकर बैठ गये और जली हुई चिलम से कश लेने लगे। गनिया लपककर दूसरी चिलम भर लाया। उसे फूंक फूंककर उनके हुक्के पर जमा दिया।

बच्चनिया को हालत बहुत बिगड़ गयी बाय। गनिया ने कहा।

न हम का करें ब! हकीम साहब ने सवाल किया डाक्टर कमालुद्दीन दिहीं काहे न जाता?

जनी आपे लग निखिन।

हम तो ऐसन बलिनवार। जमाने हम हैं। तार-त्योहार पर इनाम हम दें। पर घर के बालन-बाला हम हैं। मरे न ठरुर के वामन जमीन हम दें। मगर इलाज कराई डाक्टर मदद कमालुद्दीन जगी! अब ई जमाना आ गया है का। सरकारी का का सफर नलीनों में ऐसा लाग बस गया।

'हम त ना जाते रहे, मालिक!' गनिया ने कहा, 'बाकी हमार मियाँ जार जबरदस्ती से भेज दिहिन।'

त हम्मादे स जावे वाह न कहता की बदरुनिया की हालत बिगड़त बाय। हिआँ का करे आया है। हम मुदा जिलावे का नुस्खा ना मालुम।"

गनिया उनके पाँव दाबने लगा। धीरे-धीरे हकीम साहब लेट गये। गनिया बदरुनिया की हालत सुनाता रहा और हकीम साहब अपनी बारीक कतरी हुई मूँछों को दाँतों से कुचलने की कोशिश करते रहे।

आरो जल्दी से बिआह द। हकीम साहब ने राय दी, अब बरर नरर मुहवाँ का दम रहा त!

गनिया यह सुनकर भी उनके पाँव दाबता रहा। हकीम साहब चुपचाप हुक्का पीते रहे और दिल ही दिल में अपनी बेटी फकरुन को डाँटते रहे कि अब जो लोगों को मालूम होगा कि खुद हकीम अली कबीर की नवासी का इलाज कमुआ कर रहा है तो उनके यहाँ कौन आयेगा? सवाल आमदनी का नहीं था। क्योंकि हकीमी उनका पेशा नहीं थी। सवाल था इज्जत आबरू का। अगर गनिया को कम्मो के यहाँ हम्माद ने भेजा था तो इसका मतलब यह हुआ कि उसे डाक्टर बनाने में दक्खिन पट्टी वालों की हरमजदगी है। नहीं तो उसकी यह हिम्मत नहीं हो सकती थी कि अपने घर पर डाक्टर कमालुद्दीन को बुला लेता।

'या अली!' वह कराहकर उठ बैठे। 'हमका घर ले चल!' उन्होंने गनिया से कहा। 'गुलरमवा का बुला के घर ओर भेजवा।'

गनिया चला गया।

हकीम साहब चौकी के किनारे बैठकर वुजू[1] करने लगे।

'ए भाई अनवारुलहसन बड़ा रंज कि कलकत्ते में रहना ना गया।' मौलवी बेदार ने वह फाटक में पाँव रखते-रखते कहा, 'बड़ा गड़बड़ भई है।'

'कह बात पर रंजना हो गया?' हकीम साहब ने पूछा।

---

[1] नमाज पढ़ने से पहले जो हाथ मुँह धोया जाता है।

"अर ऊ आफिस्तान-पाकिस्तान की कन्नो बात भइ होइह !"

मौलवी बशार ऊमा चारपाई पर लेट गये जिस पर हकीम साहब लेटे हुए हुक्का पी रहे थे और पाँव दबवा रहे थे।

"सारी बिना कबन !" हकीम साहब ने कहा, "सारी बात सुन के भूल गए का बुढ़वा ? बिना रमा की ना किया गया। अरे-अरे अरे ! ई का कर रहा है कमबख्त !" उन्होंने अपने हलवाहे के लड़के को डाँटा जो इमाम चौक पर पाँव रखे खड़ा था। "ई हमनरना कहाँ है रे ! एँ"

"सुन रहे हो ई हरामजादा हिन्दू मुसलमानन के घर घुस घुस के कनन कर रहे।" मौलवी बशार ने कहा।

"बाबा ! मुसलमानो का बड़ा हरामजादा ना है।" हकीम साहब ने नाक पर हाथ रखकर कहा, "बाबा ! आपका क्या ख्याल है ?" उन्होंने नमाज की चौकी पर बैठते हुए कहा। फिर वह अल्लाहो अकबर कहकर जा-नमाज बिछाने लगे।

"नाहीं ई कांग्रेस वाले हिन्दुअन का दिमाग बिलकुले खराब कर दिहिन है।" मौलवी बशार ने कहा।

"अल्लाहो अकबर !" हकीम साहब ने नमाज की नीयत बाँध ली।

मौलवी बशार उमराव जान[1] के किसी शायर का कोई शेर गुनगुनाने लगे और अपनी जमींदारी के झगड़ों पर सोचने लगे। वह बहुत दिनों से मगरई[2] के बाबा जमीन पर नज़र गड़ाए हुए थे। मगर हकीम साहब से डरते भी थे। लेकिन इस मामले में खुलकर हाथ डालना नहीं चाहते थे। उस जमीन पर कुछ दिनों और हम्माद मियाँ की आँख भी थी। मौलाना का ख्याल था कि ये सारा झगड़ा खत्म हो तो यह जमीन उनको मिल सकती है। क्योंकि इन लोगों को अपना अपना बात रखने के लिए किसी तीसरे नाम पर समझौता करना ही पड़ेगा।

"सुना है कि हम्माद बहुरिया से ऊ बाबा जमीन लिखवाय वाले हैं।"

---

[1] लखनऊ के दौर का प्रसिद्ध शायर।
[2] गंगौली के एक भाग का नाम है।

उन्होंने हकीम साहब से कहा जो नमाज पढ़कर तसबीह पढ़ रहे थे, "अउर फुन्नन बफतिया से कहिन है की अगर "

'लग रहा की फुन्नन फिरा जेल जाय के फिराक म हैं।" हकीम साहब न कहा, ऊ जमीन हमरी है। हम्माद और फुन्नन की एसी की तैसी।"

'ऊहे त हमहूँ कह रहे।'

हम्माद अउर फुन्नन को ऊ जमीन ना मिल सकती। चाहे कोई अउर ले ले। तू काहे ना ले लेत्यो। इधिर उधिर तोरी जमीनो है।'

ना भाई! हम अकेल आदमी इ झगड म ना पड़ेंगे।'

फुन्नन तोरी जउन जिल्लत किहिन रहा का तू ओको भूल गयो ?'

"ऊहो भूले की बात है ?' सवाल हुआ।

"भूल की बात ना है। बाकी हकीम साहब बोले, 'इ जमान म त एतना बातें एक्के साथ होय लगा है की आदमी बउरा जाय कि का याद रक्ख अउर का भूल जाय। ममुआ हरामजादा डाक्टर हो गया है। हम अपनी हाली से कहा की एको कउनो नौकरी दिलवादेया, की कोई तरह ई बलाय हियाँ से टल। बाकी ऊ हो त लाट साहब हो गये हैं ना। एका नौकरी मिल गयी होती त ई अपन हामापथी के बकसे से हमरी नाक त ना न कटता।

बाकी ए भाई ओके इलाज स फायदा त हो रहा। बशीर मियाँ न कहा, तूँ एक जमान स हमरी बवासीर का एलाज कर रह्यो। आकी दवाई छिन गाया है अभइ। खून त बिलकुल बन्द हो गया है।

हाँ! तोरे बाबा अली मुहम्मद वा मरहूम की बवासीर का इलाज ऊह किहिन रहा! हकीम साहब न कहा बा जमान के साथ बवासिरया बदल गया है। अली मुहम्मद वा मरहूम की बवासीर पुरान जमान की रही अउर तोरी नय जमाने की।

ए भाई अब ई त तोरी जबरदस्ती है। बशीर मियाँ गिगिया गय, ज की दवा से फायदा होइह आदमी ओके पास जयबे।'

अरे त हम ये के सामने हाथ जोड़ रहे! हकीम साहब का बड़ा गहरा गुस्सा स मार हो गया। और बशीर मियाँ के जाने के बाद भी वह देर तक

खड़खड़ाते रहे। आँगन में इधर-उधर टहलने वाली बकरियाँ इधर-उधर भाग गयीं। हकीम साहब उठ गये।

'अरे सुनो, चिलमन गिरा दो रे।' उन्होंने हाँक लगायी।

'इ बेगार का बखत रहा भाई साहब?' हुसैन अली मियाँ नीम के नीचे से टहलते हुए आये और कपड़े की एक कुर्सी पर बैठ गये।

"आव रे हुसैन भाई!" हकीम साहब ने कहा, "बेगारे पर वालों ज़मीनिया सेठ की चिट्ठी में है। वाकी ए हुस्नू! ऊ गुलनागुल मसीहि[1] में मन्नतसराजिम[2] तक पढ़ लिहिन त का ज़मींदारी बचा आ गया। हम कहा की मुँह से ह्वा। बस मन मगन होइ।" वह मुसकरा दिये।

"बाकी ई त हमहूँ सुन रहे की पुरान ऊ ज़मीनिया का आराबाद के चिट्ठि में है।" हुसैन अली मियाँ ने कहा।

"ऊ का आखिरकार आवा?" हकीम साहब यान ... अमानत मुसकरा करवा लेगे। अउर हमार म ई हिम्मत ना है। सारा को समझा-बुझा दिये हो ना?

"सारा की त सोलहनियान में गोड़ पड़ रहा," हुसैन अली मियाँ ने कहा, "ऊ ससुर अब का करिह। बाकी हम कह रह की का ज़माना आ गया है। गुलरमवा का बाप चमनरमवा अब ई बात ही नहीं हो रहा है। गांधी टाला पहिने मार तकरीर करता घूम रहा कि ज़माना बदल गया है। अब ज़मींदारन का बार जुलुम ना चलि।"

"तूँ गुलरमवा चमनचार का कुछ समझा काहे ना दिया?"

"अरे ऊ नेता का बाप है साहब। ऊ अब हमरा सुनिह।"

नेता का नाम सुनकर ... उन्होंने चुप की तरह उस सारी का याद किया ... मुँह चोर की तरह कहाँ दुबक रहा जी?

नेता साहब घर रहे रहे। हुसैन ने सारा का सलाम करके बाहर कहा।

---

[1] गुलनागुल ... का कहिए।

[2] उन्हीं का ... की ... दिया दिहिन।

"सब लोग ठीक ठाक हैं ना ?" हुमैन अली मियाँ ने पूछा ।

"जी हाँ । चच्ची की तबिअत तनी खराब है । मगर कोई घबराय की बात ना है । अ सब लोग आइ गये । बस मँझले अब्बा अउर चच्चा रह गये हैं । ऊ हो लोग जुमरात तक आ जयहें ।"

"जुमरात को आये वाले हैं त फिर आये की तकलीफ काहे को कर रहे ।" हकीम साहब ने कहा "जुम्मे को निकाह है और मँझले अब्बा आ रहे जुमरात को । ल्यो हुक्का पीओ !" उन्होंने नैचा उसकी तरफ घुमा दिया ।

यह इस बात का इशारा था कि अब उसकी गिनती बड़े-बूढ़ों में होने लगी है ।

"तनू हम पड़ा आदाब ! मुँह से नहीं चलता हुक्का । धुआँ बहुत कड़आ लगता है । कुद्दन को हम लिखवा रहा की आके हमरे बिआह में शरीक हो, बाकी ऊ मरे-भुसरा जवाबो ना दिहिन ।"

"अरे भइया ऊ त अइसा फँस गये हैं कि का हम तूह का बताये", हकीम साहब ने एक तकरीर कर डाली कि तहसीलदारी का काम कितना मुश्किल होता है । और उस पर कांग्रेस ने नीचे जात वालों को सिर चढ़ाकर हुकूमत के काम को और मुश्किल बना दिया है । "खुदा समझे इ गंधियों से । बाकी ऊ हम्मे लिखिन है की आये की पूरी कोशिश करिहें । बाकी ई न्योता फसाद पड़ना त कइसे अयहें बिचारा । हम ई पूछ रहे बेटा की लोग बाग का गंगौली से घबरा गये हैं ? बिना बात की बात पर लड़ मर जा रहे ।" मातम के होने की आवाज सुनकर बैठ रहे ... भाई, गाँव में ई मातम के गावे वाले रहा ।"

"अनवारुलहसन की बीबी बीमार हैं ना !" हुमन अली मियाँ ने कहा "सुना है की शहर से त्रिलोकीनाथ डाक्टर आये वाले हैं । ऊ आये होइहें ।"

"त्रिलोकीनाथ का कउन जरूरत पड़ गया ?" हकीम साहब ने पूछा "रमुआ हरामजादे का बाप ना रहा निन्दिन !"

"हम ई देख रहे की कुछ दिन से आप रमुआ का नाम सुनते ही बका मार गलियाया ।" हुमन अली मियाँ ने कहा ।

हकीम साहब बिलकुल चुप रहे मगर फिर उसी बात गनिया आ

गया। और आज भी वह शिवाकानाथ की मास्टर की शान में कसीदा पढ़ने लगा।

यह ख़राब है मियाँ अख्तर। बिलकुल वस्ले चउर का नाज़िया लग रहा।

नाबा बर वस्लचार! नाबा बर! हकीम साहब गलिया पर चरम पर नाबा! नाबा! लग न गया हम्म। द वहनचार मास्टर का नाज़िये में मिला रहा।

ए बाद लंबि में बड़ा धूम है। बनार मियाँ आ गये।

लग आयी मास्टर?' हकीम साहब ने पूछा।

'बड़ा खुबसूरत है। मौलाना ने कहा 'अउर नगना मार कुर्सी पर बन्ना डाक्टर साहब ने अंगरेज़ी में बात कर रहा।

'अब ई ज़माना आ गया है कि ज़मान कुर्सी पर बन्ड लाग। अर नगना! हकीम साहब ने आवाज़ दी 'कुरसिया सब भीतर पहुँचा दऽ। बड़ न था अंसा न गाना देखा हामें लाग। अब का होगा। कमीन न वहटियै कुर्सी पर अउर अगगाह ठिठयाट मुँह पर म।

ए शाना बाज़ा न दर म बग लगा हो रहा। पगारन का मैशरा कर्ग कुना न लवारे म हाथ मगाया।

कमबा शिरी भज दया जल्दा म! हकीम साहब न जमकर कहा।

'पाकिस्तान का ओट देवे की वजह से कट रहे।"

'ए भाई, ई त कउनो बात ना भई।' हकीम साहब बोले, "हमरा ओट रहा, हम जेका चाहा ओको दिया।

'इ त ठीक है," मौलवी बेदार बोले, "बाकी इ पाकिस्तान म कउनो न कउनो गड़बड़ जरूर है। जेह दिन से ई जिन्नवा मलऊन पाकिस्तान की बात निकालिस है तही दिन से माथा ठनक रहा। अब देख लेया। कलकत्ते म बलवा भया। छपरे म भया। दू चार दिन म गाज़ीपुर म हो जय्यहै।"

अब खुदा जउन दिखलय्यहै तउन देखा जय्यहै। हकीम साहब ने कहा, अब त हम पाकिस्तान को ओट दे दिया।

ई का मालूम पूरब अउर पच्छुम का मिलाव वाली सड़किया शहर से जाये। मौलवी साहब ने कहा।

तूहै कउन फिकिर है? हकीम साहब ने सवाल किया 'न आगे नाथ, न पीछे पगहा। पाकिस्तान बने तब का, अउर जो न बने तब का। सफनिया से बिआह कर लेत्या तब पूछत।

लाहौल विला कूवत! बेदार मियाँ उबल गये। ऊ त हरामजादी रह गयी है हमरी बीवी बन का!

ओ का हरामजादी मत कहिये। हुसन अली मियाँ ने कहा, मिगदाद सुन लिहिन त गजब हो जय्यहै।

ठीक उसी वक्त मिगदाद ने बड़े फाटक में पाँव रखा। उसने किसी को सलाम नहीं किया। उसके कंधे पर किसाना का लट्ठ था और मुँह पर मन भर की मिट्टी। किरमिच के जूते में उसके गन्दे पाँव नाच रहे थे। पाजामा पहनना तो उसने छोड़ ही दिया था। उसका कहना था कि पाजामा किसानों का पहनावा नहीं है। वह एक मैली उठंगी धोती बाँधे हुए था।

लाठी को इमाम चौक पर रखकर अँगोछे से माथा पोंछता वह चबूतरे तक आया।

उत्तर पट्टी में दूर-दूर तक सन्नाटा छा गया।

हम ई कहे आये हैं की सँगर पर वाला जमीन हमरा है अउर जेह माई के लाल म दम होए ऊ हुआँ आके हमें हटा दे और आधा पा ले!"

'बग्ना जबरदम्ना है ?" ग्काम साहब न वहा ।

आप हमर बुजुरग हैं ।" मिगग्दाद न वहा "आप म त हम ई ना वह मरन । वाग्रा छार हजरत[१] का कसम, खतवा हमहीं जानेंगे । ई वात हम हम्मार मियाँ म कह दिया है ।

'सुन रहा ई हरामजाद का बात ! ' वदार मियाँ न टुकरा लगाया, 'ऊ गार याप है ना ? हम्मार मियाँ वह रहा !"

बाद आप हम ना जत । मिग्रदाद बोला, "ऊ जमींदार हैं और हम काश्तकार । अउर ई मून निजिय का फुसन चा अउर परमरमवा दूना हमरे गाप हैं ।

अपना लाग न्टाकर वह चुपचाप चला गया ।

हकीम साहब न अगर उम बुलाकर कह दिया होना कि मेंगर पर वाला गग वह चाहत हैं ना शायद वह बुरा न मानना । शायद चुप रह जाता । लकिन यह किमा का धीम म नहीं आ सकना था चाह वह हकीम साहब हा या हम्मार मियाँ ।

का मुहित हकीम अभी बचार ' फुसन मियाँ न पूछा ।

अर ऊ कहा का सरत है ! मिगग्दाद न कहा, 'हम वह दिया है की ऊ जमान हमरी है अउर आरा हमहा जातेंगे ।

'मैं ना यह कहता हूँ का हम्मार मियाँ क जार-जुलुम का जमाना खतम हा गया । परमराम न कहा और फिर उमन अपनी गाँधी टापी का जरा और सज कर लिया, जमीन का मालिक आ है जा हल चलायी, जा महनत मशक्कत करी । आर न हर का मुखिया धाम म मियाँ लागा मे अपना गिम्ना गार लिया है । आप किमान भगवान है ! उमन दाना हाथ जाडकर मिगग्दाद का नमस्कार किया ।

ए आई म ई मब का बात रहा ! फुसन मियाँ न हैरना स कहा, 'त म कांग्रसा होक अपनी जबनिया भूल गया ।

---

[१] स्याम हजरत के दो नाम हैं । दोनो उनका कसम कम गान है । मगर जब ग्र है यो यहीं गाड़ है ।

अरे त का करी मियाँ !' परसराम मुसकराया, 'सहर वालन आपन गँवरउ वाली कइसे बाली। आखिरो चुनाव उनाव लडे के हाई। त का देहली की पालिमिन्ट म अइली गइली से काम चल्ली ? त सिक्खन बाडा सहर वालन की बोली।

यह बात न फुन्नन मियाँ की समझ म आयी और न मिगदाद की कि आखिर दिल्ली म उस भाषा से काम क्या नहीं चल सकता जिससे गगौली म काम चल रहा है। और इस हैरानी म वह यह साचना भी भूल गये कि परसराम दिल्ली की पालियामेण्ट म कैसे जा सकता है। फुन्नन मियाँ बीडी जलाने म लग गये।

त अब मैं चल रहा हूँ। परसराम न कहा।

'एक ठो बात बता !' फुन्नन मियाँ न कहा सुन रहे की बगाल बिहार, पजाब अउर कानी कहाँ-कहाँ मार हिन्दू मुसलमानन म मार लडाई हो रही। त त गाँधी की पाटी का है। कउनो दिन उनसे पूछ की ई सब का हो रहा और तोहर वास्ते का हुकुम है उनका ?

महात्माजी म मिल्लल आसान ना बाय।

ल्या। अरे, तैं उनही की पाटी का है न रे ?

पाटी का त हइ बाकी

धत् ! फुन्नन मियाँ ने उसकी बात काटी हम त अपन गाँववालन म एक दिन न मिलें त सब उपदरो कर द। त जब त गाँधी स मिलत ना किय है त फिर उनहे खलीफा कइसे मान लिय है ?

परसराम के पास इस सीधे सादे सवाल का कोई जवाब नहीं था। उसे सचमुच यह बात नहीं मालूम थी कि उसने गाँधीजी का अपना नेता क्या मान लिया है। शायद इस गाँधी टोपी के लिए ! शायद उसे गाँधीजी से अधिक इस टोपी की जरूरत थी जिसकी वजह से सरकारी लोग उससे डरने लगे थे। और जिसकी वजह से उसकी इज्जत भी बढ़ी थी और आमदनी भी। वह कोई काम नहीं करता था और आराम से था। पहले वह दिन रात काम किया करता था और बेआराम था। अब वह गाँव सीडर था। तकरीरें करता था। जिला-कमेटी का मेम्बर था। पण्डितों ठाकुरों और कायस्थों के साथ बैठता

था। कलकत्ते में मिनिस्ट्री करता था, जहाँ अब भी उसका बड़ा भाई माली था। दलदार नक्श सलाम करता था। उसने चिलम और नारियल पीना बन्द कर दिया था। वह सिगरेट पीने लगा था। और सबसे बड़ी बात यह था कि अब वह हर वक्त बगुले की तरह चमकदार, उजले और सफेद कपड़े पहने रहता था। उसकी कलाई में एक घड़ी बँधी रहती थी। उसके कुर्ते की ऊपरी जेब में फाउन्टेन पेन लगा रहता था। और उसकी नाक में चौड़े फ्रेम का गहरा भूरा चश्मा चढ़ा रहता था। परसराम की गति इतनी तेज थी कि उसे इस बात पर सोचने का मौका ही नहीं मिला कि वह गांधीजी को अपना लीडर क्यों मानता है और यह कि इधर उधर बलवे क्यों हो रहे हैं।

'आ गए न!' नन्नू आ गया। 'का भइ परसराम, का हाल है?'

'अच्छा हूँ मजूर साहब!' परसराम ने कहा, 'इन साम्प्रदायिक बलवों ने परेशान कर दिया है। समझ में नहीं आता कि इन्सान पागल क्यों होता जा रहा है।' अपना यह तकरार उसे बहुत पसन्द थी। यह तकरार वह कई जलसों में कर चुका था। हर जगह उसकी यह तकरार खूब चली भी था। इसलिए उसने अपना मनपसन्द तकरार नन्नू को भी सुना डाला।

'सुन रहे न!' नन्नू मुसकराया, 'कैसा साफ जबान बोल रहा। आज कल का ऐसा लगता है।'

नई है हमार ...

जरिको ना।' जवाब मिला, "अउर कुछ समझ मे ना आ रहा की आखिर किया का जाय। पाकिस्तान के बन पर त ई हाल है अउर जो ई बहनचोद कही बन गया त हम समझ रहे कि गंगौलिया म खून-खराबा हो जयहे। हउ मादरचोद मातादिनवा अभइयें से कानाफूसी कर रहा इधिर उधिर। सुन रहे की सलीमपुर ब्लाक म एक ठो जलसा भया रहा रात को। गंगौली अलावलपुर, हुडरही अउर सलामपुर पर एक्के साथ हमला कर को और मियाँ लोगन के काट के डाल देवे को मिसकोट भइ। अउर ईहो त कहा है की जब एक घर म कभइ कोइ चमाइन ललाइन या भरिन आग्नि डाली गया होय तब-तक घर की लरकिन को निकाल लिहा जाय!"

'ई सब खबर कउन देता है आपको?'

'अशरफुल्ला खुद बताइन है हम्म।'

'हिन्दुआ सब उनहूँ को जलसवा म बुलाइन रहा का?'

'तू त लगभ्या बाल की खाल निकाल!' फुन्नन मियाँ चिढ़ गये, 'ना मनया त सुनो। छिकुरिया गया रहा उ जलसा म। ऊ साला मातादिनवा जलसा म भाषन दिहिन। आके भाषन का माँ...' उनकी नजर दुलहन पर पड़ गयी जो भीतर से आकर उनके पास खड़ी हो गयी थी। 'तू हिआँ का कर रही ह! जा रसूल!' दुलहन यह फटकार सुनकर सरक गयी। फुन्नन मियाँ फिर नन्नू की तरफ मुड़े, 'त मातादीनवा पहिले नसकार किहिन। कहिन की मलिच्छ मुसलमानो को भारतवरस से निकाल देव का चाहि। अउर ई बहनचोद का मन्दिर बनाए के वास्ते जमीन हम दिया रहा। मायन-बीये का दस मण्डा जमीन ओही का दिया। अउर ई साला तकरार कर रहा अउर एहो ना सोच रहा की आखिर फुन्नन मुसलमान है। हम्म जो ई कहीं मिल गये त मारे के टँगिया चीर देंगे!'

'काहे? ऊ तकरीर का किहिन?'

'ऊ मादरचोद का याद मत करो हम से। अब हम का बतायें! मन्दिर के नाम पर जमीन न दिये रहन त आसमीवाल की माँ घाट के रख देव। बाकी बीच म मन्दिर का नाम आ जाय से हमरा हाथ रुक गया है। यह मार की मन्दिर त ऊ हो भगवान-भगवा है। ऊ कमरका अउर लाहार का बहुत

जिम्मा सुनाइन कि एक-एक हिन्दू औरत पर दस-दस मुसलमान उतर गये।
कहा हम्म फिर मर जायें ऊ।

का किहिएगा ?

'तनी पूछो इनसे कि मुसलमान हिन्दुनियन पर से उतर गये, बाकी तनी इहो बतावा कि मुसलमान औरतन की लीप-पोत के हिन्दू लोग मन्दिर मा पाल्ह दिया रहे। मगर, ई त अलग बात है। ऊ जलसा म आस-पास के बहुत हिन्दू जुटान रहे। जब ऊ सब ई सुनिन त साफ कह दिहिन की ई ना हो सकता। त मोलाराम लाग गाय की दुहाई देव। ऊ महनवाद फकिरवा कसाई बन एक ठो गाय काट दिहिस। गाये रही बाम्हन की। बछिया खुल गयी रही मार। त जब ऊ बिचार लोग गाय का नाम सुनिन त चुप हो गये। तब्बो छिकुरिया ना माना। पूछ बइठा कि—ए पण्डितजी, जउन जमिनिया तुहँ माफी म मिला है ऊ कहा है। ई सुनके पण्डितजी लोग बगलिन झाँकें। का छिकुरिया कहिस कि ई जनम का आस-पास इक्का हिन्दू हकीम डाक्टर ना है। कोई बीमार पड़ित उ का होइहै। ओके पास गाड़ी घर है का शहर डाक्टर निकालै। बस इत्ता म गड़बड़ मच गया। जलसा खतम हो गया। बमार कब आ रहे ? इन्होंने बात बदल दी।

बस यो पड़ता।'

अन्दर से औरतों के गाने की आवाज आ रही थी

सखी री समधिन आयी है बड़ा मजेदार-सा

आज रमहिया रिद्ध गाना का धुन

मनवा पा के हुई मतवाला झूमेगा छुन छुन छुन

गाना कहारों की बाढ़ म डूब गया। फिर दूसरे गाने ने सिर उभारा

समधिन लोग झाला बन के गाना म

समधिन का पकड़ा बागन के बीच म

माना म अगिया लगाय

बड़ा नौटंकाबाज

बड़ा धुरन्धबाज !

"बड़ा गजब की मरदाना आ रहा है फ़ैज़ाबाद म।" फुन्नन मियाँ ने कहा।

'हम त ई सुना है साहब,' मिगदाद ने कहा, 'की कानी कउआ सुआमी जी आए हैं कानी वहाँ से। ऊह गाँव गाँव फिरके हिन्दुअन को भड़का रहे।'

'हिन्दू कउनो चूतिया ना है की उनके भड़कावे में आ जय्यहें।' फुन्नन मियाँ ने कहा।

'अगिले में बात ई है दादा की ई जो मिली जुली सरकार बना है न...'

'सलाम, साहब।' छिकुरिया आ गया।

'का बात है?' फुन्नन मियाँ ताड़ गये कि कोई बात है। 'एहर आ!'

वह उसे लेकर एक तरफ़ बढ़ गये।

'सलीमपुर के स्वामी साहब अउरी बारिसपुर के ठाकुर साहब भी लवड़ा चल ही के आये।'

'त?'

'आज रात की जुनी गढ़ी पर धावा बोलल जाई। सारे अहिरन का पड़ाव पड़ल बाय। पूरी छप्पन बाय ठाकुर साहब के जगवा भी। सुआमी जाओ महजद बाल्न। अउरी ठाकुर साहब सलाम जा के हियाँ बहलउल बाल्न की ई मौका बाय। त हकीम साहब भोर में गाजीपुर चल जायँ के चाहिन।'

'बारिसपुरवालन के अइसा दिन लग गये की ऊ अब सलीमपुर पर चढ़ाई करे लायक हो गये। तोरा कोई आदमी हुआ है की ना?'

'दस जन हय्यन!' छिकुरिया ने कहा, 'बाकी जउन हिन्दू मुसलमान के नाम पर लकड़ी रख गइल त कभी मुसकिल पड़ी।'

'हिन्दू मुसलमान करके कोई के ठो पोर टही कर लीन।' फुन्नन मियाँ ने अपनी मूँछों का ताव दिया, 'त हिन्दू है की मुसलमान?'

'हम त हिन्दू हई मीर साहब,' बाबा।

'बाबा आप ही के हई। न सबर न हमर साथ का तड़ हिन्दू भी जय्यहें।'

फुन्नन मियाँ ने तो उस रात इन्तज़ार करना ख़त्म कर दी। लेकिन गढ़ी सलीमपुर में सन्नाटा था। हर बुजुर्ग गढ़ी की मजबूत और मशहूर मस्जिद में नमाज पढ़ रहा था।

मगर बारिसपुर में बड़ा चहल-पहल थी। और ज्यादा चहल-पहल में

बागिरपुर। मुसलमानों के तीन चार घर हैरान से यह सोच रहे थे कि आखिर होने क्या वाला है।

क्या सुनने के लिए दो चार मुसलमान बाग में जा बैठे और वे फौरन पहचान लिए गए।

तब भगवान कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन! हूँ तो मैं हूँ और मेरे सिवाय कोई और नहीं है। आज वही मुरली मनोहर भारत के हर हिंदू को पुकार रहा है कि उठो और गंगा और यमुना के पवित्र तट से इन म्लेच्छ मुसलमानों को हटा दो [illegible] स्वामीजी क्या नहीं सुना रहे थे!

मियाँ, ई हरे के हमनी के कहाँ जाये के पड़ी? एक अधेड़ मुसलमान ने एक हिन्दू से पूछा। दोनों गाँव के जने हुए थे। गहरे दोस्त थे।

ई त हमहूँ सोचत बानी। जवाब आया 'बाकी अउर ई भगवान का हुकुम बाय त नास्ता के हटाय कै त जरूरे पड़ी। पकिस्तान त बनते जात चल जाएगा।'

ई त बड़ हिंसा की बात अय्यहा। चला कहूँ से किराया भाड़ा जुटा इस से हम सरका बदल आई पाकिस्तान। हम पूछत की हमार बाप-दादा मजूर साहब का दादा ठाकुर साहब के बाप दादा के संग गढ़ी बाजन में रह के आवत-जावत की ना। त आजय काई हमनी से कोर ने कहन की चला तो पर कहाँ [illegible]

अरे सुनत आ मोहन! किसी और गाँव के एक हिन्दू जवान ने कहा ई बहनचो० मियाँ हिन्दू चिचियावत बाय!

ई बड़का बाबा के गाना सुन बाय? बागिरपुर का एक जवान चमार चिल्ला उठा।

नाहीं भया! करीमी ने बाच-बचाव कराना चाहा 'हम त जानी इ पूछत रहा कि जिना हमनी के कहाँ जाय के कहत?

पाकिस्तान जा बहनचो०!

किसी ने मियाँ पुकारा। अब तक किनारे अन्सी ने पाकिस्तान जा[illegible] बाप!

'वृन्‍ परनिया के गाली बक्‍कत बाड़ा !' अधेड़ हिन्दू ने कहा "लाज त ना आवत हाई ?"

' धर्म सकट में है। गंगाजली उठाकर प्रतिज्ञा करो कि भारत की पवित्र भूमि को मुसलमानों के खून से धोना है " स्वामीजी जोश में आ चुके थे देखो कि कलकत्ता और लाहौर और नोआखाली में इन मलेच्छ तुर्कों ने हमारी माताओं का कैसा अपमान किया है '

बोलो बजरंगबली की ' एक अकेली आवाज उठी।

जय ! सारा गाँव गूंज उठा।

फिर मजमा खड़ा हो गया। स्वामीजी अँधेरे में दूसरे गाँव की तरफ चले गये। और जब वह चले गये तो मजबूर होकर भीड़ को कुछ सोचना पड़ा। और उसने यह सोचा कि मुसलमान तो मुसलमान हैं। सलीमपुर और बारिखपुर के मुसलमानों में बस इतना फर्क है कि सलीमपुरवाले जरा दूर हैं और बारिखपुरवाले पास। इसलिए बजरंगबली की जय बोलती हुई भीड़ बारिखपुर की तरफ चल पड़ी।

यह खबर जब ठाकुर जयपालसिंह को मिली तो वह घबरा गये। सलीमपुर के सात साहब पर धावा करना और बात थी और बारिखपुर के हज्जामों जुलाहों और ... पठानों का कत्ल करना कुछ और। इन लोगों ने उनका क्या बिगाड़ा था। ये लोग तो हमेशा से उन्हीं के साथ जीते और मरते चले आ रहे थे।

... है माई बाप की ! ... आँगन में ढेर ... गया। न मालूम किस गाँव के कुछ हिन्दू जवान उसके पीछे लपक चले आ रहे थे। ये ठाकुर साहब ... ... गये। उनमें से एक बोली मुसलमान लगा।

ठाकुर जयपालसिंह ने ... का सहारा लिया। ... अपने ... में ... ... !

बोलो बजरंगबली की जय ! नारे की आवाज कहीं करीब से आयी।

... हो सोर ' जयपालसिंह ने ... से पूछा। ... ... था।

हम ओर ... ... पहुंचा ... सरकार ! ... ने कहा।

मकानों की मालकी ने गाँव में आग लगा दी थी। गाँव धाँय धाँय जल रहा थी।

अरे! अब ऊ सब जान जाएँ इनका घर फूँक। बहुत बोइन की तू ता परिस्तान। हम कहीं की ना छोड़ब इन। सब बिगड़ गइलन लोग।"

ठाकुर साहब ने खखारकर अपनी लाठी उठायी। ठकुरान में किसी ने किसी से कोई सवाल नहीं किया। तमाम लाठियाँ चुपचाप उठ गयीं।

और जब मकानों की गलियों में अंधकार का फरमान सुनानेवाला मजमा इन गिने चुने मुसलमानों के घरों के पास पहुँचा तो हैरान होकर रुक गया।

''ई सब भागल रहे काहे गइला, क्या?' जयपालसिंह ने कहा, "भागल जा साले!

भीड़ की समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि आखिर ठाकुर साहब मुसलमानों को क्या बचाना चाहते हैं। स्वामीजी ने तो कहा था कि गाँव में जो घुसियाँ छिपा हैं वे ठाकुर साहब की तरफ से हैं। और क्या ठाकुर साहब को यह नहीं मालूम कि मुसलमानों ने हिन्दू औरतों और बच्चों के साथ क्या सुलूक किया है। स्वामीजी समझ से परे वाला 'ई सब मुसलमान बाड़न, साहब!

तोहरा के इनसे डर लागत बाय?" जयपालसिंह ने पूछा 'मस्जिद में ... बाप का घर बा साले! ... हम अजनिया बदरी हइ ... हइ ... हिन्दू ... के सगाव ... बाय! वह ... ... हिन्दू मरियादा के डर से ... बाय तू ... के, ... चाहा। ... का ... बाय की ... ... हो साले!

इनका का ... मालिक का घर ... ... में आइल बाड़ी।

हाँ हाँ! ... नाहीं! भागा साले!! ... कि ... माई ... ... बाय! जयपालसिंह अपने ... की ... ... का ... ...! ... के सगाव ... के!'

... की ... हुई लाठियों ... ... पुरानी ... की तरह ... और फिर ... ... । ... के गिने चुने मुसलमान ... में ठाकुर साहब के घर

गये। बफ़ातीं ने कहा, आप कहें त हम लोग बहादुरगंज चाहे मऊ मुबारकपुर चले जाइँ?

गाँव से जाये का नाम ना लेव लोग। मारे बाद के ना रहे देइब। हई दंगा भुमड़ियावालन का। जाने काहे लोग मऊ मुबारकपुर गोंड मराय'

यह बात सुबह होते होते अड़ोस-पड़ोस के गाँवों-ठिकानों में फैल गयी। सीधे-सादे किसानों की समझ में नहीं आयी। कुछ स्वामियों के और कांग्रेस वालों के भी यह बात उनकी समझ में नहीं आयी कि अगर गुनाह कलकत्ता के मुसलमानों ने किया है तो बाग़ीपुर के बफ़ातनों, अलावलपुर के घुरऊ, हुड़रही के धमीटा को—यानी अपने मुसलमानों को सज़ा क्यों दी जाय? जिन मुसलमान बच्चियों ने बचपन में उनकी गोद में पेशाब किया है उनके साथ ज़िना क्यों और कैसे की जाय? उनकी समझ में यह भी नहीं आ रहा था कि जिन मुसलमानों के साथ वे सदियों से रहते चले आ रहे हैं उनके मकानों में आग क्यों और कैसे लगा दी जाय? उन मुल्लाओं को कोई कैसे मारे जो नमाज़ पढ़कर मस्जिद से निकलते हैं तो हिन्दू-मुसलमान सभी बच्चों को फूँकते हैं? किसानों की समझ में यह आता था कि झगड़े की ज़मीन की फ़सल काट ली जाय। ज़मीन के मामले में फ़ौजदारी कतल-खून हो जाय तो कोई बात नहीं। लेकिन यूँ ही सिर्फ़ इस जुर्म पर किसी का कत्ल कर देना या किसी का घर फूँक देना कि वह मुसलमान है उनकी समझ में आ ही नहीं सकता था।

थानेदार कासिमाबाद ने एस० पी० को लिखा कि उनके पास जितने आदमी हैं उनसे साम्प्रदायिक दंगा को रोकना असम्भव है। यह बात रोज़नामचे में लिख ली गयी ताकि सनद रहे और वक्त पर काम आये। कप्तान पुलिस ने डी० आई० जी० को लिखा। डी० आई० जी० ने होम सिक्रेटरी को लिखा था। फिर थानेदार कासिमाबाद ने सोचा कि गंगौली के मीर साहबान से बात कर लेनी चाहिए। वह घोड़ा कसवाकर गंगौली पहुँचे। हकीम साहब ग़ाज़ीपुर गये हुए थे इसलिए उन्होंने झम्मन मियाँ के यहाँ पड़ाव डाला।

सामने ही बड़ा फाटक था। जनाने मकान से रोने की आवाज़ आ रही थी। बाहरी ओसारे में लोग भरे हुए थे। ग़ाज़ीपुर के लोग भी आ चुके थे।

गिरने का ऊँचा पहाड़
बना सारा भारत में आयेगा

थानेदार साहब ने पक्के कुएँ पर नहा धोकर चाय पी। फिर पाँच-सात मिनट में उन्होंने अपनी मूँछें सँवारीं। आईने पर आखिरी निगाह डालकर वह हम्माद मियाँ के घर से निकलकर बड़े कमरे में गये।

हम्माद मियाँ ने लपककर उनका स्वागत किया। वह वज़ीर मियाँ वग़ैरह को सलाम करके एक कुर्सी पर बैठ गये। फ़ज़्लन मियाँ ने थानेदार को नफ़रत से देखा फिर वह इत्मीनान से एक चूनड़ उठाकर चल पड़े। कई लड़के जो इधर उधर भाग-दौड़ में लगे हुए थे थाने की गरज सुनकर ठिठक गये, फिर खिलखिलाकर हँस पड़े और भागते हुए अन्दर चले गये।

'फ़ज़्लन नाना अपनी ओर से पानी जैसे मुर्ग़ान का पड़ोसा!" सल्लन के बेटे वसीम ने अपनी ख़ाला मुन्नी को ख़बर सुनायी। मुन्नी ने अपने टेढ़े मेढ़े दाँत निकाल दिये।

अंदर से ई ख़बर सुनाय सीधे घर में आ गयी! सल्लन ने मुश्किल से मुस्कराहट दबाकर वसीम को डाँटा। फिर वह असग़री की तरफ़ मुड़ी, 'ए बहिनी! तनी जल्दी करो। अब्बा को अबहूँ इस्तिनजा होय लगिहे।

'ए बरा मनी ई पान बाहर पहुँचा देवा। अम्मन बी ने सद्दू से कहा।

ठीक उसी वक़्त दरवाज़े का पर्दा हटा। एक औरत चार बच्चों के साथ भीतर आयी। बड़ी लड़की कोई दस बरस की रही होगी। उसके बाल सलीक़े से सँवारे हुए थे। माँग भरी थी। उस औरत की माँग भी भरी थी और उसने एक ख़ूबसूरत साफ़ा बाँध रखी थी।

"सलाम बाजी! सलाम ख़ाला। सलाम दादी। सलाम, बुबू' उसने सलाम वालियों को अलग अलग सलाम किया। तमाम बीबियाँ उसे घूर-घूर कर देखने लगीं। असग़री ने अपनी ठण्डी उदास आँखें उसकी बड़ी बड़ी काली आँखों में डाल दीं। टेढ़े दाँतोंवाली मुन्नी की आँखें उसके मोतियों-जैसे दाँतों पर जम गयीं।

"आप लोगों ने मुझे पहचाना नहीं शायद?" उसने कहा।

"ये है कौन?" सईदा की माँ ने टोन से कहा, बाजी तनी ठहर। साबरा

पहिचाने दे।' उन्होंने उसे सिर से पाँव तक देखा, "नौज।" उन्होंने अपनी नाक पर उँगली नचायी "ई निखौंदी बछनिया है। मगटिया बो की बेटी। हई लँहड़ा भर अउलाद बटोर लिए है की निकहवा किय ?'

'हिआँ से जाते ही निकाह हुआ।

बाबी ई त रंडियन की बोली कहाँ से सीख आयी है!' सईदा की माँ ने एतराज ठोक दिया।

ताका एकदम से गंगौली कइसे याद आ गयी ?" सल्लन ने पूछा।

मार मार-काट मची है। जेको जा मिल जा रहा ऊ ओही को मार दे रहा जान से। तब मैंने सगीर फातमा के अब्बा से कहा कि चलो गंगौली।'

'तनी दिमाग दखे कोई एकर ए भाई!" सईदा की माँ चमकी, "सगीर फातमा! कउनो अउर नाम ना मिला रहा तोको।"

थोड़ी ही देर में बछनिया घुल मिल गयी। घलव की कहानियाँ खत्म हो गयी। जिन्दगी की कहानियाँ शुरू हो गयी क्योंकि जिन्दगी की कहानियाँ कभी खत्म नहीं होतीं। ढोलक फिर ठनकने लगी। गालियाँ गायी जाने लगीं। नाइन भाग दौड़ में लग गयी। पान के लिए चिल्लानेवाले नौकरों और मम्मा को खासदान और पान के डिब्बे दिये जाने लगे।

इन तमाम हंगामों में सफुनिया अपनी तिलवन में बैठ ये तमाम कहकहे और तमाम गीत और तमाम आवाजें सुनती रही। और बच्चे को दूध पिलाती रही। और झलाती रही। मिगदाद दालान के निकले दर में उकड़ूँ बैठा बीड़ी पीता रहा।

हम त कहत रहे की ओरीन साहब की हो जाओ। सफुनिया ने कहा।

कहे नियाकी टायें टायें मत कर! मिगदाद ने झल्लाकर कहा 'हम समझा रहे थे। नन्हू भाई हम्मे ज़रूर बुलइयहें।

बिरादरी में कोई ना पूछ सकता। सफुनिया ने हार मान ली, 'ऊ बिचारू का करें! का तोहरी खातिर बिरादरी को छोड़ दें ?

त हम तोहरे खातिर बिरादरी को ना छोड़ दिया ?

हमरी तोहरी बात अउर है।

अच्छा टर्रा मत।

दिया। तू भी अब कोई बतिया ना कर सकना।

हम सब रह की न जूना नाव पर लगी है।

तुम्हें हमारी जान की कसम ओसमान साहब की हो चले जाओ।

तीसे हम न बार कह चुके हैं की तैं हम अपनी जान की कसम मत लिया कर, बहनचो॰[1] मिन्नार ने चोटी पकड़कर गहुनिया का एक झापड़ मारा। वह एक तरफ लुढ़क गयी। नवरा गोद से छिटककर आँगन में जा पड़ी और जोर जोर से रोने लगी। वह गालियाँ बकता हुआ घर से निकल गया। वह गहुनिया से बहुत नाराज था। यह आखिर बात बात पर जान की कसम क्या देती है। 'हम उहाँ जायें तो कहें का मालिक से ? का जाय ई कहू की वहाँ हो गया। आप देर क्या लाग ? ' लेकिन गहुनिया ने जान की कसम दी थी। इसलिए बजीर मियाँ के पास जाना जरूरी था।

वह चोरों की तरह बड़े फाटक में दाखिल हुआ।

आदाब ! उसने मामूली हर रोज वाली आवाज में कहना चाहा। मगर वह धीमा-सा पड़ा। या कहने में कम लग रहा लगा कि वह बहुत जोर से बोला है। उसकी रूह तक पसीने-पसीने हो गयी। हम्माद मियाँ उसके सामने आकर खड़े हो गये। बोले 'तुम यहाँ क्या आये हो

हम सरकार भाई को सलाम करने आये हैं।

यह अब मार कर ना ! बन्ना मियाँ ने कहा जाहदा है तो [illegible] तो कम जान मार उसकी '

अरे साहब, मुसीबत शायद बड़ दी थी।'

वाह मालिक ना न। अम्मू मियाँ ने कहा वह मासी मांग चाल गए ! उन्होंने मिन्नार को हुक्म दिया।

माफी चाहूँ का साहब ! मिन्नार ने पूछा हम क्या गुनाह किया है। बड़ा हमलोग ना का रहे।

अच्छा ! मोरवा चमार को तो देखा अब न मन्ना[1] चाहते '

[1] बहनचोद।

'वाकी निकाह पर पहुँच गये रह्यौ तूँ डट देना।' गुस्से में हम्माद मियाँ को बाप दादा की ज़बान याद आ गयी।

'काकी तू कइस मोलवी हौ जी?' फुन्नन मियाँ ने सवाल किया, "कही भाइयो बहिन में बिआह भया है आज तक?'

'का कह हौ तू?' मिगदाद ने फुन्नन मियाँ के कन्धे पर हाथ रख दिया।

'आहर कन्ठ आहर...' फुन्नन मियाँ ने उसका हाथ झटक दिया। वह हम्माद को माफ नहीं कर सकते थे। 'केको ना मालुम इ बात की सफुनिया सैयद हम्माद हुसन ज़ैदी की बेटी है?'

'तु पूछे हो!' मिगदाद की आँखों में खून उतर आया।

'अपने बाप से पूछ ल्यो!'

'यह क्या बेवकूफी है, मियाँ फुन्नन?' बशीर मियाँ ने कहा।

'आपो हम ही को कहियेगा।' फुन्नन मियाँ ने कहा।

'यहाँ आओ मिगदाद!" बशीर मियाँ ने उसे पुकारा।

'अब का आयें साहेब।' पीपल का जवान पत्ता गिर पड़ा। फिर वह हम्माद मियाँ की तरफ मुड़कर चीखा, 'अरे त बुलता काहे नहीं की सफुनिया केकी लड़की है पटीदार!'

'हम का मालुम?' हम्माद मियाँ ने कहा।

'त भाई हम्माद को बाप दादा की बोलियाँ अभी याद हैं।' जब्बार मियाँ बोले।

मिगदाद एक तरफ खड़ा ज़िल्लत के बोझ तले हाँफ रहा था। उसकी बड़ी बड़ी आँखों में आँसू थे। अन्दर से मीरासनों के गाने, लड़कियों के हँसने औरतों की बातों और बच्चों के शोर की आवाज़ें चली आ रही थीं। शायद कोई बच्चा रो भी रही थी।

मिगदाद को सहसा यह ख्याल आया कि जब उसने सफुनिया को मारा था तो नकरा आँगन में गुज़र गया थी।

'हम पूछ रहे कि सफुनिया का बाप कउन है?' उसने गिड़गिड़ाकर निगाह में रस हुए फरहर के बाग नाजिम के रंग ममा और शहनशीन के हर दिवार से पूछा। जब कोई जवाब नहीं मिला तो वह हकीम साहब की

तरफ मुड़ा ह बचार वा । आग मंगर पर वामी जानविया जान लिजिए ।
बाबा हम इ बना दिजि[illegible] किसी न बाद जवाब नहीं
हकाम साहब न बार जवाब नहीं दिया । किसी न बाद जवाब नहीं
दिया । सिगनाह न गया अहार क हाथा स उसका लम्बा लाठी छीन ली ।

'सिगनाह', यह क्या करत हो । बगार मियाँ न घबराकर कहा ।

सिगनाह न कोई जवाब नहीं दिया । उसन तीन-चार क हर शख्स पर लाठी मारी । मजमा बगल गया । उसन लाठी फेंक दी । फिर गाना तानकर उसन भी विरासनी का मुसाहिब किया

मरूलिया हमारा कोई हाय । बाबा नवरा हमारी बगा है । सुन रहे न आप लोग । नवरा हमारी बटी है ।'

वह गस्त गाता हुआ यह फाटक स निकल गया । मगर फिर लौटन हो मौत और बाना अउर अब न बाइ दुबान महज स निकालिस और उ मरनिया क इ बार मालुम नहीं न हम महवा गाम वारे की गलियाँ म गयवा का मउर पुगर दंग ।

वह चला गया ।

पता हवा गरी थी । नाम विलकुल बाना पर ग्यी थी । सिगनाह न आकाश की तरफ देखा । और फिर नाव मस्त हग लगा हुआ अपनी निमबन का तरफ चल पड़ा । मगर बारिश आ गया और इस जार स आयी कि वह पर लुढ़कता-लुढ़कता नाल गया ।

सन्न मकान स औरतों का भाग-दौड़ का आवाज आ रही थी । वह सब बतूलिया लाना बरगद पर ढेर हो गया । नवरा मजा नाच रा रही थी । मरूलिया लाना लहरा रहा था ।

सब रहा था मनू भरा यार लम्बा बनिया हरिय म उभर लाटन है । मरनिया न बता । वह घर बनाना चाहना थी कि लन्न उस दफ्तर का बुरा नहीं माना था । और हमारा लगा हा जाता था । फिर लन्न पा लन्ना क लिए क लिए लौट आया करत थ जब वह दिल्ला स घूम मत जाया करती था । मगर जब सिगनाह । उन्हीं बार का कोई जवाब नहीं दिया तो वह कभी हैरान हुई । वह लन्न दरी हुई बानों का मलाई स चलना और लर हुनर रह

की चपाती की रोटी गढ़ने का काम शुरू करने के बाद उसने मिगदाद को दूसरा मौका दिया "तुआँ गये रह्यो ?"

"हाँ।"

चपाती बलने वाले हाथ रुक गये। उसने अपनी बड़ी बड़ी काली आँखों से मिगदाद की तरफ देखा। और उसकी जुटी हुई भँवें जैसे और जुट गयीं। मिगदाद के लहजे में एक नयी तरह की नरमी थी। एक दूसरे प्रकार का प्यार था।

"इ पनिया त सब बिआह बरात का नाम कर दाहे।" वह बोला, "सुन रहे की बच्छन कलकत्ते से लउट आयी।"

"सफिरवा रहा त फन्नवा पर।" मिगदाद ने कहा "चल, हमहूँ लोग कलकत्ता चल।"

सफ़ुनिया ने चपाती को तवे से उतारकर रोटी की टोकरी में रखा। तवे पर उसने दूसरी चपाती डाल दी। फिर पटरे पर दूसरा पेड़ा रखने के बाद वह बोली "फिर तूह कलकत्ता याद आवा? अउर कानी कउन त कहता रहा की तुआँ अउरी कानी कहाँ-वहाँ मार हिंदुअन अउर मुसलमान में झगड़ा हो रहा। ई घर से निकले का दिन है? अउर झगड़ा-वगड़ा नाहियो होय तभऊ हम गाँव ना छोड़ेंग।"

"मजे में चटकल में नौकरी कर लेंग।"

"अउर जमिनिया का का होई?"

"काई को बन्ध्या पर दे देंगे।"

"ई सूँ आज कइसी बात कर रह्यो ?"

यह सवाल उस शाम के बाद से सफ़ुनिया के दिमाग में रोज गिर उठाने लगा कि मिगदाद को आखिर हो क्या गया है। वह अब उससे छूने से भी डरता है। उसे उसकी मुहब्बत में कोई कमी नहीं लगी। लेकिन वह जब भी उसके साथ सोने की कोशिश करता मिगदाद कोई-न-कोई बहाना करके टल जाता था उसको कोई रखता था। और घुमा फिराकर फिर कलकत्ता की बात शिराने लगा। वह बाजार जाने से भी कतराने लगा था। बस वह रोज तक जाता

और मोटकर नखरों से उसने सीधी बातें किया करता। और न जाने कैसी-कैसी उलटा-सीधी बातें सोचा करता।

'कलकत्ता त बहुते बड़ा शहर होइहै?' उसने एक दिन मखिरवा से पूछा और उसकी कलाई में बंधी हुई सुनहरी घड़ी को देखने लगा जिसमें एक छोटी सी सुई लगातार चक्कर काटे चली जा रही थी। 'तोको ई पतलून में अनकुस ना लगता था रे?'

मखिरवा हँस दिया "आपो की बात। उहाँ लोग पतलून पहिन घूम रहे।'

'कलकत्ते में रेल मिलिहै?'

'कलकत्ते में रेले ना है।'

'ई का?'

'शहर में रेल कहीं होता है गान्त्र।'

'ई काहे भाई? त गाजीपुर में रेल ना है?'

'गाजियापुर कउना शहर में शहर है। कलकत्ते का एक-एक ठो मोहल्ला ओसे दुगना तिगुना बड़ा होइहै।'

'इतना बड़ा त ना हो सकता।'

'काहे हजरत की कसम।" मखिरवा ठंड से कसम खा गया।

मिन्नार लाजवाब हो गया।

'बाप! जब इतनी रेल ओर ना है त लोग आवे कहाँ से?'

'फिर इतनी म रहता जावे।'

'हमहूँ कलकत्ते चले की सोच रहे।'

'मिली मास्टर को रोज तो छाड़े ही का पड़िय।'

'क काहे?'

'अब जब कमाना लगन हो अरे कहे त ई किसान लोग जमींदारन के ... जुलुम न सहें ... अलग-अलग जुलुम आजिन हैं ई लोग? जुलुम न और ... हमरे लोग भी है। मिल-मालिक सब मारत जात हैं। बाकी हमरे मालिक की ... भी है। मिल-मालिक सब मारत जात हैं।

दुनिया भगवान की चार रहती। एक सरकवा न

मकिरवा ने किसी हड़ताल का किस्सा सुनाया जो मिगदाद की समझ में नहीं आया।

'अब ई त तू लोगन की जबरदस्ती है।' उसने कहा, 'ओवे कारखाने में कामो करिहो अउर बगार ना करिहो।'

'बगार काइसी, साहब!' मकिरवा को जोश आ गया, 'खून पानी एक करें हम मजूर लोग अउर मौज उड़ाय मिल मालिक!'

'ए भाइ, तैं त पाँडेजी के ऐसी बात कर रहा। तैं कमनिस्ट हो गया है का?' मिगदाद चकरावर वाला, 'अभइ कलह आय रहे पाँडेजी। हमहूँ से एक ठो रुपया ले गये। हमहूँ से माँग रहे की कलकत्ता चल।'

'आजकल घर से निकलने का जमाना ना है। मार मार-काट मची है। पाकिस्तान बन जाय से त मार-काट अउरो बढ़ा गयी है। बड़ी आफत है, साहब। अब त रेल रोक रोक के आदमी मारे जा रहे। लाख डेढ़ लाख से कम आदमी ना मारे गये होइहें।'

'बाकी केह बात पर हो रही ई मारपीट?'

'ई अंग्रेज़ बहनचोदन का तोहफा है। हम त इ देख रहे कि पाकिस्ताने जाय में जान की खैर है। ई समझिए कि दिल्ली में जहाँ कई करोड़ मुसलमान रहे अब ढूँढ़े नाम को मुसलमान ना रह गया है। लड़कियन को हिन्दुआ सब अपने घर में डाल लिहिन हैं। हम त सगीर फातमा के डर से रुके हैं नहीं त कब के जा चुके होते।'

'बाकी हम ना न जा सकब।'

'काहे न जा सकब?'

'देस बिगड़ा मनवा जात है।'

'गाँवा का जान अबहूँ न बड़ा है?'

'नाहियाँ है अउर क्या है!'

मगर एक दिन मकिरवा सगीर फातमा समेत पाकिस्तान के लिए चल पड़ा। बछनिया बहुत रोया। रब्बन बी ने मकिरवा को समझाया कि बाप-दादा की चौखट नहीं छोड़ी जाती। मगर वह नहीं माना। वह चला गया। दिल्ली और अमृतसर के बीच में रन वहीं रही। बच्चन और सगीर फातमा

मगर वह इधर ही रह गया। हरिया का बच्चा भी सारे लेकर सरहद पार कर गया।

सारा तरफ इतना बड़ा बड़ा शहर धायें धायें जल रहे थे कि उस आग में इन्सान और ज़मीर कागज़ एक तिनके की तरह पर्ते और धुएँ में उड़ गयीं। दिल्ली, लाहौर, अमृतसर, कलकत्ता, ढाका, चटगाँव, मन्पुर, रावलपिण्डी, मालविया, जामा मस्जिद, गार्डन टम्पुल, जलियाँवाला बाग़, हाल बाज़ार, उर्दू बाज़ार, अनारकली। अनारकली का नाम मशहूर दास्ताँ था, या रजनी और था नरिता बनर्जी था—अनारकली की राख शहर में थी, सब पर थी मस्जिद और मन्दिर में थी और उनके नंग बदन पर नाखूनों और दाँतों के निशान थे। और माता ने गुस्से में भीगे हुए गरारे, शलवारें और साड़ियों के टुकड़ों का मज़ार के तौर पर हाथों के सन्दूक में मैल-मलकर रख लिया था।

[1]मीर के मार गर्वीला[2] का अजब था अहवाल[3]।
सो न दिखी हुई चिन्तानी थी वह नज़ निमान[4]॥
जौन नक़्श[5] हैं ग़ह् वाला[6] का बुरा न कोई।
अब सोग मर बाबा का बुरा दे कोई॥
अब मागा मर नया भला अकबर है कहाँ।
जिन से बुनियादें पुरीजान के दिनवर हैं कहाँ॥
मरी आती है दुल्हन क़ासिम मुख्तार हैं कहाँ।
उनके कुरबान मैं, अब्बास दिलावर हैं कहाँ॥
रन में बिस्तर पर जा मज़ार पर थे नगरा।
कहकाशा में सकता गया गोदी उग आ॥
नन्हे हाथों से बाजू का हिलाकर यह कहा—
पुरा अम्मा का दिल छिन गया, उजड़ा मया॥

---

१ अबाल के मासिक का एक नक्शा।
२ इमान का बार बार का ढंग।
३ हालत।
४ अपनी आत्मा बाला।
५ हाथ पर ज्ञान है।
६ देखो इसन की शाक दलाता है।

जो मेरा डरता है, छाती से लगा लो मुझको।
मेरे गौहर न कोई छीने छुपा लो मुझको॥

लोग ज़ोर ज़ोर से रोने लगे।

वज़ीर मियाँ ने मरसिये को मिम्बर पर रख दिया। फिर वह ख़ुद भी आँखों पर रूमाल रखकर रोने लगे। फिर वह मिम्बर से उतर आये। तमाम लोग खड़े हो गये।

हुसैन! हुसन! की गत पर नौहा शुरू हुआ

मुगरा मदीना लुट गया
चिल्लायी ज़ैनब पीट सर
सुगरा मदीना लुट गया

मदीना दिल्ली था। मदीना लाहौर था। मदीना हिन्दुस्तान था। मदीना पाकिस्तान था—और मदीना लुट रहा था।

मियाँ लोगों ने ज़ार-ज़ार से रोना शुरू किया। मातम की धमक से झाड़ और कँवल काँपने लगे। दालान के दर में लटका हुआ पद्मावत चुपचाप यह देखता रहा और लम्बी लम्बी साँसें लेता रहा।

आज तन्नू का तार आया है।" नौहे मातम के बाद जब जवाद मियाँ ने प्रसाद बाटना शुरू किया तो फुस्सू मियाँ ने फुन्नन मियाँ से कहा।

का लिखिन है? ठीक ठाक हैं ना?

हाँ। अगर गुरा पाकिस्तान जाय [illegible] मगर [illegible] हसन [illegible] हो गया है।

ए भाई, जब हियँ सैयद [illegible] हुसन [illegible] हो गये त [illegible] [illegible] रिहिन!

[illegible] में गाने में ऊ [illegible] नाम से ना [illegible] लिखवा रिहिन है? अली मद्दी मियाँ ने पूछा।

मज़ाक [illegible] वाह पर सीहा!' जवाद मियाँ ने अली मद्दी मियाँ का [illegible] किया [illegible] हिरगा।

मुहनों का मन जाता है की ना ?" फुम्मू मियाँ ने हकीम साहब से पूछा।

"उनहें कउन जरूरत है सुन गिनने का।" हकीम साहब न कहा।

"उन्हें जाना ही नहीं चाहिए था।" शब्बर मियाँ न कहा, "मैं तो मियाँ नन्नू को भी बहुत समझाया था।

"बेचारे समझायो।" हकीम साहब न कहा 'अब हम लोग अपने लड़कन के बाप ना रह गये हैं। अब लड़कवे सब हमरे लोगन के बाप हो गये हैं। हम बहुत कहा मुहल्ले में—ए बेटा तूँ पाकिस्तान जाय की कउन जरूरत है। त पार का हिन्दी मुसलमानन की तरक्की का रस्ता बन्द हो गया है। अब आवे अपने खास बच्चन का भी ले जायें त हम इतमनान की साँस लें। ए वजीर! ई पाकिस्तान त हिन्दू मुसलमानन का अलग करे को बना रहा। बाकी हम त ई देख रहे का ई मियाँ-बीबी बाप-बेटा और भाई-बहिन का अलग कर रहा। हम मुसल हुई भर गये त ऊ मुसलमान हैं अउर हम हिन्दी रह गये त का हम लोग म कर हिन्दू हो गये ?

अच्छा अब बन्द करो ई साला मसला।" जवाद मियाँ न कहा "अब त इमाम हुसैन के नाम से ई पाकिस्तान दखल देवे लगा है भाई।

जवाब दो मियाँ अच्छन।" शब्बर मियाँ न अच्छन से कहा।

ई देवाल का जवाब दाहैं ?" अन्नू मियाँ ने कहा "इनके जिन्ना साहब। हाय हाय के मार देवे की हिन्दी के मुसलमान जायें, खुदा न करे जहन्नुम में। ई अच्छी नहीं। पाकिस्तान बन के वोट दें हिन्दी के मुसलमान अउर अब पाकिस्तान का ए जिनका वह की हिन्दी के मुसलमान जायें चूल्हे भाड़ में।" फुन्नन मियाँ न कहा।

"अउर साला अलीगढ़ न हिन्दी ही रह गया मदरसा।

सार गाँव में यह बात किसी को नहीं मालूम थी कि अलीगढ़ के यहाँ रह गांव की वजह से कस्बा कितना मशहूर है। और किसी को यह भी नहीं मालूम था। और नन्नू कि नन्नू पाकिस्तान क्यों गया। सईदा को भी नहीं मालूम था। मदरसे की बात और थी। किसी उस हरम मजीद अजीब सा रहा था। मगर पाकिस्तान से कोई बात नहीं मालूम हो जाती है। मगर पाकिस्तान का क्या पाकिस्तान मुश्किल है ?

।

ए साहब, मगर हिन्दुआ पाकिस्तान का आट द स्त तब ई जिन्ना साह का करत ?' यह सवाल कम्मो ने शब्बर मियाँ से किया।

लेकिन शब्बर मियाँ इस सवाल का जवाब देने से बच गये क्योंकि उस वक्त पागलों की तरह भागता हुआ मिगदाद बड़े फाटक में आया।

सफ़िया से शादी कर लेने के गुनाह की सज़ा उसे यह मिली थी कि उससे मजलिस के फ़र्श पर बैठने का हक़ भी छीन लिया गया था। सफ़िय को नौहा भी याद था। इसलिए मिगदाद [illegible] ही सुबह शाम कोई मरसिय गुनगुना लिया करता था। और नौ की रात को मन्नू मियाँ से कागज़ का एक ताज़िया खरीदकर आँगन में रख लिया करता था। इसीलिए जब वह यूँ ब धड़क बड़े फाटक में आया तो सभी लोग चौंक पड़े।

'ए चच्चा!' वह हकीम साहब के सामने गिड़गिड़ाया, 'तनी चल क सफ़िया को देख लिजिए।' फिर वह डरा कि हकीम साहब फिर सैयद हैं। शायद न जायें। इसलिए वह कम्मो की तरफ़ मुड़ा, 'आपा कालि का हो गया है तनी चल के देख ल्यो।'

मगर कमालुद्दीन कब जा सकते थे भला! कम्मो ने जवाद मियाँ की तरफ़ देखा। इस बीच में हकीम साहब बोल पड़े, 'का भया है ओको?'

'कालि का भया है साहब! एकदम हथवा पैरवा ठण्डा हो रहा।'

हकीम साहब उसके साथ जाने को खड़े हो गये। मगर सफ़िया ने उनकी राह नहीं देखी। हकीम साहब ने इतना किया कि उसके मुँह पर चादर डाल दी।

नवजात सफ़िया के पास पड़ी किलकारियाँ मार रही थी। मिगदाद ने उसे उठाकर अपनी छाती से लगा लिया। फिर वह सफ़िया की पट्टी के पास बैठ कर बच्चा को [illegible] गाने लगा।

'आज न [illegible] मरवा [illegible]। तैं कौन बात पर रूठ गयी'

हकीम साहब चुपचाप [illegible] में लौट आये।

'मर गयी!' [illegible] इमामबाड़े की मजलिस में इकट्ठा होनेवाले मियाँ लोगों को ख़बर सुनायी। अम्मार मियाँ के दिमाग़ में यह बात फ़ौरन आया कि अब वह मिगदाद को किस क़ानून [illegible] मानते हैं। और [illegible] [illegible] मिलाया जा सकता है।

"मर गसार म ना हमें दमन-सुन म चलना चाहिए। हम्माद मियाँ न मुसाब गया।

हाँ और क्या। मदन कहा।

हमजिता मजलिस उन्हीं म सम की गया और लोग मिराज की गिलवन का मरप चल पड़।

'मिराज'। ए वगा मिराज। हम्माद मियाँ न आवाज दी।

मिराज बाहर निकला। नवरो उमका गाम म था। दरवाजे पर इनत लाता का मरवर वर उनन सुन लई। मिराद चौगर म नरवर मग हो गया।

जनाना इमामवाड़ म मजलिस का आवाज आ रहा थी।

मब वगा वग। अब्बू मियाँ न कहा।

सग का मर्दों म रिम सहन है। हराम मान्द न कहा।

स्नन म जनाना इमामवाड़ की तरफ म मान्ने आईं सुना वीवियाँ आयीं। एक मिराज का माँ था और दूसरी बहन।

इनम मार म न का हमदर्दी का उम्मत ना है।' मिराद की आवाज तब सब तक पहुँची। तमाम लोग उस आवाज का मुनकर चौंक पड़े हम प्रकार हा रह गए आरो विस्मय। हम अपने ही आवो देखना भर रह गए।

जनाब पासमा न कहा कि ए अबुमहसन जनाना इमामवाड़ म मुरमा क इमाम हुसैन का आवाज आ रही थी मगर जनाजा गान के पर्दे में जिन्दगी और जिन माता न मुझे जिन्दगी में नजरानों पहुँचायी है उन्हें मर जनाब म शरीक होन का इजाजत न देना औरता के आर जार म गले की आवाज में हलका का आवाज डूब गयी।

शान्त हो जाइए। अब्बू मियाँ न कहा हमा एक तरफ। अपनी भामा का अन्दर जान दिया।

कुछ मर न्दा ग पगा आरजिन का म दगाई ना रब का पढ़ि। मिराद के अन्दी म दे कहा 'अच्छा जाओ।' अब न्दा तर का मैंन। और न वह बाहर का मगर सुना न अपनी जग। उमन नकरा का बहन की गोद में दफन दिए। नवरो बाद और म गान गयी।

जमींदारी का चरखा चल पड़ा। हज्जाम आये। कफन आया। बेर की पत्तियाँ आयीं। काफूर आया। करबला के पास खानदानी कब्रिस्तान में जरा हटकर एक कब्र तैयार हुई और सैयद साहिबान उस नाइन का जनाजा लेकर चले। कन्धा देने में हम्माद मियाँ सबसे आगे थे।

'सुन रहे कि कासिमाबाद के थाने पर क्रान्ति का बन रहा।' अब्बू मियाँ ने फुन्नन मियाँ से कहा, 'परसों जवाहिरलाल आवे वाले हैं ओका क्रान्ति का घर

'शहीदन की समाधी बन रही।" फुन्नन मियाँ ने गुस्से से कहा।

'पंडितजी तो नहीं आ रहे!' डिप्टी अली हामी ने कहा, 'खबर है कि बालमुकुन्द वर्मा आ रहे।'

'ई कउन हैं?'

'बड़ा वह नेता है।'

'हम त आज पहिली मरतबा सुन रहे इनका नाम!'

'तू त बुलाये गये हो का?' अब्बू मियाँ ने फुन्नन मियाँ से पूछा।

'का कउनो मुमताज का बिआह हो रहा का जेके बुलिहे? जइसे अउर लोग जय्यहें ओइसे हमहूँ जायेंगे।'

मगर जलसे के दिन फुन्नन मियाँ ने सवेरे ही से तैयारी शुरू कर दी और कुलसुम ने सवेरे ही से रोना शुरू कर दिया। फुन्नन मियाँ ने कहा भी कि 'अबकी मत रोव का मौका नाहीं है। ऊ लोग कहन आवत तोरे बेटे की तारीफ करे!' मगर कुलसुम की समझ में यह बात नहीं आयी। वह रोती ही रही। फुन्नन मियाँ फिर तैयारी में लग गये।

इस दिन के लिए उन्होंने चिकन का एक पाजामा भी सिलवा लिया था।

बन-ठनकर वह कासिमाबाद गये। कोई हजारों आदमी इकट्ठा थे और जलसा शुरू हो चुका था। बालमुकुन्द वर्मा सन बयालीस के शहीदों की तारीफ कर रहे थे। फुन्नन मियाँ एक-एक शब्द को प्यास के मारे के पानी की तरह चाट रहे थे। लेकिन जब देर हो गयी और बालमुकुन्द वर्मा ने मुमताज का नाम एक बार भी नहीं लिया तो फुन्नन मियाँ को बड़ा अपमान लगा।

अमर है वह गाँव और धन्य हैं वे माता-पिता जिन्होंने मातृभूमि पर

रिपाल और गोवर्धन जैसे सपूतों की आहुति दी। धन्य है कासिमाबाद की यह पवित्र भूमि जिसके माथे पर गोवर्धन और हरिपाल के रक्त का तिलक लगा हुआ है बाबू बालमुकुन्द वर्मा तकरीर कर रहे थे। उनकी आवाज आग में सराबोर हुई थी। सारा मजमा मोहित हो चुका था। और सारे मजमे की आँखें गुस्से से तनी हुई थीं।

मगर पुत्तन मियाँ के लिए इस तकरीर को झेलना नामुमकिन हो गया। वह बाप तकरीर में मस्त हो गए। शेरवानी पहने हुए पुत्तन मियाँ अजीब मसखरे लग रहे थे। शेरवानी उनके पिता की थी और नफीस जामेवार की बनी हुई थी।

ए साहब! हिज्जो गए टा हमरहू बेग मारा गया रहा। अइसा जना रहा कि बाद आपका आका नाम ना बनाइस। आका नाम मुनताज रहा।

अपना बात खत्म करके पुत्तन मियाँ ने भीड़ की तरफ देखा। उनकी गर्दन सबसे ज्यादा तनी हुई थी।

भूमिका

मैं, सैयद मासूम रज़ा आब्दी वल्द सैयद बशीर हसन आब्दी, बहुत परेशान हूँ। अक्सर सोचता हूँ कि मैं कहाँ का रहने वाला हूँ। आज़मगढ़ का या ग़ाज़ीपुर का? मेरा घर ग़ाज़ीपुर के एक गाँव गंगौली में है या आज़मगढ़ के एक गाँव ठेकमा बिजौली में?—जिसे आज तक मैंने देखा भी नहीं है! यह मान लेने के बाद भी कि मेरे दादा मीर अली मोहम्मद साहब बिजौली, ज़िला आज़मगढ़ के थे, बिजौली का नाम सुनकर मुझे गुदगुदी नहीं होती। आज़मगढ़ मेरे लिए हिन्दुस्तान के हज़ारों शहरों में से एक शहर है और बिजौली केवल एक गाँव। रहे होंगे मेरे दादा वहाँ के। मैं तो गंगौली का हूँ। मैं गंगौली ही को जानता हूँ। बिजौली के बारे में मैं कुछ नहीं जानता। मुझे तो यह भी नहीं मालूम कि वहाँ जिस घर को मेरा आबाई घर कहा जा सकता है, वह कैसा है। उसके इमामबाड़े के दरवाज़े का रंग क्या है? किस मजलिस में कौन-सा मर्सिया पढ़ा जाता है, और उसे कौन पढ़ता है?—यानी बिजौली के उस घर से मेरा कोई रूहानी सम्बन्ध नहीं है। मैं ग़ाज़ीपुर का हूँ और मैं यह मानता हूँ कि मेरे दादा आज़मगढ़ से आये थे। ग़ाज़ीपुर मेरे लिए बस एक शहर या गंगौली मेरे लिए बस एक गाँव नहीं है। यह मेरा शहर और मेरा गाँव है। आप मेरा मतलब समझ रहे होंगे—और मेरे दादा तलवार बाँधकर नहीं आये थे लाहापुर!

आप सोच रहे होंगे कि कहानी के बाब में यह भूमिका कैसी! मैं भी यही सोच रहा हूँ। लेकिन यह कोई और कहानी नहीं है। क्म बार गद्य का काम अब हर लाइन के बाद मुश्किल होता जा

रहा है। क्योंकि मैं जिस गाँव, और जिन लोगों की बातें कर रहा हूँ वह मेरा गाँव और मेरे लोग हैं और मैं उनसे प्यार करता हूँ। यही प्यार बात कह सकने की राह की दीवार बना हुआ है। और इस वक्त इस आधे गाँव की कहानी बड़े नाजुक मोड़ पर है। मैं जानता था कि इस कहानी में यह मोड़ आयेगा, इसीलिए मैंने पूरे गाँव को नहीं चुना, बल्कि केवल गाँव के उस टुकड़े को चुना, जिसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ। कथाकार के लिये यह जरूरी है कि वह उन लोगों को अच्छी तरह जानता हो जिनकी वह कहानी सुना रहा है। मैं इन तमाम लोगों को जानता हूँ, फिर भी कहानी के नियम तोड़कर मैं यह भूमिका लिख रहा हूँ। बात यह है कि अब हमारी कहानी एक ऐसी जगह है जहाँ एक युग समाप्त हो रहा है और दूसरा आरम्भ। तो क्या हर युग एक भूमिका की माँग नहीं करता?

और इसीलिए मैंने यह जरूरी जाना कि यहाँ मैं आपको बता दूँ कि मेरे दादा आज़मगढ़ के थे, लेकिन मैं ग़ाज़ीपुर का हूँ। मैं गंगौली का हूँ। गंगौली मेरे अब्बा की ननिहाल है। मुमकिन है कि अब्बा की वफ़ादारी विजौली और गंगौली के बीच में तक़सीम हो लेकिन मेरी वफ़ादारी तक़सीम नहीं है। मैं केवल ग़ाज़ीपुर का हूँ। मैं नील के उस गोदाम का हूँ जिसे गिलक्रिस्ट ने बनवाया था। मैं उस गड़ई का हूँ जिसने गंगा की तरह गंगौली को अपनी गोद में ले रखा है। मैं पाँचवीं और आठवीं मोहर्रम के गश्त का हूँ। मैं करघों की उन आवाज़ों का हूँ जो दिन रात चलते रहते हैं कभी नहीं रुकते। मैं गया अहीर, हरिया बढ़ई और कोमिला चमार का हूँ। मेरे दादा आये रहे होंगे आज़मगढ़ से क्योंकि हम सभी के दादा और परदादा कहीं-न-कहीं से आये ही रहे होंगे।

मेरे लिए यह बात कुलबायी नहीं कि सक्किरवा पाकिस्तान में सैयद हो गया। हो गया होगा। और कौन कह सकता है कि उसकी रगों में किसी म्यागुन-म्याग जैसी सैयद का खून न होगा? लेकिन मैं सम्मो और उसकी बेटी शाहिदा के लिए परेशान हूँ जिन्हें तन्नू

यहाँ छोड़ गया है और जिन्हें रात दिन रस्मन की कोसा करती है। गालियाँ कोसने सुन-सुनकर शाहिदा की पोती है—सवाल यह है कि यह शाहिदा बड़ी होकर क्या बनेगी? सवाल यह है कि कुद्दन ने जब पाकिस्तान में एक और शादी कर ली है तो हिंदुस्तान में रहीम अम्मी बजीर के पोतों और पोतियों की पूरी लेन का क्या बनेगा?

इसी तरह के और सवाल भी हैं।

जनसंघ का कहना है कि मुसलमान यहाँ के नहीं हैं। मेरी क्या मजाल कि मैं उसे झुठलाऊँ! मगर यह कहना ही पड़ता है कि मैं गाज़ीपुर का हूँ। गंगौली से मेरा संबंध अटूट है। वह एक गाँव ही नहीं है। वह मेरा घर भी है। घर! यह शब्द दुनिया की हर बोली और भाषा में है और हर बोली और भाषा में यह उतना सबसे खूबसूरत शब्द है। इसलिए मैं उस बात को फिर दुहराता हूँ। मैं गंगौली का हूँ क्योंकि वह केवल एक गाँव ही नहीं है। क्योंकि वह मेरा घर भी है। क्योंकि—यह शब्द कितना मजबूत है। और इसी तरह के हजारों हजार 'क्योंकि' और हैं और कोई तलवार इतनी तेज नहीं हो सकती कि इस 'क्योंकि' को काट दे। और जब तक यह 'क्योंकि' ज़िन्दा है मैं सैयद मासूम रज़ा आब्दी गाज़ीपुर ही का रहूँगा चाहे मेरे दादा कहीं के रहे हों। और मैं किसी को यह हक नहीं देता कि वह मुझसे यह कहे "राही! तुम गंगौली के नहीं हो। इसलिए गंगौली छोड़कर, मिसाल के तौर पर रायबरेली चले जाओ।" क्यों चला जाऊँ साहब? मैं तो नहीं जाता।

कहानी को आगे बढ़ाने के लिए यह भूमिका ज़रूरी थी।

—राही मासूम रज़ा

बी मंज़िल बदर बाग
अलीगढ़

पट्टीदारी! हर कैफ़ियत अकेली थी। हर जज़्बा तनहा था। दिन से रात और रात से दिन का ताल्लुक टूट गया था। दिन तो उसी तरह गुज़र रहे थे जैसे गुज़रा करते थे। वही गलियाँ, वही पट्टीदारियाँ, वही लम्स की सरसराहट, वही कमानी मुसकराहटों की परछाइयाँ, वही खेत, वही खलिहान, मगर रातें तो अजीरन हो जाती थीं। ख़्वाब देखने को जी चाहता था पर कोई किसके सहारे ख़्वाब देखता! सक्कू क्या ख़्वाब देखती? मकदार क्या ख़्वाब देखता? हकीम अली कबीर क्या ख़्वाब देखते? फुन्नन मियाँ क्या ख़्वाब देखते? ज़नाना वाली मस्जिद या श्मशान तक अकेले जाना मुमकिन है, लेकिन ख़्वाबों की टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डियों पर कोई अकेला नहीं जा सकता और आलम यह था कि अपनी रगों का ख़ून पाकिस्तान में मारा-मारा फिर रहा था और जिस ताल्लुक और बाहमी रिफ़ाक़त और दोस्ती पर मुआशरे की बुनियाद थी वह ताल्लुक टूट रहा था, वह रिफ़ाक़त ख़त्म हो रही थी और एतमाद की जगह दिलों में एक ख़ौफ़ और एक गहरा शक परवरिश पा रहा था। कहते हैं कि अमर बेल बड़े बड़े पेड़ों को खा जाती है। यहाँ लोगों के दरवाज़े पर भीड़-भड़क्का जो बढ़ा पड़ा था, वह दिन-दिन सूखा जा रहा था। गंगौली में कई नये दरिया सिर उठा रहे थे। ज़ाहिर है लोग तो वहीं इकट्ठा होंगे जहाँ इतना चैन पान खायें चाय बनें, पर जब तक मियाँ लोग सिर्फ़ यह सुनते रहे कि ज़मींदारियाँ ख़त्म होनेवाली हैं उस वक़्त तक हँसते रहे। इस किस्म की बातें करनेवालों का मज़ाक उड़ाते रहे कि ज़मींदारी कैसे ख़त्म हो सकती है। यह बात समझ में आनेवाली भी नहीं थी। गाँव के बूढ़े किसानों को भी यक़ीन नहीं था कि ज़मींदारी ख़त्म हो सकती है। परसराम की बातें सुनकर वे ख़ुश होते पर उनके दिलों में बैठा हुआ सदियों का डर उन्हें टोक देता। ज़मींदारी मज़हब की तरह मज़बूत थी। शख़्सियत उनके ख़ून में थी। उनका जी चाहता कि ज़मींदारी ख़त्म हो जाय कि वे अपनी ज़मीन के मालिक बन जायें मगर इतनी बड़ी आरज़ू करने का हौसला नहीं था। इसीलिए जब एक रात को बारह बजे डुग्गी बजी और एलान हो गया कि ज़मींदारियाँ ख़त्म हो गयीं तो इस बात को ज़मींदारों की तरह बूढ़े किसानों ने भी तसलीम नहीं किया। ज़मींदारों ने चन्दा जमा किया और जलसे हुए। जलसों में

हिन्दुस्तान भाग गया। मियाँ लोगों ने इसके परसराम की मुख़ालिफ़त की। फिर हम्माद मियाँ ने मुनव्वर परसराम का साथ दिया और फुन्नन मियाँ ने नमक का हक़ अदा किया। परसराम एम० एल० ए० हो गया। गंगौली में उसका शानदार जुलूस निकला। वह सलाम करने मियाँ लोगों के फाटक पर गया। उस रात हकीम अली कबीर अब्बू मियाँ, मिग्दू मियाँ, मज्जू मियाँ और हुसैन अली मियाँ समझ गये कि पूरे मदरखाई का पैगाम आ गया कि ज़मींदारियाँ ख़त्म हो गयी। दूर दूर तक फैले हुए बाग़ और खेत—इतनी बड़ी कायनात सिमटकर चंद काग़ज़ों में आ गयी। काग़ज़ फिर काग़ज़ होता है! उस पर किसी मुस्तक़िल की बुनियाद नहीं क़ायम की जा सकती। बँटाई पर दी हुई खेत की ज़मीनें निकल गयीं। इस्लाह मियाँ के अलावा किसी ज़मींदार के पास हल पर ज़मीन नहीं थी। ये तमाम लोग एकाएक पलभर में नूरुद्दीन शहीद के मक़बरे की तरह गिर गये।

मोहर्रम बड़ा उदास हुआ। सामान के साथ 'ज़मींदारी बाण्ड' चले गये। आठों की मजलिस में इतना कोहराम हुआ। मिम्बर उठ गये। रातों की मजलिसें हुईं। बड़ी बूढ़ियों ने गिड़गिड़ाकर दुआएँ माँगीं कि अपने लौट आयें। हर नमाज़ में क़ानून को बद्दुआएँ दी गयीं।

अब ये क़ायदा मातमगिरी का बाक़ी हो जाये! इन की मिट्टी ख़राब हो। लेकिन न दुआएँ क़बूल हुईं और न बद्दुआएँ। मस्जिदों में रहने बसने और आन बान वाले मियाँ लोगों ने देखा कि जिस गाँव को वे अपना वतन और मस्कन आज ... उस गाँव से उनका कोई रिश्ता ही नहीं रह गया था। इन लोगों के लिए पाकिस्तान का बनना या न बनना बेमानी था लेकिन ज़मींदारी के ख़ात्मे ने उनकी ज़िन्दगी की बुनियादें हिला दी थीं। वे घरों में सिमट और दब कर रह गये। शाहदरा और कराची में बड़ा नाम है! कराची में कम से कम इतना तो होता है। ग़ाज़ीपुर के अहमदुल्लाह ही साहब थे जो ग़ाज़ीपुर में रह गये। एक बार उन्होंने [illegible] साल [illegible] की मजलिस भी की, लेकिन दूसरे ही साल उन्होंने एलान कर दिया कि पाकिस्तान बुरा नहीं है। [illegible] के बाद [illegible], चोर और उचक्का [illegible] और [illegible] में [illegible] खूबसूरत मस्जिद का [illegible]

पाकिस्तान चले गये। लेकिन गंगौली के मीर साहिबान के लिए पाकिस्तान जाना भी आसान नहीं था। अकलियत में होना उनकी तकदीर थी। पाकिस्तान सुन्नियों का था तो सुन्नियों से क्या उम्मीद ? इसलिए खानदान की बेवाओं और अपनी बीवियों की दुलारी जमीनों को सीने से लगाकर वह गंगौली ही में डट गये।

लेकिन तबरुक की तादाद कम होने लगी। ताजियों के गिलाफ पुराने होकर बिसकने लगे। मन्नती ताजियों का रद्द कम होने लगा। यतीमों का हिस्सा बँटना बन्द हो गया। दरवाजे वीरान दिखायी देने लगे। दस का बड़ा ताजिया उठाने का नियाज तक बन्द कर दिया गया। न कहार थे और न उनकी मरम्मत के लिए फाजिल पैसा। बस हम्माद मियाँ का कारचोबी ताजिया दुल्हन की तरह निकला। छोटा सा खूबसूरत ताजिया जिस पर सियाह मखमल का गिलाफ था और उस गिलाफ पर कारचोबी का खूबसूरत काम।

पाँच का गश्त में लौटकर ताजिया फिर शहनशीन में चला गया और खुशबूदार मसाले का धुआँ उसके चारों ओर देवदासियों की तरह गिर्द करने लगा।

हम हिंआँ न रहेंगे! मौलवी बेदार ने शायद यह बात हम्माद मियाँ के ताजिये से कही। ताजिये के कान पर जूँ भी नहीं रेंगी। अगर मैं भी जहाँ के तहाँ ताल्लुक रखे रहे। मुसलमान के पास [illegible] परम्परा एक बार [illegible] लेकिन उसके तब्सरे पर किसी ने गौर नहीं किया क्योंकि तमाम लोग मौलवी बेदार की तरफ देख रहे थे।

क्या! कुम्मन मियाँ ने कहा [illegible] बात बच्चों वाली तो जा ना रहे [illegible] जाय तो कौन जरूरत पड़ गयी। [illegible] मरवी तो बाल-बच्चों का [illegible] और [illegible] मरवी तो [illegible] में कौन गंगुर की खबर होए!

न हम न [illegible]। मौलाना ने [illegible] पर [illegible] मस्जिद पर [illegible]।

अमृतसर और जालन्धर की तमाम मस्जिदें [illegible] बना दी हैं भाई! [illegible] दिया गया।

[illegible] हो गया! [illegible]। [illegible]

पैकर तन के गुम हो जाने की वजह से मसऊदर नव का बुझ चुका था। नाम से घुप अँधेरा था, लेकिन मौलाना की बात ने लोगों को इस कदर उदास किया था कि अँधेरे का अहसास ही खत्म हो गया था।

[illegible] नहीं नया!' मौलवी बेदार ने अपनी आवाज़ पहचान ली। 'मुसलमान बादशाहों ने जो मन्दिर तोड़कर मस्जिदें बनवायी थीं और बादशाहों के बुतों को सीढ़ियों में इस्तेमाल किया था'

'तो सारे ताड़ हिन्दुआ सब का करते रहे?' फुन्नन मियाँ ने बातों [illegible] के लिए दियासलाई जलाने के बारे कहा। [illegible] के लिए [illegible] रोशनी-सी जगमगाती हुई फुन्नन मियाँ के चेहरे पर आयी और इसके बाद ने लगा कि मसूर मियाँ मुँह खोले सो चुके हैं। और उनकी नाक गोल के साथ उड़ रहा है। फिर दियासलाई बुझ गयी, सिर्फ बीड़ी का अँगारा रह गया, मगर उस पर भी राख चढ़ गयी।

'बाद में सारा गदर ने पकड़ के जो बस्ती बादशाह का नया! हिन्दू सारे बादशाह पाप और सारे मुसलमान हम वाह!' फुन्नन मियाँ ने बीड़ी का एक लम्बा कश लिया। उनका चेहरा अँगारे की रोशनी में दमक उठा।

'तें कुछ कहा' मौलवी बेदार ने कहा 'अब हम यहाँ न रहेंगे।'

'त ना'र इमामबाड़े का का होई?' अली कबीर ने सवाल किया।

इस सवाल का जवाब मौलवी बेदार के पास नहीं था। बात यह है कि यह सवाल सिर्फ अली कबीर मियाँ ने नहीं किया था, कई मस्जिदों और कई [illegible] ने यह सवाल किया था। मौलवी बेदार गड़बड़ा गये। उन्होंने गला साफ किया जैसे [illegible] इमाम हुसैन का [illegible] हो।

'हम उन्हें अपना मातम करेंगे!' उन्होंने कहा।

'वहाँ के आगे अपना मातम करिहैं!' फुन्नन मियाँ ने कहा। 'बाबा किसी का हुई है। इहाँ इमामबाड़े में नकारख़ाना कौन बजइहै'

'सारा साले कुत्ते हम सोचे कि फिसाद कर जाय।' मसूर बात, [illegible] के जवान में जान [illegible]। [illegible] का नाम सुनते ही मौलवी बेदार [illegible] मस्जिद [illegible] और [illegible] के लिए उत्तर और

दक्खिन पट्टी के मीर साहिबान उस ज़माने में वापस चले गये जब ज़मींदारियाँ ख़त्म नहीं हुई थीं, जब कराची हिन्दुस्तान में था। जब सद्दन की बीवी उनके साथ रहा करती थी और जब तन्नू अपनी बीवी को छोड़कर पाकिस्तान नहीं जा सकता था क्योंकि तब पाकिस्तान बना ही नहीं था।

"ऐ कम्मा भैया!" रफ़ीक़ हज्जाम ने महेन्दर के बायें दर में लटकते हुए गामाश पट्रोमैक्स के नीचे रुककर आवाज़ दी, "ज़री जल्दी से चलो। अनवारुल हसन की छुटकी लड़किया की तबियत ख़राब हो गयी है।"

कम्मा फ़र्श से उठकर अपने चप्पल टटोलने लगा। जवाद मियाँ ने ज़ोर से अपना गला साफ़ किया। सारा इमामबाड़ा गूँज उठा। उनकी खँखारने की आवाज़ एक दीवार की तरह हकीम अली कबीर के वुजूद पर बैठ गया। हकीम साहब बिलकुल इकट्ठा हो गये।

"हम सोच रहे हैं कि एक दिन सबको पाकिस्तान जाये का पड़िहै।" कम्मा के जाने के काफ़ी देर बाद हकीम साहब ने कहा, "हियाँ अब रह का गया है। ना तो ज़मींदारी रही, न आला चला गयी। नाना पानन का बाग अलग... कैसे जियें कोई?"

शाहिदा को मंज़ूर मियाँ ने गुदगुदाया तो वह खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसके बचकाना चेहरे में अँधेरा लरज़ उठा।

"हम तो सोच रहे कि ग़ाज़ीपुर चले जायें।" अब्बू मियाँ बोले, "अब गाँवों में रहना बहुत मुश्किल है।"

"नाकी ए मामू," मंज़ूर मियाँ बोले, "कानों का सार है," न के, "हम तो यह माना कि दिल्ली में रह जायेंगे का! ना चार बाग़ही मनी न है न यही रूबो। शहर में क्या धरा है? हम न जायेंगे कहीं।"

"तो न जाव ना, कोऊ कौन रोका!" अब्बू मियाँ बोले, "जुलाहन और गाउन का ग़ुलाम बना और रहो।"

"ए हम्माद, अब की ना ही मरम्मत करवाये ना का..." हकीम साहब ने हम्माद मियाँ से पूछा, "मिट्टी गिर रही है ऊपर से!"

"साल के बरसात का पार करके पूरा हो जाइए।" फुन्नन मियाँ ने कहा, "इमामबाड़े की मरम्मत कराने की कौन ज़रूरत है। लोगों का ब्याह बन न

त हो का मन न बना तें। आप कहते हैं कि नाली बूँद के अँगनवों में भुट्टे के कमा अच्छी फसल आती रही। मकाना गिरने से फायदा है भैया। मजे में तान बागा का पिरा घिराया मन निकल आया।'

हम्माद मियाँ यह आवाज सुनकर तिलमिला गये क्योंकि जमादारी के नाम के बाद ही से बूँद के गानेवाला ने आना छोड़ दिया था। चुनांचे मकान गिर गया। और जब मकान गिर गया तो हम्माद मियाँ ने हल चलवा कर मन बना लिया। यानी पहले जो जनाना इमामबाड़ा मैदानियों की आवाज के गन्ने पर आम की बूँद की तरह चमका करता था वह अब जो कर मन के किनारे खड़ा था। और मामानी जब पूछती थीं—'अरे भई, इस बरस उठा क्यों नहीं आयी? मूनिस और मासूम और मद्दू कहाँ चला गया? गुरबा और मुन्ना कहाँ है?' मामानी और चुप हो जाती और ये आवाजें क्या कहाँ सुनायी पड़ती। मामानी और चुप हो जाती और हुआ इमामबाड़ा उन टूटी शाम लेकर खामोश हो जाता।

जनाना इमामबाड़ा में मिट्टी के ढेर का ढेर उस ताक में बैठा ऊपर मदानियों का इन्तजार कर रहा था। और मदानियाँ उत्तर पट्टी की मजलिस में रहा था। जिसमें डिप्टी अली हाशमी की बहू बैठी शादाब फातमा एक इसरार नया धुन में उनके आवाज का नौहा पढ़ रही थीं। बीबियाँ ... और उनका कलेजा फटा हुआ जा रहा थी। उस गाँव में एक मदीना और हर घर में कोई कमरा था। हर घर में बाद था। हर घर में कोई कुबरा था। हर घर का मातम हो रहा था।

बना था—और घर का मातम हो रहा था।

मन्नू की अम्मा ने शादाब फातमा का नौहा सुनकर यह सोचना शुरू किया कि मन्नू की आवाज शादाब फातमा से अच्छी है। मन्नू का गला भी सालारजंग शादाब फातमा से अच्छा है। फिर यह क्या बात है कि शादाब फातमा की शोहरत हो गयी लेकिन मन्नू अब तक घटा हुआ है। यह मन्नू की आखिर कहाँ आग लग रही है। इतना अच्छा मिलता है तो मन्ना निखरा है, यहाँ खराब होती है। तमाम ... और मन्नू किसी काम का होता है या इतना खराब। दस दिन डोलते और न जाने क्या ... आ पूरे ... चौराहे में फिर देखना। अब तो न। जितने किसने कभी अच्छे दिनों का ...

हर तरफ सन्नाटा था। उसी की कुँवारी जवानी आसेब की तरह उनके सिर पर चढ़ी बैठी खेल रही थी। क्योंकि सईदा को इसका अहसास नहीं था कि रिश्तों का कैसा सख्त अकाल पड़ गया है। उसने बी० टी० कर लिया था और गंगौली और आस-पास के तमाम शुरफा और उनकी शरीफाओं के नाक भौं चढ़ाने के बावजूद उसने नौकरी कर ली थी। शुरू शुरू में तो खुद अब्बू मियाँ को यह बात बहुत बुरी लगी थी। उन्होंने सईदा से बातचीत तक बंद कर दिया था लेकिन तब जमींदारी खत्म हो चुकी थी। इधर उधर लोगों ने काफी बातें बनायीं। सईदा कई लोगों से फँसायी गयी। उसके दो एक पर गिराये गये। सईदा की माँ ने कयामत मचायी लेकिन बाद में अब्बू मियाँ ने सईदा का कसूर माफ कर दिया। फिर उसकी माँ भी उसकी कमाई का बनाया हुआ मातमी लिबास पहनकर मजलिस के फर्श पर जा बैठीं। तमाम बीबियों ने उसके कपड़े को गौर से देखा। लड़कियाँ तो जैसे उन पर टूट पड़ीं—कहाँ से आया है? कितने गज है? मध्यवर्ग की अधिकतर लड़कियाँ अब सिर्फ कपड़ों के दाम पूछ सकती थीं और जागती सोती आँखों में उनके ख्वाब देख सकती थीं—ये ख्वाब देखते देखते उनकी आँखें दुखने लग जातीं और इतनी तकलीफ होती कि वे रुआँसी हो जातीं लेकिन जब भी उन्हें कोई नयी वज़ा का कपड़ा नज़र आ जाता तो वे निखर जातीं। ये नयी वज़ा के कपड़े और नयी तराश के लिबास गंगौली में सईदा ही के साथ आये इसलिए सालभर उसकी नाक ऊँची रहती और जब वह आती तो उसे बूढ़ियाँ नाक भौं चढ़ा लेतीं। हद तो यह है कि नौहा पढ़ने की शौकीन बीबियाँ सईदा के साथ नौहा पढ़ना न पसंद करती होतीं। लेकिन लड़कियाँ शहद की मक्खियों की तरह उसके आस-पास मंडराती रहतीं और यह सोचा करतीं कि आखिर उनके अब्बा उन्हें पढ़ने के लिए अलीगढ़ क्यों नहीं भेजते? मगर जब सईदा की अम्मा ने सईदा का बनाया हुआ मातमी लिबास पहना तो बड़ी-बूढ़ियाँ तक आकर्षित हो गयीं।

रज्जन बी की भी हसरतें जाग उठीं।

मैं तो कहूँ कि किसी गंगौली में ई कपड़ा कहाँ से आ गया! ई तो बेटी की कमाई है।

कमाई!

टटी का कमाई !!

नन्हे की अम्मा तड़प गयीं। मजलिस का फर्श न रखा होता और इमाम बाड़ा फूल से सुथरा होता तो कब रब्बन बी से उलझ पड़ती।

'ऐ मौला! आप गवाह रहियेगा जैसा ताना इसने टटी की पीर रहे!'

'तुम पार की कौन बात है?' रब्बन बी ने कहा 'बी सलमा तो हाथ लगा उस के काम। कमा ना रहा न का कुरान पढ़ रही है।' उन उसी वक्त जाकिर साहब ने नौहा पढ़ना शुरू कर दिया। रब्बन बी ने रूमाल आँखों पर रख लिया। नन्हे की अम्मा ने भी रोना शुरू कर दिया—कि आखिर उनका टटी की शादी कब होगी और किस तरह होगी। अब अल्ला मियाँ और आप बताना दूर न रह ना हुँहँ'

दो साल दोनों के घर के आठ पट्टों को मजलिस कर लिया जाय। हकीम साहब की बेटी मजलिस खत्म होने पर नजबाज रही। तमाम बीबियाँ जाने को तैयार हो गयीं। उस बालकी और दम गयी और उस खिड़की से निकलकर औरतें गठरी की तरह पार करने लगीं।

बोरियाँ भी खामोश हो गयी थीं। जब लड़के ही न हों तो कोई लड़कियों को किसके साथ बदनाम करे।

फ़रमाया मुख़्बिरेआलम ने कि ए मेरे हबीब उन से कह दो कि अल्लाह सिर्फ़ सब्र करनेवाले के साथ है। मल्लू ने टीन की बहुत वाली कुर्सी पर बैठकर छपी हुई किताब से मजलिस पढ़नी शुरू कर दी। मगर रोशनी नाकाफ़ी थी। अब मोहर्रम की मजलिस कोई लैम्प की रोशनी में कम पढ़े! मुई लौ ज़िद्दी बच्चों की तरह पेश आती है, जो मुँह धुलवाते वक़्त गरदन इधर उधर करते रहते हैं। और आजिज़ आकर माँ उन्हें पीट डालती है। चुनांचे वह अटकने लगी। रब्बन बी ने थोड़ी देर तक तो बरदाश्त किया लेकिन फिर उनके लिए चुप रहना नामुमकिन हो गया। बोली, "ए धिया, इ तोहें आज का हो गया है?"

'हम का करें भाई!' मल्लू चिढ़ गयी, 'रोशनिया है कि पढ़न करें।'

'अल्ला गारत करे इ पाकिस्तान को!' मिट्टू मियाँ की बीवी बोलीं।

'ऐ लो, अब इ में पाकिस्तान का कौन कुसूर है!' कुलसूम बानो जो मोहर्रम बाद पाकिस्तान जानेवाली थीं, क्योंकि उनका लड़का इरशाद, मगर इरशाद दूसरा जन्म लेकर कराची में सवा पाँच सौ कमा रहा था।

'पाकिस्तान का ना कहे त कै का कहें?' सईदा बोलीं, 'न दसुआ पाकिस्तान बनता न ज़मींदारी ख़तम होती।' राधिया मन्नन कि 'बड़ा मियाँ लोग पाकिस्तान बना लिया अच्छा तो जो जहन्नुम में जाए ज़मींदारी ख़तम!'

'त का हिन्दुस्तान का ज़मींदारी न ख़तम भई है?' फ़िरदौस फ़ातिमा ने कहा।

'आ निगोड़ा के पास ज़मींदारी कहाँ जुम्मनी रही?' शकीला ने तड़ से कहा।

'अरे तुम चुप रहो हो गयी मातमिनी!' रब्बन बी ने मल्लू को डाँटा 'का हम लोग यहाँ मजलिस सुनने दालान में बैठे रहें रातभर। मोनी क्या हमन हो गयी हो?'

मल्लू ने फिर पढ़ना शुरू कर दिया। फिर किताब में लिखा हुआ रुबाई[1]

---

[1] रुबाई पढ़ना क्या का एक तरीक़ा है।

नाहिद उठकर आने लगा। यह किनारे मुँह पर रखकर गाने लगी। वह कुर्सी से नीचे उतर आया। सुबरा ने उससे हबीबा से नीचे उतरने को कहा, लेकिन तब तक मन्ना अपनी बयाज लेकर खड़ी हो चुकी थी।

मन्ना के हाथ में बयाज देखकर रिब्बू मियाँ और अबू सईद मियाँ की बातियाँ अरे जी लगाकर गाने पर लगाए हुए क्योंकि उनकी यह भतीजी पहली बार नात पढ़ने जा रही थी। दक्खिन और उत्तर पट्टी की तमाम लड़कियाँ मन्ना के गिर्द आकर खड़ी हो गयीं। घर बाहर के बच्चे वाले भी आ गये मगर जब मन्ना ने बयाज खोली तो सारी लड़कियाँ हक्का बक्का रह गयीं।

नौज ! यह हिन्दी कौन ज़बान है भाई।' उम्मे हबीबा से न रहा गया तो बोल ही पड़ी।

'हिन्दी !' मन्ना ने जवाब दिया।

'तौबा अस्तग़फ़ार !' सईदा की माँ ने अपने गालों पर आहिस्ता आहिस्ता तमाचे मारते हुए कहा, 'अब अल्लाह रसूल का नाम भी हिन्दी में लिया जायेगा !'

'इन का नाम न सुन सईदा, अरबी फ़ारसी का नाम भी भूले रहिया। बाबा, यह कौन ज़माना निकल आया है ?' मस्तान बी ने सवाल किया।

'नबी के नाम की मुहब्बत से तो हिन्दी में नमाज़ लिखकर याद की है।' मन्ना ने कहा।

'तो यह कौनो बात न है।' सईदा ने कहा 'कि कौन साधू का सर्टिफिकेट ले के गाना गा रहा।'

'बस, बस बाबा !' सईदा ने मन्ना से कहा 'मन्ना, मैं तुम्हारे साथ नहीं हूँ।'

मगर मजलिस ख़राब हो गयी। जो जहाँ था, वहीं से लड़ने लगा। बस उस दिन की अव्वलबाज़ी ने सईदा का ज़िक्र किया था। मन्ना न किसी का ख़्याल करते हुए और न किसी ने बात किया। मन्ना की अल्लाह वाली नात से मस्त निकलती रह गयी। उम्मे हबीबा इत्मीनान से उठ कर अपनी नाक की बच्ची परवाना को दूध पिलाने लगी। मन्नू की लड़की ने बड़ी मज़े की सुरीली आवाज़ में यह जो खिलखिलाती था

उसने सद्दो के मुँह पर एक चटकना दिया। सकीना ने लपककर शाहिदा को उठा लिया और रब्बन बी नौशाबा पर बरस पड़ी।

मम्मा ने घबराकर नौहा पढ़ना बन्द कर दिया। मजलिस खत्म हो गयी। बात को रफा-दफा करने के लिए कुबरा बी ने तबर्रुक तकसीम करना शुरू कर दिया और जुलाहिनों और चमाइनों ने उन्हें घेर लिया। वह उन्हें बाँटने लगीं। इसी चाय-पाँय में लम्प ने एक हिचकी ली, फिर उसकी साँस उखड़ गयी और दम टूट गया। इमामबाड़े में अँधेरा छा गया।

'नौज जब हम्मारे घरों इमामबाड़े ही के वास्ते तेल न जुड़ता था?' सईदा की माँ ने टुकड़ा लगाया। सईदा ने यह आवाज सुनी। उसे बड़ी वहशत होने लगी। वह जानती थी कि अब कुबरा बी जवाब देंगी और फिर बात चल निकलेगी। इसलिए पहले तो उसने अँधेरे ही में अपनी चप्पलों को ढूँढ़ने की कोशिश की मगर जब चप्पल नहीं मिली तो वह नंगे पाँव अपने घर की तरफ चल पड़ी। जाना ही कितनी दूर था। वह घर पहुँची तो अब्बू मियाँ पलंग पर लेटे हुए कोई रिसाला पढ़ रहे थे। उसे देखते ही वह उठ बैठे, 'बिटिया! कोई ऐसा लफ्ज़ बताओ जो पचहर्फी हो। तीसरा हर्फ़ अलिफ़ है और पाँचवाँ न।

महून में लफ्ज़ हैं मगर
बस शुरू कर दी बहस तुमने!
लगाकर हिसाब कोई एक सा लफ्ज़ है!
बस एक दफा यह मुअम्मा सही हल हो जाए तो बेड़ा पार है।'

'आप भी क्या बात करते हैं!' सईदा को अपने बूढ़े बाप पर रहम आ गया। 'आपसे तो इतना कहा है कि गंगौली को लगाइए आग और चलिए हमारे साथ। मगर आप मानते ही नहीं। बैठे मुअम्मा हल किया करते हैं।'

'गंगौली को कैसे आग लगा सकते हैं बिटिया! बुजुर्गों की कब्रों को आग लगा दें? बस यहीं से एक ठो रिश्ता मिल जाता तो तेरे ब्याह के हम भार से साँस लेते। आखिर लड़की ब्याह के वास्ते भी तो पैसा चाहिए न आखिर हम कहाँ से पैसा ले आयें!'

'मुझे नहीं करनी है शादी-वादी!' सईदा झल्ला गयी।

अब भी उसकी आँखों का ज़िक्र निकलता यह हल्का आती था। उसे बड़ा हसद का अहसास होता था। उसे ऐसा मालूम होता था जैसे वह इस काबिल ही नहीं कि कोई उसे पसन्द करे और तब उसे नन्हू याद आता था और वह उसे प्यार हो जाता थी।

वह चुपचाप अपने बिस्तर में घुस गया। दूर-करीब में कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आ रही थी। उसने तकिये में मुँह छुपा लिया। अब्बू मियाँ कुत्तों की आवाज़ में मुक़ाबला करने लगे थे—[illegible] में बायें और ऊपर से नीचे ऊपर से नीचे और [illegible] से बायें। नन्हें की अम्मा के आने पर भी उन्होंने अपना काम बन्द नहीं किया।

बस हिन्दुस्तान मुक़ाबला [illegible] किये जाओ! मैं कहती हूँ मैं ने बिल्कुले [illegible] गये हो।

क्या बात है? अब्बू मियाँ ने बड़े प्यार से पूछा।

मस्जिद में कौवा बुखार है [illegible] हकीम ने [illegible] है।

कौन साहब है? अब्बू मियाँ ने पूछा "हाकिम हिमायत [illegible] वह फिर मुकद्दस की नाक और [illegible] का इनाम है जिसे जाम ना खूब [illegible] करें।

एक सरदर्द दिया था [illegible]!

अब्बू मियाँ ने कोई जवाब नहीं दिया। नन्हें की माँ बड़बड़ाकर चुप हो गयी। नन्हें रोते-रोते थकी और उस तसवीर के बारे में सोचने लगा जो कभी उसके कमरे में हुआ करती थी और जिसे एक दिन नन्हें की तनहाई में उब कर [illegible] था। नन्हें [illegible] के सामने से पहले चुपके-से उस तसवीर को बक्स में निकालती अपनी अँगिया में रख लेती और फिर लालटेन और माचिस लेकर पाखाने चला जाता। कमोड पर बैठकर बहुत देर तक उस तसवीर [illegible] शिकायतें किया करती। मगर एक दिन [illegible] ने देख लिया। चुनांचे एक दिन बोली, 'ए नन्हें! [illegible] आखिर [illegible] में या करती?'

"[illegible] मेरा मतलब नहीं है!" अब्बू मियाँ ने कहा, "अब आ का [illegible] बाकी ही [illegible]"

'और का ! मैं तो ओ की दुश्मन हों ना ?' ये आवाज़ें सुनकर रहमत पर बैठी सल्लो की साँसें तेज़ हो गयीं और वह सोचने लगी कि इससे ज़्यादा खुशनसीब तो सैफुनिया निकली जो मज़े में अपने मियाँ के साथ है। 'और सुन रहे कि कनीज़ फ़ातमा की तो शादियो हो गयी। ग़ज़ब ख़ुदा का ! कि दुल्हन, बच्चा और फ़ातमा त अब्बा अब्बा पुकारें और हमरी सद्दो की किस्मत में आठ-आठ आँसू रोना-धोना लिक्खा है।' अम्मन में परेशानी यह थी कि सद्दो को सवाल करना आ गया था।

'जब आपके अब्बा हैं त हमरे अब्बा काहे नाहीं हैं ?' सद्दो ने पूछा था।

'तोहरे अब्बा भी है।'

'कहाँ हैं ?'

'पाकिस्तान में।' फिर उसने उन तमाम लड़कियों के नाम ले डाले, जिनके अब्बा पाकिस्तान में हैं कि शायद यह मालूम हो जाने के बाद सद्दो की तस्कीन हो जाय। लेकिन वह मुतमईन नहीं हुई। बोली, 'हमसे अच्छी तो मिसरा या की नबुआ है। ओ के अब्बा काहे न गये पाकिस्तान। हम ना रहते। तू बुलाया हमरे अब्बा को।'

'हम तुम्हरे अब्बा के इन्तज़ार में बैठे हैं ओ। तो लिखवा ना कि आ जायँ।' रब्बन बी ने कहा, 'मुँह मा माटीमिले ! गनभर टाय टाय लगाये रक्खा है।'

अब ई ना कौनो डाँगर की बात न है दद्दा।

'ए अल्लाह तोरा रसूल ! हड्डी तोड़ मारी का !' रब्बन बी ने कुलसुम को आवाज़ दी। कलौता सल्लो पर नज़र पड़ी। सल्लो इसका जवाब अपनी माँ का मुँह ताकता रह गया। उसकी समझ में यह बात न आयी कि सद्दो के अब्बा जो पाकिस्तान चले गये तो ओ में हमरा कौन कसूर है ? हम ना तो भेजा है उ... सल्लो को आग इतना तेज़ लगी कि उसे अपना वुजूद [illegible] ऐसा महसूस हुआ। चूल्हे के अंगारा कलेजा ठण्डा करने के लिए उसने सद्दो को मारना शुरू कर दिया। 'ले !' उसने सद्दो की पीठ पर घूँसे मारते हुए लगी— 'और ले ! बेटा अब्बा लेबे !' सल्लो ने सद्दो को कुत्ते की तरह पुचकार कर [illegible] कि मार का कम [illegible]।

हुई थी। इस दम साथ के बला री एक जोड़ी भी थी जो अपनी मस्ती दुमों से मक्खी उड़ाया करती थी। उनके दरवाज़े पर नीम के नीचे शाम को कपड़े की कुर्सियाँ बिछती जहाँ गाँव के कई मीर साहबान हुक्का और चाय पीने आ जाते थे और गयी रात तक महफ़िल जमी रहती थी। जवाद मियाँ उसी धड़ल्ले से चन्दा उठाकर याद किया करते थे। और उनका कम्मो अपने मतब के कमरे में बैठा मरीज़ों की ख़ैर-ख़बर देखकर थक जाता है। चुनाँचे जब वह लौटता तो रहमान बो जौनपुर की तेल की शीशी लेकर उसके सिरहाने बैठ जाती और तेल लगाने लगती। और उसकी शादी की बात करने लगती।

'मैंने कह दिया न कि मैं शादी नहीं करूँगा!' एक दिन रहमान बो को कम्मो ने झिड़क दिया।

'काहे न करोगे?' रहमान बो ने चमककर कहा, 'ए बेटा तनी सोच, कब तक हम अपने हाथ से पका कर! अब हमसे काम न होता।'

'कहते हैं कि एक नौकरानी रख लो तो सुनती नहीं हो।'

'अच्छा ई हमार की जगह नौकरानी ले ले बाला मत कर हमसे। जब हम मर जायँ तो रख लीह नौकर। हमरे जीयत ई घर में नौकर चाकर नहीं आ सकता। तोका कौनो लड़की पसन्द आ गयी का?'

'बस वही मुर्गे की एक टाँग!' कम्मो ने कहा, 'कोई लड़की पसन्द आ गयी होगी तो क्या उसे बहू बना लाओगी?'

'काहे न बना लायेंगे। तें बताओ कौन है?'

'मैं नहीं बताऊँगा।'

'ताको मोर दूध की कसम है, बता!'

'अरे अम्मा, तुम तो बिलकुल पागल हो गयी हो।'

'नहीं तें बता!'

'सईदा से शादी कर लोगी मेरी?' उसने पूछा।

रहमान बो सन्नाटे में आ गयी। सईदा! यह दीवार तो बहुत ही ऊँची है। [illegible]! [illegible] कहावतें रहमान बो को ज़बानी याद थीं। वह अपने घर का मुँह तकती रह गयी।

जाओ। मुझे नींद आ रही है।" [illegible] कहा "और अब मुझसे शादी की बात न करना। मैं सर्दी में शादी करना चाहता हूँ और सर्दी में मेरा ब्याह हो नहीं सकता। सर्दी में मेरा ब्याह इसलिए नहीं हो सकता कि मेरा दोस्त गुम है।

आखिरी जुमला बड़ा सख्त था। रहमान को तिलमिला गया।

"और का वक्त और था! सदर्शनसिंह का [illegible] की तरह का [illegible] था न! वह भी यहीं [illegible] में आते ही गिरफ्तार न होता! वह जिंदा होता अगर बाहर न [illegible] कि आप हम यहाँ [illegible] साहब! हम दोनों के [illegible] रहते।

कुछ बरसों से कमालुद्दीन हो गया है। और जिसकी माँ अब भी रहमान बो कहा जाती है।

लेकिन इसके बावजूद सईदा में इतनी तब्दीली जरूर हुई कि उसने कम्मो को गौर से देखना शुरू कर दिया। यहाँ तक कि कम्मो घबरा गया और जब लौंडे में आकर फिद्दू ने उसे यह बताया कि उसने सईदा से क्या कहा तो वह बिलकुल सफेद पड़ गया और सईदा से कतराने लगा। और यह दुआ करने लगा कि मोहर्रम जल्दी खत्म हो, और सईदा अलीगढ़ चली जाय

सल्लो का पेट दबाते हुए भी वह दिल ही दिल में यह दुआ माँग रहा था कि या अल्लाह! मोहर्रम जल्दी खत्म हो। गर्मियों की छुट्टियाँ बिलकुल न हुआ करें और तीन चार साल तक मोहर्रम भी न आये।

आह! सल्लो कराही। कम्मो ने उसका पेट जरा जोर से दबा दिया था।

कोई परेशानी की बात तो ना है? फुस्सू मियाँ ने पूछा।

जी नहीं! उसने अपना बक्स खोलकर दवाओं की शीशियों को टटोलते हुए कहा हिस्टीरिया है। दवा दिये देता हूँ। उसने कई शीशियों को निकालने एक नजर देखने और उन्हें उनके खाने में रखने के बाद कहा, वैसे तो इसका इलाज नहीं है मगर अल्लाह ने चाहा तो शफा हो जायगी। उसने सफेद कागज के चौकोर कटे हुए टुकड़ों पर हाथीदाँत के एक अजीब चमचे से ग्लूकोज का थोड़ा-सा सफूफ रखा फिर कागज के हर टुकड़े पर एक शीशी से चार चार गोलियाँ ठोंक ठोंककर गिरायीं एक तो अभी खिला दीजिए। उसने इत्मीनान से पुड़िया बनाते हुए कहा एक सुबह को एक दोपहर को और एक शाम को। शाम को मैं फिर देख लूँगा।

कोई परहेज वगैरह? सकीना ने पूछा।

जी नहीं।

वह अपना बक्स उठाकर चला गया। फुस्सू मियाँ ने तहबन्द को उठाकर चढ़ा में आँगन के पास पीढ़ी गुनगुनी सी और तब पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की कांग्रेसी सरकार के बारे में सोचने लगे। इन तीनों के सिलसिले में उनके जेहन में न कोई अच्छा खयाल था और न कोई अच्छा मशवरा। उनके लिए क्या

हमहूँ कौनो खुशी से ई रिश्ता ना करिहें, मामू !' फुम्मन मियाँ ने कहा, 'बाकी मजबूरी है। का किया जाय ? कुँवारी लड़की के मुकाबले बियाही लड़की फिर अच्छा लगिहे। और अभी ने उम्मे लैला और कनीज के वास्ते लड़का ढूँढे का है।

'कम्मो और फिद्दू में बियाह देवा !' अब्बू मियाँ ने ठण्डी चाय के बदमज़ा लहजे में कहा, 'हम्मारे भाई के मरद होने में तो कौनो शक है ना।'

मामू, ई आप का कह रहे !' फुम्मन मियाँ बिलकुल सटपटा गये।

मामू ठीक कह रहे हैं बेटा !' अब्बू मियाँ ने कहा, 'अब हम्मारे हमरे खानदान की कवनो बियाह के लै जाये काबिल हो गये !'

'तो का करें लड़कियन को मार डालें ?'

तैं तो ऐसा पूछ रहा कि जैसे हमरे घर में कुँवारा बिटिया ही ना है।' अब्बू मियाँ ने कहा, 'बाकी हम तो ओ जुलाहिन के बच्चे को अपनी बेटी ना देंगे।'

सईदा और हमरी लड़कियन का क्या मुकाबला ?' फुम्मन मियाँ ने कहा, 'सईदा माशाअल्लाह से पढ़ी लिखी है। तीन सौ कमा रही है। मुश्किल तो हमरी जाहिल बिटियन की है।'

मामू, अब ते ज़िद करिहो ना। हम हम्मारे से ज़िकर निकालेंगे, मोहर्रम बाद।'

और इहै बीच में कौनो रिश्ता आ गया तब का हुइहै ?'

'तो क्या आज आठ मोहर्रम को निस्बत की बात करें ?'

फुम्मन मियाँ के पास इस सवाल का जवाब नहीं था। वह भला कैसे कह सकते थे कि आठ मोहर्रम को नागा भी क्यों निकाला जाय !

अब ई सब आप जानें हैं हम जा रहे।

अरे फुम्मन ! गब्बीर मियाँ आ गये।

आदाब, भाईजान !' उन्होंने अब्बू मियाँ को सलाम किया, 'कहो क्या भाई ?' वह फिर फुम्मन मियाँ से मुखातिब हुए।

नाश्ता कर। फुम्मन मियाँ ने हमेशा की तरह मुसकराकर कहा।

इन्हें अपने परिन्दुम-मुरन्दुम के अलावा कोई फिकर नहीं। गब्बीर मियाँ मुसकराये और दामन से अपने चिकनगे चश्मे का शीशा साफ करने

"परसराम आइल बाडन !" बाहर से धनिया चमार ने आवाज दी जो जमींदारी के खातमे के बाद भी अब्बू मियाँ से चिपटा हुआ था।

"आइन बाडन।" अब्बू मियाँ ने अपनी आँखें नचाकर कहा।

परसराम एक कुर्सी पर आराम से बैठा हुआ कैप्स्टन सिगरेट पी रहा था और चुटकी बजा-बजाकर राख झाड़ रहा था। गाँव के दो-तीन चमार और दो-तीन अहीर जमीन पर उकड़ूँ बैठे हुए थे। एक खैनी मल रहा था। फिर उसने एक-एक चुटकी खैनी अपने दो-तीन साथियों को देने के बाद मुँह में दबा ली।

परसराम उजले खद्दर की धोती पर खद्दर ही का कुरता पहने हुए था। उसके पाँव में सलीमशाही सैण्डिल था। एक कुर्सी पर उसका ब्रीफ केस रखा हुआ था। अब्बू मियाँ को देखकर वह खड़ा हो गया। जमीन पर बैठे हुए लोग भी खड़े हो गये।

"आदाब मीर साहब !"

"कब आया?" अब्बू मियाँ ने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा।

"आज ही आया हूँ।" उसने भी बैठते हुए कहा। बाकी लोग जमीन पर बैठ गये।

"और तोरे लखनऊ का क्या हाल है?"

"राम राम है साहब!" परसराम ने कहा, "यह कमेटी, वह कमेटी। यहाँ जलसा, वहाँ जलसा। उस पर हिन्दू मुसलमान झगड़े ने अलग नाक में दम कर रखा है। जब थककर यहाँ आता हूँ कि कुछ दिन आराम करूँ तो ये [illegible] हैं।"

"अब क्या मियाँ, इनसे हमरा कौन कुसूर है!" चमारों में से एक बोला, "हम और हमार जाति वाले आप की शरण पाये। अब पटवारी ससुर के हम का कहें, ओकरे हाथ में कलम है, चाहे जे का नाम लिख दे। बाकी हम जमीन ना छोड़ेंगे। आप माई-बाप हैं, जो हुकुम दे द्या।"

"और गाँव का क्या हाल है?"

"मेहरबानी पर बाटा साहब।" एक जवान चमार ने कहा।

अब्बू मियाँ का दिमाग तेजी से काम कर रहा था। उनकी समझ में नहीं

आ रहा था कि परसराम चमारों को छोड़कर अहीरों का साथ क्या दे रहा
है। वह उन अहीरों को भी बहुत दिन से जानते थे। बड़े जरायमपेशा थे
सब-के-सब।

ये लोग हमारे पास काहे को आये हो? उन्होंने कहा अब हम का
कर सकते हैं।

मैं यह जानता हूँ मीर साहब कि मेरे इलाके में यह छोटे-मोटे झगड़े न
हों। परसराम ने कहा आप इस इलाके के जिम्मेदार लोगों में से हैं।
गाँव के बुजुर्ग हैं। कोई फैसला कर दीजिए।

मियाँ जौन फैसला कर दें हम मंजूर है। अहीरों के बुजुर्ग ने कहा।

सुन रहिया मैं। अब्बू मियाँ ने परसराम को मुखातिब किया हम
फैसला कर दें और फिर हम हैं कौन फैसला करनेवाले।

मैंने इन लोगों को इस बात पर तैयार कर लिया है कि इन्हीं के पास
न सर में रोग होंगे। परसराम ने कहा।

न ... ना होई। चमार ने कहा।

ना होई ना मूल-गारायी हो जायी। अहीर ने टोका।

मैं मारूँगा। अब्बू मियाँ ने कहा फिर वह ... ना गये।

ने चाहा तो बढ़िया हम लोग दरवाजे पर मजलिस कर आये।

कहा मैं भी चलता हूँ। परसराम जो खड़ा हो गया। अब्बू मियाँ
फिर अन्दर चले गये। परसराम चमारों और अहीरों को समझा कर
हम्माद मियाँ के घर की तरफ चला गया। हम्माद मियाँ ... इन्तजार हो
कर रहे थे। उसे देखा तो वह मुसकराये। फिर उन्होंने झाँककर दरवाजे में
देखा। इमामबाड़ा खाली था। अभी लोगों ने आना शुरू नहीं किया था। वह
फिर बैठ गये।

क्या हुआ?

एक-न-एक ... तो फिर हो जायेगा। मैंने ... उन्हें ... छोड़
लिया है।

ठीक है।

और मीर साहब यह

"हाँ हाँ !" हम्माद मियाँ ने कहा, "तुमसे तो कह दिया कि दरवाज़ा तुम्हारा है। मोहर्रम के बाद बगली कमरे में दफ़्तर जमा लो। कुर्सी मेज़ सभी मौजूद है।"

"जो हो, वहाँ बड़ी तकलीफ़ होती है। सोचता हूँ कि राई मौके की ज़मीन मिल जाय तो एक मकान बनवा लूँ। जीप तो ले ली मैंने। आने-जाने में बड़ी तकलीफ़ होती थी।"

"पुलिसवाले अब्बास के पीछे पड़ गये हैं।"

"अरे मीर साहब, कैसी बातें करते हैं आप! पुलिसवाले बहनचोदों की मजाल कि अब्बास मियाँ की तरफ़ देख लें! मैंने कलक्टर साहब से कह दिया है कि अब्बास मेरे खास आदमी हैं और उन्हें बिलकुल परेशान न किया जाय।"

"हाँ भई, हम सिर्फ़ अब्बास की तरफ़ से परेशानी बनी रहती है।"

"नहीं साहब, आप इत्मीनान रखिए।"

"और इधर उस बहनचोद रमज़ानी जुलाहे ने चौक के सामने पाखाना बनवा लिया है। अब बताओ..."

"उसके लिए तो मैंने थानेदार से पहले ही कह दिया था।"

उसी वक़्त हम्माद मियाँ की निगाह गया अहीर पर पड़ गयी जो दरवाज़े से अन्दर आ रहा था।

"सलाम!" उसने हम्माद मियाँ और परसराम को सलाम किया।

"का भईया रे?" हम्माद मियाँ ने पूछा।

रमज़ानी का पखाना न गिरे, गईन और ... का पासा भी ... दिहा। ... सुना आयन बाड़ा बनाये के।

परसराम ने एक और सिगरेट सुलगायी। उसकी टाँग और फैल गया। उसकी आँखें मुस्कराने लगीं।

"त हम गरीब जात जाए।" गया ने कहा।

"हाँ, मगर फिर तब ज़रूर आ जाना।" हम्माद मियाँ ने कहा।

मेज़ पर रखी सौनागिरिया की ... में मसाले का एक डिब्बा और सिगरेट पीने ... का एक डिब्बा पड़ा था। परसराम ने जेब में हाथ डालकर गुप्त थैली का एक बटुआ निकाला। उसमें तरह-तरह के जेवर थे।

'देर आना! जा, लेता आयगा।' इम्माद मियाँ ने कहा, 'पैसे देने की क्या जरूरत है?'

'नहीं, मीर साहब!'

'अच्छा, रहने भी दो!' उन्होंने बुर्कों के गट्ठे में घुसकर। फिर गया से बोले, 'बीबी से दस रुपये और ले ले।' फिर उन्होंने परसराम से कहा, 'मेरे-तुम्हारे रुपये में कोई फर्क है!'

'जी नहीं, यह बात नहीं है, मगर...'

'तुम क्या गड़बड़ कर रहे हो। जाओ!' इम्माद मियाँ ने गया से कहा।

गया ने गुसलखाने में पैर झाड़कर अपना चमरौधा पहन लिया। फिर अपनी साड़ी उघाड़कर उसने जनाने दरवाजे से हवेली की बड़ी नौशाबा को आवाज दी। नौशाबा उस वक्त बहुत मसरूफ थी। [illegible] की नयी पत्ती निकाल रही थी। उसे गया का पुकारना बहुत बुरा लगा, मगर चारा ही क्या था। 'क्या है?' उसने पलंग में ही सवाल घुमाकर मार दिया।

'बीबी से दस रुपया माँगकर ले दें हुजूर। शहर जाना है।'

शहर का नाम सुनकर नौशाबा चिपक गयी। उसकी गुड़िया के पास कोई मलमल का लिबास नहीं था। उसने ठुनक-ठुनककर बुकरा से दो रुपये और ले लिये। बाहर रुपये लेकर वह दरवाजे तक आयी और गया से बोली, 'दो रुपये का मलमल गोटा लेते आना।'

'एक कागज पर लिख दो। हम से याद नहीं रहेंगे इतने नाम।'

नौशाबा ने एक कागज पर चीजों का नाम लिखकर गया को दे दिया और गजगामिनी सहज में बोली, 'मामा जाम्बर, मेरी गुड़िया के पास बाना कपड़ा नहीं है।' गया को भेजकर वह फिर अपने पलंग पर लेटकर फिर नये बनाने लगी। आखिर में मैना मासी फिर पर अक्खड़ की जवानी खत्म हुई।

'हाँ बस नौशाबा!' बुकरा ने बगलवाले पलंग पर बैठकर पानदान खोलते हुए कहा। 'तेरी फिकर दूर हुई। अभी तारे नाना का हुकम आना ही है।'

'हम नौकर नहीं हैं न।' नौशाबा ठनकी, अम्मा से कहिए।

'तू किस बात की दवा है?' हवीबा ने कमरे में एक सोच लगायी और वह

चुपचाप एक बड़ा की अँगिया पहनने की कोशिश कर रही थी जो उसने सईदा से कहकर मँगायी थी। वह इस अँगिया को बन्द कमरे में पहनने के बाद उतार लिया करती थी कि कहीं अम्मा देख न लें। लेकिन उसका खयाल था कि यह नयी अँगिया हाथ की सिली हुई छोटी बड़ी कटोरियों से कहीं ज्यादा अच्छा और आरामदेह है! गिरह विरह लगाने का चक्कर भी नहीं था।

ई तू कमरे में घुसी क्या कर रहिया? कुबरा ने पूछा।

हम बताएँ? नौशाबा ने कहा।

हमीदा का कलेजा धक से हो गया। अँगिया को बिस्तर में घुसेड़कर वह लपकी हुई बाहर आयी। बाहर आते ही उसने नौशाबा को दो-तीन थप्पड़ मारे। जब वह रोने लगी, तब उसने इत्मीनान की साँस ली और नौशाबा को डाँटने लगा।

कामदार मिट्ठीमिली! चल गिरी भूत बदमाश!'

हाय हाय! कुबरा ने बीच बचाव किया 'मैं कह रही हूँ का तू पगला गयी है हमीदा, ई मारे की कौन बात है?'

बहुत बदतमीज हो गयी है ई अम्मा। आप न जननी ए को। अपने अब्बा का नाक तक कटवाए रहती है।'

बच्चा है।

रज्जू तो ना इतनी छोटी है ना। कौनो कहिए ओ का। हमीदा ने कहा। रज्जू से अपना मुकाबला नौशाबा को हमेशा बहुत बुरा लगता था। एक तो यह कि वह बहुत छोटा था दूसरे यह कि वह नक चढ़ा गुड़ नहीं था कम दिखता था। था तो पाँच ही बरस का मगर यह तो नौशाबा का दिल हो जाता था कि वह दिखता नर है। एक मरतबा तो जब उसने घरा की सुरखी मसहरी लगा रही थी तो उस बदमाश ने गप-गपान से झाँका और फिर भागा भागा आया और बोला ए बाजी! महर बाना बाजा के मान पर अम्मा का तरह दो ठो बड़ा बड़ा फोड़ा निकला है। नौशाबा चूँकि बड़ी बहन थी इसलिए उसने उसे समझाना चाहा हट पागल! यह बाना आ पाड़ा है दूध है।

दूध कहाँ होता है। रज्जू ने कहा लाला दूध कहाँ है?

'हम मार देंगे रज्जू!' वह रज्जू को मारने के लिए दौड़ी तो वह भाग गया। बाकी [illegible] ना सकी। फिर एक दिन गर्मी दोपहर में वह आया और नौशाबा से बोला, 'ए बाजी! अब्बा अम्मा को मार रहे।'

'हाय!'

'नहीं अल्लाह कसम! चलकर देख लो। किवाड़ बन्द किए हैं और चढ़े हैं अम्मा पर। और गाली का तो [illegible] रहे हैं। अम्मा की मार मिन मिना रही हैं।'

नौशाबा घबराकर उनके दरवाजे तक गयी। उसने भी दरवाजे में झाँका। अन्दर सचमुच अम्मा की दुर्गति बनाए हुए थे। अम्मा की यह हालत देखकर उसे रोना आ गया। वह जार-जार से रोने लगी। रज्जू आ गया। सारे घर में कयामत आ गयी। [illegible] बात पर ऐसा होने के बजाय [illegible] मुँह देखकर मुस्करा दी। नौकरानियों ने [illegible] बना दी। [illegible] फिर सब चले गए। बाजी [illegible] अम्मा कमरे से बाग की तरफ निकली और [illegible] पान मली।

जाहिर है कि जब उस वर्दमान रज्जू से उसका मुकाबला किया जाता तो यह आत्महत्या हो जाता और फिर [illegible] से उसने [illegible] हो जाता जिसके नतीजे में इबादा [illegible] गया। उसने इबादा की तरफ देखकर [illegible]। 'इधर तो देखो!' इबादा बाजी

चुपचाप एक बज्रा की अँगिया पहनने की कोशिश कर रही थी जो उसने राईना से कहकर मँगायी थी। वह इस अँगिया को बन्द कमरे में पहनने के बाद उतार दिया करती थी कि कहीं अम्मा देख न लें। लेकिन उसका खयाल था कि यह नयी अँगिया हाथ की सिली हुई छोटी बड़ी कटोरियों से कहीं ज्यादा अच्छी और आरामदेह है! गिरह-विरह लगाने का चक्कर भी नहीं था।

"ई तू कमरे में घुसी क्या कर रहियो?" कुबरा ने पूछा।

"हम बताएँ?" नौशावा ने कहा।

हबीबा का कलेजा धक् से हो गया। अँगिया को बिस्तर में घुसेड़कर वह लपकी हुई बाहर आयी। बाहर आते ही उसने नौशावा को दो-तीन थप्पड़ मारे। जब वह रोने लगा तब उसने इत्मीनान की साँस ली और नौशावा को कोसने लगा।

"नासपीटे मिट्टीमिली! चल, गिरी भून बइमान!"

"हाय हाय!" कुबरा ने बीच बचाव किया। "मैं कह रही हूँ का तू पगला गयी है? हबीबा ई मारे का कौन बात है?"

"बहुत बदमास हो गयी है ई अम्मा। आप ना जनती एँ का। अपने [illegible] बकवास करती है।"

"बकता है।"

[illegible] छोटा है ना। बाती [illegible] आ का। हबीबा ने कहा। [illegible] अपना मुँहबोला नौशावा का हमेशा [illegible] बुरा लगता था। [illegible] कि वह बहुत छोटा था दूसरे यह कि वह [illegible] नहीं था [illegible] था। था तो चोर ही [illegible] मगर यह तो नौशावा का दिल जानता था कि वह [illegible] है। [illegible] जब [illegible] की [illegible] रही थी तो उस बदमाश ने [illegible] में झाँका और फिर [illegible] आया और [illegible] बाजी! [illegible] बाजी के [illegible] अम्मा का [illegible] निकला है। नौशावा चूँकि बड़ी [illegible] उसे [illegible] पागल! [illegible]
[illegible] है।

'हम मार देंगे, रज्जू!' वह रज्जू को मारने के लिए दौड़ी, तो वह भाग गया। बातें रफा-दफा हो गयीं। फिर एक दिन कड़ी दोपहर में वह आया और नौशाबा से बोला, ए बाजी! अब्बा अम्मा को मार रहे।

हट!

नहीं अल्लाह कसम! चलकर देख ना। किवाड़ बन्द किये हैं और चढ़ बैठे हैं अम्मा पर। और [illegible] रहे हैं। अम्मा भी मारे मिनमिना रही हैं।

नौशाबा घबराकर उनके दरवाज़े तक गयी। उसने भी दरवाज़े से झाँका। अब्बा वाकई अम्मा की दुर्गति बनाये हुए थे। अम्मा की यह हालत देखकर उसे रोना आ गया। वह ज़ार-ज़ार से रोने लगी। दद्दा आ गयीं। सारे घर में कयामत आ गयी। उसकी बात पर गुस्सा होने के बजाय दद्दा मुँह फेरकर मुसकरा दीं। नौकरानियाँ एक तरफ जमा गयीं। दद्दा ने लाहौल पढ़ी। फिर सब चले गये। थोड़ी देर के बाद अम्मा कमरे से चोर की तरह निकलीं और [illegible] लगीं।

ज़ाहिर है कि जब उस बेईमान रज्जू से उसका मुकाबला किया जाता तो वह आगबबूला हो जाता। और फिर बदले में उसकी कोई-न-कोई हरकत ज़रूर हो जाती जिसके नतीजे में [illegible]। उसने हबीबा का [illegible]। [illegible] हबीबा [illegible] समझा! [illegible] हबीबा की [illegible] में गयी। नौशाबा [illegible] से बाहर निकल आयी। [illegible] दिन-ब-दिन अपनी माँ से नफ़रत होती जा रही थी और रज्जू के बारे में भी उसके [illegible] बड़े [illegible] थे। उसने बाकायदा रज्जू-नामा लिखने का फैसला किया।

[illegible] हो चुका था। नौशाबा ने देखा कि रज्जू [illegible] है और [illegible] रहा है। नौशाबा का मन [illegible] और उसने फिर से दिल में कसम खायी कि वह अपने [illegible] में रज्जू [illegible] की [illegible]।

रज्जू का नौशावा के इन प्रोग्रामों की कोई खबर नहीं थी। वह इमामबाड़े के अन्दर से मौलवी बेदार का दम-ब-दम हँस रहा था जो मिम्बर पर बैठे अपनी बेसुरी आवाज़ में न जाने क्या-क्या कह रहे थे।

"ई बेदार नाना एतना चिल्लात काहे हैं नाना?" उसने इम्मन मियाँ से पूछा।

"चुप! मजलिस में नहीं बोलते।" इम्मन मियाँ ने कहा। वह चुप हो गया और मज़ूर मियाँ की तरफ़ देखने लगा जिनकी नाक उनके रोने की आवाज़ के साथ-साथ फलफला रही थी। उसे मज़ूर मियाँ की नाक बहुत पसन्द थी इसलिए वह शहर से बहुत जला करता था जो जब चाहती है उनकी नाक पर चढ़ जाती है। उसने उस नाक पर कब्ज़ा करने की एक तरकीब भी सोच ली थी। उसने तय कर लिया था कि वह बड़ा होकर शहर में नौकरी कर लेगा और फिर मज़े में मज़ूर भाई की नाक पर चढ़कर उस नाक में सुरंगें बनाता और बिगाड़ता रहेगा।

"या हुसैन!" शब्बीर मियाँ का लड़का अन्नन नियाज़ लेकर खड़ा हो गया। अंजुमन हुसैनिया के लोग सफ़ बाँधकर मातम में ताल देने लगे। अन्नन ने फ़ज़ल रसूलवी का कोई नौहा शुरू किया। मज़ूर मियाँ सरककर अब्दू मियाँ के पास आ गये। पास ही शब्बीर मियाँ और मिन्नू मियाँ सर पर रूमाल रख लिया इस शोर का इन्तज़ार कर रहे थे जिस पर बा-आवाज़ बुलन्द रोने का मौका मिल जाय। मगर नौहा बहुत फ़ाज़िल किस्म का था। बिलकुल लखनऊ की ग़ज़ल। लिहाज़ा लोग उकता गए और जब उसने शेर लिखा तो तीन-चार पढ़ के बाद से निकल गया और मियाँ लोग मुँह ताकते रह गए।

"ई तो बड़ा फीका नौहा पढ़ रहिन शब्बीरिया जी?" अब्दू मियाँ ने सलाम पढ़ने के बाद अन्नन से सवाल किया।

"फ़ज़ल रसूलवी का।" अन्नन ने कहा।

"अरे शायर हैं!" सल्लू भाई ने कहा, "नाबीना तर्ज़ में गाय रहे।"

"अरे उनका पुकार का नाम होय त होय।" फुन्नन मियाँ ने कहा, "बाकी शायर आ हरगिज़ नाहीं मालूम होत। ऊ कौनो नौहा भया जिसका सुनके रुलाई न आ जाए!"

आदमी का अजन-अजन का नौहा मन पढ़ा करो।' मजूर मियाँ ने कहा।

फिर उन पुराने नौहा की बात निकल आयी जिनके अल्फ़ाज़ ही आँसुओं से नम हुआ करते थे। कम उधर किसी ने नौहा शुरू किया नहीं कि मजलिस में हर-गुल हो गया और एक अवल नौहा है कि आदमी उस चौकन्ना न रहे तो नौहे पर ग़ज़ल का धोखा होने लगता था।

सब्बू मियाँ हम्माद मियाँ से यहाँ बातें करते उनके दरवाज़े तक चले गये।

'का मर अब अब्बास का विवाह न करिहो।'' उन्होंने एकदम से सवाल किया।

'तलाश तो हो रही है माशाअल्लाह।' हम्माद मियाँ ने कहा, 'मगर कोई लड़की नज़र नहीं आ रही है।'

'क्या आज हमेशा न घर में कुँवारी लड़कियाँ की कौन कमी है भला!'

'कोई लड़की है आपकी निगाह में?'

'अरे, काहे न हो तो पुन्नू की लड़की में दियान दिया।' सब्बू मियाँ ने कहा, 'अब मिसिरवा को बाँध लेने की ज़रूरत है। बन तक छुट्टे साँड़ की तरह घूमते थे।'

'यह तो शादी के नाम पर फ़ौजदारी करने पर आ जाता है।' हम्माद मियाँ ने कहा। 'लेकिन सजर का लड़किया न'

फिर उसमान की बात कर गौहा लें। अब मज़ूर के पास है का कि हमीं निकार चाहिहें।' सब्बू मियाँ ने कहा "हम उन जमाअत का सोचना रहा, हालिया। कहा तो बन हो निकाह पड़ता है।'

लगर ६,७ साइ

ए र साई काला बुनिया नामी कि अगर मगर कर जाते।

'फिर मुझे तो इस रिश्ते पर कोई एतराज़ नहीं। पर की लड़की है जो मेरा हुई है रस-भूगन ना मासाअल्लाह न उठा है। वैसे तो मैं कब का अबर लिन हाल चुका हूँ। आप तो जानते हैं कि आजकल लड़कों का बदल है। मैं अब्बास से बात कर लूँ।

सिगरेट में हू बात कर लिया। अब्बू मियाँ ने कहा 'का ओ पट्टी की मजलिस में ना चलिहो ?

चलूँगा क्यूँ नहीं !

वह जब हकीम साहब के दरवाज़े पर पहुँचे तो यह देखकर चौंक पड़े कि मजूर मियाँ अन्दाज़ में हाताा-भाज़ग पर बहस कर रहे हैं। अब्बास उनसे लुत्फ ले रहा है। बशीर मियाँ और डिप्टी अली हादी और कभी-कभार मौलवी बेदार हुसैन ने लेन हैं ता मजूर मियाँ और चमचकर बहस करा नगन हैं। परसराम भी एक कुर्सी पर नाम न्याज सिगरेट पी रहा है।

अब्बू मियाँ का स्वर भर गले हो गये।

ए परसराम ! हम आ बीच में ना पड़ सकत। अब्बू मियाँ ने कहा, हम काह को कोई से बुरे हो !

वह तो ठीक है मीर साहब लेकिन अगर अदालत ने आपको तलब किया तो आप क्या करेंगे ?

अदालत का हमसे का मतलब ! अब्बू मियाँ ने कहा।

हो जाई लाभी अदालत पटवारी के कागज की मसिल की हम बुलाई पढ़ि पाछू का लिख्या है। ए तुमको दिखि न हम साफ कह दे कि जमींदारी के खातम के बाद हम जमींदारी की सब बात भूल गये।

त ए छोड़ के आपको क्या हम भुला दें ! फुन्नन मियाँ ने पूछा।

आ साहब थ क दाम रखा है। अब्बू मियाँ ने कहा सब मामला उलझ ना गया कि धरा है।

चला आई मजलिस कर लिया जाय। हकीम साहब ने कहा।

लोग उठ ही रहे थे कि सम्मन लेकर सिपाही आ गया। हकीम साहब के नाम सम्मन था। परसराम चमार ने उन पर अदम अदायगी लगान का दावा कर दिया था।

क्या सम्मन है जी ? अब्बू मियाँ ने पूछा।

हम तो मुकदमे में फँसा दिये गये हैं ! उन्होंने बड़ी लापरवाही से कहा और हँसने लगे। पर सबको लगा कि वह परसराम बिलकुल बड़े हो गये। उनके होंठों पर बड़ी फीकी सी हँसी आयी। आँखों में उदासी झलकने लगी। मगर

इमामबाड़े में जाकर मिमबर से लिपटकर बैठ गए। इस रात उन्होंने पहली बार महमूद को खत लिखा।

अज़ गपोला

अज़ीज़ अज़ जान, नूरचश्म, राहत जान महमूद! सल्लमहू दुआ।

उम्मीद है के अज़ीज़ी बख़ैर आफ़ियत होंगे। सुना है अफ़ग़ानिस्तान के मुल्क में यहाँ भी मस्जिदें हैं। अज़ीज़ के अब्बाजान आराम से हैं। इसलिए अज़ीज़ को उनकी तरफ़ से परेशान होने की ज़रूरत नहीं।

खत लिखा ही जा रहा था लेकिन वह यह न लिख सके कि उन्हें पाकिस्तान, कांग्रेस सरकार और कस्मा ने मिलकर बिलकुल मार डाला है। वह यह न लिख सके कि अब स्वयं उनसे बाल बच्चों की ज़िम्मेदारी उठाने की ताकत नहीं है। और जब वह यह न लिख सके तो फिर यह क्या लिखते कि वह मुसलमानों के मज़ार हैं और उन्होंने दावा कर दिया है। पूरा। खत खतम न हो सका। वह वहीं नमाज़ की चौकी पर लेट गए। उनकी आँख लग गई और वह सवेरे तक इमामबाड़े में लेटे रहे।

वह अपना सामान बाकी के ज़ेवर पहले ही बेच चुके थे। पैसा पास न था। ऊपर से वेतन का सवाल पैदा नहीं होता था। वह के सामने सिर्फ़ यह सवाल था कि गुज़ारा कैसे करें और फिर वह कि इन लोगों के पास मकान के लिए जो बचे हाथ भी तो नहीं थे।

लेकिन सौ साहब का सुकून उनसे छिन चुका था। पाकिस्तान-हिन्दुस्तान की सरहद से वह लौट आए थे कि एक इमामबाड़े में बैठे। उन्होंने सुना। उन्हें अपनी आँखों पर यकीन नहीं आता। सामने महमूद था। उनको क्या हुआ! वह टूट गए। उनकी आँखें नम हो गईं। मुँह से फूट पड़ा 'आओ बेटा!'

'और कहाँ!'

दो चार रोज़ हो गए। सारे मोहल्ले में उत्साह की लहर दौड़ गई। सारे गाँव में खबर फैल गई कि महमूद लौट आया है। किसी ने खबर पर दर्ज न कर लिया और किसी ने बात करने से इनकार कर दिया।

"अब तो पाकिस्तान मगर मुश्किल है कि कोई भी लौट देखे!

अब मालूम हुजिए कि इ पाकिस्तान आखिर है कौन बला ?

बाबा मदन, तूने बहुत दिन लगा दिहन ।

अरे त पाकिस्तान म आना कौनो खिलवाड़ थोड़े है ! खाचाभर रुपया लगा हातर !

ने मुहम्मद हुसन काहे नहीं आते ! कुलसुम ने यह निहायत माकूल सवाल किया और एक बेंमसरफ पर लटककर जीने पार हुए फुन्नन मियाँ बगलें झाँकने लगे । पाकिस्तान के बनने से उनकी ज़िन्दगी में कोई खासी तब्दीली नहीं हुई थी। ज़िन्दगी कुछ बदतर भी हो गयी थी। वह परसराम एम० एल० ए० की नाक का बाल थे। अब थानेदार हाशिमाबाद उनकी खुशामद किया करता था। एक बार तो उन्होंने इसका तबादला करवाने का वायदा करके उससे तीन सौ ऐंठ थे। तबादला रुक भी गया था। भला एस० पी० साहब परसराम की बात कैसे टाल देते ! और जब मियाँ लोगों में से कोई परसराम के दिन फिर जाने पर ठण्डी साँसें भरता तो फुन्नन मियाँ इस तआस्सुब आमेज़ लहजे पर भड़क जाते और कहते, 'ए भाई ! अल्ला के कारखाने में दखल देवे का काम में कौन ? अ अपन गधे का रा का हरवा गिना रहे !'

मगर गंगौलीपुर वाले अलहम्दुल्लाह को अशरफ का पाकिस्तान चले जाना ... निश्चय ही खल रहा था । उन्हें पाकिस्तान से सिर्फ यह शिकायत थी कि उसने उन्हें अकेला कर दिया है। उनके घर में बस उनकी बहन ही थी और वह ... दिन-रात पन्नू और पप्पू की याद करती और कुलसुम की दिलजोई करती ... और सोचने लगती कि दुनियाभर के लोग पाकिस्तान न गये होते और अगर उन्होंने ... मुमताज़ को घर से निकाल दिया होता तो मुहम्मद हुसन और ... यहाँ बच्चों के आने के बाद भी उनका घर ऐसा भरा-भरा लगता । ... अब ... बार ... पर ... पूछ होता कि ... अगवा ... पर जाता।

मुहम्मद हुसन बिचारे कैसे आ जायँ ! ... कुछी ... दौरा का ... हुए ... अभी न आये का है ।

... की मियाँ भारी कैसा हुई है । कुलसुम बोली । कुर्दाथा यही ... है अब ना। मालाअल्लाह ... गाँव में ... सकती है । सरकन दिया पर कैसा ... सकता है ।

न कहा तो हम एक बार और कोशिश करें !" फुन्नन मियाँ मुस्कराए
का मालूम हो जाए !

अच्छा, चुप रहो । वह अब बोला । पूछा कर का गौर ना गया ।
कुलसुम की पलकों के लिए लगाव-सा जवान हो गया और फुन्नन मियाँ की गरदन
सीधी हो गयी । सियाह आँखों में चमक आ गयी और कुलसुम की आँखों
में नमनाक नीर बार-बार पहर पड़ हुए कुलसुम के सवाल उभर आयी । पलकों के
लिए लड़ाई गरम हुई । बाद में लिख रहा गया । पहले में यह बात निकल
गया कि कोई लड़ाई भी हुई थी जिसमें इन्तिसार मारा गया था । दूसरे में
यह बात निकल गया कि कोई आन्दोलन हुआ था जिसमें मुसलाह ने गाना
गाया था । तीसरे में यह बात निकल रहा कि शाहिदाबाद की समाधि पर
मुसलाह का नाम नहीं है । चौथे में यह बात भी निकल गया कि कोई
तारीखी बात गया है जिसमें स्वयं फुन्नन मियाँ, शम्भु और शम्भु का उल्लेख
किया है ।

अब मसला फिर गाँव सवाल का आ खड़ा हुआ ! फुन्नन मियाँ ने कहा
"आप ही हमारे साथ !

कहाँ से चलिए ! कुलसुम की नज़र में प्यार हो गया ।

बगल में ! फुन्नन मियाँ ने कहा । उनकी आँखों में नाम टाग और
उभर आए । उनके होंठों में हाथ चलने लगी । मारे आज़न लगा । शाहिदा
की मस्जिद के अलावा किसी शहर का नाम हो गया तो आता था । जिस
तरह कलकत्ता आज एक शहर याद करता है ।

'वह घर बड़ा है । अब गाँव गुलशन दिखाइयेगा ।

गुलशन का होता है जी '

फुन्नन मियाँ बोले कि हम लोग—हाँ यह बताओ गुलशन क्या होता है ?

हम अपनी लड़िया हैं न !" उन्होंने कहा । वह न समझा कि इस
बात का मतलब यहाँ क्या हो गया था कि गुलशन बना जाता है । आप ने इसका
का यह मतलब बना है !

गोरख की डर तो बड़ा तारिपन में ?

यह की कौन बात है ।

'मोरता वो कहती रही कि अब्बू भाई अब्बास और मिक़दाद की ख़ातिर कुबरा और सईदा का पयाम ले गये रहे।' कुलसुम अपनी रोज़मर्रा की दुनिया में लौट आयी।

मोरना की सठिया गया है।' फुन्नन मियाँ ने कहा। 'हम्माद जीता मक्खी हैं इन्हें कोई कैसे निगल लीहे?'

'इ सब हम ना जनते।' कुलसुम ने कहा। 'बाकी ओ कहती रही कि ओ बगनवाला कमरवा साफ़ करती रही जब ई ज्ञान भयी। वह खुद अपने कानों से सुनले है। और हम तो इ हो सुनले रहे कि कम्मो सईदा से बियाह करे के अरमान में है।'

तब त इश्तियाक़ और मुश्ताक़ नाहक़ ने मर गये!' फुन्नन मियाँ उठकर बैठ गये। 'हम्मू दो चार ठो सैदानियन का बियाह ले जाय! तब ई अब्द सब ज़मादारी का रही। उनका हक बनती है आ की गरारब है! अब हम तीन सिपाह पढ़वाकर दो चार ठो हलाली औलाद पैदा कर लें त गदरन के घरवा उहन्नाम भी क़बरस्तान लगता है।'

'ए मियाँ आप कमरवा में हो हैं?' छिगुनिया की आवाज़ आयी।

'काहे रे!' आवाज़ आया। फुन्नन मियाँ ने कहा। फिर वह कुलसुम से मुख़ातिब हो गये, 'हम जाने हैं तेरा बाशिन्दा!'

जवाद मियाँ की नन्दिया के सामने धूप में दुनियाँ भरी हाती थी। मासूम मियाँ भी वहीं बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे और जवाद मियाँ हाथ हाज़रा पर इज़हार-ख़याल कर रहे थे। मदन भी बैठा हुआ सिगरेट पी रहा था और उनकी तकरार पर मुसकरा रहा था।

'आदाब दा!' यह फुन्नन मियाँ का इस्तक़बाल करना हो गया।

'जीते रहो!' फुन्नन मियाँ ने कहा, 'कब आये?'

'आज आये हैं!'

'हाफ़िज़ कमालुद्दीन से मुलाक़ात नहीं किये का?'

[illegible]

प जवाब न वा आजकल दिन रात ग हा दुआ मांगत रहते हैं कि नाम खूब ामार पड़ें। नाम पाकिस्तान का का नाम है ? तन्नू वी मिलने हैं कभी भी ?'

'जा हाँ मिलते क्यूँ नहीं। ईद पर हुई थी मुलाकात।

ऐ यार! पुत्तन मियाँ चहक गये 'नों किराचीया म हा ना ?'

'जी हाँ।

और तब या करन गलियां कि ना पर मुलाकात हुई थी ?

कराचा मलीरा न है न साहब।

अच्छा मलीरा न हूँ ना नजरता हूँ है। राकी '

अब दा आप कहाँ रहते हैं ? मगर आठ वज पर म निकलता ना गा ता आठ वज आता नमाज हाता ह। अब कार किसी स कैसे मिल '

ठीक है, बेटा। पुत्तन मियाँ न कहा, दाना न गलोली म ह। वाजा ह ना करावा चला जमुरदार साहब मालूम होता है।

जवाब म सहन चैन चला। अब वह न्त पुत्तन मियाँ का क्या बताय।

किराया कमा लिया

यहा हजार चार भी।

ए वाह! हमरा अन्दाज यह था कि नाद हूवी म आप और ह घ कि भी पीछे भी कमा रहा। न्यारहीं म पहले ना कोई रखता ही नहीं। हूवी पग का नमी हाथी रही बना ? अब त गलियां न कुछ लिए ?

कहीं साहब। तकदीर म न्याम लिखा कि मतागिरी पाकिस्तान आओ। ठाना हा गया। यहा मुँ हन म लगा। जाहिर मिली कि जमीन पर मकर पड़े और दो चार रात क लिए अपन घर ना आउ। परसा चला जाऊँगा।

'भाई अब ना नार ऊपर गिरगिरा नगा क ताज जानर क लिए दिया जाय का लाइन कि ताता सरकार तार पर आय क इजाजत न द और या! मा का कीना हं क है। दुनिया का न जा गलियां।

दस बार ना नहा म का सकता लेकिन यामा वनवार का मन लिया है। म आऊँगा आकर।

और औन ताला सरकार ताज न आप लेने।

लाइ कह और सरकार कहेंगे।

तोरी दूसरी बीवी कहाँ है ?

कराची ही में है।

ओहू के बच्चे अच्छे हैं माशाअल्लाह से कि ना ?"

तीन बच्चे हैं।

"तो, अबहू हिसाब बुरा न है। तीन हियाँ और तीन हुवाँ। अच्छा हुवा। लोग नमाज रोज़ा में वक्त गुज़ारत हुइहैं।"

क्या ?'

अरे भाई इस्लामी हुकूमत है। क्या का का समझत ?"

तो इस्लामी हुकूमत का मतलब आपने यह समझा कि नमाज रोज़ा होता होगा!

का इस्लामी का मतलब बदल दिया गया!

इस्लाम का मतलब है दादा कि मुसलमानों को नौकरी मिले।'

अच्छा इ हम्मे ना मालूम रहा कि रसूलअल्लाह मारे गए हीं पर ऊ भी सोचत रहे कि मुसलमानों को नौकरी मिले। आज तू हमरी बड़ी परेशानी दूर कर दिया। मौलवी बेदार बहुत दिन से दम किये रहा है। हकीम साहब को इ बात समझाओ बेटा।

मौलवी बेदार तो जा रहे हैं पाकिस्तान। मजूर मियाँ ने टुकड़ा लिया।

आपको दद्दा बुला रहे हैं। काला कुर्ता पहने रखाब आयी। मजूर मियाँ का सलाम दरवाज़े पर कुब्बन मियाँ की कमर में झूल गया। कुब्बन मियाँ ने परा... बजाज की तरह उस कपड़े का थान बनाकर अपने कंधे पर डाल लिया।

चलो बेटा। मजूर मियाँ ने सद्दन से कहा 'अम्मा चाय पर इंतज़ार कर रही हैं।

सद्दन मस्त हो गया। सकीना ने बड़ा एहतमाम किया था। रुख़सार ... ने सिवइयों का ज़िक्र ऐसा छेड़ लिया कि सद्दन तो घर को बिलकुल ही भूल गया। सद्दन के ज़ेहन में एक पल को भी यह ख़याल नहीं आया कि यह किसी गैर मुल्क में है। गंगौली वाई और मुल्क कैसे हो सकती थी! ये तमाम चेहरे पहचाने से ... और ये नीम का ... ये इमामबाड़े और ... और ये दरवाज़े ये ... पर ... में ... मरसिये ...

ये तमाम चीज़ें तो सिर्फ़ अपने ही गाँव में हो सकती थीं। वह पाकिस्तान का शहरी हो गया था, लेकिन था वह सैयद अब्दुलरहमान ज़ैदी सगीरवी ही। इसीलिए वह अपने मुल्क पाकिस्तान में पनाह गुज़ीन कहा जाता था। इतने दिनों में उसने कभी यह नहीं सोचा कि वह किससे भागकर वहाँ पनाह लेने पहुँचा है। साल तो गुज़र जाता लेकिन जब मोहर्रम आता तो वह उदास हो जाता। मौलाना सैयद मुहम्मद रिज़वी और रशीद तुराबी की मजलिसों में उसे अक्सर मियाँ और मौलवी कमाल की मजलिसें याद आतीं। हुसैन हैदर मियाँ का मातमख़ाना और सग्गू भाई की नौहाख़्वानी याद आती। पाँचवीं की मजलिस में मुहम्मद हुसैन का और शाम-ग़रीबाँ की मजलिस में सग्गू भाई का बयान हो जाता याद आता। चुनांचे जब कराची की एक मजलिस में इत्तफ़ाक़ से मुहम्मद हुसैन का सामना हो गया, तो उसने छूटते ही पूछा, 'आप तो हियाँ आ गए अब गाँव की मजलिस में [illegible] कौन हुए!'" इस सवाल की सूरत कोई अहमियत नहीं था, शिकायत ही फ़िज़ूल किस्म की बातें थीं ये, फिर भी सग्गू हर याद को इसे लगा दबाकर रखा करता था। वह सगीरवी के लिए तरसता था और अब जब वह सगीरवी ही में उठा हुआ था, उसे यक़ीन नहीं आ रहा था कि वह सगीरवी ही में है। सज्जन भी जाने क्या-क्या कह रही थी। उसकी आवाज़ बहुत दूर तक जा चुकी थी।

बहुत रह लिया हो अब लौट आओ।

तो! यह चोर पन।

आ का? सज्जन की आवाज़। लौट आओ अब!

कभी'

अपने घर और क़ज़ी!

यह हुसैनिया हमारा घर था अब आगे बन गया है। उसे महसूस होता हुआ कि वह अपनी ज़बान भूला है "हम ने घर बना लिया है, हमेशा।

हम भी घर का बात न कर रहे। सज्जन ने न कहा, हम भी घर की बात कर रहे वो सारे अपना दरवाज़ा और उन्हें के शाना-ब-शाना बनाई न रहा। बक़ा के मर यह का हुसैन दे घर का।

हाँ वार्ड अब्बा के मरने के बाद क्या होगा इस घर का ? उसने अपने आप से सवाल किया और उसे इस बात पर ताज्जुब हुआ कि उसने अब तक इस सवाल पर गौर क्यों नहीं किया था। क्या होगा इस घर का और इन नौहों का और नाना ताजिया का ! इन ताशों, घाँस और नक्कारों का ! क्या इस आगा ? इन पंजों और पटकों पर क्या गुजरेगी अब्बा के इन्तकाल के बाद !

मैं क्या कर सकता हूँ ? उसने सवालों की बाढ़ से घबराकर कह दिया।

कर काहे न सकत हो ! इन्हन की जगही लौट सकत है ! आप कह दिया हियाँ की सरकार से कि साहब हुआँ हमरा जी नाहीं लग रहा।

इ इतना आसान ना है।

अच्छा हम इ पूछा रहे कि जब तो ही लोग आठ करोड़ बनाये हो पाकिस्तान को तो आह आख्वा न के बिगाड़ रहा मासूमिन का !

ए भाई आप त कुछ समझिए न करिये हैं गल्ला ने कहा।

मान रहे अब कितना मार्यें ! अब्बा से कुछ कहलवाओगे ? उसने शहदा से पूछा।

इ गमोरी का जाने अब्बा का ? सकीना ने एक उण्डी साँस भरकर कहा गुस्सा समझे उनके ज्या ओ हमरी तरफी का वरपादा है !

आप हमरे अब्बा को जानते हैं ?' शहदा ने पूछा।

हाँ ! सहन ने कहा।

मैं उनसे कहा कि जिगना आ कम अब्बा है और ई भी कहे कि जिगना कि हम उन्हें याद करते हैं और अम्मा पगार में रुप रूपकर उनकी तस्वीर देखता और रोती है।

चुप मिट्टीमिला ! गल्ला ने डाँटा।

'चुप काहे का रहें ! का हम झूठ कह रहन !

'जाओ मैं तुम्हारे अब्बा के पास ले चलूँ ! सहन ने कहा।

हम ना जायेंगे। शहदा ने साफ इनकार कर दिया।

क्या ?

हम नाना और नानी और अब्बा अम्मा को छोड़कर ना जायेंगे।

सहन को न सकीना को इशारा किया। सकीना बच्चों से हट गयी। फिर

रफ़्तार की किसी बहाने से बावर्चीख़ाने की तरफ चली गयी। मनूर मिर्ज़ा ने कहा कि यह कम्बख़्त [illegible] की दवा [illegible] अभी आता है। [illegible] हैरान कि यह [illegible] काम क्या पड़ गया। उसे यह नहीं मालूम था कि उस [illegible] ने [illegible] के बारे में [illegible] का सौदा किया है और अगर उसे यह मालूम भी होता तो वह क्या कर लेती? [illegible] के बारे में [illegible] तो वह हरगिज़ न [illegible]। बात यह याद नहीं थी कि वह [illegible] से [illegible] था। यही क्या कम है कि [illegible] मनहर की तरह दूसरी [illegible] नहीं था। मगर [illegible] की वजह से वह बात न कर पाता। [illegible] और गया [illegible] [illegible] का [illegible] बन आता है?

आ [illegible] जनक न [illegible]।

हाँ! मनहर [illegible] गया [illegible] तुमको भी उर्दू आती होगी

[illegible] हुई उर्दू आम थी [illegible] हुई उर्दू न आया।

[illegible] के नाम तो [illegible] होंगे यह [illegible]?

[illegible] न [illegible]। [illegible] ने ही जवाब दिया। [illegible] जवाब [illegible] सब गयी।

[illegible] उसकी बड़ी [illegible] है। मनहर ने कहा [illegible] हम आ गये [illegible] हम [illegible] बाल-बच्चों [illegible] दूर गए। आज [illegible] पर [illegible] नहीं है। [illegible] सिर में बौर [illegible] होता है। [illegible] होता तो मैं टाल [illegible]।

[illegible] है टाल [illegible]! [illegible] ने कहा [illegible] [illegible] गयी [illegible] [illegible]। [illegible] अच्छा [illegible]।

[illegible] ठीक है [illegible] मनहर ने अपनी बात [illegible] नहीं की।

लेकिन उसका [illegible] [illegible] के लिए सं[illegible] हो गया। यह [illegible] बड़ा [illegible] अच्छा [illegible] [illegible] [illegible] क्या [illegible] [illegible] [illegible] क्या [illegible]? [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] होगा? [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] हो [illegible]।

तब क्या होगा? कुबरा, सय्यदा और उम्मे हबीबा की शादी तो हो नहीं रही है। सईदा जैसी पढ़ी लिखी और खूबसूरत लड़की तो कुँवारी बैठी है। फिर तुम्हारी शहला का क्या हश्र होगा? इस सवाल के बीच में ये तमाम बातें पतंगे की तरह हवा के रुख पर तड़प रही थीं।

शहला रो पड़ी।

सद्दन घबराकर बाहर निकल गया।

उसने सारे गाँव का एक चक्कर लगाया। गाँव काफी बदल चुका था। गलियाँ पुख्ता हो गयी थीं। जगह जगह पंचायत की तरफ से लालटेनें लटका दी गयी थीं जिनमें रात को मिट्टी के तेल के चिराग जलते थे। बहुत से पुख्ता मकान भी बन गये थे। उत्तर-पट्टी और दक्खिन पट्टी के बाहर गाँव बिलकुल बदल गया था। उत्तर पट्टी और दक्खिन पट्टी के अन्दर भी गाँव बिलकुल बदल गया था। एक तरफ अपनी दौलत और एक किस्म की घमण्ड पसन्दी की वजह से और एक तरफ अपनी नादारी की वजह से। एक तरफ नये मकान बन रहे थे और एक तरफ पुराने मकान गिर रहे थे। सैयदवाड़े में कोई मकान सालिम नहीं था। उनके कपड़ों ही की तरह दीवारों के पलस्तर भी मसके हुए थे। जहाँ-तहाँ पैबन्द भी लगाये गये थे। मगर ऐसा मालूम होता था कि इन दीवारों में अब इन का बोझ उठाने की सकत नहीं रही। ये मकान अब बरसातों का सामना नहीं कर सकते थे। ये ढह जायेंगे और गालिबन बूढ़ों और बच्चों के साथ ये जवान कुँवारी लड़कियाँ भी उनके मलबों में गुम हो जायेंगी।

यह बात सद्दन की समझ में न आ पायी कि वह गंगौली की आबादी पर खुश हो या गमगीन। वह पंचायत की लगायी लालटेनों से खुश हो या सैयदवाड़े के अँधेरे से गमगीन हो? उसे अपना गंगौली से मालूम बाज़ारों से ज्यादा प्यारा लगा। वह घर भाग आया। घर पर शाम की मजलिस की तैयारियाँ हो रही थीं। दिप्टी अम्मी हाल अन्दर ड्राइंगरूम में कुर्सी पर बैठीं चुपचाप मरसिया पढ़ रही थीं। हकीम साहब हौज के किनारे उकड़ूँ बैठे हौज के काई लगे पानी से वजू कर रहे थे। हौज का पानी उन्हीं की तरह बूढ़ा और पुराना मालूम हो रहा था।

"ए साहब, आप मियाँ काहे बने हैं?" मदन ने पूछा।

"मियाँ हुए थे जब क्या फर्क है?" करीम साहब ने कहा, "हिन्दुस्तान है हमारा हिन्दुस्तान है।"

"आप कुछ परेशान लग रहे हैं?"

"नाहीं बेटा, हम बहुत खुश हैं। एक ठो बेटा रहा, ऊ पाकिस्तान चला गया। एक ठो अम्मी रहीं, ऊ हू का समझा कि पाकिस्तान चला गयी। अरे, कौन चीज हमरे पास ना है जो पाकिस्तान ले गयी? हमरे पास रह का गया है? एक ठो बेटा रहा, तीन ठो मशीन नवाब-नवाबी, एक ठो बड़ और ओहू घबरा रहा है! तीन ठो पान-खोवा, आज ऊ मशीन समझा। बाद एक ठो खजाना और मिल गया! गुलसमबा नातिन बड़ हिन्न है। अब हम ओ का बड़ा करी ... ना चार ठो मरीज आते रहे ना अम्मा डाक्टरी शुरू कर दीन्ह। हमरा मदन भी ना साड़ पुर आता ना। तो पराणी का पर कम बनायें?"

"फिर साहब अब मैं कुछ अच्छा करूँगा।"

"दूसरा तू आप पास भी कर रहा।" करीम साहब ने कहा, "तैं अपने मान बबवा को ले आओ।"

"आओ फिर मिल लिए।"

"हम तो आवेंगे।"

"आखिर यहाँ रहकर का करिहो?"

दूर पार का मकान नहीं बना बड़ा आदा! बड़ साहब हाल ... पूछ रहा ना कि हम दिन रहकर का करेंगे! ना सुना हम साल-साली रहकर रहकर ना आवेंगे। हम सब कुछ कर रहे हैं यहीं।

गर्दिशों पाया न रास्ता को जो रंज में रंग दुमाम आए।
हम जो दुश्मनी ने मुसाफिर के दामनगा में तमाम आए॥
गर्दिशों थोड़ा कि आखों पायी रमाम आशानुगाम आए।
रह न गया फिर कि जिसे ख्याल यहीं में जो जिसका काम आए॥
घर में, न राह ... रुखाने बच्चा को द गया था।
दुर जो ... का सर न सुना बना सगरा था न रही था॥
रवीशा बीरा का दामन का

इमामबाड़े से हुसैन हैदर मियाँ की सोज़ख्वानी की आवाज आने लगी थी।

"हे सद्दो ! का ताहिरवा लड़की का नाम सकीना है ?" हकीम साहब ने कहा चलो मजलिस शुरू हो गयी। वापस-घट दोनों फ़र्श पर अपनी अपनी जगह पर आ बैठे। सद्दन ने एक-एक पेज और एक एक पटक की गौर से देखना शुरू कर दिया था। उन पर एक अजीब सी गुस्सी छायी हुई थी। मिम्बर का गिलाफ़ भी जगह-जगह से फटा हुआ था।

सोज़ख्वानी के बाद छिप्पी अली हाशी मियाँ मिम्बर पर गये। बस्ता उठाकर उन्होंने मरसिये को दुरुस्त करने में तीन चार मिनट लगाये। फिर उन्होंने चश्मे के ऊपर से मजमे को घूरा। दो रुबाइयाँ और सलाम के चार पढ़ने के बाद उन्होंने मरसिया शुरू किया

दौलत कोई दुनिया में पिसर से नहीं बेहतर

हकीम साहब ने मुड़कर सद्दन की तरफ़ देखा। सद्दन गर्दन झुकाये हुए बैठा था।

मीर अनीस हकीम साहब की नज़र से गिर गये होते आजकल, अगर उनका बेटा पाकिस्तान चला गया होता और तब आ के मरसिया लिखा तो हम जानते कि हमरे पास है शौकत जो हमरे काम आ रहा ! ई दौलत अब हमा जाय का फ़कीर। दरअसल हकीमजी के पास आ से कहा हुई है कि अपने आप से टकराकर मुस्कुराना उठता है। नाहीं तो ई घर मिनवा मा वाही मुस्लिम से हम का ही मन खुला हकीम साहब ने कहा।

यह है वह अमा पाक जबान रहता है इगम

अली हाशी मियाँ ने मिसरा पढ़ा।

ठीक होता है यार उसमें ! हकीम साहब ने सोचा। मामा हो गा मौजूद है अमा

सद्दन का बेटा सकीना मरकत गरका उसकी गोद में आ गयी। होता अपना यार उसका गर्दन में हाथ डाले। यह गुनगुना का पजल में दिमाग गयी। फिर वह उसकी गोद में सो गयी और सिपाह इमाम का गहरा बनाने लगी।

नयी-पुरानी रेखाएँ

“ना ! कुछ कम करें । [illegible] ।” [illegible] ने कहा ।

[illegible] !” कुमू मियाँ ने [illegible], [illegible] ! [illegible] ! [illegible] !

[illegible] ।

[illegible] तीन रुपये का जूता [illegible]

‘[illegible] !

[illegible] !

[illegible] । [illegible], उन्नीस [illegible] । [illegible] । [illegible] ।”

[illegible] । [illegible] पुराने जूते [illegible] नये जूते [illegible] । तीन रुपये का जूता [illegible] गया । [illegible] ।

[illegible] जूता [illegible] । कुमू मियाँ ने [illegible] । [illegible] । कुमू मियाँ ने जूते [illegible] । [illegible] जूता [illegible] । [illegible] । [illegible] ।

हुआ यह कि शादी के बाद ही मिगदाद और हम्माद मियाँ में फिर झगड़ा हो गया। और इस बार मिगदाद अपनी बीवी समेत फुन्नू मियाँ के घर उठ आये। अब्बास और कुबरा ने बहुत मेल-मिलाप कराने की कोशिश की, लेकिन फुन्नू मियाँ ने मेल न होने दिया, क्योंकि मिगदाद के आ जाने से उनके घर के बहुत-से मसायल समाप्त हो गये थे। एक तो यह कि गल्ला बहुत आने लगा था। ऊपर से रोज जूते की इस दुकान से कुछ आता था जो उन्होंने दमामगाड़ वाले कमरे में चालू कर दी थी। बस मोहर्रम के दस दिन पहले दुकान बन्द कर दी जाती। सारा सामान एक कोठरी में भर दिया जाता। कमरे में सफेदी कर दी जाती। चाँदनी लग जाती। छतगीरी बाँध दी जाती और झाड़ कँवल और कुमकुमे अपनी अपनी जगह सँभाल लेते।

तीन-चार बरस पहले जब उन्होंने बशीर मियाँ के मशवरे से यह दुकान खोलने का इरादा किया था तो मियाँ लोगों ने बहुत मजाक उड़ाया था कि एक तो पर्वदिया में बड़ा होकर जाती मसखरी निकला और अब जूते की दुकान खोलने का इरादा है। फुन्नू ने फौरन तारीख का हवाला दिया कि खुद हजरत अली ने भी जूते टाँके थे।

धीरे-धीरे दुकान चल निकली। पहले तो इन ग्राहकों से जान बचते नाम आती थी। ग्राहक भी ऐसे जिनकी पुश्तें उन्हीं और उनके बुजुर्गों का सलाम करने में गुज़री थीं। कभी गाँव के जुलाहे और राकी यही चमार और अहीर। यह दाम बताते और जब ग्राहक मोल-भाव शुरू करता तो चला जाता लेकिन फिर रोता-रोता खरीद के नाम पर उसमें मोल-भाव आते बना का फन आ गया और दुकान चल निकली।

अब उन जवाद मियाँ की मुखालिफत रही कच्ची पक्की थी और न उन्होंने इस डर से अपने दरवाज़े पर बैठना बन्द कर दिया था कि कोई आ गया तो उसको बिठाना पड़ेगा, पान खिलाना पड़ेगा और लाभ में कोई चीज़ मुफ्त नहीं मिलता। सब तरह से दिन अब पर घर तरह-तरह का समान किया जाता था और निमाज़ के नमूने होते थे।

हम्माद मियाँ और जवाद मियाँ के अलावा किसी में अपने दरवाज़े पर बैठने का हौसला नहीं था। पर इस दुकान से फुन्नू मियाँ का एक मायका बना

दिया था कि वह शाम को दूकान बढ़ाने के बाद अपने दरवाज़े पर बैठ सकें। उनके दरवाज़े पर एक छोटा मोटा-सा दरबार लगने लगा था। वे लोग जो जब्बार मियाँ और हम्माद मियाँ के दरवाज़े पर नहीं बैठ सकते थे फुम्मू मियाँ के दरबार में दिखायी देने लगे—जैसे हकीम अली कबीर और अब्बू मियाँ न हम्माद मियाँ की मुख़ालिफ़त कर सकते थे और न डाक्टर कमालुद्दीन के बाप की। हमीदिया के जाने का मतलब यह तो नहीं है कि पर्दा उठा और हम्माद मियाँ की मुख़ालिफ़त की जाय। इसलिए इन लोगों ने अपने मरदाने मकान में बैठना छोड़ दिया था। अब्बू मियाँ ने तो अपना मरदाना मकान कम्मो को किराये पर दे दिया था। उन्हें इसकी ज़रूरत नहीं थी। कम्मो को दो बड़े कमरों की ज़रूरत थी। एक में वह खुद बैठता था और एक में उसका दवाख़ाना था, जिसमें दो नौकर थे जो दिन भर दवाओं की पुड़ियाँ बाँधते बाँधते थक जाते। वे दोनों मददगार थे। कम्मो उन्हें बात बे बात डाँटता रहता था और वे चुपचाप उसकी बातें सुन लिया करते थे। एक रोज़ उसने ज़रग़ाम को ख़ास दवाख़ाने में दिलवरी भगिन के साथ चूमा चाटी करते पकड़ लिया। उसके लिए यह बात असह्य थी। इसलिए उसने कहा: सर-सड़े ज़रग़ाम हुसैन ज़ैदी उर्फ़ कल्लन इसी वक़्त हुसैन अली ज़ैदी का निकाला बाहर किया। कल्लन ने बड़ी ख़ुशामद की पर वह नहीं माना। लाचार होकर कल्लन चला गया। थोड़ी देर बाद हुसैन अली मियाँ आ गये, उन्होंने भी ख़ुशामद की। उन्हीं के सामने कल्लन को बड़ा बुरा भला कहा और कल्लन से माफ़ी मँगवायी। कम्मो का दिल पसीज गया और हुसैन अली मियाँ की जान में जान आयी कि तीस रुपये माहवार का सहारा बच गया। पर अब्बू मियाँ हुसैन अली मियाँ नहीं थे। उन्होंने पन्द्रह रुपये पर मरदाना मकान किराये पर उठाया तो मरदाने की तरफ़ झाँकना छोड़ दिया। वह किरायेदार के यहाँ जाने से रहे। इसीलिए जब फुम्मू मियाँ ने एक दिन सामनेवाले चबूतरे पर कुर्सियाँ लगवायीं तो वह उनके दरवाज़े पर आ गये और फिर वह रोज़ शाम को आने लगे। लालटेन की रोशनी में फुम्मू मियाँ दिनभर का अख़बार पढ़कर सुनाते और उनके दरवाज़े पर जमा होनेवाले लोग बहुत मज़े ले-लेकर दुनिया के मुस्तक़बिल पर विचार करना शुरू कर देते। गयी रात को बहस ख़त्म होती तो अब्बू मियाँ घर जाकर सद्दो की माँ के बुग्ज़ुदान

की परवाह न करते हुए 'शमा मुअम्मा' हल करने लगते और दुआ माँगने लगते कि बस एक बार मुअम्मे का इनाम मिल जाय पर हर बार होता यह कि जब इनाम चार गलतियों तक बाँटा जाता तो उनके हल में पाँच गलतियाँ निकल आतीं। हालाँकि होना यह था कि उनके हल में बेशुमार गलतियाँ हुआ करती थीं। मुअम्मे का हल भेजने के बाद वह ज़्यादा जी लगाकर नमाज़ पढ़ने लगते थे। सद्दन की माँ जो मुअम्मे को अपनी सौतन कहा करती थी, हर नमाज़ में दुआ माँगती थी कि पाक परवरदिगार अबकी मुअम्मे का इनाम दिलवा दे ताकि कर्बला का वास्ता तो को हज़रत बीबी की कसम और ज्यों-ज्यों नतीजे की तारीख़ करीब आती जाती मियाँ बीवी की बेचैनी बढ़ती जाती। सद्दन की माँ अपनी बेचैनी को छुपाये रहती और सद्दन के अब्बा इसे ज़ाहिर करने में लगे रहते।

"अबकी इनाम मिल जाय तो कर्बला मुअल्ला चला जाय!" वह कहते।

"बड़े आये जाने वाले।" बीवी चमकतीं।

"तोरा मगरमच वाली दुआरियाँ बनाय का है।"

"मस्जिद के वास्ते एक ठो लम्बी दूर का नाम कर लिया करो कभी।"

बस यहीं से बात बिगड़ जाती। तू-तू मैं-मैं होने लगती। नतीजा यह निकलता कि अब्बू मियाँ ने उनकी ज़िन्दगी तबाह कर दी और यही एक थी कि उन्हें झेल गया। जवाब में अब्बू मियाँ भी इन्हीं खयालात का इज़हार करते। और बातों में बात बात बढ़ जाती। यहाँ तक कि ताज़ा शमा आ जाता। अब्बू मियाँ उसे बड़े इत्मीनान से खोलते। सद्दन की माँ भी पास सरक आतीं। अब्बू मियाँ सही हल से अपने हल का मुकाबला करते। गलतियाँ गिनते-गिनाते... फिर वह फिर से गिनना शुरू करते और ताज़ा दर्द यह होता कि बस एक गलती ज़्यादा हो गयी वरना इनाम हज़ार सौ मिल गया होता। खैर अगली बार देख लिया जायेगा। फिर अगले मुअम्मे की तैयारी शुरू हो जाती और फिर वही तमाम चीज़ें दोहरायी जातीं। पर मुअम्मे के इन्तज़ार में ज़िन्दगी की रफ़्तार तो रुक नहीं जाती। ज़रूरतें महँगी होती जा रही थीं। आमदनी घट रही थी। घर की इज़्ज़त बचाना सबसे बड़ी दुश्वारी थी। इनाम में तो हर सप्ताह मुअम्मे पर खर्च हो जाता। पर गाँव

तो यानी नसीम रजा साहबजादा और फरहत रजा विलायत से आते थे। कुल मिलाकर नसीम रजा साहब की आमदनी इज्जत-नाम की हिफाजत के लिए नाकाफी थी और वह [illegible] पर तैयार नहीं थे। वह सब खालिस हिन्दुस्तानी बाप थे। बच्चों की नौकरी ही को सब [illegible] उनका कमाल था। उनकी कमाई पर गुजारा करने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता था। धीरे धीरे बीबी के सब जेवर बिक गये। जो भूमिधरी उन्होंने बड़ी मुश्किल से हासिल की थी वह [illegible] से निकल गयी। जमीन निकल गयी पर कुछ का गुरूर खतम नहीं हुआ। इस हालात में नमाज और मुहर्रम के सिवाय सहारा ही क्या हो सकता था।

अजीज फातमा के विवाह का कोई [illegible] कि नानी [illegible] एक रात नसीम [illegible] हम लोग अगर [illegible] बाबूजी का [illegible] हो जाय। उनकी आखिरी इच्छा का विवाह है।

आयेंगे क्यों नहीं, जरूर आयेंगे। अब्बू मियां ने कहा [illegible] कि नसीम के विवाह के लिए [illegible] [illegible] अजीज फातमा का [illegible]।

भाभी [illegible] जोड़ा?

[illegible]।

[illegible]।

[illegible]? अब्बू मियां ने कहा [illegible] की बात है।

और हम का [illegible] के साथ

[illegible] दूसरे दिन [illegible] वह [illegible] बहुत [illegible] थी। वह [illegible] मियां के [illegible] के अफाक में [illegible] [illegible] [illegible]।

[illegible] है। [illegible] के [illegible] [illegible] भारी हुई के [illegible] [illegible]।

"ई जूता त मर्दाना जनाने वाला है!" अब्बू मियाँ ने उसी जूते के गुलाबी चमड़े पर हाथ फेरकर कहा।

"ई समझन का तो मूरख चाहिए, मामू!" फुन्नू मियाँ ने कहा।

मन्जवीन मिगदाद के लड़के दिलावर हुसैन को गोद में लिये हुए आयी। दिलावर हुसैन की दोनों मुट्ठियों में पान था और वह सारी वारी उन सोना का पान का कोशिश कर रहा था। मन्जवीन ने उसके दोनों हाथ पकड़ रखे थे और हँसी में लोटती हुई जा रही थी।

"ले त बना तमाशा है भई।" फुन्नू मियाँ ने उसके हाथ से पान छीन लिया। दिलावर को गुस्सा आ गया। उसने पेशाब करना शुरू किया। पेशाब की धार फुन्नू मियाँ की नाक में टकराया। सारी दुकान हँसने लगी।

दामन में मुँह साफ करके उन्होंने वह पान अब्बू मियाँ को दिया और उसने खा लिया।

अम्मा के मरने में पान का मजा जाता रहा। उन्होंने पान पर लानत भेजकर थूक दिया।

"गाँव-भर में सब लोग जान जा रहे। अब तो हमसे कहा रहे गये हैं।" अब्बू मियाँ ने कहा।

"ई दुनिया कौन रंग में बदल रहा है? हम न कहत रहे हैं कि मुसलमान वह फकीरी वाली दिन चली गया — जनिया में। अभी हमसे जाकर कह आता है।"

"नई भी आवे जूता चाहिए।" उन्होंने सोचा कि दुकान में कोई बाहर का है इसलिए सब में काम की बात नहीं कर रहे। तब तो हमने बाहर और सब सारी सुपारी में बाँट।

फुन्नू ने जूते के दाम बिना बताये उनके सामने पैसा किये। उन्होंने भी आड़ पसन्द कर लिये।

"कितने का भया?"

"अब भी पता कोई नहीं जो जाता ना है।" फुन्नू ने कहा, "आप वाला बाजार भाव का है और सुनारी वाला नहीं है बस का।" मिनाकर अन्दाज लगा सका।

'ठीक है। वह साला डिप्टी कलक्टर [illegible] हो गया [illegible] हम पर रहे [illegible] हम [illegible] के ज़माने में रहे। अभी हमारे पास रुपया ना है।

वह सब यार और भाई-बन्द [illegible] जम के आ चुके थे। एक मस्जिद के लिए और एक मन्दिर की मूर्ति के लिए। पुत्तू ने रुपयों का तकाज़ा नहीं किया था, पर वह रकम [illegible] गया ना? बड़ा मुश्किल पड़ेगा। पर यह भी मालूम था कि [illegible] साबू के हाथ से जुआ खेल नहीं सकते थे। अल्लू मियाँ डिप्टी कलक्टर बन गये। पुत्तू मियाँ ने सब बातों से उधार टाल दिया। हम्माद मियाँ और अज़ान मियाँ के अलावा [illegible] तमाम मियाँ लोग उनके मातहत थे और वह किसी से तकाज़ा नहीं कर सकते थे। अब [illegible] हमने अपना मियाँ से तकाज़ा क्या करना [illegible] अपने मकान की पर्दे की आवाज़ की [illegible] ने करा सकता हो? सबका यही हाल था। हर घर में आवारा बैठे थे। हर ख़ानदान [illegible] में बुढ़िया [illegible] गुदड़ा था पर काम [illegible] थी। [illegible] कोई [illegible] न था पर औरतें बुढ़िया के [illegible] से निकली हुई थीं। क्योंकि यहाँ उनकी [illegible] के ज़माने की एक [illegible] रह गया था। यह बूढ़ा [illegible] की है और यह बच्चा [illegible] का। यह बूढ़ा [illegible] का था और [illegible] है और [illegible] विलन प्रभाव है। एक [illegible] है और दूसरा [illegible] है। [illegible] बूढ़ा [illegible] था और [illegible] और [illegible] की [illegible] से [illegible] था। [illegible] बुढ़िया का [illegible] विवाह हुआ था [illegible] उनकी आँखें [illegible] था और [illegible] बच्चियाँ [illegible] के [illegible] में [illegible] थीं। [illegible] बच्चियाँ [illegible] के [illegible] में [illegible] था और [illegible] [illegible] से [illegible] से [illegible] थीं। [illegible] कि यह अब आ [illegible] और [illegible] की [illegible] [illegible] दी।

[illegible] का [illegible] के [illegible] है। [illegible] मियाँ [illegible] अपना [illegible]।

[illegible] साहब [illegible] है [illegible] [illegible] है कि [illegible] के [illegible] का [illegible] [illegible]।

हाँ ! हुसन अली मियाँ ने उत्तर दिया, "और हम मानो लिया सबका। अल्लाह पैदा किये हैं आ हरामी है ता ए म आ का कौन कुसूर है ?'

'जब कुबूले कर लिये हो ता पूछ का रहिया ?"

पूछ इ रह कि जवाद का जरगाम का रिश्ता भिजवाइन हैं।'

'जनकिया के वास्ते ?"

हाँ !

मजनूनी स पराः रहिया दाना रिश्तन का। वहा कोई सुग न स ! हाँ आ ! वह रिवला स हो गयी, 'ह पाक परवरदिगार ! उठा ले हम ! अब का निगायी का जीता रहे है। ता को मुहल्लाव कयना का वास्ता !"

हम ई कह रह हैं कि हम ईस गरज है कि लडकिया आराम स रहे की गाली ए स मतलब है कि कोई सुच्चे वाली गरी हड्डा वाल स आ का बियाह दें पाह ओ की जिन्दगी राउत-कलपत गुजरे ! आ जया शायद न कोई देरो ता हम सभ हरामी ह। तो स मौलवी साहब पूछ आय रह निवाह के वगत ता ता हाँ कह रहिया ?

हम न कहा रहा ताग रा का। बीबी न कहा, नाना त कह दीन रहा।

मौलवी साहब ता नें स पूछ गय रहा। हुसन अली मियाँ न कहा 'नाला का निकाह न हुए वाला रहा की ओ वाल दा टाय म। अपन निगाह म आल्हो न वागन हुइ हैं !'

"नें का कह रहिया ! बीबी का कलजा घर म हो गया। अम्मन और तरन्नुम की मागी दीवारें मीत आता हुई निगायी रा।

हम न राज रह हैं कि हरामी तो सभ आग है। यम पर इ है कि कोई का माँ मयनाता है और काई की रहमतुवा वा। लें नाना का रिश्मन म ता हरामी बच्चा पना करना लिगा गया है। आ हरामजादा जवाद का क ना रह सगी न रहमानु स हरामीव बच्चा पना करना।

ए भाई गमी यार मन करा।

इ गा हम ता। ना मार कहा रहें कि फिर और कालिमा का जाँ हा जाय ता कौना हरज की बात न है। ए ही मार हम गाप रा कि जरगाम और कमलिया का रिश्ता मान में !

बम्भू म बात न बरा हा '

आशा मा की नाट मालय है। हमन अली न कहा, आ गदा म बात्रि और गम्भ का जना का कौन नाम पर्ग है ? हम न गुन रहे कि आ दूसर नौगर मियाँ वम्स रहे हुवां अनागढ़ म। यह रहे गाढ़ीपुर वाल की हो त यान हानी रही कि आजकल आ काना मिय म पैर गयी है।

उनको कम मालूम हो गयी अलीगढ़ की बात '

मरा अलीगढ़ म न पढ़ गया है ! जा सम्भू यह रहे वह परेशान। उना महाना कर ही टाय। मद तमाम नमिन आगा और म। आ कारव जा रही था। अग्रेज़ी बानी अपनी गत मरना। यह बात तस्वर है जिसाद कर की ' मान मी ननरवाह है और जनाद उनग का आमदनी हो यह है। अगर मा कम हो गया चल है। पर हम उत्तर प्रदेश गया म जाना पड़ा एक टा जमाना मिता गया।

अर गाई का नफ्स की पा गर गर मरा। वानी न कहा — मा आदा मतरा जबान है।

के पास आता तो कुत्ते की बोली बोलता। न बरकतुवा ने कभी कोई बात की और न कामिला ने। बस दोनों एक-दूसरे के वजूद से बाखबर हो जाते। उनके लिए शायद यही बहुत कुछ था। फिर बरकतुवा चला गया और कामिला गर्मियों की छुट्टियों की राह देखने लगी।

बरकतुवा ने भी सालभर अलीगढ़ में कामिला को याद किया। जाहिर है कि खत लिखने का कोई सवाल पैदा नहीं होता था। पर उसने तय कर लिया था कि इस बार वह कामिला से बात जरूर करेगा। फिर खुदा का करना ऐसा हुआ कि उन्हीं दिनों जब जुलाई का दस बरस तेज था उसके दादा का इंतकाल हो गया। अपने दादा से उसे कोई खास मुहब्बत नहीं थी। बूढ़े को गालियाँ बकने, खाँसने, गाढ़ा गाढ़ा बलगम थूकने और नमाज पढ़ने के सिवाय कोई काम न था। फिर भी वह भागा भागा आया और पहली फुरसत में जगने के सामने जाकर उसने कुत्ते की आवाज निकाली। कामिला झट से आ गयी और फिर वही तमाशा शुरू हो गया। उसके सारे प्रोग्राम धरे रह गये। बस उसने अलीगढ़ में अपने दोस्तों को और कामिला के इश्क के बारे में बड़ी बड़ी बातें बनायी थीं। ज्यादा जोर इस पर था कि माशूका बड़ी बसन्ती है। पर अब उसकी जबान बन्द थी। हजारों रंगीन अरमान जुगनू उसके दिमाग में जुगनुओं की तरह कुलबुला रहे थे पर उन्हें निकलने का रास्ता नहीं मिल रहा था क्योंकि जबान के तो ताले की किल्ली भीतर गिर गया था। फुस्सन मियाँ को आता देख उसे हट जाना पड़ा।

'किसे को घूर रहे थे?' फुस्सन मियाँ ने पूछा।

'कुछ नहीं, साहब!'

अरे! बात ये कि गाँव में रहना हो तो जरा दिमाग ठीक करके रहो। अब उनका ऐसा दिन लग गया। कि अब तुम भाई पर पड़ गये हो। टँगियाँ धार के फेंक दो। यह लोग अपनी बदमाशी के अलावा जो कि जहूरी जमींदारी नहीं रही है उन्हीं का नहीं हुए है। फुस्सन मियाँ की जमींदारी न रही है।

सहाई ... अच्छा न तो आप हम को घर बैठे रहे हैं?

अच्छा कहे साहिब! फुस्सन मियाँ जिनसुन आते ही बाहर हो गये। गु

एक गुर्रे पलंग पर लेटे हुक्का पी रहे थे, फुन्नन मियाँ बगल वाले पलंग पर लेट गये। हुसन अली मियाँ ने हुक्के की नै उनकी तरफ मोड़ दी। उन्होंने दो तीन कश लेने के बाद हुक्का वापस कर दिया।

"का सोचिया?" फुन्नन मियाँ ने कहा।

"हम दागियन में रिश्तेदारी ना करेंगे।" हुसन अली मियाँ ने कहा।

"पगला गये हो का?" फुन्नन मियाँ ने कहा, "ई सैयदी बघारने का जमाना है? अरे मियाँ ई दिन इज्जत-आबरू से गुजर जायें तो गनीमत जानो।"

"काहे? वह त जानो मक्खी है का, गाय ही में वै हाग लगत है।"

"भाई कहोगे तो नाक बुरा लगीहै।" फुन्नन मियाँ ने कहा, "बाबा हम अवहीं कामिला को रहमनुवा के नइहर बरवतुना में ताके पाँव धरत देखा है गुड़ अपनी आँग में!" हुसैन अली मियाँ गोलियाकर बैठ गये।

"लेटे रहो, लेटे रहो! हमरे पर फातिहा के जाने की जरूरत नाहीं। ओ जग तोहरी बेटी है तो हमरी बेटी है! हम तो ई कह रहे कि जमाना नाजुक है। ना मालूम किस वखत का हो जाय। जो दंगा नाहीं कि तोहे लोग नई गाँव से लोग थे बाप दादा चावनपुर में आय रहे। और नावापुर के सय्यदन का कौनो ना जाना! ना कहियो तरफ हमसे डर गयल न हो!"

"गफ्फार के नाम तो गाम आसमान में टाँक रहे।" हुसन अली मियाँ ने कहा, "मैं कह रहा ज़ुबान मत खुलवाओ!"

"वाह! भया तू गाम हजरत अली के औलाद हो!" फुन्नन मियाँ ने कहा, "बिगड़ काहे रहयो? हिन्दू में कामिना का बाज़ार हरगिज मत करियो। काशी जब ओ बरतुवा के साथ गंगा नहाने गये। राम जाने तब बड़ शीआ गाँव भर में कि रहमनुवा ना लगा मैदान है।"

"अब तो इन लोग हमरी लड़की को बदनाम करिया।" हुसन अली मियाँ ने कहा, "ठीक है। अब हम का कर सकत हैं। और गूंगा पर आवारा रह गौर गया भट गया। आज जमींदारिया रहा होता तो मैं इन लोगन को करिया। सब जवानन को हिन्दू का हिरासत में भेजता। याद हम करते, है कि गूंगा हमरे सरकार में चला जा।"

मुखरमुवा चमार की खुशामद कर जायें। इन सबने टोकरीभर रुपया निकाल कर बशीर मियाँ का कर्ज अदा कर दिया। उनके लड़के बुद्दन टेंगा सिलना से पाकिस्तान चले गये। कहने को इ रकम तो बहुत ज्यादा न है! बाकी हियाँ हिन्दुस्तान में हम कुच्छ न कर सकत। हम कहा—ए भैया! दो चार नोट भेजे चाहो तो हम मँगवा दें। फिर बगैर झोंक? बाद कहता रहा कि तू हो मुखरमुवा के कर्जदार हो!' बस यह आखिरी तिनका था। हुसन अली मियाँ टूट गये। रिश्ता मंजूर हो गया।

यह खबर उत्तर और दक्खिन-पट्टी में आग की तरह फैल गयी कि फिद्दू और कामिला अब्बास और जनरिया की निस्बत तय हो गयी है। मीर साहिबान में चौंकने की ताकत भी नहीं रह गयी थी। अरे जब मौलवी बशीर पाकिस्तान चले गये तो कुछ भी हो सकता है। मीर साहिबान में से कोई अगर भूले भटके मौलवी बशीर के मकान की तरफ से गुजरता तो कोशिश करता कि उनके मकान की तरफ न देखे। इतना बड़ा मकान चुपचाप आस आसमान की तरफ देखा करता था। फिर उस्मान ने गुहार बाँधा। और बताओ उस बेचारे मकान को। लेकिन वह हवा और बारिश में घिरा हुआ खड़ा रहा क्योंकि वह मौलवी बशीर की तरह जा नहीं सकता था। उसकी बुनियादें जमीन में थीं। वह जख्मों से चूर होकर ढहने लगा और फिर एक बहादुर सिपाही की तरह ढेर हो गया।

इस खण्डहर को पचासों में परसराम ने खरीद लिया। देखते ही देखते वहाँ एक नया और पक्का मकान खड़ा हो गया। लेकिन इटा का यह मकान इस माहौल में बिलकुल अजनबी मालूम होता था। और है कि उसके गाँव में एक जीत रहा थी लेकिन उसके पास कोई तारीख नहीं थी। इसीलिए आस-पड़ोस के बासिन्दे और खास मकान उस घिरावट में ठगा करते थे।

जब परसराम आता तो शाम को उसका दरबार लगता। उसका दरबार गाँव का सबसे बड़ा दरबार होता। उसके दरबार में सलनति भी खास और पहलवान सब के साथ भी। ये लोग कुर्सियों पर बैठते और सिगरेट पीते और गप्पें मारते। लोग थोड़ी ही दूर पर गाँव के गुरबा हारे वाले ही बिगाड़ जमीन पर उकड़ूँ बैठते, बीड़ी पीते और बातें सुनते। उनकी

पड़ेगा। और कुबरा की जल्दी मरने वाली नहीं मालूम होती। और इलेक्शन सिर पर है। इसलिए उसने बात को टाल जाने की कोशिश की। बोली, "मैं नहीं लड़ूँगी। आप कहिए हे बड़लेही वाकी मैं न कोई ऐसी बात न कही कि आप

अच्छा, रह द दर मत टरटरा!

रमदइया जिल्लत का यह जहर पीकर चली तो गयी लेकिन परसराम के आते ही उसने सब कान भरे। परसराम ने उसी रात उसे खूब पीटा कि उसे क्या जरूरत थी जाने की। दूसरे दिन वह हम्माद मियाँ के घर भी गया। उसने हम्माद मियाँ से माफी भी माँगी। दरवाज़े पर खड़े होकर उसने कुबरा से भी माफी माँगी कि वह तो जाहिल औरत है। कुबरा ने माफ भी कर दिया, लेकिन परसराम के दिल में बाल पड़ गया। नतीजा यह निकला कि हम्माद मियाँ जिस काम में हाथ डालते वह बिगड़ जाता। कयामत तो तब आयी जब एक सौ नौ में गया अहीर का चालान हो गया। हम्माद मियाँ थाने पर चढ़ दौड़े लेकिन थानेदार ने टका-सा जवाब दे दिया। तब हम्माद मियाँ का माथा ठनका। घर आकर उन्होंने कुबरा बी को बहुत डाँटा अगर वह थाने पर बठ गयी थी तो सौ से साल तक हम भ तुम्हार नगर म!

'ई त का कह रन्दिया'

'गँवार! हम्माद मियाँ उखड़ पड़े परसराम से बिगाड़ करके एक दिन इस गाँव में रहना नामुमकिन है समझी!

बाबा आ तो उस दिन आकर माफी माँग गया रहा और हैं आ का माफ कर दिये रन्दिया।

यह सुनकर हम्माद मियाँ जल हो गये पर अब अपनी माफी की सुबह शाम पहर लगाकर कागज की टोपी में लिए जाना करी। वह निकल कर बाहर चले गये। वह इस तरह अपनी कमर में टाँगा। वह फिर उधर एक आदमी को भेजकर यह मालूम करवाया कि परसराम घर पर है या नहीं। मालूम हुआ कि वह घर पर मौजूद है। तब उन्होंने चलते चलते शेरवानी निकाली और पहनकर वह सीधे परसराम के घर चल पड़े।

उन्हें परसराम के घर जाना अजीब लग रहा था क्योंकि वह परसराम

न घर पत्नी उसे ले जा रहे थे। वह अपनी बाजी से अपने नागाज़ पर जिसका वज़न में उन्हें पराजय से घर जाना पड़ गया था। लेकिन जब वह उस रात शब्बाज़ में शामिल हुए तो वहाँ मौलवी बशीर भी था तो उस उनके दाँव में किसा न बाज़ू बाँध लिया। सायन ही दिलशाद बैठा हुआ था और वह कहा था हम न नाई निशान हैं। पहलुवे हम पाराव रहे अच्छी हम मना रहे।

मगर दिलशाद मियाँ! ... हमारा मिटी फिर आरह किया है।

बाजी आ गयी है और हम मदद नहीं। अब उसके बाद की हम चा रहे हैं जाव शीत्र उधार मत गुज़रवाएगा।

मियाँ लोग तुम्हारे खिलाफ थे तो मैंने तुम्हारा साथ दिया था और आज मेरा आदमी हवालात में है।

"यह कैसे हो सकता है मीर साहब!" परसुराम ने कहा, "मैं अभी उस कम्बख्त थानेदार को बुलवाता हूँ। सुन रहा हूँ कि मियाँ लोगों में पाकिस्तानियों का आना जाना बहुत हो रहा है आजकल। अब बताइए यह ज्यादती की बात है या नहीं? इतनी तकावी यहाँ बाँटी गयी है। दो तरफ से पुख्ता सड़कें बन गयी हैं कि अब आध घंटे में आप लोग शहर पहुँच जाते हैं। गाँव में हर गली पक्की हो गयी है। दो स्कूल बन रहे हैं और कोई सरकार इससे ज्यादा कर सकती है? और फिर आप लोग तो जानते हैं कि पाकिस्तान बन जाने से मुसलमानों की पोज़ीशन हिन्दुस्तान में कितनी नाजुक हो गयी है। इन्हीं बातों से जनसंघ और महासभा वालों को मौका मिलता है। मैं नहीं चाहता कि मेरे इलाके में हिन्दू मुसलमान का टण्टा खड़ा हो। और पांडेजी को तो आप जानते ही हैं। [illegible] हुए [illegible] भगत हैं। [illegible] के [illegible] हैं।"

"यह तुम कैसी बात कर रहे हो?" हम्माद मियाँ ने कहा, "यानी अगर हम लोगों के आदमी हवालात में जाने लगें तो हम लोग पांडेजी के [illegible] के खिलाफ कर ही क्या सकते हैं?"

"अरे साहब, क्या क्या कह रहे हैं आप?" परसुराम [illegible] "[illegible] हो है न आप और पांडेजी में [illegible] कि कुछ [illegible] गया था।"

"अब यह तो तुम्हारी ज्यादती है!" हम्माद मियाँ ने कहा, "तुमने [illegible] अपनी [illegible] की बात करें तो तुम पांडेजी का नाता [illegible] लगा [illegible]।"

"क्या मैं आप लोगों का [illegible] रहा हूँ आपसे!"

हम्माद मियाँ [illegible]। परसुराम [illegible] कुर्सियों पर [illegible]। [illegible] हम्माद मियाँ [illegible]। [illegible] परसुराम [illegible]। [illegible] मियाँ [illegible] हम्माद मियाँ [illegible] हो गया।

"फिर कभी आइए।" हम्माद मियाँ ने कहा [illegible] काम में [illegible] था।

इम्माद मियाँ वहाँ से बहुत परेशान लौटे। दरियाम-मंजर का मतलब उ न वर्ग का मुहावरा पूरी तरह उनकी समझ में आ गया। अब यह सवाल था कि वह धुन्न टेक दें या साहस लें। उन्होंने साहस लेना फैसला किया। वह उसी दिन गाजीपुर गये। बशीर मियाँ और बजार मियाँ के सामने यह मसला रखा गया। वे लोग भी सकते में आ गये। तय यह हुआ कि इम्माद मियाँ एक खत लेकर लखनऊ जायें और अली जहीर से मिलें। चुनांचे इम्माद मियाँ लखनऊ गये और अली जहीर साहब से मिले। अली जहीर ने बाकायदा किसकी

हम्माद मियाँ इस धमकी को हँसकर टाल गये। परेशान हो गया होगा एम० एल० ए० पर मुकद्दमे की पैरवी का फ़न तो हम्माद मियाँ ही को आता है। परसराम के वकील ने यह साबित कर दिया कि जिस औरत ने [illegible] किया है वह फ़ाहिशा है पर उसकी डाक्टरी करवायी जा चुकी है। हम्माद मियाँ ने मुकद्दमा पक्का तैयार करवाया था। डाक्टर को रिश्वत देने की जगह उन्होंने यह मुनासिब समझा कि बाक़ायदा ज़िना हो जाय। चुनांचे वकील सरकार को यह क़ानूनी नुक़्ता निकालना पड़ा कि यह किस क़ानून में लिखा है कि फ़ाहिशा औरत के साथ ज़िनाबिलजब्र किया जाय? इस सवाल का जवाब वकील [illegible] के पास नहीं था। सज़ा हो गया परसराम को।

उस रोज़ गाज़ीपुर में ठाकुरों के यहाँ ज़बरदस्त जश्न हुआ। शहर की रण्डियाँ आयीं। ठाकुर जयपालसिंह ने फ़ुन्नन मियाँ को भी दावत दी। फ़ुन्नन मियाँ ने उस वक़्त [illegible] लेकिन वह नहीं माने। [illegible] को साथ लेकर वह गाज़ीपुर पहुँच ही गये। जयपालसिंह ने उन्हें हाथों-हाथ लिया। [illegible] की बात निकली तो फ़ुन्नन मियाँ ने कहा, "अरे जयपाल, [illegible] रहा न मालूम कि ई न हुय जाव की बात है हय गयी हम्माद की। [illegible] ओ मसल सुन हो न कि सौ सुनार की और एक लोहार की। [illegible] आ गये [illegible] तीन हाथ की [illegible] हम [illegible] माफ़ न किया है। उनके पास हम अब [illegible] है। हम ई बात का भूल न सका। आप [illegible] [illegible] गुनगाव [illegible] चाही। आज जब ठाकुर कुँवरपालसिंह [illegible] बेटा ने कहल। इस ज़माने के लोग दूसरी मिट्टी के बने हैं। अब [illegible] बटी का है।" उन्होंने गाज़ीपुर न आवा नई [illegible] को होगा जो अपनी [illegible] में [illegible] थी। और [illegible] हम्माद [illegible] बुलाए हो का?"

[illegible] सुनने का [illegible] है [illegible]। जयपाल ने कहा [illegible] बटा है [illegible] भी [illegible] को होगा।

साजिन्दों ने साज मिलाया। हीराबाई ने गला साफ़ किया और ग़ालिब की ग़ज़ल शुरू की

'नुक्ता-चीं है ग़मे-दिल उसको सुनाये न बने'

फुन्नन मियाँ ने उसे आगे बढ़ने का मौक़ा न दिया। वह चीखने लगे, "अरे तू ग़ालिब की मिट्टी क्यों ख़राब कर रही है? मत गा! अरे पुरखो सुनो!"

जो लोग जमा थे उनमें से किसी की समझ में नहीं आया कि फुन्नन मियाँ किस बात पर ख़फ़ा हो रहे हैं। जयपाल का लड़का पृथ्वीपालसिंह भी मौजूद था जो हाल में अलीगढ़ पढ़ने गया था और इंजीनियरिंग के आख़िरी साल में था। लेकिन वह भी न समझ सका। हीराबाई तो एकदम हक्का-बक्का रह गयी। अभी चन्द दिन हुए उसने शहर में सेठ नत्थूलाल के दोस्तों को यह ग़ज़ल सुनायी थी तो वे लोग फड़क उठे थे। नत्थूलाल ने तो जोश में अपने लड़के को घुटनों पर चढ़ा लिया था और वह बड़ी-बड़ी आँखोंवाला साँवला-सलोना-सा लड़का शायद भी झूम उठा था। वह लड़का तो खुद भी बड़ा अच्छा शायर है तब आख़िर यह मुछिन्दरा बूढ़ा किस बात पर चिल्ला रहा है? भगवान इन महारथियों से बचाये!

"तू कुछ समझा क्या?" जयपालसिंह ने पृथ्वीपाल से कहा।

"हम का समझायीं?" पृथ्वीपाल ने कहा।

"अरे, तो तुम्हारा पढ़ना-लिखना कब काम आयी?"

"आप की कोई ग़ज़ल याद हो तो सुना!" पृथ्वीपाल ने हीराबाई से कहा, "और कोई ऐसी न याद हो तो फ़िल्म बरसात की रात की कव्वाली सुना।"

फुन्नन मियाँ ने और बोलने का इरादा मन्सूख़ कर लिया। ठाकुर कुँवरपालसिंह पढ़े-लिखे नहीं थे लेकिन वह शीन-क़ाफ़ की ग़लती नहीं करते थे और अब पृथ्वीपाल का कौन कहे इस नवाबज़ादे तक का शीन-क़ाफ़ नहीं ठीक था।

बाबा का हकीम अली कबीर ख़ाँ ने तुमसे में निस्न कहा कि तू सब रंग का राग सब्ज़ कर! फुन्नन मियाँ ने हीराबाई को घूरकर देखा।

"हम सिविल सर्जन से इलाज करवाते हैं!" हीरामनाद ने बुरा मान कर कहा।

"अच्छा तो अपना गमे दिल सुनाओ! सुनाओ के मरम कर जल्दी से!" फुन्नन मियाँ तकिये की टेक लेकर गाना सुनने के लिए तैयार हो गये।

गयी रात तक नाच गाना होता रहा। गयी रात तक फुन्नन मियाँ अपने आपको और जमाने को गालियाँ देते रहे। रात ढाई बजे उन्होंने इजाज़त माँगी। जयपालसिंह ने कहा भी कि रात बहुत हो गयी, जाने की क्या जरूरत है मगर वह नहीं माने।

तारी चर्चा परवान हुई।

वह छिकुरिया के साथ घर की तरफ चल पड़े। हर तरफ सन्नाटा था। तेज़ ठण्डी हवा चल रही थी। फुन्नन मियाँ ने पुराने सिपाहियों वाले साफे को अच्छी तरह लपेटकर मौसम को ऊँची आवाज़ में बुलन्द गालियाँ देना शुरू किया। हवा उनकी हड्डियों में घुसी जा रही थी। उन्हें अपने बूढ़े होने का शदीद अहसास हुआ। नतीजे के तौर पर उन्हें अपने दोनों लड़के शिद्दन भी याद आने लगे। उनकी आँखें नम हो गयीं। उन्होंने मौसम को गालियाँ देना बन्द कर दिया कि कहीं छिकुरिया यह भाँप न ले कि वह रो रहे हैं। वह चौंके उस वक्त जब उन पर लाठियों का मेंह बरसने लगा।

"यह तो बड़ी नामर्दी की बात है!" उन्होंने गिरते गिरते कहा। 'मार से भागे तो मरद जात!' ताना उनके कानों पर पड़ी 'हम जानते!'" उनकी बात हलक में रह गयी। फिर एक जगह उनकी आँतों में घुस गया और फिर एक उनके गले में छिप गया और फिर वह मुँह के बल गिर पड़े।

मर गये फुन्नन मियाँ!

छिकुरिया भी मर गया।

लाशें घर लायी गयीं मगर बात गाँव में फैल गयी। क्योंकि गाँव में सब को खबर हो गयी थी।

उस रात मलोयों में बड़ा शोर और हंगामा था। हकीम अली कबीर साहब का चौक पर रहे। गाँव फिर से टूट गया। सब ...

"नए लाह ! कम्मा देख लीह।" हकीम साहब की आँख खुली तो दर्द की एक लहर उनके बदन में दौड़ गयी। फिर उनकी आँखें कम्मा पर जम गयीं।

"या अल्लाह !" वह कराहे और रेज़ा रेज़ा हो गये।

"हिलिय डुलिय मत।" कम्मो ने कहा।

"तें हमरा इलाज करिहया ?" हकीम साहब ने बड़ी बेचारगी से कहा। "हम तोरा शक्कर की गाली आली न खायेंगे !" वह ज़िल्लत के इस समन्दर में डूब गये। "देख रहिया कम्मा, तैं हम कवन हालत पर पहुँचा दिहो ! सरकार हमरी ज़मींदारी ले लीह त हमरे मरीज़ो ले लिहा। त हम आखिर जा कहाँ का रहें ?"

"फुन्नन मियाँ की रात लोग कतल कर दिहिन !" कम्मा ने कहा।

"ऊ ही काबिल रहा, वह मरदूद !" हकीम साहब ने कहा, "बाकी ई हमारे का कम है !"

"ई दवा खा लीजिए !" कम्मा ने एक खुराक दवा बढ़ायी।

"हम कह दिया ना कि हम न खायेंगे।" हकीम साहब ने कहा, "पसली में बड़ी तकलीफ है।"

"ए सकिरिया !" कम्मा ने आवाज़ दी।

"जी !" सकरिया फ़ौरन बराबर वाली आ गयी।

"अरगाम कहाँ है ?"

"माँ के पास।"

"उन्हें बुला ला। अब हम चलें। औ ई दवा चार-चार घण्टा पर दिया जा रहे। आध आध घण्टे बाद [illegible]।"

कम्मा चला गया। अरगाम जब इस कमरे में आया तो हकीम साहब की आँखें नम थीं।

"का बहुत तकलीफ है ?" [illegible]

नहीं। बस हम ई सोच रहे कि इहाँ लिख दिया का रह गया रहा कि कम्मा हमरा इलाज करे ! [illegible] कि अल्लाह मियाँ कुल मुसीबत हमरी [illegible]।

"[illegible] अब [illegible] इनकी [illegible] है साहब।"

सब गलियन में सन्नाटा लग गया और गाज़ीपुर से यहाँ तक पक्की सड़क बन गयी है। अब क्या करना। मोहर्रम पड़ता कोई का आय में जुम्मत न हो सकता। सुन रहे कि अब की अशरे के दिन इमाम हज़रत मौलवी बकार के इमामबाड़े में बैठकर बहुत रोये। जो बहुत सफ़ा-सफ़ा दिखात रहे। हम से कहिन मौलवी बकार हम छोड़ के चले गये और तो गोसवा न किया? हम कहा कि मौला! हम तो उन्हें बहुत समझाया।'

हुसैन अली मियाँ, हुसैन हैदर मियाँ, हम्माद मियाँ और उत्तर-पट्टी की औरतें रहीम साहब के पलंग को घेरे खड़ी थीं। सरवरिया फूट-फूटकर रोने लगी। हसन अली मियाँ ने यासीन पढ़ना शुरू कर दिया। सरगाम और कम्मो ने मिलकर उनका पलंग फेरा।

फुन्नू मियाँ ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे।

हम पाकिस्तान ना जा सकत मौला। छोड़ दे [illegible] बाबा! तू गवाह रहियो हम गांधीओं का साथ दर रहे

लाइलाह! इल्लल्लाह मुहम्मद रसूलल्लाह [illegible] तमाम लोग [illegible] पढ़ने लगे।

ए मौला! तो हम छोड़ दिया। सब [illegible] कि छोड़ दिया सू अपना बाप को छोड़ दिया तो का समझें अपना बाप का छोड़ के? [illegible] रहीम साहब सकसकर चुप हो गये। अली मियाँ ने [illegible] पर सर रखकर रोने लगे। सकीना धीरे धीरे खाँसकर रोने लगा।

तब उस घड़ी छिद्दू आया और उसने फुन्नू मियाँ के कान में कहा कि गाँव पर पुलिस! सदा के ही सन्नाटा रहा है।

फुन्नू मियाँ साथ कर तब तिवारी भागकर चारों से दौड़े आ गये।